सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

५१

(१ सितम्बर से १५ नवम्बर १९३२)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

इस खण्डमें १ सितम्बर से १५ नवम्बर, १९३२ तककी सामग्री दी गई है। गांधीजी के नेतृत्वमें चलनेवाला भारतका राष्ट्रीय आन्दोलन सदासे तत्त्वतः आत्मशुद्धिका आन्दोलन रहा था, किन्तु इस अवधिमें ब्रिटिश सरकारके दलित वर्गोंके लिए पृथक् निर्वाचिक-मण्डलके गठनके निर्णयके विरुद्ध गांधीजी ने जो अनिश्चित कालका उपवास आरम्भ किया उसके फलस्वरूप आन्दोलनका वह रूप और भी निखर उठा। "दलितों के हितमें सत्याग्रह-यज्ञमें [यह] अन्तिम आहुति" देनेमें उनका "उद्देश्य हिन्दुओंकी अन्तरात्माको सही धार्मिक आचरण करनेको प्रेरित करना" था (पृष्ठ ६६)। उपवासका बड़ा त्वरित प्रभाव हुआ; गांधीजी का उद्देश्य सफल रहा। इस समस्याके प्रति देशमें अभूतपूर्व जागृति आई। इसका परिणाम प्रसिद्ध पूना समझौते या यरवडा समझौतेके रूपमें प्रकट हुआ। समझौतेके अनुसार हिन्दू नेता और दलित वर्गोंके प्रतिनिधि इस बातपर सहमत हो गये कि हरिजनोंको सुविधा देनेके लिए संविधानमें विशेष व्यवस्था की जाये। परिणाम लिखित समझौतेतक ही सीमित नहीं रहा। २५ सितम्बरसे ३० सितम्बर तक बम्बईमें कई सार्वजनिक सभाएँ हुईं। इनमें हिन्दू नेताओंने हरिजनों को पूर्ण राजनीतिक तथा सामाजिक समानता दिलाने और उनके कष्टों और कठिनाइयोंको दूर करनेके लिए प्राणपणसे प्रयत्न करनेका संकल्प लिया।

उपवासका तात्कालिक उद्देश्य ब्रिटिश सरकारके निर्णयको बदलवाना था और कई लोगोंने इसे एक प्रकारका बल-प्रयोग बताकर इसकी आलोचना भी की। किन्तु गांधीजी के लिए यह "ईश्वरके नामपर, उसीके कामसे और . . . उसीके आदेशपर किया" गया एक नितान्त आध्यात्मिक कृत्य था (पृष्ठ ६५)। उनकी दृष्टिमें इसका राजनीतिक पक्ष गौण महत्वका था। उन्होंने ब्रिटिश सरकारके निर्णयका विरोध इसलिए किया कि उनकी रायमें उस निर्णयके कारण, अस्पृश्यता-निवारणके लिए हिन्दू सुधारक जो "अद्भुत कार्य कर रहे" थे, "वह सब धूलमें मिल" जाता (पृष्ठ ३४)। उनका दृढ़ विश्वास था कि दलित वर्गोंको हिन्दू समाजसे अलग कर देनेसे उनके सच्चे हितोंकी रक्षा नहीं हो सकती। इसके अतिरिक्त वे इस चीजको असम्भव भी मानते थे; क्योंकि "वे एक ही अविभाज्य परिवारके अंग हैं। . . . हिन्दू धर्ममें कोई ऐसा सूक्ष्म तत्त्व है, कोई ऐसी परिभाषातीत चीज है जो उनके न चाहनेपर भी उन्हें इससे जोड़कर रखे हुए है" (पृष्ठ ६७)। उपवासके पहले दिन पत्र-प्रतिनिधियोंको मुलाकात देते हुए उन्होंने कहा: "मैं जिस चीजके लिए जी रहा हूँ, और जिसके लिए मरनेमें भी मुझे खुशी होगी, वह अस्पृश्यताको जड़-मूलसे खत्म करना है" (पृष्ठ १२६)। इस उपवासका "उद्देश्य अदृश्य और अज्ञात रूपसे उन करोड़ों लोगोंको प्रभावित और आन्दोलित करना" था "जिनके साथ" वे अपना एक "अटूट

नाता" मानते थे (पृष्ठ ४०७)। उपवास गांधीजी के प्रति लोगोंके "निद्रालस प्रेमके लिए चाबुककी तरह था" (पृष्ठ २६९) और उन असंख्य भारतीयों और विदेशियोंके विरुद्ध था "जो यह मानते थे" कि गांधीजी "एक न्यायसंगत उद्देश्यको लेकर" चल रहे थे (पृष्ठ ६६)। उन्होंने स्पष्ट कहा: "यदि आम हिन्दुओंका मन अब भी अस्पृश्यताको समूल नष्ट कर देनेको तैयार न हो तो उसे मुझको तो तनिक भी हिचकिचाहटके बिना बलिदान कर देना चाहिए" (पृष्ठ ६६)। सरोजिनी नायडूको एक पत्रमें उन्होंने लिखा: "अस्पृश्योंके लिए अपने प्राणोंकी बलि चढ़ा देनेका मेरा विचार कोई नया नहीं है। . . . वर्षों तक अन्दरसे वैसा आदेश नहीं मिला था। लेकिन मन्त्रिपरिषद्का निर्णय खतरेका भयंकर बिगुल साबित हुआ, जिसने मुझे गहरी निद्रासे जगाकर सूचित किया — यही वह समय है।" गांधीजी ने उस अवसरको सहज ही अंगीकार कर लिया।

अपने आसन्न उपवासके विषयमें सोचकर गांधीजी आनन्दविभोर हो उठते थे। उनकी दृष्टिमें वह "एक सौभाग्य भी" था और "कर्त्तव्य भी" (पृष्ठ ५९)। उसे वे "दलितोंके हितमें सत्याग्रह-यज्ञमें अन्तिम आहुति देनेका ईश्वर-प्रदत्त अवसर" मानते थे (पृष्ठ ५८)। उनके लिए वह "अहिंसाकी एक अभिव्यक्ति, उसपर लगाई जानेवाली अन्तिम मुहर" था (पृष्ठ ६८)। उपवासकी अन्तिम परिणतिको स्वीकार करनेको, मृत्युका वरण करनेको भी वे सहर्ष प्रस्तुत थे। उन्हींके शब्दोंमें, "मुझे ऐसा करना पड़े तो इसमें परम शान्ति ही है" (पृष्ठ ५४)। उन्होंने बा से कहा, "करोड़ोंमें किसी-किसीको ही माँगी हुई मौत मिलती है" (पृष्ठ ५४)। खुशालचन्द गांधीको लिखे एक हृदयस्पर्शी पत्रमें उन्होंने उनसे निवेदन किया कि आप "यह जानकर खुश हों कि आपको ऐसा छोटा भाई मिला जिसे ईश्वरने ऐसा यज्ञ पूरा करनेकी शक्ति दी" (पृष्ठ ९६)। इस प्रकार अपने प्रिय कार्यके लिए अपने प्राणोंकी आहुति देनेकी सम्भावनापर विचार करके वे आनन्दविह्वल हो रहे थे। किन्तु साथ ही एक सच्चे विनयी व्यक्तिकी तरह वे यह भी स्वीकार करते थे कि हो सकता है, वे अपने मन्तव्य और शक्तिके विषयमें किसी भ्रममें ही पड़े हुए हों। उन्होंने नारणदास गांधीको लिखा: "अगर इसमें मुझसे भूल हुई होगी तो अनशन मिथ्या-भिमान माना जायेगा और वह आसुरी तप होगा" (पृष्ठ ५५)। उपवास आरम्भ करनेके पूर्व समाचार-पत्रोंमें प्रकाशनार्थ सरकारको भेजे एक वक्तव्यमें उन्होंने कहा कि अगर मेरी श्रद्धा मात्र भ्रम है तो "मुझे शान्तिपूर्वक अपना प्रायश्चित्त पूरा करने दिया जाये। इससे हिन्दू धर्म एक जड़ प्राणीके भारसे मुक्त हो जायेगा" (पृष्ठ ६७)। इसी प्रकार उन्होंने मीराबहनको लिखा, "तुम भी मेरी तरह हर्ष मनाओ कि मुझे ऐसा अवसर प्राप्त हुआ दीखता है।" "दीखता है" शब्दोंको प्रयोग करनेका कारण समझाते हुए उन्होंने कहा, "अभी मेरी श्रद्धाकी परीक्षा होनी है। जीवन-मरणके मामलेमें कोई अपनी शक्तिकी बात करनेका साहस नहीं कर सकता" (पृष्ठ ५९)। इस सम्बन्धमें उनका पुलक और विनयका मिश्रित मनोभाव रामेश्वरदास पोद्दारको लिखे पत्रकी इन पंक्तियोंमें और अधिक स्पष्टतासे प्रतिबिम्बित हुआ है: "अनशन मेरा नहिं रामका है, चिन्ता मुझे नहिं उसको है। यदि निष्फल हुआ तो निन्दा

उसकी होगी, मेरी नहिं; सफल हुआ तो उसे स्तुति नहिं चाहिये। इसलिये मैं भीखारी उसके द्वार पडा रहता ले लुंगा" (पृष्ठ १०४)।

गांधीजी के इस बलिदानका स्वजनोंपर क्या प्रभाव पड़ेगा, इस ओरसे भी वे बेखबर नहीं थे। उन्होंने मीराबहनको एक पत्रमें बताया: "अपने संकल्पका समाचार देते हुए जब मैंने वह पहला पत्र लिखा तो मुझे तुम्हारा और बा का खयाल आया था" (पृष्ठ १०८)। लेकिन उन्होंने यह सोचकर अपना जी कड़ा कर लिया कि "अस्पृश्यताके पापको धोनेके लिए कितनी भी भयंकर यातना सही जाये, वह ज्यादा नहीं कही जा सकती" (पृष्ठ १०८)। गोपाल कृष्ण देवधरको लिखे एक पत्रमें उन्होंने यह प्रश्न उठाया, "अस्पृश्योंके प्रति अपने व्यवहारके लिए क्या हमें ईश्वरकी ओरसे भयंकरसे-भयंकर सजा नहीं मिलनी चाहिए" (पृष्ठ ११९)? जिसने जन्म "स्पृश्य"के रूपमें लिया किन्तु स्वेच्छासे "अस्पृश्य" बन गया, ऐसे हिन्दूकी हैसियतसे प्रायश्चित्त करना वे अपना कर्त्तव्य मानते थे (पृष्ठ ११९)। उन्होंने देवधरको लिखा, "यह अद्भुत परीक्षा है। पर मैं इसी सबके लायक हूँ, क्योंकि मेरा मन हिन्दूका ही मन है" (पृष्ठ ११९)। अपनी मानवोचित संवेदनाओंके कारण उन्हें इस बातकी बड़ी चिन्ता थी कि अपने इस सर्वोच्च बलिदानके लिए उन्हें रवीन्द्रनाथ ठाकुर और श्रीनिवास शास्त्री-जैसे मित्रोंकी सहमति प्राप्त हो। जिस दिन उपवास आरम्भ होनेवाला था उस दिन प्रातःकाल ही अपने प्रथम पत्रमें उन्होंने रवीन्द्रनाथ ठाकुरको लिखा: "दोपहर को मुझे अग्निद्वारमें प्रवेश करना है। इस प्रयासको यदि आप अपना आशीर्वाद दे सकते हों तो मुझे वह चाहिए। . . . यदि मुझे अपनी भूलका पता चल जाये तो मैं इतना अभिमानी नहीं हूँ कि उसे खुलेआम स्वीकार न कर सकूँ . . ." (पृष्ठ १०६)। और श्रीनिवास शास्त्रीको उन्होंने लिखा: "मेरा यह कदम शायद आपको कहावतके उस अन्तिम तिनकेकी तरह असह्य लगा होगा। फिर भी आपकी ताड़नाकी मुझे जरूरत है . . .। . . . इस संकटमें भी, जो हो सकता है आखिरी हो, आप मुझसे झगड़ना बन्द न कीजिए। मुझे अपने अभिशाप या आशीर्वाद भेजिए" (पृष्ठ १०७)। दोनों मित्रोंने, जो दीर्घ कालतक गांधीजी के असहयोग-दर्शनके प्रबल आलोचक रहे थे, उन्हें पत्र लिखकर उनका हार्दिक समर्थन और प्रशस्ति की। रवीन्द्रनाथ ठाकुरने लिखा: "हमारे दुःखी हृदय आपकी महान् तपस्याको श्रद्धा और प्रेमसे निहारते रहेंगे" (पा० टि० २, पृष्ठ ११७)। श्रीनिवास शास्त्रीने उनकी उत्कृष्ट ढंगसे की गई उत्कृष्ट सेवाकी प्रशंसा करते हुए लिखा: "परिणाम आपको सही ठहराता है और निर्विवाद रूपसे सर्वोच्च अस्पृश्य . . . सिद्ध करता है" (पा० टि० २, पृष्ठ १४६)।

इन दोनोंकी प्रतिक्रिया सामान्यतः उपवासके सम्बन्धमें पूरे देशकी प्रतिक्रियाको प्रतिबिम्बित करती थी। इस विषयमें भारत-भरमें भावनाका जैसा प्रदर्शन हुआ वह गांधीजी की दृष्टिमें "आधुनिक युगका एक आश्चर्य" था (पृष्ठ १४६)। यह उनके लिए भी और "अन्धविश्वास और अज्ञानमें डूबे हिन्दू धर्मके लिए" भी "नये जन्मकी पीड़ा थी" (पृष्ठ १६९)। सदियों पुराने विश्वास और प्रथाका आधार एक ही

आघातमें धूल-धूसरित हो गया प्रतीत हो रहा था। आध्यात्मिक दृष्टिसे भी यह कदाचित् गांधीजी के जीवनका सबसे सुखद अनुभव था। यह उपवास प्रेमी द्वारा "अपने प्रियतमको गलत रास्तेपर जानेसे रोकनेके लिए" किये गये उपवासकी तरह "व्यथित हृदयकी ईश्वरतक पहुँचनेवाली पुकार" थी (पृष्ठ २६९)। उन्होंने स्वयं यह स्वीकार किया कि "प्रार्थनाका इस तरह तुरन्त उत्तर मिलनेका अनुभव मुझे पहले कभी नहीं हुआ था।" इसका कारण उनकी समझसे यह था कि उन दिनों वे ईश्वरकी "उपस्थितिकी सुखद धूपका सेवन कर" रहे थे (पृष्ठ २८३)। उन्होंने होरेस अलेक्जैंडरको बताया, "उस उपवासमें ईश्वर मेरे जितना निकट रहा उतना पहले कभी नहीं रहा था" (पृष्ठ १९९)। ऐसी आनन्दानुभूति उन्हें उपवासके दिनोंके शारीरिक और मानसिक कष्टोंके बावजूद हो रही थी। उन्होंने स्वयं स्वीकार किया: "इस तरहकी पावन वेदनामें एक गहरे अगोचर आनन्दका अनुभव होता है" (पृष्ठ १६८)।

किन्तु गांधीजी से यह समझनेमें भूल नहीं हुई कि एक प्रतिष्ठित सामाजिक बुराईके विरुद्ध लोगोंमें जो क्षोभ और जागरूकता आई थी उसका मतलब यह नहीं था कि अस्पृश्यता तुरन्त मिट जायेगी। उन्होंने ब्रिटेनवालों को बताया: "जो समझौता हुआ है वह मेरे लिए शुद्धिके कार्यका . . . आरम्भ-मात्र है। जबतक अस्पृश्यताका नामोनिशान मिट नहीं जाता, तबतक आत्माकी इस वेदनाका अन्त नहीं होगा। . . . हिन्दू धर्मको इस असह्य कलंकसे मुक्त करनेके लिए जितने भी उपवास आवश्यक होंगे, करूँगा" (पृष्ठ १२०)। उन्होंने हरिजनोंको भी भरोसा दिलाते हुए कहा कि यद्यपि ब्रिटिश सरकारने समझौतेके केवल उसी हिस्सेको स्वीकार किया है जिसका सम्बन्ध ब्रिटिश मन्त्रिमण्डलके साम्प्रदायिक निर्णयसे है, किन्तु खुद मैं "पूरे समझौतेसे बँधा हुआ हूँ और इसकी समुचित पूर्तिके लिए वे मेरे प्राण बन्धक समझें" (पृष्ठ १५५)। संयोगसे इस उपवासकी समाप्तिके तुरन्त बाद ही उन्हें दूसरा उपवास आरम्भ करनेका संकल्प लेकर हरिजनोद्धारके कार्यसे अपनी प्रतिबद्धताका परिचय देनेका सुअवसर भी मिल गया। प्रसंग यह था कि के० केलप्पनने, जो दक्षिण भारतमें इस काममें उनके विश्वस्त सहयोगी रह चुके थे, प्रसिद्ध गुरुवायूर मन्दिरके द्वार हरिजनोंके लिए खुलवानेके निमित्त गांधीजी के साथ ही उपवास आरम्भ किया था। सत्याग्रहकी दृष्टिसे गांधीजी को उनके इस आचरणमें नैतिक दोष दिखाई दिया। इसलिए उन्होंने केलप्पनको उपवास तोड़कर मन्दिरके अधिकारियोंको तीन महीनेका समय देनेकी सलाह देते हुए लिखा: "ईश्वर सहायक रहा तो मैं इस भारमें हाथ बँटाऊँगा" (पृष्ठ १७४)।

किन्तु इस उपवासके साथ गांधीजी ने जिस सुधारका सूत्रपात किया था उसको अन्तिम परिणतितक पहुँचानेके उनके संकल्पकी गम्भीरताको शायद सरकार नहीं समझ पाई। उपवासके दौरान उसने उन्हें इस कार्यके सम्बन्धमें पत्र-व्यवहार करने और लोगोंसे मिलने-जुलनेकी विशेष सुविधा दे रखी थी, जिसे अब उसने बन्द कर दिया। इससे गांधीजी बड़े परेशान हुए। जेल-अधीक्षकके नाम एक पत्रमें उन्होंने लिखा: "मुझे स्वीकार करना चाहिए कि मैं इस चीजके लिए कतई तैयार नहीं

था। . . . इस तरह बहुत ही आकस्मिक और कठोर ढंगसे मुझे यह याद दिलाया गया है कि मैं केवल एक कैदी हूँ। . . . मैंने यह आशा की थी कि कमसे-कम पूर्ण स्वस्थ होनेतक मुझे सभी तरहके अनावश्यक स्नायविक आघातोंसे बचाया जायेगा" (पृष्ठ १६३)। सरकार इस सम्बन्धमें अपनी स्थिति स्पष्ट करेगी, इस बातकी प्रतीक्षा करते हुए वे तीन हफ्तेतक चुप बैठे रहे। अन्तमें उन्होंने एक पत्र लिखकर सरकारको स्पष्ट बता दिया कि अगर उन्हें हरिजन कार्य चलानेकी सुविधा नहीं दी जाती तो वे फिर उपवास करेंगे। उन्होंने जेलोंके महानिरीक्षकको लिखा: "जिस कार्यके लिए उपवास रखा गया और स्थगित किया गया, उसे यदि मैं बिना किसी पाबन्दी और अड़चनके न कर सकूँ, तो जीनेमें मेरी कोई रुचि नहीं हो सकती" (पृष्ठ ३०७)। उन्होंने फिर अपना संकल्प स्पष्ट करते हुए कहा: "यह नहीं हो सकता कि मैं जीवित रहूँ और अस्पृश्यता-निवारणके लिए काम न करूँ" (पृष्ठ ३४०)। उत्तरमें सरकारने उदारतापूर्वक यह स्वीकार करते हुए कि गांधीजी के अस्पृश्यता-निवारण-सम्बन्धी कार्यक्रमका "महत्त्व उसने पहले पूरी तरह नहीं समझा था . . . ऐसे मामलोंके सम्बन्धमें, जो केवल अस्पृश्यता-निवारणतक ही सीमित हों, लोगोंसे मिलने और पत्र-व्यवहार करने" पर लगे सारे प्रतिबन्ध हटा लिये (पृष्ठ ३५६)।

इस तरह गांधीजी को जो स्वतन्त्रता और सुविधा प्राप्त हुई उसका उपयोग उन्होंने पत्र-व्यवहार और समाचार-पत्रोंमें प्रकाशित वक्तव्योंके द्वारा अस्पृश्यता-विरोधी लोकमत तैयार करनेमें किया। इस विषयपर अपने पहले ही वक्तव्यमें उन्होंने "हिन्दू धर्म" की पुनर्व्याख्या करके इस प्रथाके धार्मिक आधारपर प्रहार किया। जहाँ कट्टर-पंथी हिन्दू अस्पृश्यताको हिन्दू धर्मका अभिन्न अंग मानते थे और फलतः गांधीजी को ऐसा व्यक्ति समझते थे जिसने "अपने धर्मका त्याग कर दिया है" और जिसने "अस्पृश्यता-विरोधी और इसी तरहकी अन्य धारणाएँ . . . ईसाई धर्म और इस्लामसे ली हैं", वहाँ स्वयं गांधीजी ने यह दावा किया कि मैं सच्चा सनातनी हूँ। उनका कहना था कि सनातन धर्म "वेदों और उनके बादके धर्म-ग्रन्थोंपर आधारित है", लेकिन "वेद ईश्वर और हिन्दू धर्मकी तरह ही अव्याख्येय हैं।" हिन्दू धर्म एक सतत विकासशील धर्म है, जिसकी "मूल निधियोंमें" प्रत्येक पीढ़ीके "ऋषियोंने अपने ज्ञानके अनुसार वृद्धि की" है। "फिर एक महान् मनीषी हुआ, जिसने 'गीता' रची। उसने हिन्दू-जगत्को हिन्दू धर्मका ऐसा सार-संकलन दिया, जिसमें गहरा दर्शन भरा है, पर जो फिर भी सीधे-सादे जिज्ञासुओंकी समझमें आसानीसे आ जाता है।" उन्होंने स्पष्ट शब्दोंमें घोषणा की कि "जो-कुछ भी उसके मुख्य विषयके विरुद्ध है, उसे मैं हिन्दू धर्मके विरुद्ध समझकर अस्वीकार कर देता हूँ।" जहाँतक दूसरे धर्मोंसे प्रभावित होनेके आरोपका सम्बन्ध था, गांधीजी ने निर्भीकताके साथ कहा कि मैंने अन्य धर्मोंके ग्रन्थोंका जो अध्ययन किया है उससे "मेरा दृष्टिकोण और इसलिए मेरा हिन्दू धर्म भी उदार हो गया है।" उन्होंने आगे कहा: "अपने-आपको हिन्दू कहनेमें मुझे गर्वका अनुभव इसलिए होता है कि यह शब्द मुझे इतना व्यापक लगता है कि यह न केवल पृथ्वीके चारों कोनोंके पैगम्बरोंकी शिक्षाओंके प्रति सहिष्णु है, बल्कि उन्हें आत्मसात्

भी करता है।" वे "'गीता' के इसी सन्देशको अपने जीवनमें उतारकर . . . लाखों-करोड़ों लोगोंके पास" गये। और उन्हें पूरा विश्वास था कि "उन्होंने मेरी बात मेरी राजनीतिक बुद्धिमत्ता या वक्तृत्व-कलाके कारण नहीं, बल्कि इसलिए सुनी है कि उन्होंने मुझे सहज ही अपना और अपने धर्मका आदमी मान लिया है।" इसलिए उनकी यह मान्यता भी निरन्तर दृढ़तर होती गई कि "सनातन धर्मसे अपनेको सम्बद्ध माननेका मेरा दावा गलत नहीं है और यदि ईश्वरकी इच्छा हुई तो वह मुझे इस दावेपर अपनी मृत्युकी मुहर लगानेका अवसर देगा" (पृष्ठ ३६४-६५)।

अस्पृश्यतापर किये गये प्रहारोंके परिणामस्वरूप स्वभावतः जाति-प्रथामें सुधारका प्रश्न उठ खड़ा हुआ। गांधीजी ने इन दोनों प्रश्नोंको एक-दूसरेसे अलग रखनेकी सावधानी बरती, ताकि वे अस्पृश्यता-निवारणपर अपनी शक्ति और अपना ध्यान केन्द्रित रख सकें। उन्होंने कहा, जाति-प्रथा तो एक सामाजिक बुराई है, लेकिन अस्पृश्यता "आत्माका हनन करनेवाला पाप है" (पृष्ठ २३५)। इसलिए उन्होंने इस बातको बार-बार स्पष्ट किया कि "रोटी-बेटी-व्यवहार" और "अन्तर्जातीय विवाह" अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनके अंग नहीं हैं, यद्यपि जिनमें हरिजन भी शामिल हों, ऐसे अन्तर्जातीय भोजोंका वे स्वागत करते थे (पृष्ठ २४६)। जाति और वर्णका भेद स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा कि वर्णका मतलब धंधा-विशेषके अतिरिक्त और कुछ नहीं है तथा "अन्तर्जातीय भोज और अन्तर्जातीय विवाह" पर लगे प्रतिबन्धोंसे इसका कोई सम्बन्ध नहीं है (पृष्ठ ३६३)। उन्होंने यह स्वीकार किया कि इस प्रकारका वर्णधर्म आज समाप्त हो चुका है और एक ही वर्ण बच रहा है — शूद्र वर्ण (पृष्ठ ३७०, ४११)।

इस तनाव-भरी अवधिमें लिखे गये पत्रोंसे इस बातकी अन्तरंग झलक मिलती है कि गांधीजी को स्वयंकी कितनी ठीक पहचान थी और उनसे पत्राचारका सम्बन्ध रखनेवाले लोग भी, जिनकी संख्या निरन्तर बढ़ रही थी, उन्हें ठीकसे समझें, इसकी उन्हें कितनी चिन्ता थी। उन्हें खास फिक्र आश्रमवासियोंकी थी। उपवास आरम्भ करनेके दो दिन पूर्व उन्होंने लिखा: "वहाँसे प्राण-रस खींचकर अपनेमें भर रहा हूँ और अपने प्राण-रससे वहाँ आश्रमका अभिसिंचन कर रहा हूँ" . . . (पृष्ठ ८९)। उन्होंने स्वीकार किया कि "यदि मेरे हृदयकी गहराईमें कहीं द्वेष अथवा रोष हुआ . . . तो उसे [उपवासको] आसुरी तप ही माना जायेगा और तब तो वह दुनियाके लिए भार-रूप ही होगा" (पृष्ठ ९०)। इस अवधिके अनेक पत्रोंमें हमें इस बातपर विशेष आग्रह देखनेको मिलता है कि दूसरोंके दोष निकालनेकी अपेक्षा अपने दोष निकालनेमें, क्रोधका उत्तर धैर्यसे देनेमें और बुराईके बदले भलाई करनेमें मानवका श्रेय निहित है। एक समाज-सुधारकको उन्होंने "जमोरिनके प्रति . . . अनुदार" न होनेकी सलाह देते हुए लिखा, "हमें अपने-आपको उनकी स्थितिमें रखकर परिस्थितिको उनके दृष्टिकोणसे भी देखना चाहिए" (पृष्ठ ३५७)। समस्त सृष्टिसे अपनेको एकाकार माननेकी धार्मिक वृत्ति और "जीव-मात्रकी निःस्वार्थ . . . सेवा" (पृष्ठ ३९२) करनेकी प्रवृत्तिके कारण गांधीजी कभी भी राजनीतिको धर्मसे अलग

नहीं मान पाये। एक ईसाई मित्रको उन्होंने लिखा: "सच्चा धर्म तो वही है जो जीवनकी हर प्रवृत्तिमें समाया हुआ हो। और जो प्रवृत्ति धर्मकी बलि चढ़ाये बिना न चलाई जा सकती हो, वह अनैतिक प्रवृत्ति है और उससे हर हालतमें दूर ही रहना चाहिए। राजनीति ऐसी प्रवृत्ति नहीं है, इतना ही नहीं, बल्कि वह तो हमारे नागरिक जीवनका अभिन्न अंग है" (पृष्ठ २५५-५६)। साम्प्रदायिक कट्टरता और "मेरा ईश्वर, तेरा ईश्वर"-जैसी संकुचित बातें करनेकी प्रवृत्तिपर प्रहार करते हुए उन्होंने कहा कि "जो विनयी हैं और जिनका हृदय शुद्ध है, उनके लिए तो वह लाखों-करोड़ों मार्गोंसे प्राप्य है" और "बुद्धिमानों और मूर्खों, धर्मात्माओं और पापियोंका एक ही ईश्वर है" (पृष्ठ २३, ३७०)। सम्प्रदायवादकी ही तरह गुह्य विद्याओंका भी विरोध करते हुए उन्होंने कहा: "जीवनकी पुस्तक साधारणसे-साधारण बुद्धिवालोंके लिए भी खुली हुई है और ऐसा ही होना भी चाहिए। ईश्वरीय योजनामें गुह्य कुछ भी नहीं है। . . . सत्यमें कुछ भी गोपनीय नहीं है और सत्य ही ईश्वर है" (पृष्ठ ३३४)।

मीराबहनको पेड़-पौधे और पशु-पक्षी भी अपने मित्र-जैसे लगते थे। उनकी इस दृष्टिका अनुमोदन करते हुए उन्होंने लिखा: "निजी मित्र और सम्बन्धी अजनबी लोगों, पशु-पक्षियों और पेड़ोंसे अधिक मित्र नहीं होते" (पृष्ठ ५९-६०)। प्रेमाबहन कंटकको लिखे एक पत्रमें वे अपनी "बिल्ली बहन"से अपने पुनर्मिलन और उससे प्राप्त होनेवाले आनन्दका उल्लेख करना नहीं भूले (पृष्ठ ३०२)। प्रेमाबहनके ही नाम एक अन्य पत्रमें उन्होंने लिखा: "फूलोंके पौधोंके साथ मेरी तरफसे बात करना . . .। उनसे कहना कि अपने-जैसा सौन्दर्य, अपनी-जैसी सुगन्ध, अपनी जैसी एकनिष्ठता . . . अपनी-जैसी समता और सरलता प्रदान करो . . ." (पृष्ठ ३३६-३७)।

एक पत्रमें उन्होंने 'गीता'के प्रति अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करते हुए लिखा कि 'गीता' की "सबसे बड़ी टीका" यही है कि जीवनके लिए उपयोगी उसके प्रत्येक श्लोक को आचरणमें उतारा जाये, और उनकी दृष्टिमें उस पवित्र ग्रन्थका "मध्य बिन्दु अनासक्ति ही" थी (पृष्ठ ३४३)। उन्होंने अनासक्तिको सहज ही कैसे सिद्ध किया, इसका रहस्य रामदास गांधीको बताते हुए लिखा: "मेरा सब काम स्वाभाविक होनेसे, यानी सत्यकी साधनामें स्फुरित होनेके कारण, बहुत आसान हो गया है। जगत्-भरकी सेवा करनेकी भावना उदित हो जानेपर अनासक्ति सहज ही आ जाती है" (पृष्ठ ३९४)। ऐसी अनासक्तिका एक अच्छा उदाहरण शरीरके प्रति व्यक्त किये गये उनके दृष्टिकोणके रूपमें सामने आता है। उन्होंने एन्ड्रयूजको भरोसा दिलाते हुए लिखा: "मेरी इच्छा इस गर्दभ बन्धु (शरीर)को मार डालनेकी नहीं है। यह ईश्वरके हाथोंमें सुरक्षित है" (पृष्ठ ३६६)। एक मित्रके रुग्ण पुत्रको ठीक ढंगसे श्वास-क्रिया करने, ठीक आहार लेने और ताजी हवाका सेवन करने तथा ईश्वर में श्रद्धा रखनेकी सलाह देते हुए उन्होंने समझाया: ". . . तुझे अपने शरीरको अपना नहीं मानना चाहिए। वह ईश्वरका है। पर ईश्वरने तुझे वह कुछ समयके लिए दिया है, ताकि तू उसे स्वच्छ और स्वस्थ रखे और उसकी सेवाके काममें लाये। इसलिए

तू उसका थातीदार है, स्वामी नहीं" (पृष्ठ ३७०)। उन्होंने एस्थर मेननको लिखा: "जिस तरह सैनिक अपने शस्त्रोंको साफ और सुव्यवस्थित रखता है, उसी तरह हमें भी अपने शस्त्रों (ईश्वरके दिये हुए शरीरों)को साफ और पूरी तरह सुव्यवस्थित रखना चाहिए" (पृष्ठ ४२२)।

आश्रमकी समस्याके सम्बन्धमें लिखे उनके पत्रोंसे ज्ञात होता है कि वे उसे "सब धर्मोंके प्रति समभाव" रखनेवाली संस्थाके रूपमें देखना चाहते थे और उनकी राय थी कि आश्रमवासी प्रार्थना-भूमि-रूपी उस मन्दिरमें प्रार्थना करें "जिसकी दीवारें दिशाएँ हैं, जिसकी छत आकाश है और जिसमें मूर्त्ति निराकार भगवान्‌की है" (पृष्ठ २२४)। किन्तु उनकी दृष्टिमें सामूहिक प्रार्थना उतनी महत्त्वपूर्ण नहीं थी जितनी वैयक्तिक प्रार्थना, जो सामूहिक प्रार्थनाका आधार है, क्योंकि "जो-कुछ अनुभव एकान्तमें बैठकर . . . होता है, वह समूहमें होना अशक्य नहीं तो कठिन तो है ही" (पृष्ठ ३२१)।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित संस्थाओं, व्यक्तियों, पुस्तकोंके प्रकाशकों तथा पत्र-पत्रिकाओंके आभारी हैं:

संस्थाएँ: साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास और संग्रहालय (साबरमती आश्रम प्रिजर्वेशन ऐंड मेमोरियल ट्रस्ट ऐंड संग्रहालय), नवजीवन ट्रस्ट और गुजरात विद्यापीठ ग्रंथालय, अहमदाबाद; गांधी स्मारक निधि व संग्रहालय और नेहरू स्मारक संग्रहालय व पुस्तकालय, नई दिल्ली; विश्वभारती स्मारक संग्रहालय व पुस्तकालय, शान्तिनिकेतन; राष्ट्रीय ग्रंथालय, कलकत्ता; भारत कलाभवन, वाराणसी; भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली; स्वार्थमोर कॉलेज, फिलाडेल्फिया; वुडब्रुक कॉलेज, बर्मिघम और मैसूर सरकार।

व्यक्ति: श्री ए० एच० वेस्ट; श्रीमती एडिथ एलविन; कु० एफ० मेरी बार; श्री कनुभाई मशरूवाला, अकोला; श्री क० मा० मुंशी, बम्बई; श्रीमती गंगाबहन वैद्य, बोचासण; श्री घ० दा० बिड़ला, कलकत्ता; श्री चन्द्रकान्त एफ० शाह, नई दिल्ली; श्रीमती चम्पाबहन मेहता, बम्बई; श्री जयरामदास दौलतराम, नई दिल्ली; श्रीमती जेसी हॉयलैंड; श्रीमती तहमीना खंभाता, बम्बई; श्री द० बा० कालेलकर, नई दिल्ली; श्री धीरूभाई झवेरी, बम्बई; श्री नारणदास गांधी, राजकोट; श्रीमती निर्मलाबहन सराफ, बम्बई; श्री परशुराम मेहरोत्रा, दिल्ली; श्री प्रभुदास गांधी, अलमोड़ा; श्रीमती प्रेमलीला ठाकरसी, पूना; कु० प्रेमाबहन कंटक, सासवड; श्री बनारसी लाल बजाज, वाराणसी; श्री भाऊ पानसे, वर्धा; श्री मगनभाई देसाई, अहमदाबाद; श्रीमती मनुबहन मशरूवाला, अकोला; श्रीमती मीराबहन, गाडेन, आस्ट्रिया; श्री रमणीकलाल मोदी, अहमदाबाद; श्री रवीन्द्र आर० पटेल, अहमदाबाद; श्रीमती राधा बहन चौधरी, नई दिल्ली; श्री रामनारायण एन० पाठक, भावनगर; श्रीमती लक्ष्मी बहन ना० खरे, अहमदाबाद; श्रीमती लीलावती आसर, बम्बई; श्रीमती वनमाला एम० देसाई, नई दिल्ली; श्रीमती वसुमती पण्डित, सूरत; श्री वालजी गो० देसाई, पूना; श्रीमती शशिलेखा मेहता, अहमदाबाद; श्रीमती शान्तादेवी, कलकत्ता; श्रीमती शान्ताबहन पटेल, अहमदाबाद; श्री शान्तिकुमार मोरारजी, बम्बई; श्रीमती शारदा बहन जी० चोखावाला, अहमदाबाद; श्री श्री० दा० सातवलेकर, पार्डी और श्री हरिइच्छा पी० कामदार, बड़ौदा।

पत्र-पत्रिकाएँ: 'अमृतबाजार पत्रिका', 'एडवांस', 'टाइम्स ऑफ इंडिया', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'विश्वभारती न्यूज', 'हिन्दू'।

पुस्तकें : 'एपिक फास्ट', 'ट्राइबल वर्ल्ड ऑफ वेरियर एलविन : एन ऑटो-वायोग्राफी', 'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद', 'बापुना पत्रो-४ : मणिबहेन पटेलने', 'बापुना पत्रो-६ : गं० स्व० गंगाबहेनने', 'बापुना पत्रो-९ : नारणदास गांधीने', 'बापुनी प्रसादी', 'महात्मा : लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी', भाग-२, 'महादेवभाईनी डायरी', भाग १-२, 'माई डियर चाइल्ड' और 'लेटर्स ऑफ द राइट ऑनरेबल वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री'।

अनुसन्धान व सन्दर्भ-सम्बन्धी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, इंडियन कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना और प्रसारण मन्त्रालयका अनुसन्धान और सन्दर्भ विभाग (रिसर्च ऐंड रिफरेंस डिवीजन), भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार, नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय एवं श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली; म्युनिसिपल संग्रहालय, इलाहाबाद; इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी, लन्दन हमारे धन्यवादके पात्र हैं। प्रलेखोंकी फोटो-नकल तैयार करनेमें मदद देनेके लिए हम सूचना और प्रसारण मन्त्रालयके फोटो-विभाग, नई दिल्लीके भी आभारी हैं।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमें गांधीजी के स्वाक्षरोंमें मिली है उसे अविकल रूपमे दिया गया है। किन्तु दूसरों द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमें हिज्जोंकी स्पष्ट भूलोंको सुधारकर दिया गया है।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करनेमें अनुवादको मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। छापेकी स्पष्ट भूलें सुधारनेके बाद अनुवाद किया गया है और मूलमें प्रयुक्त शब्दोंके संक्षिप्त रूप यथासम्भव पूरे करके दिये गये हैं। नामोंको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोंके उच्चारणमें संशय था उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गांधीजी ने अपने गुजराती लेखोंमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गांधीजी ने किसी लेख, भाषण, आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमें छापा गया है, लेकिन यदि कोई ऐसा अंश उन्होंने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोड़कर साधारण टाइपमें छापा गया है। भाषणकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गांधीजी के कहे हुए नहीं हैं, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमें छापे गये हैं। भाषणों और भेंटकी रिपोर्टोंके उन अंशोंमें, जो गांधीजी के नहीं हैं, कहीं-कहीं कुछ परिवर्तन किया गया है और कहीं-कहीं कुछ छोड़ भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि जहाँ उपलब्ध है वहाँ दायें कोनेमें ऊपर दे दी गई है। परन्तु जहाँ वह उपलब्ध नहीं है वहाँ उसकी पूर्ति अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोंमें की गई है, और आवश्यक होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोंमें केवल मास या वर्षका उल्लेख है उन्हें आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमें रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गांधीजी की सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी दृढ़ आधारपर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नहीं हुआ वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये हैं।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका, 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी) द्वारा संगृहीत पत्रोंका, 'एस० जी०' सेवाग्राममें सुरक्षित सामग्रीका और 'एम० एम० यू०' मोबाइल माइक्रोफिल्म यूनिटका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट भी दिये गये हैं। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

१. पत्र : आश्रमके बालकों-बालिकाओंको

यरवडा मन्दिर[१]
१ सितम्बर, १९३२

बालको और बालिकाओ,

नई मन्त्रीका सुन्दर अक्षरोंमें लिखा पत्र मिला। नये पदाधिकारी अपने-अपने कर्त्तव्यका ठीक पालन करेंगे, ऐसी आशा करता हूँ। इस तरह अपने सिर जिम्मेदारियाँ लेते-लेते [और उनका पालन करते-करते] तुम लोग खूब आगे बढ़ोगे। ऐसे मण्डल तभी चल सकते हैं जब सभी एक-दूसरेके प्रति उदारतापूर्ण बरताव करें। और इतना करना सीख जाओ तो बड़े-बड़े मण्डलोंको चलानेकी शक्ति तुममें सहज ही आ जायेगी। हर हफ्ते अपने कामका हिसाब मुझे भेजते रहना। कभी कोई झगड़ा हो तो उसके सम्बन्धमें भी लिखना। झगड़ा हो ही नहीं, यह तो सबसे अच्छी बात है, लेकिन हो तो मुझसे छिपानेसे कोई फायदा नहीं होनेवाला है। मुझे उसकी जानकारी होगी तो हो सकता है, मैं तुम लोगोंका मार्ग-दर्शन कर सकूँ; और झगड़ा होनेपर तुम लोगोंको मुझे उसकी सूचना देनी पड़ेगी, यही खयाल शायद तुम्हें उससे बचा भी ले।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

२. पत्र : पुरातन बुचको

१ सितम्बर, १९३२

चि० पुरातन,

तुम्हें सवाल पूछनेसे रोकनेका तो मेरा इरादा था ही नहीं। मनमें खूब सोच-विचारकर किसी निष्कर्षपर पहुँचनेके बाद उसपर मेरा मतामत जाननेके लिए तुम्हारा मुझसे पूछना योग्य ही माना जायेगा। कहा जा सकता है कि मेरे जीवनमें बुद्धिका योग बहुत कम रहा है। मैं अपनेको मन्दबुद्धि मानता हूँ। श्रद्धावान्‌को बुद्धिका योग भगवान् करा देता है[२], यह बात मेरे सम्बन्धमें तो अक्षरशः सत्य सिद्ध हुई है। मुझमें गुरुजनों और ज्ञानियोंके प्रति हमेशा सम्मान और श्रद्धाका भाव

१. यरवडा सेंट्रल जेल, जहाँ गांधीजी ४ जनवरी, १९३२ से ८ मई, १९३३ तक बन्दी रहे। आगेके शीर्षकोंमें इस स्थानका नाम नहीं दिया गया है।

२. अनुमानतः **गीता**–४, ३९।

रहा है। और मेरी सबसे अधिक श्रद्धा सत्यके प्रति रही है, इसीलिए मेरा मार्ग हमेशा कठिन होते हुए भी मुझे सरल ही लगा है।

तुम्हारा स्वास्थ्य सुधरता जा रहा है, यह शुभ समाचार है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१६८) से।

३. पत्र : केशव गांधीको[1]

१ सितम्बर, १९३२

चि० केशू,

अक्षर मेहनतसे सुधरते हैं। सच्चा मित्र परमेश्वर ही है। पेट भरकर कभी खाना ही नहीं चाहिए। जीव ही आत्मा है। अभी तो 'गीताजी'को गुजरातीमें ही पढ़ो, उसीको समझो। जरूरत होनेपर किसीसे पूछो भी। पूनियोंको [छोरपर] नुकीला मत बनाओ। घंटे-भरमें अच्छी पूनियाँ कितनी तैयार की जा सकती हैं, यह तो अब्बासभाईसे पूछो। स्मरण-शक्ति अभ्यास करते-करते बढ़ती है।

मनमें जो भी आये, सो सब तुम मुझे लिख सकते हो।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२८०) से।

४. पत्र : गुलाबको

१ सितम्बर, १९३२

चि० गुलाब,

तेरे दो पत्र मिले। कातनेकी गति कम ही है, मगर कितनी है? अक्षर सुधारना। कृष्णने कौन-सी भूल की, यह बता, तभी तो मैं जवाब दे सकूँगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७२३) से।

१. मगनलाल गांधीके पुत्र।

५. पत्र : मोहन न० परीखको

१ सितम्बर, १९३२

चि० मोहन,[1]

अक्षर ठीक न बनें तो बोलकर दूसरेसे पत्र लिखवानेमें कोई हर्ज नहीं है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि सुन्दर अक्षर लिखना सीखनेमें आलस्य करे। तू तो इतना बड़ा हो गया है कि तुझे अब सुन्दर अक्षर लिखना आना ही चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९१८२) से।

६. पत्र : नर्मदाबहन राणाको

१ सितम्बर, १९३२

चि० नर्मदा,

तेरा पत्र मिला। इस बार अक्षर ठीक हैं। इसी तरह मेहनत करते-करते अच्छे होते जायेंगे। तू लिखती है कि बहुत सीख गई हूँ। यह ठीक नहीं है। सीखना तो अभी बहुत बाकी है। अभी तो तेरी गुजराती ही बहुत कच्ची है। संस्कृत सीखनी है। ओटना, ठीक पींजना, बुनना, सीना, कशीदा करना, बहुत बारीक कातना, यह सब तो बाकी ही है।

गणित सीखना, बीमारकी सार-सँभाल करना सीखना चाहिए। धीरे-धीरे सभी हो जायेगा।

बोलना कम, सोचना ज्यादा। अपनी पोशाकके बारेमें तेरी बात मैं समझ गया। लेकिन अभी तो उसके सम्बन्धमें कुछ कहनेको मेरे पास है नहीं।

तू खूब अच्छी बने, यही चाहता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २७६२) से; सौजन्य: रामनारायण एन० पाठक

१. नरहरि द्वारकादास परीखके पुत्र।

७. पत्र : पद्माको

१ सितम्बर, १९३२

चि० पद्मा,

तेरा पत्र मिला। उसमें तूने ठीक जानकारी दी है। तू फल खाती है, यह अच्छा ही है। शरीर थक जाये तो कातना बन्द रखनेमें कोई हर्ज नहीं है। दाहिने हाथसे तार निकाले और पैरसे चरखा चलाये तो थकावट महसूस नहीं होनी चाहिए। मैं ऐसा ही करता हूँ। लेकिन इतनी मेहनतसे भी थकावट हो तो वैसा ही करना। कशीदेका काम या सिलाई हो सके तो वह करना। रुईकी पूनियाँ न मिलें तो ऊन कातना। शीलाको ठीकसे सिखाना। अभी अक्षर लिखनेका अभ्यास करानेकी जरूरत नहीं है; बातचीतमें ही बहुत-कुछ सिखाया जा सकता है। गणित सिखाया जा सकता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१३७) से। सी० डब्ल्यू० ३४८९ से भी; सौजन्य : प्रभुदास गांधी

८. पत्र : शारदा चि० शाहको

१ सितम्बर, १९३२

चि० शारदा,

मेरा विश्वास है कि तू मन्त्रि-पदको अवश्य सुशोभित करेगी। सामर्थ्यसे अधिक परिश्रम मत करना। और जो-कुछ हो उससे तनिक भी घबराना नहीं। चिन्ता तो बिलकुल मत करना। तकलीपर इतनी अधिक बार तार क्यों टूटता है? हम जो काम करते हैं उसमें भाग्य और मेहनत दोनोंका हिस्सा होता है। मेहनतपर हमारा अधिकार है इसलिए पूरी तरह मेहनत करके उसका परिणाम भाग्यपर छोड़ दें। 'गीता' यही सिखाती है।

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९१७)से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

९. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

१ सितम्बर, १९३२

चि० गंगाबहन,

कमाटीपुराका घर खाली पड़ा है और वहाँसे सामान चोरी गया, इसे अपनी [निष्ठाकी] परीक्षा मानना। "भला हुआ छूटा जंजाल, सहज मिलेंगे श्री गोपाल"[1] का जाप करना।

१६वें अध्यायके बारेमें मुझे काकाने[2] भी लिखा था। फिलहाल तो इसके लिए मेरे पास समय नहीं है। रामीबहनसे[3] मुझे लिखनेको कहना।

आशा है, अब तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक हो गया होगा। फिर हकीमजी[4] तो तुम्हारे पास ही हैं, अतः अब तुम्हें और क्या चाहिए? हकीमजी से मेरा यथायोग्य कहना।

क्या नाथकी[5] खुजली ठीक हो गई?

मुझे नियमित रूपसे लिखती रहना।

लक्ष्मी[6] जेराजाणी मुझे चतुर और चुस्त लड़की जान पड़ी।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो-६ : गं० स्व० गंगाबहेनने, पृ० ६५। सी० डब्ल्यू० ८७९४ से भी; सौजन्य : गंगाबहन वैद्य

१. यह पंक्ति नरसिंह मेहतापर लिखी गई प्रेमानन्दकी कवितासे है। मूल इस प्रकार है: "भलुं थयुं भांगी जंजाल सहजे मलशे श्री गोपाल।" बादमें २-११-१९४० के **हरिजन बन्धु**में गांधीजी ने स्वीकार किया कि उन्होंने ('सुखे भजशुं' के स्थानपर 'सहजे मलशे' का) अशुद्ध प्रयोग किया था।

२. द० बा० कालेलकर।

३. गंगाबहन वैद्यकी बहन।

४. गंगाबहनको यूनानी चिकित्सा-पद्धति सिखानेवाले।

५. केदारनाथ कुलकर्णी, किशोरलाल मशरूवालाके गुरु।

६. निष्ठावान खादी-कार्यकर्त्ता विट्ठलदास जेराजाणीकी भतीजी, जिनका विवाह बादमें गंगाबहनके पौत्र पुरुषोत्तम डी० सरैया से हो गया था।

१०. एक पत्र[1]

१ सितम्बर, १९३२

दिलीपसे मैंने आपका नाम माँगा था। हालाँकि हम कभी मिले हों, ऐसा मुझे याद नहीं है, फिर भी यह लिखनेकी हिम्मत कर रहा हूँ। बच्चोंकी शिक्षाके बारेमें मेरे मनमें हमेशा यह विचार रहा है कि उन्हें शुरूसे वर्णमाला सिखाकर हम उनकी बुद्धिको अवरुद्ध कर देते हैं और उनके अक्षर बिगाड़ देते हैं। मेरी राय है कि बच्चोंको वर्णमालाका ज्ञान करानेसे पहले जबानी बहुत-सा सामान्य ज्ञान दे देना चाहिए। अपने शहर या गाँवके इतिहास-भूगोलसे लेकर प्रान्तका, देशका और संसारका थोड़ा ज्ञान, सृष्टि-सौन्दर्यका, आकाशका, पेड़-पत्तोंका, जबानी हिसाबका, भूमितिका, साहित्यका यानी शुद्ध उच्चारण, व्याकरण, काव्य और श्लोकों आदिका ज्ञान करा देना चाहिए। इनमें से किसीके लिए भी पहले लिखना-पढ़ना सिखानेकी बिलकुल जरूरत नहीं है। बच्चा लिखना सीखे, इससे पहले उसे पढ़ना सिखाना चाहिए। लिखना आखिरमें सिखाया जाये। वर्णमाला लिखनेसे पहले उसे चित्र बनाना सिखाना चाहिए। सीधी लकीर, आड़ी लकीर, त्रिकोण वगैरह अच्छी तरह बनाने लगे, उसके बाद अक्षरोंके भी चित्र ही बनाये। इस ढंगसे काम लिया जाये तो बच्चोंको कष्ट न होगा और बहुत-कुछ ज्ञान जबानी ही प्राप्त कर लेनेके बाद जब वे अक्षर बनायेंगे तो वे मोतीके दाने-जैसे होंगे। 'दासबोध'[2] में अक्षरोंपर एक प्रकरण है, जो पढ़ने और विचार करने लायक है। दिलीपके अक्षर देखकर यह लिखनेकी इच्छा हुई। इसमें जितना आपको लेने लायक लगे, उतना लेकर बाकीको भूल जायें। मेरे बहुत खराब अक्षर मेरी रायका समर्थन करते हैं। मेरे अक्षर गलत शिक्षाका परिणाम हैं।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृ० ३९०-१

१. यह पत्र मथुरादास त्रिकमजीके पुत्र दिलीप के निजी शिक्षकको लिखा गया था। किन्तु साधन-सूत्रसे उनके नामका पता नहीं चलता।

२. समर्थ गुरु रामदास-कृत।

११. पत्र : विमलकिशोर मेहरोत्राको

१ सितम्बर, १९३२

चि० विमलकिशोर[1],

सब 'गीता' पढ़ते हैं क्योंकि 'गीता' हमारी माता है और जब कुछ प्रश्न उठता है तो उसे पूछते हैं।

बापू

सी० डब्ल्यू० ४९८३ से; सौजन्य : परशुराम मेहरोत्रा। जी० एन० ७५०६ से भी

१२. पत्र : रामचन्द्र ना० खरेको

२ सितम्बर, १९३२

चि० रामचन्द्र,[2]

तेरा पत्र मिला। हीराकी कहानी अच्छी बन पड़ी है। कह सकते हैं कि तूने उसे ठीक लिखा है। किताबमें से देखकर लिखी है न? हीराकी ही तरह बहादुर और वफादार बनना। तू शालासे क्यों निकल गया, यह तूने नहीं लिखा, लेकिन मेरे पास तेरे खिलाफ तीन जगहोंसे शिकायतें आई हैं। तुझमें दोष हैं, यह तो मैं जानता ही हूँ। लेकिन, मैं समझता था कि अब वे कम हुए होंगे और तू सुधरनेका प्रयत्न कर रहा होगा। बाहरसे तो तू सुधरा जान पड़ता है। तेरे अक्षर अच्छे हैं, और तू ठीक लिखना भी जानता है। लेकिन हृदय भी उतना ही अच्छा होना चाहिए, शुद्ध होना चाहिए। जोड़-तोड़ नहीं करनी चाहिए, झूठ नहीं बोलना चाहिए। असन्तोषके जो-जो कारण हों, मुझे बता। पण्डितजी की आज्ञानुसार तो तुझे चलना ही चाहिए। लगता है, तूने अपनी प्रतिज्ञाका पालन नहीं किया है। दिल खोलकर मुझे सब-कुछ साफ-साफ लिखना।

भगवान् तुझे अच्छा बनाये।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २९७) से; सौजन्य : लक्ष्मीबहन ना० खरे

१. परशुराम मेहरोत्राके पुत्र।

२. नारायण मोरेश्वर खरेके पुत्र।

१३. पत्र : योगा वी० खरेको

२ सितम्बर, १९३२

चि० योगा,[1]

इसे तू पढ़ या समझ न सके तो पण्डितजी से पढ़वा लेना। तुझे जैसा अच्छा अभी लगता है, वैसा ही सदा लगता रहे और तेरा स्वास्थ्य जैसा अच्छा आज है, वैसा ही रहे और और भी सुधरे। जिसमें सीखनेकी इच्छा है, उसके लिए आश्रममें सीखने लायक बहुत है। वह सब तू धीरे-धीरे सीख लेना। मुझे पत्र लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ३११) से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे

१४. एक पत्र

२ सितम्बर, १९३२

यह विश्वास रख कि चाहे जैसा राक्षसी वृत्तिका आदमी हमला करे, तो भी उसका मुकाबला करनेकी ताकत ईश्वर तुझे अवश्य देगा। जरा भी डरना नहीं चाहिए। ऐसी नौबत आ जाये तो जितना जोर हो सब लगा देना चाहिए। इसका नाम हिंसा नहीं है। चूहा बिल्लीकी हिंसा कर ही नहीं सकता, मगर चूहा ठान ले तो बिल्ली उसे जीते-जी नहीं खा सकती। इस तरह बिल्लीके मुँहसे निकल जानेवाला चूहा बिल्लीकी हिंसा नहीं करता। क्या यह बात समझमें आती है? यह याद रखना चाहिए कि व्यभिचारी पुरुष हमेशा कायर होता है। वह पवित्र स्त्रीका तेज सह नहीं सकता। उसके गरजनेसे वह काँपने लगता है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृ० ३९१-२

१. नारायण मोरेश्वर खरेकी भतीजी।

१५. एक पत्र

२ सितम्बर, १९३२

अपने प्रियजनोंपर हमें ऐसा प्रेम नहीं रखना चाहिए कि हमें उनके हर शब्दसे उनके नाराज होनेकी ही गन्ध आये। हममें इतना आत्मविश्वास होना चाहिए कि प्रियजन हमसे नाराज ही नहीं होंगे। यदि ऐसा नहीं होगा, तो हम प्रियजनोंके साथ अन्याय करने लगेंगे।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग – १, पृ० ३९२

१६. पत्र : हीरालाल शर्माको

२ सितम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

तुम्हारा पत्र मिला। पश्चिममें प्राकृतिक चिकित्साकी संस्थाओंके विषयमें तुमने जो सुना या पढ़ा है, वह तो दूरके ढोल सुहावनेवाली बात है। एक ऐसी संस्थाके विषयमें, जिसका अत्यधिक विज्ञापन किया गया था, जब एक मित्रने पूछ-ताछ की तो ज्ञात हुआ कि उस स्थानके लोग भी उसके सम्बन्धमें कुछ नहीं जानते। इसका अर्थ यह नहीं कि उनमें कुछ है ही नहीं। मेरा तात्पर्य इतना ही है कि यह समूचा विज्ञान अभी अपनी शैशवावस्थामें है, और इन संस्थाओंने चिकित्साकी सबके लिए कोई एक समान विधि नहीं अपनाई है। वे जो-कुछ भी हैं, अपने संस्थापकोंके मौलिक अनुसंधानोंके ही फल हैं। हम भारतीयोंको तो अपनी परिस्थितियोंके अनुसार ही अपना अनुसंधान स्वयं करना होगा। उनसे हमें जो-कुछ मिल सकता है, वह उनके प्रकाशित साहित्यसे हम आसानीसे पा सकते हैं।

जहाँतक खुद तुम्हारे स्वास्थ्यका सम्बन्ध है, तुम्हारे पत्रसे तो यही लगता है कि वह बहुत अच्छा नहीं है। रूढ़िवादी चिकित्सकोंका अनुकरण करनेसे तुम्हारा काम नहीं चलेगा। तुम तो एक पथ-प्रदर्शक हो, अतएव तुम्हें ऐसा काम करके दिखाना है जो कठिनसे-कठिन कसौटीपर भी खरा उतरे।

मुझे प्रसन्नता है कि तुमने पश्चिम जानेका विचार छोड़ दिया है। अपने शरीर को ही बनाओ। ऐसा करनेसे तुम बहुत-से आविष्कार स्वयं कर लोगे। हो सकता

है कि तुम्हारी प्रगति धीमी हो, परन्तु यदि मूलाधार ठोस है तो वह जितनी भी होगी, सुनिश्चित होगी। . . .

तुम्हारा शुभचिन्तक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष : १९३२-४८, पृ० १२-३

१७. पत्र : डॉ० सुरेशचन्द्र बनर्जीको

३ सितम्बर, १९३२

प्रिय सुरेश,

तुम्हारा दूसरा पत्र पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई। ईश्वर करे, तुम्हारी आशा पूरी हो। तुम्हारा असाधारण प्रयत्न निश्चय ही सफलताके योग्य है। अपनी प्रगति समय-समयपर सूचित करते रहना। मालवीयजी तुम्हें देखने और आशीर्वाद देने गये, यह उनके अनुरूप ही था।[1]

तुम्हें या तुम्हारी सहायता करनेवाले डॉक्टरोंको क्या तुम्हारी बीमारीके कारण का पता लगा है? तुम तो हर तरहसे बिलकुल स्वस्थ दीखते थे, फिर एक खतरनाक रोगके कीटाणुओंके शिकार कैसे हो गये? या कि यह मानूँ कि चिकित्साविज्ञान अब भी इतना अपूर्ण है कि हम देहधारी जिन बहुत सारे रोगोंके शिकार होते हैं, उनके कारणोंका निश्चित रूपसे पता लगानेमें वह अक्षम है?

हम सबकी ओरसे स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]
एडवांस, १३-९-१९३२

१. सुरेशचन्द्र बनर्जी कलकत्तामें क्षय रोगका इलाज करा रहे थे।

१८. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

३ सितम्बर, १९३२

पण्डितजी,

मन्दिरके विषयमें तुमने ठीक लिखा। अब भी तुम्हारे मनमें कुछ हो, तो लिखना। इस सम्बन्धमें मेरी ही बात चले, ऐसा मेरा आग्रह नहीं है। इस विषयमें मेरे विचार निश्चित हो चुके हैं। अपने विषयमें मैंने कहा है कि मैं मूर्तिपूजक भी हूँ और मूर्तिभंजक भी। शरीरधारीकी कल्पनाका ईश्वर मूर्तिमन्त ही होता है, भले ही वह मूर्ति उसकी कल्पनामें ही रहे, लेकिन वह होती तो है। इस अर्थमें मैं मूर्तिपूजक हूँ। लेकिन, किसी भी रूप या आकृतिकी परमेश्वरकी तरह पूजा करनेपर मेरा मन कभी राजी नहीं हुआ। वहाँ तो मेरे मनमें 'नेति, नेति' का ही स्वर उच्चरित होता है। इसीलिए मैंने अपनेको मूर्तिभंजक [भी] माना है। इस तरह विचार करते हुए मेरे मनमें हमेशा यही खयाल रहा है कि हमें आश्रममें मन्दिर नहीं बनाना चाहिए। इसीलिए, प्रार्थनाके लिए भी हमने मकान नहीं बनवाया। हम आकाशकी छत और दिशाओंकी दीवार बनाकर उसीमें बैठते हैं। यदि हमें सभी धर्मोंके प्रति समभाव रखना हो तो हमारी स्थिति यही होनी चाहिए। आजकल वेदादिका थोड़ा-बहुत परिचय पानेकी कोशिश कर रहा हूँ। उनमें भी ऐसा ही देखता हूँ। उनमें कहीं भी मूर्तिपूजाके लिए स्थान नहीं देखता। फिर भी, हिन्दू धर्ममें मूर्तिपूजाका स्थान है। इसलिए हमें उसका विरोध नहीं करना चाहिए। लेकिन मूर्तिकी पूजा आवश्यक नहीं है। यह तो व्यक्तिकी इच्छापर निर्भर है। इसलिए मुझे लगता है कि हम एक संस्थाके रूपमें बिना मन्दिरके ही रहें तो अच्छा। जिसे मैंने समाधि माना है, वह यदि मन्दिर हो तो भी उसे सार्वजनिक संस्था न बनाया जाये। इस जमीनका मालिक इसे गिरा कर इसकी ईंटें ले जाना चाहता था। मैंने उसका पैसा भरकर उस स्थानको बचा लिया। लेकिन उसे मन्दिर बनानेकी मेरी इच्छा नहीं है। जिन लोगोंको इस प्रश्नकी समझ है उनके साथ बातचीत करके तुम्हें मुझे पुनः कुछ लिखना हो तो लिखना। कोई संकोच न करना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २३३) से; सौजन्य : लक्ष्मीबहन ना० खरे

१९. पत्र: परशुराम मेहरोत्राको

३ सितम्बर, १९३२

चि० परसराम,

तुम्हारा पत्र और प्रश्न मिले। तुम ही मुझे छोड़ दो, यह तो सम्भव है — वैसे, चाहता तो यही हूँ कि ऐसा न हो — लेकिन मैं तो तुम्हें कभी छोड़नेवाला नहीं हूँ, क्योंकि मुझे तो तुमसे बहुत सारी सेवाएँ लेनी हैं। मेरा एक नुस्खा है; उसे कभी भूलना मत: जब भी अपने साथीके प्रति मनमें रोष अथवा कुभाव उत्पन्न हो, या ऐसा लगे कि उसने अन्याय किया है तो तुरन्त अपने भीतर गहरे उतरकर मनमें विचार करना चाहिए और कहना चाहिए: 'मैं इसी लायक हूँ। इसमें साथीका कोई दोष नहीं, मेरा ही दोष है। जाने-अनजाने मैंने ही उसे इसका कारण दिया होगा, तभी वह मेरे प्रति ऐसा रोष करता है या कुभाव दिखाता है।' जब मनको ऐसा निश्चय हो जाये और वह शान्त हो जाये तब तुरन्त साथीके पास पहुँचना चाहिए और उससे पूछना चाहिए कि उसने तुममें कौन-सा दोष देखा है। और वह जो दोष बताये उसे अपने भीतर ढूँढ़कर दूर करनेका प्रयत्न करना चाहिए। ऐसा करनेसे हमेशा शान्ति रहेगी और संसारके प्रति उदार भाव पैदा होगा तथा फिर किसीकी कोई बात हमें बुरी नहीं लगेगी।

अगर मालिशसे दर्द सचमुच कम हुआ हो तो यह अच्छा ही है। इस विषयमें अपनेको कभी धोखा मत देना। शल्य-क्रिया करानी ही पड़े तो उससे डरना नहीं।

वह नाव डूब गई, उसमें दैवयोग तो था ही, लेकिन उससे हमारे लोगोंकी भीरुता भी प्रकट होती है। यह इस बातका भी प्रमाण है कि हममें मृत्युका कितना अधिक भय है। यदि लोग यह समझ लेते कि यह साँप सबको तो काट नहीं सकता, तो कोई भी एक आदमी उसे उठाकर नदीमें फेंक सकता था अथवा मारना चाहता तो मार सकता था। लेकिन जहाँ किसीको किसीकी पड़ी ही न हो और सभी भयभीत हों वहाँ तो यही नतीजा निकलेगा। इससे हमें तो यही सार निकालना है कि हमें अपने मनमें किसी तरहका भय नहीं रखना चाहिए और ऐसे कठिन प्रसंग आनेपर यही प्रार्थना करनी चाहिए कि ईश्वर हमें सुबुद्धि दे।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५०७) से। सी० डब्ल्यू० ४९८४ से भी; सौजन्य: परशुराम मेहरोत्रा

२०. पत्र : विद्या आर० पटेलको

३ सितम्बर, १९३२

चि० विद्या,

तेरा पत्र मिला। अपनी लिखावटमें खूब सुधार कर। प्रेमाबहनसे पूछ कि यह कैसे हो सकता है। बिस्तरपर जाते ही तुरन्त नींद न आये तो आँखें बन्द करके रामनाम रटना चाहिए। बस, नींद आ ही जायेगी।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४३२) से; सौजन्य: रवीन्द्र आर० पटेल

२१. पत्र : सुलोचनाको

३ सितम्बर, १९३२

चि० सुलोचना,

तेरे अक्षर ठीक हैं। लेकिन अब भी बहुत अधिक सुधारकी गुंजाइश है।
कातनेकी गति क्या है?
गुलाब तुझे क्यों मारती है?
सब-कुछ ठीक-ठीक सीखना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७३८) से।

२२. पत्र : काशी नागरी प्रचारिणी सभाके मन्त्रीको[1]

३ सितम्बर, १९३२

प्रधान मंत्रीजी,

आपका खत मुझे मिला है। यद्यपि आचार्य श्री महावीरप्रसादजी से मेरा सीधा परिचय नहिं तदपि उनकी भाषा-सेवासे मैं अपरिचित नहिं हुं। उनके ७० वर्ष प्रवेश-के अवसरपर उनका सम्मान हिंदी प्रेमीयों द्वारा होना सर्वथा उचित समझता हुं।

आपका,
मोहनदास गांधी

श्री प्रधान मंत्रीजी
नागरी प्रचारिणी सभा
बनारस सिटी

सी० डब्ल्यू० ९६६३ से। सौजन्य: भारत कला-भवन

२३. पत्र : नारणदास गांधीको

३/४ सितम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मंगलवारको मिला। नियमानुसार कानाके[2] बारेमें अलगसे भेजा पत्र भी मिला। रामदासको जब और जो खबर देना जरूरी लगता है, देता रहता हूँ। आज पोस्टकार्ड आनेकी आशा थी, लेकिन आया नहीं। कुरैशीके[3] ऑपरेशनका तार मुझे प्यार अलीने[4] भेजा था। उसका पत्र भी आ गया है। चम्पाको[5] कार्ड लिखा था, वह मिल गया होगा। जो नई लड़कियाँ आती हैं, उनके लिए यथासम्भव शिक्षाकी व्यवस्था करना। मुझे ऐसा लगता रहता है कि इस तरहके कार्योंके बारेमें सोचकर उनकी योजना बनानेके लिए तुम्हें कुछ ज्यादा अवकाश मिलना ही चाहिए।

१. इस पत्रका ब्लाक महावीरप्रसाद द्विवेदीके सत्तरवें जन्म-दिवसपर भेंट किये गये **द्विवेदी अभिनन्दन ग्रंथ**में प्रकाशित हुआ था।

२. रामदास गांधीके पुत्र।

३. गुलाम रसूल कुरैशी।

४. बम्बईके एक व्यापारी।

५. डॉ० प्राणजीवन मेहताके लड़के रतिलाल मेहताकी पत्नी।

लीलाधरके[1] लिए बहुत किया है। वह अपना स्थान या स्वार्थ भी न समझे तो हम कर भी क्या सकते थे? तुम्हें जो उचित लगे वही करना। इन्दु[2] माँ-बापके प्रेमका बहुत भूखा है। उसके हृदयको समझनेकी कोशिश करना। कुसुमको[3] लिखा पत्र पढ़ना। वह समझदारीसे उपचार करेगी तो सब-कुछ ठीक हो जायेगा। लेकिन, यदि वह केवल तुम्हें प्रसन्न करने-भरको ही विश्राम लेगी और उतना ही उपचार करेगी तो या तो शरीर खो देगी या फिर अपंग होकर बादमें रोती रहेगी। इस बारके साप्ताहिक लेखमें नारायण अप्पाके किस्सेके बारेमें लिखनेवाला हूँ। इसमें कुछ नये-से लगनेवाले विचार आयेंगे। उन्हें तुम खुद भी समझना और फिर लड़कियोंको भी समझाना।

बुधवारसे मैंने दूध शुरू किया है। इसका मुख्य कारण तो यह है कि मैं देखना चाहता हूँ कि दूध लेनेपर भी बाजरा मेरी कोष्ठबद्धता दूर करनेमें सहायक रहता है या नहीं। आज शनिवार है। आजतक तो कोई बुरा असर नहीं हुआ है और अन्यथा मेरी तबीयत अच्छी ही चल रही है। बाजरा और केला अभी प्रतिकूल तो साबित नहीं हुए हैं।

परशुराम तो, जैसा तुम कहते हो, वैसा ही है। वह बहुत अव्यवस्थित होनेके बावजूद मुझे सेवाके उपयुक्त आदमी लगता है। उसका हेतु अच्छा होता है। अकसर खूब मेहनत करनेकी शक्तिका परिचय देता है।

शंकरभाईका हाथ अब तो बिलकुल ठीक हो जाना चाहिए। वह अस्थि-चिकित्सक गाँवका सीखा हुआ है या उसने विलायती पद्धतिकी शिक्षा ली है?

विनोबाकी योजना बहुत अच्छी है। यदि योग्य लोग हों तो बहुत काम हो सकता है। छक्कड़दास और केशूकी[4] पूनियाँ आज ही मिलीं। अब पतलेसे-पतला तकुआ चाहिए। तभी यहाँका प्रयोग पूर्ण रूपसे सम्पन्न किया जा सकता है। पुस्तकें भी मिली हैं। मैंने जो पुस्तकें मँगवाई थीं, उनमें से कितनी भेजी गई हैं, यह तो शायद देखकर ही लिखूँगा।

काकाके दूध-घीका जो पैसा हमें मिलता है, वह मिलना चाहिए, क्योंकि उन्हें बेलगाँवमें ये चीजें सरकारकी ओरसे मिलती थीं। वे उन्हें पूरा दूध न दे पाते हों तो हमें तो देना ही है। लेकिन 'छाछमें माखन जाये और नार फूहड़ कहलाये'[5], यह तो हमें नहीं होने देना है। जरूरी लगे तो सुपरिंटेंडेंटसे मिलकर बात कर लेना।

१. आश्रमके पास स्थित वाड्ज नामक स्थानके एक दुकानदार; १९३१ में जब उनकी पत्नी रुग्ण थीं, तो नारणदास उन्हें और उनके परिवारको आश्रममें ले आये थे।

२. इन्दु पारेख, आश्रम-शालाका एक छात्र।

३. आश्रम-शालाकी छात्रा, व्रजलाल गांधीकी पुत्री।

४. मगनलाल गांधीके पुत्र।

५. गुजरातीकी एक कहावतका यहाँ केवल शाब्दिक अनुवाद दिया गया है।

मगनभाईको[1] लिखे पत्रमें प्रवचनोंके[2] [संकलनके] लिए नाम तो सुझाया है। लेकिन, ज्यादा विचार करनेपर मुझे यह लगता है कि अभी उन्हें छपवानेकी उतावली न करें तो हर्ज नहीं। उन्हें मैंने बहुत जल्दीमें लिखा है; तुम सब उन्हें शुद्ध करके पढ़ सकते हो, और अगर कोई बात समझमें न आये तो उसमें भी मैं बहुत चिन्ताकी बात नहीं मानता। कहीं-कहीं वाक्य अस्पष्ट रह गये हों तो भी कोई हर्ज नहीं। लिखकर फिर पढ़ ही जाऊँ, ऐसा नहीं हो पाता, इसलिए उनके प्रकाशनसे पहले प्रकाशनकी दृष्टिसे उन्हें पढ़ जानेका लोभ मेरे मनमें है। इसलिए मैं यह कहना चाहता हूँ कि अब भी अगर इस दिशामें कोई खर्च न किया हो तो छपाई मुलतवी रखो। लेकिन, अगर तुमको, मगनभाई को, पण्डितजी को और छगनलालको — यदि वह वहाँ हो तो — उसके अर्थके बारेमें कहीं कोई उलझन न हो और जहाँ भाषा अस्पष्ट हो वहाँ उसे स्पष्ट करना सम्भव हुआ हो तो खुशीसे छापो। तुमने 'मंगल-प्रभात', भाग २, यह नाम सुझाया है। लेकिन मुझे यह ठीक नहीं लगा। कारण, इस बारके लेख कुछ अलग दृष्टिसे लिखे गये हैं; मतलब यह कि मेरी दृष्टिमें मुख्यतः आश्रमवासी ही रहे हैं। इसलिए मैंने 'आश्रमवासी प्रत्ये'[3], यह नाम सुझाया है, ताकि उसकी मर्यादा समझी जा सके और जो अपनेको आश्रमवासी-जैसा ही मानें, वे समझें कि ये उनको ध्यानमें रखकर लिखे गये हैं। लेकिन मेरा ऐसा कोई आग्रह नहीं है कि यही नाम रखा जाये। यदि तुम सबको कोई दूसरा नाम ठीक लगे तो वही रखना।

मंजुलाके[4] धर्मसंकटके बारेमें सोचना। कॉडलिवर ऑयलसे वह चंगी हो सकती हो तो उसे कॉडलिवर ऑयल देना ही कदाचित् धर्म हो। मंजुला स्वतन्त्र रूपसे स्वयं विचार कर सकती हो, ऐसा तो नहीं ही है। शायद वह काशी[5] पर भरोसा रखती हो। उस दशामें वह उसीकी इच्छाके अनुसार बरते, यह ठीक होगा। अगर[6] काशीका यह आग्रह हो कि यह न दिया जाये तो नहीं देना चाहिए। लेकिन, अगर मंजुला

१. मगनभाई देसाई।

२. आश्रमवासियोंके लिए विशेष अभिरुचिके विषयोंपर लिखे गये; इन्हें गांधीजी ने २९ फरवरी, १९३२ से ११ सितम्बर, १९३२ तक नारणदास गांधीके पत्रोंके साथ भेजा था। ये लेखन-तिथिके अन्तर्गत खण्ड ४९, पृ० १६१ से शुरू होते हैं।

३. पहले तो ये प्रवचन इसी नामसे छपे, लेकिन बादमें पुस्तकका नाम बदलकर **आश्रम जीवन** कर दिया गया।

४. व्रजलाल गांधीकी पुत्री।

५. व्रजलाल गांधीकी विधवा।

६. साधन-सूत्रमें इससे आगे जो-कुछ लिखा मिलता है, वह इस पत्रका अंश नहीं जान पड़ता। विषय-वस्तुको देखनेसे लगता है कि इस पत्रके दो पृष्ठ गलतीसे उस पत्रके दो पृष्ठोंके साथ मिल गये जो [७]/११ सितम्बर, १९३२ को लिखा गया था; देखिए पृ० ४९ की पाद-टिप्पणी २।

इस पत्रका आगेका अंश नारणदास गांधीको लिखे उस पत्रसे लिया गया है जो **बापुना पत्रो–९: श्री नारणदास गांधीने**, भाग-१, नामक पुस्तकमें गलतीसे ४ जुलाई, १९३२ की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत छपा है। "संकटमें बहनें क्या करें", ४-९-१९३२, शीर्षक लेखके उल्लेखसे इस बातकी पुष्टि होती है।

बच्ची होते हुए भी थोड़ा-बहुत समझकर लेनेका आग्रह करे तो उसके आग्रहका भी खयाल करना मैं योग्य मानता हूँ। अब जो करना उचित लगे, करना।

आश्रमका इतिहास लिखते हुए मनमें एक विचार आया है। मुझे धुँधला-सा स्मरण है कि इस विषयमें पहले भी मैं तुम्हें लिख चुका हूँ। मुझे नहीं मालूम कि आश्रमकी स्थापनाके दिनसे आजतक जो लोग थोड़े-बहुत समयके लिए आश्रममें रहनेके लिए आये, उनके नामोंकी सूची हमारे पास है या नहीं। यदि नहीं हो तो उन्हें याद करके लिखा जा सकता है। उनकी पंजिका बना लेनी चाहिए और उसमें उनके सम्पूर्ण नाम, वे जहाँके रहनेवाले थे उन स्थानोंके नाम, उम्र, पुराना धन्धा, शिक्षा, वैवाहिक स्थिति आदि तथ्य होने चाहिए। आश्रममें विशेष क्या सीखा, आश्रम क्यों छोड़ा, अभी कहाँ हैं, यह सब भी दर्ज होना चाहिए। आगे जो नये लोग आयें उनके नाम इस बहीमें दर्ज किये जाते रहें, जिससे एक ही बहीसे इस तरहकी जानकारी मिल सके। अभी तो यह सब जाननेमें मेरा हेतु इतना ही है कि आश्रममें कितने लोग आये, और कितने किस तरहसे तैयार हुए और वे किस तरहके कार्योंमें लग गये हैं, यह सब मालूम कर सकूँ। यदि आजतक हमारे पास ऐसी कोई सूची न रही हो तो जैसे-जैसे देर होगी, यह काम ज्यादा मुश्किल होता जायेगा।

तुमने सैंडलके तलेके लिए दूसरी वार जो चमड़ा भेजा था, वह भी खुट गया है। यह चमड़ा इतना ज्यादा कच्चा होता है कि यहाँ उसका बहुत कम उपयोग होनेपर भी मुश्किलसे महीना-भर ही चल पाता है। कंजूसी बरतते हुए मैंने तलेकी मरम्मतके लिए चमड़ेके छोटे-छोटे टुकड़े भी भेजे हैं। लेकिन हमें तो तलेके लिए मरे ढोरका जो चमड़ा मिल सकता है, उसीसे निर्वाह करना है। इसलिए, एक-दो टुकड़े फिर भेज दो।

४ [सितम्बर], १९३२[1]

हेमप्रभादेवी[2] मुझे नियमपूर्वक पत्र लिखनेवाली बहन थीं। इन दिनों उनका पत्र नहीं आता। हाँ, बीचमें एक पोस्टकार्ड जरूर आया था। तुम्हारे पास उनके पत्र आते हैं क्या? आते हों तो उनके स्वास्थ्यका समाचार लिखना। उन्हें भी एक पोस्टकार्ड या पत्र लिख भेजना और कहना कि मैंने उनका पत्र न आनेकी शिकायत की है। उनके पत्र मुझे नियमपूर्वक मिलने चाहिए। यदि वे नियमपूर्वक लिखती रही हों और उन पत्रोंकी तारीखें भी लिख रखी हों तो मुझे भेजें। सम्भव है कि वे लिखती रही हों। कई बार पत्र भटक भी जाते हैं। यहाँ तो गड़बड़ होना सम्भव नहीं है, लेकिन यह हो सकता है कि पत्र यहाँतक पहुँचे ही न हों।

१. साधन-सूत्रमें "४-७-१९३२" दिया गया है।

२. सतीशचन्द्र दासगुप्तकी पत्नी।

रजिस्ट्रीसे भेजी अनन्तपुरकी रिपोर्टकी[१] पहुँचकी रसीद तुमने भेज दी होगी। साथमें देवदासका भेजा फोटो भेज रहा हूँ। बा को भी दिखाना।

बापू

[पुनश्च :]

इतना लिखनेके बाद तुरन्त बहनोंके विषयमें लेख लिखने बैठ गया। अभी पूरा किया है। मुझे लगता है कि यह बहुत महत्त्वका है। लेकिन शायद समझमें न आये। यदि तुम इसे पूरा समझ न पाओ तो नये लोगोंको मत पढ़वाओ। मुझे फिर लिखो। अगर इसका सत्य तुम्हारी समझमें आ जाये और तुम उस तमाचेमें अहिंसा देख सको तो इसे [उनके सामने] मजेसे पढ़ जाओ, और जो शंकाएँ उठें उनका समाधान करते जाओ। मेरी सलाह तो यही है। तुम पढ़कर समझ जाओ तो फिर पण्डितजी तथा अन्य वरिष्ठ लोगोंको पढ़नेको दो। प्रेमा भी पढ़े और अगर ये सब इसको समझ जायें तो सबको, और चूँकि यह मुख्यतः बहनोंके लिए है, इसलिए उन्हें पढ़नेको दो। इसके छपवानेकी तो कोई बात ही नहीं है। उससे अनर्थ होते देर नहीं लगेगी। जिनको अहिंसाका संस्कार है, वे तो समझेंगे ही; कमसे-कम अनर्थ तो नहीं ही करेंगे। ऐसे लेख मेरे जेलसे निकलनेके बाद ही प्रकाशित किये जा सकते हैं। अभी तो तुम सब समझ लो तो यही काफी है। यदि मेरी कल्पना और मेरा अनुभव सही है तो कहूँगा कि इसमें प्रस्तुत किये गये विचारोंपर जब अमल किया जायेगा तो अधिकांश लोगोंको उनमें निहित सत्य निश्चय ही प्रकट होगा।

बापू

[पुनश्च :]

कुल ४८ पत्र हैं; ३९ धागेसे एक साथ नत्थी किये हुए हैं, और ८ अलग-अलग हैं तथा एक फोटो भी है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) और **बापुना पत्रो – ९ : श्री नारणदास गांधीने,** भाग-१, पृ० ४६३-७ से।

१. देखिए खण्ड ४९, पृष्ठ ४०३।

२४. संकटमें बहनें क्या करें?

अहिंसापर विचार करते समय [एक प्रश्न यह उठाया जाता है कि] यदि किसी बहनपर कोई राक्षसी वृत्तिका पुरुष हमला करने आये और उस समय यदि वहाँ कोई पुरुष हो तो क्या उसे शस्त्रबलसे उस बहनके शीलकी रक्षा नहीं करनी चाहिए? क्या बहनोंको स्वयं शस्त्र चलानेकी शिक्षा लेकर अपनी रक्षा करना नहीं सीखना चाहिए? इस सम्बन्धमें मैं अपनी राय दे चुका हूँ। शस्त्रबलका प्रयोग करना निश्चय ही हिंसा-दोष माना जायेगा। किन्तु इसका ऐसा अर्थ मैंने कभी किसीको नहीं करने दिया कि पास खड़े हुए पुरुष या स्त्रीको उस बहनकी रक्षा नहीं करनी चाहिए और उसके शील-भंगको सहन कर लेना चाहिए। इसके विपरीत मैंने तो यह कहा है कि जो पुरुष इस प्रकार शील-भंग होने देगा, वह कायर माना जायेगा। वह हिंसामें भागीदार होगा क्योंकि कायरतामें ही हिंसा छिपी हुई है। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि कायरकी हिंसाकी अपेक्षा वीरकी हिंसा बहुत कम दोषपूर्ण है। किसी वीर पुरुष या स्त्रीको अहिंसाका पाठ पढ़ाया जा सकता है किन्तु किसी कायरको यह पाठ पढ़ाना लगभग असम्भव जान पड़ता है। उन सब बातोंको दुहरानेके लिए मैंने यह लेख आरम्भ नहीं किया है। ये सब बातें तो मेरे बहुत-से लेखोंमें जगह-जगह मिल जायेंगी।

एक बात जो मैंने शायद कहीं नहीं लिखी, उसे जरूर यहाँ लिखना चाहता हूँ। आश्रमकी बहनोंको जंबिया आदिके दाव-पेंच सीखनेसे मैंने रोका है। जो बहन अपने शीलकी रक्षाके लिए जंबिया या 'गोठी' पर निर्भर रहती है, वह किसी दिन धोखा खाती है। यदि जंबिया या 'गोठी' को कोई छीन ले तो वह बलहीन हो जायेगी और इस प्रकार उसके राक्षसके चंगुलमें फँसनेकी सम्भावना बनी रहती है। यह प्रसंग . . .[2] सीता हैं। सीताके पास कोई शस्त्र नहीं था। किन्तु उनके पास आत्मिक बल था। अतः मलिन स्पर्श करनेके पहले रावणके लिए उनकी सम्मति लेना आवश्यक था। बहनोंमें ऐसा ही आत्मविश्वास होना चाहिए और इसी कारण हमने विशेष रूपसे बहनोंके लिए द्रौपदीकी प्रार्थना आरम्भ की है। किन्तु यह तो आदर्शकी बात हुई। जिस बहनके पास राक्षस आ खड़ा हुआ है, वह उस समय क्या करे? यदि उसमें सचमुच वीरता होगी और करुणा भी होगी तो वह उससे डरनेके बजाय अपनी तेजोमय करुणाके द्वारा ही उसे पिघला देगी। किन्तु मान लिया जाये कि उस बहनमें ऐसी भावना उत्पन्न नहीं हुई तो उसमें क्रोधकी भावना तो होगी

१. **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-१, पृ० ३९४-५।

२. यहाँ कुछ शब्द अस्पष्ट होनेके कारण पढ़े नहीं जा सके।

ही। इस क्रोधसे प्रेरित होकर वह उस राक्षसको तमाचा मारेगी और ऐसी चीख-पुकार मचायेगी कि वह वहाँसे भाग जायेगा। या फिर वह वहीं उसके पैर पड़ेगा। कहनेका तात्पर्य यह कि बहन अपने शारीरिक बलका पूरी तरह प्रयोग करेगी। तो क्या यह हिंसा नहीं हुई? यदि ऐसा ही है तो फिर हथियार क्यों न रखा जाये? मेरा अभिप्राय यह है कि हथियार रखने और उन्हें चलाना सीखनेमें तो हिंसा है किन्तु उपर्युक्त परिस्थितिमें तमाचा मारने, नोचने-खसोटने आदिमें हिंसा नहीं है। यदि चूहे द्वारा बिल्लीको काटनेमें हिंसा होती हो तभी उक्त स्थितिमें पड़ी हुई स्त्रीका वैसा व्यवहार भी हिंसा माना जायेगा। तमाचा मारनेवाली बहन अपने तमाचेपर विश्वास नहीं करती बल्कि उसका विश्वास अपने प्रभुपर है। अलबत्ता, उसके मनमें करुणा उत्पन्न नहीं हुई है। क्रोध करना तो सभीको आता है। उक्त बहन क्रोधके द्वारा अपना विरोध प्रकट करती है। व्यभिचारी पुरुष जब किसी बहनके पास जाता है तो वह यह मान लेता है कि उक्त बहनको वह वशमें कर लेगा अर्थात् आखिरकार वह भी कामातुर हो उठेगी। वह बहन यह कैसे बताये कि यह असम्भव है? या तो अपनी शान्त किन्तु प्रचण्ड करुणासे अथवा अपने कोलाहल और छटपटाहटसे! तमाचा आदि मारना तो वैसा ही है जैसे बिल्लीके सामने चूहेकी छटपटाहट। उस बहनके तमाचेसे व्यभिचारी व्यक्तिको किसी प्रकारकी शारीरिक चोट तो नहीं लगती। यदि हम जरा गहराईमें उतरें तो यह बात स्पष्ट हो जायेगी। यहाँ मैं राक्षसी बलवाली स्त्रियोंकी बात नहीं कह रहा हूँ। ऐसी स्त्री तो अपने राक्षसी बलके घमण्डमें भूली होगी और यदि उसकी अपेक्षा ज्यादा बलवान व्यक्ति आ पहुँचे तो शायद वह आत्मसमर्पण कर देगी। यहाँ मेरी नजरके सामने आश्रमकी बहनों-जैसी शारीरिक बलसे रहित किन्तु आत्मबलमें विश्वास करनेवाली बहनें या बालाएँ हैं। उनका तमाचा हिंसाकी निशानी नहीं बल्कि उनके विरोधकी पुकार है। उनकी यह पुकार उस व्यभिचारीको दीन बना देगी, क्योंकि गुनाह कायर होता है। वह व्यभिचारी व्यक्ति यह जानता है कि वह गुनाह कर रहा था। मेरे इस सुझावके पीछे यह विश्वास है कि वह बहन मृत्युपर्यन्त उस पुरुषको कदापि आत्मसमर्पण नहीं करेगी। उसका यह क्रोध, उसकी यह जागृति, स्वयं उसके लिए और उसी प्रकार उस व्यक्तिके लिए, उसके इस निश्चयकी सूचक है कि वह मरनेके लिए तैयार है। क्योंकि मैं जो कल्पना करता हूँ, वैसा न होकर ऐसा भी हो सकता है कि वह राक्षस उस बहनके क्रोधके कारण दीन बननेके बजाय उसे चोट पहुँचाये और उसे पछाड़नेका निश्चय करे। उस समय यदि वह बहन दब जाये, यदि उसे भगवान् याद न आये, यदि वह अपना आत्मविश्वास खो बैठी हो तब तो वह काँप रही होगी और उसे मरनेकी बात नहीं सूझेगी। और यदि मरनेकी बात सूझेगी भी तो मरना नहीं आयेगा। भयभीत और . . .[1] आत्मविश्वास सर्वथा मन्द हो जाता है। और उसका उत्साह . . .[2] मेरा यह सुझाव बहनोंको चेतावनी-भर है। सम्भवत: आजकल उनकी स्थिति ऐसी हो कि वे सोचें: 'मुझमें ईश्वरके प्रति इतना विश्वास नहीं है कि मैं

१ व २. साधन-सूत्रमें स्पष्ट न होने कारण पढ़ा नहीं जा सका।

अपनी पवित्रताके बलपर ही राक्षसको भगा सकूँ। बापूने कहा है कि हथियारका इस्तेमाल नहीं करना चाहिए क्योंकि वह तो हिंसा है। तब तो हाथ भी नहीं चला सकती; अरे राम, अब मैं क्या करूँ? हाय, मैं तो मरी।' इस तरहका विचार मेरे लिए असह्य है। ऐसी सीख मैंने किसी भी बहन या भाईको नहीं दी। मेरी सीखका हेतु किसीको दुर्बल बनाना कदापि नहीं है। यदि कोई दुर्बल बनता है तो यह बननेवालेकी गलतफहमी है। किन्तु जहाँ मुझे ऐसी गलतफहमीके बारेमें पता चले वहाँ मुझे उसे रोकना चाहिए। इसलिए मैंने अपने विचारको उपर्युक्त सुझाव देकर पूरा किया है। बहनें अबला हैं, इस बातको वे बिलकुल भूल जायें। जिनमें मौतको गले लगानेकी इच्छा और साहस है, उन्हें कदापि निर्बल नहीं माना जा सकता। जोखिम आत्माको नहीं, शरीरको है। जो आत्मा शरीरके साथ अपने सम्बन्धको क्षीण बना चुकी है, जो शरीरको तृणवत् बना चुकी है, उसे संसार-भरके राक्षस मिलकर भी सता नहीं सकते, हरा नहीं सकते। इस पाठको हर समझदार बालक और बाला सीख ले। यह सीख देनेके लिए ही उपर्युक्त सुझावका उद्‌भव हुआ है। 'हाय! मैं क्या करूँ', इसके बजाय यह कहना चाहिए: 'मैं अपना शरीर और अपने प्राण दे दूँगी किन्तु कायर नहीं बनूँगी।' उसका तमाचा मारना और नोचना-खसोटना इसी बातका सूचक है। यह अपने-आपमें अहिंसक कार्य है। उसमें शारीरिक क्षति पहुँचाने की शक्ति नहीं है। अतः वह हिंसा नहीं है बल्कि उसमें राक्षसी मनको हिला देने और तमाचा मारनेवालेको सजग कर देनेकी शक्ति है इसलिए यह अहिंसा ही है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

२५. पत्र : सेठ गोविन्ददासको

३/४ सितम्बर, १९३२

भाई गोविन्ददास,

मुझे तुम्हारा पत्र और अपनी पैतृक सम्पत्तिका त्याग करते हुए तुमने जो दस्तावेज[1] लिखा है, वह दस्तावेज मिल गया। वे आज ही मेरे हाथ आये हैं, क्योंकि इस बीच वे एक सरकारी दफ्तरसे दूसरे सरकारी दफ्तरमें घूमते रहे। पत्रोंसे यह जानकारी मिली है कि मैंने इसके पहले जो पत्र लिखे हैं, वे तुम्हें बराबर मिलते रहे हैं।

सम्पत्तिके त्यागके विषयमें तुम्हारा पत्र बहुत मर्मस्पर्शी है; तुम्हारे पिताजी का भी वैसा ही है। उन्होंने जो किया उससे भिन्न वे कुछ कर भी नहीं सकते थे। आसक्तिका त्याग आसान चीज नहीं है। इस युगके नवयुवकोंमें त्यागकी जो भावना प्रकट हुई है, उसकी अपेक्षा हम बूढ़े लोगोंसे नहीं कर सकते। इसमें तो मुझे कोई

१. सेठ गोविन्ददासने अपनी सम्पत्तिके दानकी घोषणा की थी।

सन्देह है ही नहीं कि तुम्हारे इस सम्पूर्ण त्यागसे तुम्हारा कल्याण ही होगा। १९२१ की उस घटनाको मैं भूल गया था किन्तु अब वह मुझे याद आ रही है। मुझे निश्चय है कि तुम दोनोंका प्रेम-सम्बन्ध अब और गहरा हो जायेगा। बहुत सम्भव है कि तुम्हारे पिता अब किसी-न-किसी प्रकारका त्याग करेंगे। उनके प्रति तुम पहले जैसा ही भक्तिभाव रखते हो, यह बहुत अच्छी बात है। इस मामलेमें क्या तुम्हें बींदणीदेवीका[1] समर्थन प्राप्त था? क्या वे शिक्षित हैं? आशा है कि उनका स्वास्थ्य धीरे-धीरे सुधर जायेगा। मैं कामना करता हूँ कि तुम्हारा हृदय अधिकाधिक पवित्र होता रहे। सरदार और महादेव भी तुम्हें धन्यवाद देते हैं। सम्पत्तिके त्यागके विषय में तुम्हारे इस पत्रका समाचार मैंने पढ़ा था किन्तु यहाँसे उसके बारेमें कुछ लिखना मुझे उचित नहीं मालूम हुआ। लेकिन चूँकि अब तुम्हारा पत्र मुझतक आने दिया गया है इसलिए मैं तुम्हें लिख सका हूँ। अलबत्ता, मेरी सलाह है कि तुम इसे समाचार-पत्रोंमें मत भेजना।

तुम्हारा,
मोहनदास

[पुनश्च :]

इसे लिखनेके बाद मुझे अपने पोस्टकार्डकी पहुँच भी मिल गई है। आशा है बींदणीदेवीका स्वास्थ्य सुधर रहा है।[2]

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०/९

२६. पत्र : सत्यवती चिदम्बरको

४ सितम्बर, १९३२

प्रिय बहन,

आपका पत्र मिला। आप ऐसा क्यों सोचती हैं कि सत्य तो केवल ईसा मसीह में आपकी तरह विश्वास करनेमें ही निहित है? फिर, आप यह क्यों मानती हैं कि सनातनी हिन्दू 'गिरि-प्रवचन'के उपदेशोंका पालन नहीं कर सकता? क्या आपको भरोसा है कि आप सनातनी हिन्दुओंको अच्छी तरह जानती-समझती हैं? और फिर क्या आपको निश्चय है कि आप ईसा और उनकी शिक्षाको ठीक-ठीक समझ गई हैं? आपके उत्साहकी तो मैं सराहना करता हूँ, लेकिन आपकी समझके लिए आपको दाद नहीं दे सकता। गत पैंतालीस वर्षोंसे मैं प्रार्थना और मनन करता आ रहा हूँ,

१. सेठ गोविन्ददासकी पत्नी।

२. यह अंश ४ सितम्बरको लिखा गया था।

लेकिन इतनेपर भी न केवल मेरे मनको वैसा कोई आश्वासन प्राप्त नहीं हो सका है जैसा आश्वासन प्राप्त करनेका श्रेय आप अपनेको देती हैं, बल्कि उलटे मुझमें इतनी विनय आ गई है जितनी पहले कभी नहीं थी। अपनी प्रार्थनाका मुझे यही स्पष्ट और दृढ़ उत्तर मिला है कि ईश्वर किसी तिजोरीमें बन्द नहीं है, कि तुम उसमें किये किसी छोटे छेदके जरिये ही उसतक पहुँच सकते हो। इसके विपरीत, जो विनयी हैं और जिनका हृदय शुद्ध है, उनके लिए तो वह लाखों-करोड़ों मार्गोंसे प्राप्य है। इसलिए मैं तो आपसे यही कह सकता हूँ कि आप उस शिखरसे नीचे उतरिए जहाँ आपने अपने अलावा और किसीके लिए स्थान ही नहीं छोड़ा है।

आपके लिए प्रार्थना करते हुए सस्नेह,

आपका,
मो० क० गां०

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-१, पृ० ३९५-६

२७. पत्र : गुलाबको

४ सितम्बर, १९३२

चि० गुलाब,

मुझे विस्तारसे पत्र लिखा, इससे खुशी हुई। तबीयत अच्छी हो गई, यह ठीक हुआ।

मीराबहनसे जितनी बार मिल सको, मिलना और उसकी तबीयतका हाल लिखना। वह तो मुझे लिखती ही रहती है।

भाई तिलकम् वहाँ नहीं रहता, यह मुझे तुमसे ही मालूम हुआ। आज उसे लिख रहा हूँ और पूछ रहा हूँ। मुझे तो वह बहुत भला युवक लगा है।

इन्दिराके कितने महीने हो गये? नरगिसबहन, जमनाबहन वगैरहसे मिलना होता है क्या?

मुझे लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५०४८) से; सौजन्य : धीरूभाई झवेरी

२८. पत्र : तिलकम्को

४ सितम्बर, १९३२

प्रिय तिलक,

वाह, यह भी खूब रही! मैं तो जानता ही नहीं था कि तुमने मणिभवन छोड़ दिया है। अब तुम कहाँ रह रहे हो और क्या कर रहे हो? अपनी गतिविधियोंका पूरा विवरण भेजना। आशा है, अब तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा होगा। क्या मेरा पिछला पत्र मिल गया था?

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५५३) से।

२९. पत्र : छगनलाल जोशीको

४ सितम्बर, १९३२

चि० छगनलाल (जोशी),

इस सप्ताहकी डाकमें तुम्हारा पत्र नहीं था। ऐसा शायद ही कभी होता है, जब तुम्हारा पत्र नहीं आता। इसलिए जब नहीं आता तो बात अखरती है। नारणदासने अपने पत्रमें लिखा था कि तुम धीरूको[1] लेने गये थे। धीरूका हालचाल लिखना।

जब तुम यहाँ [यरवडा कैम्प जेलमें] थे तो मैंने तुम्हें 'फ्लॉवर्स ऑफ सेंट फ्रान्सिस' नामक पुस्तक भेजी थी। क्या उक्त पुस्तक तुम्हारे या अन्य किसीके साथ चली गई है? मोहनलाल[2] लिखते हैं कि उनके पास जो संग्रह है उसमें यह पुस्तक नहीं मिली। और मुझे भी वह वापस नहीं मिली; देखना। इस पुस्तकका विशेष महत्त्व तो इसलिए है कि यूरोपसे एक बहनने उसपर अपनी शुभकामनाएँ लिखकर विशेष रूपसे भेजी है और उसमें बीच-बीचमें निशान भी लगे हुए हैं। यदि याद न आये तो कोई बात नहीं।

यदि नानाभाईसे[3] मिले हो तो उनकी तबीयतके बारेमें लिखना। आशा है, तुम अपने स्वास्थ्यको ठीक बनाये हुए होगे। सामान्यतः वसुमती मुझे पत्र लिखे बिना

१. छगनलाल जोशीके पुत्र।

२. मोहनलाल एम० भट्ट, नवजीवन प्रेसके भूतपूर्व मैनेजर, जो उन दिनों यरवडा कैम्प जेलमें थे।

३. नानाभाई भट्ट।

नहीं रहती; किन्तु इस बार यद्यपि उसके [जेलसे] छूटनेके बाद मैंने उसे लिखनेको लिखा था, फिर भी उसका कोई पत्र नहीं है। यों तो बहुत-सी बहनोंने नहीं लिखा। किन्तु इसमें उतनी विचित्रता नहीं जान पड़ती, क्योंकि वे नियमपूर्वक लिखनेवाली नहीं थीं। वसुमतीके बारेमें पता लगाना, और अन्य बहनोंको भी चेताना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५०७)से।

३०. पत्र: मणिलाल रे० झवेरीको

४ सितम्बर, १९३२

चि० मणिलाल,[1]

तुम्हारा पत्र मिला। खीमचन्दके खिलाफ कही बातोंका मेरे पास तो ढेर-सा लग गया है। और अब उसका तार आया है कि छगनलालके[2] चार पत्रोंके मसविदे खुद उसीके बनाये हुए हैं। अब उसके पत्रकी राह देख रहा हूँ। ऐसा लगता है कि रंगून उसे छोड़ देना पड़ा है। मगनलालको[3] तुमने जो सलाह दी है, वह सही है। हमें आशा करनी चाहिए कि ये दोनों भाई कुटुम्बमें मेल-जोल पैदा करेंगे और डॉक्टरका नाम निष्कलंक रखेंगे।

तुम्हें जो भी मालूम हो या सूझे, मुझे तो सूचित करते ही रहो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५०४४) से; सौजन्य: धीरूभाई झवेरी

३१. एक पत्र

४ सितम्बर, १९३२

मैं तुम्हारी तरह हारकर नहीं बैठता, बल्कि कठोरतम हृदयको भी ईश्वर-कृपासे पिघलानेकी आशा रखता हूँ और इसलिए प्रयत्नशील रहता हूँ।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-१, पृ० ३९६

१. रेवाशंकर झवेरीके पुत्र।
२. डॉ० प्राणजीवन मेहताके ज्येष्ठ पुत्र।
३. डॉ० प्राणजीवन मेहताके कनिष्ठ पुत्र।

३२. पत्र : अमतुस्सलामको

४ सितम्बर, १९३२

बेटी अमतुस्सलाम,

बहुत अच्छे हरफोंमें गलतियाँ दुरुस्त की हैं। ऐसे ही हमेशा किया करो। सुवाद कहां, सीन कहां, हे कहां, है कहां — इसका कायदा अगर जानती है तो मुझे बता दो। जब तुम्हारे मेरे पाससे अंग्रेजी खत चाहिये, मुझे लिखो और मैं खुशीसे अंग्रेजीमें लिखूंगा। तुम्हारे वास्ते में शान्ति और सेहत चाहता हूं। डा० शर्माने मेरा खत अखबारोंमें छपवाया वह अच्छा नहीं हुआ। मैं उनको लिखूंगा। उस खत[को] पढ़ना।

बापूकी दुआएँ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २५६) से।

३३. चर्चा : महादेव देसाईके साथ[1]

४ सितम्बर, १९३२

तो फिर तुमने मेरे लेखका[2] तात्पर्य नहीं समझा। मैंने तो यह बताया है कि तमाचा सचेत करता है, निर्भय बनाता है और सबसे बड़ी बात तो यह कि वह मरनेकी शक्ति देता है। जालिम आदमीकी नजरमें यह व्यर्थका विरोध है और वह इसके लिए तैयार ही नहीं होता। अतः उसके भाग जानेकी सम्भावना रहती है। किन्तु इसे मैं गौण बात समझता हूँ। उस स्त्रीमें जो जोश आ जाता है, वह उसे अपने-आपको मृत्युको भेंट देनेकी शक्ति देनेके लिए पर्याप्त है। वह जालिम आदमी उससे लड़े, इसके पहले ही उक्त स्त्री कब-की मृत्युकी शरणमें पहुँच चुकी होती है। क्योंकि वह तो मृतप्राय होकर ही जूझती है, वह प्रहार करनेका खयाल नहीं करती। उसे तो केवल [रामनामकी] रट लगानी है। सभी परिस्थितियोंके लिए मैं यह उपाय सुझाता हूँ तथा यह उन बहनोंके लिए है जो पवित्र हैं और अहिंसाके द्वारा ही अपनी रक्षा करना चाहती हैं। आपबीतीके आधारपर मैंने यह लेख लिखा है। मैं जब उस सलाखको[3] पकड़े ही रहा तब मैंने मन-ही-मन मरनेकी तैयारी कर ली थी। मारनेवालेको मैं चोट नहीं पहुँचा सकता था। किन्तु यदि मेरा हाथ वहाँसे छूट गया होता तो मैं यह जानते हुए भी कि यह व्यर्थ है, अपने हाथ-पाँव तो

१. मौनवार होनेके कारण गांधीजी ने लिखित रूपमें अपने विचार व्यक्त किये थे।

२. देखिए "संकटमें बहनें क्या करें", ४-९-१९३२।

३. पारडीकोपमें जब गांधीजीपर हमला किया गया; देखिए खण्ड ३९, पृ० ९१-२।

चलाता ही रहता, शायद तमाचा मारता या शायद दाँतोंसे काटता, किन्तु मरते दम तक जूझता रहता। इस प्रकार जूझते रहनेपर भी उसमें हिंसा न होती, क्योंकि मैं उसे चोट पहुँचानेमें असमर्थ था और चोट पहुँचानेका मेरा इरादा भी नहीं था। मेरा उद्देश्य तो केवल मर जाने और यदि उसकी गहराईमें उतरें तो इस अपमानजनक परिस्थितिसे मरकर भी मुक्त हो जानेका था। अहिंसाकी यही परीक्षा है, उसका उद्देश्य दुःख देना नहीं होता और न उसका परिणाम ही दुःख होता है।

म० दे० : यह मैं समझता हूँ, किन्तु पवित्रतम स्त्री भी एक तमाचेसे जालिम आदमीको बसमें नहीं कर सकती और यदि कई लोग हों तो वह लाचार हो जाती है।

गांधीजी : न सिर्फ मैं इसे सर्वथा असम्भव मानता हूँ, बल्कि 'मेडिकल ज्युरिस्प्रूडेंस' (चिकित्सीय विधिशास्त्र) भी इसे असम्भव मानता है। जबतक स्त्री 'रिलैक्स' न करे (शिथिल न हो) तबतक कामी पुरुष अपनी इच्छा पूरी नहीं कर सकता। जो स्त्री मृत्युकी शरणमें नहीं जाना चाहती वह, अनिच्छापूर्वक ही क्यों न हो, शिथिल पड़ जाती है, प्रतिरोध करना छोड़ देती है और कामीके चंगुलमें फँस जाती है। जिसमें जानपर खेल जानेकी भावना आ गई है, वह या तो बन्धनोंको तोड़ देती है या फिर स्वयं टूट जाती है। इतनी शक्ति प्राणि-मात्रमें है। सच बात तो यह है कि जीनेका लोभ इतना ज्यादा होता है कि मनुष्य मरनेतक संघर्ष ही नहीं करता। यदि कोई स्त्री इतना संघर्ष करे तो एक मनुष्यसे जूझते हुए वह टुकड़े-टुकड़े हो जायेगी और लड़ते हुए अपनी हड्डियाँ-पसलियाँ तोड़ लेगी।

म० दे० : किन्तु ऐसे आत्मबलवाली स्त्रीको तमाचा मारनेका सुझाव देनेकी आवश्यकता नहीं है। उसे तो कोई-न-कोई उपाय सूझ ही जायेगा।

गांधीजी : यह सब तो मैं मौन भंग करनेके बाद ही समझा सकता हूँ।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-१, पृ० ३९४-५

३४. पत्र : पद्मजा नायडूको

५ सितम्बर, १९३२

बुद्धकी जिस भव्य कथाका तुमने उल्लेख किया है, उससे मुझे बहुत-सी पवित्र बातें स्मरण हो आई हैं। हाँ, मैं बहुत सारे सपने देखता हूँ। और ऐसा नहीं है कि वे सारे सपने हवाई किले ही हों। ऐसा होता तो स्त्री-पुरुष, बालक-बालिका सभी तरहके और सभी स्थितियोंके लोगोंसे मुझे जो इतना प्रेम मिलता है, उसके बोझसे मैं दब न जाता।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ६

३५. पत्र : नानालाल के० जसानीको

५ सितम्बर, १९३२

भाई नानालाल,

तुम्हारे पत्रकी बाट जोह रहा था। मिलनेसे शान्ति मिल गई है। मयाशंकर[1] को मैंने पत्र तो लिखा है। उसे मिल गया होगा। चम्पाको तो रोक रहा हूँ। मंजुलाको[2] भी रोका था। मगनलाल भी यही चाहेगा। मुझे तो वह बहुत सयानी लड़की लगती है।

पन्ना बेच देनेमें कोई विघ्न पड़ रहा है क्या? या किसीके द्वारा अड़चन डाले जानेके कारण नहीं बेचा जा सका?

डॉक्टर तुम्हारे लिए जो रकम लिख गये हैं, उसे तुम लेना नहीं चाहते, यह तुम्हारे लिए सर्वथा शोभनीय ही है। लड़कियोंके लिए जमा की गई रकम तो उन्हें मिलनी ही चाहिए, मगर फिलहाल उसमें से कुछ भी पैसा निकाला जा सकता हो, ऐसा मुझे दिखाई नहीं देता। इसलिए तुम्हारे हिस्सेकी बात करनेका भी समय अभी नहीं आया है। अगर गाड़ी पटरीपर आ जाये तो सब कुछ ठीक ही होगा। घोंसला बना रहे और झगड़ा मिट जाये तब देखूँगा।

तुम मुझे लिखते रहो।

जैसा छगनलाल लिखता है, वैसे ही बरतोगे तो सब ठीक ही होगा।

वे लोग तुम्हें चाहें या दुतकारें, तुम तो अपना धर्म निभाते ही रहोगे, यह मैं जानता हूँ और इसलिए निश्चिन्त हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४७० ए) से।

१. मयाशंकर व्रजलाल देसाई, डॉ० प्राणजीवन मेहताके कारोबारके साझेदार।

२. मगनलाल मेहताकी पत्नी।

३६. एक पत्र

५ सितम्बर, १९३२

तू या तो चालाक है या मूर्ख है। विकारका अर्थ नहीं समझती? दाल खानेसे होनेवाला विकार और स्पर्श-विकार, दोनों हानिकर हैं। दोनों समान प्रवाह को असंतुलित करते हैं। एक विकार बाहरका स्थूल पदार्थ पेटमें डालनेसे होता है; दूसरा बाहरी वस्तुको देखनेसे मनोवृत्तिमें होनेवाला परिवर्तन या विकार है। यह विकार जब सारे जीवनको हिला देनेवाला होता है, तब हानिकारक हो सकता है। यदि किसी स्त्रीके मनमें किसी पुरुषके प्रति विकार आ जाये, तो समाज उसे सदा दोषी नहीं मानता; बशर्ते कि उस विकारके पीछे विवाह करनेका इरादा हो, जिससे विवाह करनेका विचार हो वह त्याज्य न हो, यह बात प्रियजनोंसे गुप्त न रखी गई हो और उसे स्वयं विवाह करनेका अधिकार हो। मेरे खयालसे तू अभी शादी लायक नहीं है, क्योंकि तू अभी पढ़ रही है और बच्ची ही है। . . .[1] के साथ ऐसा सम्बन्ध त्याज्य होगा, क्योंकि वह शिक्षक था और फिर तेरे लिए भाईके समान था। तेरे मनमें विकार पैदा हुआ या यों कहा जाये कि विवाह-प्रेम पैदा हुआ और तूने उसे छिपाया, इसलिए यह विकार दूषित माना जायेगा।

तू स्वाधीनताका अर्थ भी नहीं समझती। जब तू अपनी इच्छासे बुजुर्गोंको अपने पत्र दिखाती है तो ऐसा करके तू अपनी स्वाधीनता नहीं खोती, बल्कि अपनी सुरक्षा खोजती है। यदि कोई हमारे घरकी देहलीपर जमकर बैठ जाये, तो वह कुर्क-अमीनकी तरह हमें हमारी स्वाधीनतासे वंचित कर देगा। परन्तु यदि हम घरका पहरा देनेको द्वारपाल रखें, तो इससे हमारी स्वाधीनता नहीं जाती, बल्कि उसकी रक्षा होती है। इसी तरह यदि तू अपनी अज्ञानावस्थामें, कच्ची उम्रमें, बड़ोंको अपना पहरेदार समझकर उनके सामने अपना दिल खोलेगी, उन्हें अपने पत्र दिखा-येगी, तो तू पराधीन नहीं होगी, बल्कि अपनी स्वाधीनताकी सुरक्षा खोज पायेगी। मेरी तीव्र इच्छा है कि तू स्वाधीन बने। तेरी यह स्वाधीनता कायम रहे, इसलिए मैंने सलाह दी कि तुझे पत्र आदि सब-कुछ अपने माता-पिताको दिखा देने चाहिए। मगर तेरा मन इस बातको स्वीकार न करे, ऐसा करना तुझे भार-सा लगे तो जरूर अपने पत्रोंको गुप्त रख। मैं तो तुझपर जरा भी दबाव डालना नहीं चाहता। ऐसा करनेसे तेरा व्यक्तित्व दब जायेगा। मैं तो यही चाहता हूँ कि तू वीर बाला और प्रतापी सेविका बने। तू पत्र लिखना बन्द कर देगी, तो यह मेरे लिए असह्य होगा।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ६-७

१. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिया गया है।

३७. पत्र : बेगम मोहम्मद आलमको

[६ सितम्बर, १९३२ के पूर्व][1]

मुझे विश्वास है कि आपके पति अच्छे हो जायेंगे।[2] मुझे डॉक्टर साहबका पत्र मिला है, जिससे उनके स्वास्थ्यका हाल मालूम हुआ है। अब आपके पत्रसे उनके स्वास्थ्यका और भी समाचार प्राप्त हुआ। मुझसे बराबर पत्रव्यवहार करती रहिए और डॉक्टर साहबसे मेरी, सरदार पटेल तथा महादेव देसाईकी शुभकामनाएँ कहिए। ईश्वरकी कृपासे यहाँ हम सब अच्छे हैं। आशा है, टूटी-फूटी उर्दूमें लिखे इस पत्रको पढ़नेमें आपको कोई कठिनाई नहीं होगी।

[अंग्रेजीसे]

एडवांस, ७-९-१९३२

३८. पत्र : मोहन न० परीखको

७ सितम्बर, १९३२

चि० मोहन,

चिरायु हो। अच्छा बनना और देशकी सेवा करना। तूने आगामी वर्षमें [‘गीता’के] चार अध्याय कण्ठस्थ करनेका व्रत लिया है, उसका पालन करना। उसका भाव भी समझनेकी कोशिश करना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९१८३)से।

१. साधन-सूत्रमें रिपोर्टकी तिथि ६ सितम्बर दी गई है। मूल उर्दू पत्र उपलब्ध नहीं है।

२. डॉ० आलम लाहौर सदर जेलमें कैद थे और बीमार थे।

३९. पत्र : रतिलाल सेठको

७ सितम्बर, १९३२

भाईश्री रतिलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। छगनलाल और लीलावती[1] मुझे पत्र लिखा करते हैं और उनके पत्र सन्तोषजनक होते हैं। दोनोंके खिलाफ शिकायतें भी आती हैं। शिकायतोंसे उन्हें अवगत करा देता हूँ। लीलावतीने अपनी तबीयतके बारेमें मुझको भी लिखा था। यदि छगनलाल खुशी-खुशी अपनी स्वीकृति दे दे तो फिलहाल उसे बुला लेनेसे लाभ होना सम्भव है। उसके शरीरको तो लाभ होगा ही। माणिकबहन[2] तो लीलावतीसे बहुत नाराज जान पड़ती है। लीलावती कहती है कि इसमें उसका कोई दोष नहीं है। मैं उसे इतना अधिक निर्दोष नहीं मानता। लीलावतीकी जबान तो तेज है ही। माणिकबहन भोली औरत है और उसे तो चाहे जो बरगला सकता है। साबरमतीमें और फिर जब मैं रंगूनमें था तब भी मैंने देखा कि लीलावती कोई बात बरदाश्त नहीं कर सकती। लेकिन जो स्वभाव बन जाये, उसके बारेमें तुम भी क्या कर सकते हो? पिताके रूपमें तुम जो शुभ प्रभाव डाल सकते हो, वह तो डाल ही रहे हो।

मगनलालने मुझको संतोषजनक पत्र लिखा है। मंजुला तो मुझे अब भी दुनिया के तौर-तरीकोंसे अछूती लगती है। जरूरी लगेगा तो तुम्हें रंगून जानेकी तकलीफ दूँगा। आशा करनी चाहिए कि दोनों भाई समझ जायेंगे, और झगड़ा शान्त हो जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१६८)से। सी० डब्ल्यू० ४६६२ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. रतिलाल सेठकी पुत्री, और छगनलालकी पत्नी

२. डॉ० प्राणजीवन मेहताकी विधवा।

४०. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

८ सितम्बर, १९३२

व्यायाममें खड़े-खड़े धीरे-धीरे प्राणायाम करनेसे आश्चर्यजनक फायदा होता है। यह धीमे-धीमे और कायदेसे होना चाहिए। जैसे संगीतमें पद-पदपर समयका ध्यान रखना पड़ता है, वैसे ही प्राणायाममें भी होता है। श्वासकी गति लयबद्ध ही चलनी चाहिए। इसका अभ्यास हो जानेपर फेफड़ोंको बहुत कम काम करना पड़ता है और वे बाहरसे ज्यादा प्राणवायु खींचते हैं। और फेफड़े जैसे ज्यादा प्राणवायु खींचते हैं, वैसे ही अपानवायु भी ज्यादा निकालते हैं। यह कसरत थोड़ी-थोड़ी बढ़ाते जाना चाहिए। यदि ठीक ढंगसे यह कसरत होती रहे तो उसका लाभ तुरन्त ही मालूम होने लगेगा। थकावट कम मालूम होगी, खुलकर भूख लगेगी, दिमाग शान्त रहेगा और यदि शरीर ठंडा होगा तो वह गरम हो जायेगा।

हाँ, मेरा मन इस बातको स्वीकार नहीं करता कि रतिसुख आवश्यक ही है। और मेरा अनुभव उसकी पुष्टि करता है। कृत्रिम उपायोंकी नीतिको स्वीकार करनेमें रतिसुखका औचित्य और आवश्यकता आ जाती है। यह भयंकर वस्तु है। अगर इस नियमको सार्वजनिक तौरपर स्वीकार कर लिया गया तो ब्रह्मचर्यको अनावश्यक ही नहीं, बल्कि हानिकारक भी मानना पड़ेगा। अगर यह माना जाये कि ब्रह्मचर्य हर हालतमें स्तुत्य है, तो फिर कृत्रिम उपाय पसन्द नहीं किये जा सकते। चोरी समाजके लिए घातक है, फिर भी जैसे वह बनी ही रहेगी, वैसे ही सम्भव है कि कृत्रिम उपाय भी बने रहेंगे। मगर वे अनुचित हैं, इस मान्यताके अनुकूल वातावरण बनाना आवश्यक है। रतिसुख भोगनेवाले को सन्तानोत्पत्तिकी जिम्मेदारी भी अपने सिर लेनी ही चाहिए। इसमें जो परेशानी है, उसे सहन करना उचित है। शुद्ध संयमका पाठ इसीसे सीखा जा सकता है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १२

४१. एक पत्र

८ सितम्बर, १९३२

आपके पत्रकी भाषामें मुझे कहीं-कहीं कपटका भाव दिखाई देता है। यदि इसमें मेरी भूल हो तो धैर्यपूर्वक मेरी भूल सुधारिएगा, और यदि मेरा वहम ठीक हो, तो आप अपनेको सुधारिएगा। यह आपका डॉक्टरके लिए किया हुआ श्राद्ध माना जायेगा। ईश्वर आपको सन्मति दे। मुझसे यदि अन्याय हो रहा हो, तो आप मुझे बचायें।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १२

४२. पत्र : विमलकिशोर मेहरोत्राको

८ सितम्बर, १९३२

चि० विमल,

तेरा खत मिला। तुमारे हरफ अच्छे करना होगा। प्रार्थनाके बीचमें भागना नहीं चाहिए। यह ईश्वरका अविनय है।

बापु

सी० डब्ल्यू० ४९८५ से; सौजन्य : परशुराम मेहरोत्रा

४३. पत्र : एम० जी० भण्डारीको[1]

९ सितम्बर, १९३२

प्रिय मेजर भण्डारी,

क्या आप आनेकी कृपा करेंगे ?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५१२२) से।

१. यरवडा सेंट्रल जेलके अधीक्षक।

४४. पत्र : रैम्जे मैक्डॉनाल्डको

९ सितम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका साफ शब्दोंमें लिखा विस्तृत पत्र मुझे आज तारसे मिला। इसके लिए मैं आपका कृतज्ञ हूँ। तथापि मुझे अफसोस है कि मेरे सोचे हुए कदमका[1] जो अर्थ कभी मेरी कल्पनामें भी नहीं आया, ऐसा अर्थ आपने किया है। आपने मुझपर उसी वर्गके हितोंको नुकसान पहुँचानेके इरादेसे आमरण अनशन करनेका आरोप लगाया है, जिस वर्गकी तरफसे बोलनेका मैं दावा कर रहा हूँ। मैं तो यह आशा करता था कि मेरा हेतु स्वार्थपूर्ण है, ऐसे किसी अर्थको रोकनेके लिए यह उग्र कदम ही काफी होना चाहिए। परन्तु किसी बहसमें न पड़कर मैं दावेके साथ, कहता हूँ कि मेरे लिए यह चीज शुद्ध धर्मकी है। "दलित" वर्गोंको दोहरा मताधिकार मिल जाने-भरसे उनका या आम हिन्दू-समाजका छिन्न-भिन्न होना रोका नहीं जा सकता। "दलित" वर्गोंके लिए पृथक् निर्वाचक-मण्डलकी स्थापनाके रूपमें मुझे हिन्दू-समाजको ऐसा जहर दिया जा रहा दिखाई दे रहा है, जो उसका तो सर्वनाश करनेवाला है ही, साथ ही "दलित" वर्गोंको भी कोई लाभ पहुँचानेवाला नहीं है। आपसे मैं नम्रतापूर्वक इतना कहूँगा कि आपके मनमें चाहे जितनी सहानुभूति हो, जो मामला सम्बन्धित पक्षोंके लिए इतना ज्यादा अहम और धार्मिक महत्त्व रखता है, उसके बारेमें आप सही निर्णयपर पहुँच ही नहीं सकते। मैं तो "दलित" वर्गोंको अनुपातसे ज्यादा प्रतिनिधित्व दिये जानेके भी विरुद्ध नहीं होऊँगा। मेरा विरोध तो इस बातके खिलाफ है कि जबतक वे हिन्दू-समाजमें रहना चाहते हैं, तबतक उन्हें सीमित रूपमें भी हिन्दू समाजसे अलग करनेकी बात कानूनसे नहीं होनी चाहिए। क्या आप यह नहीं समझ रहे हैं कि अगर आपका फैसला कायम रहा और संविधान अमलमें आ गया तो हिन्दू सुधारक जीवनके हर क्षेत्रमें अपने दलित भाइयोंके उद्धारके लिए जीवन अर्पण करके जो अद्भुत कार्य कर रहे हैं, वह सब धूलमें मिल जायेगा?

इसलिए मैंने अपना जो निर्णय आपको बताया है, उसपर मजबूरन डटे रहना मेरा फर्ज हो जाता है।

आपके पत्रसे एक गलतफहमी पैदा होना सम्भव है। इसलिए मैं यह बता देना चाहता हूँ कि "दलित" वर्गोंके सवालको जो मैं आपके निर्णयके दूसरे भागोंसे अलग करके उसके सम्बन्धमें कार्रवाई कर रहा हूँ, उसका यह अर्थ किसी भी तरह नहीं होता कि आपके निर्णयके दूसरे भागोंको मैं पसन्द करता हूँ या उन्हें मान लेनेको

१. गांधीजी ने दलित वर्गोंको पृथक् निर्वाचक-मण्डल देनेकी सरकारी घोषणाके विरोधमें २० सितम्बरसे आमरण अनशन करनेका इरादा जाहिर किया था।

मेरा मन तैयार है। मेरी रायमें, और बहुत-से भाग भी गम्भीर रूपसे आपत्तिजनक हैं। बात केवल इतनी ही है कि "दलित" वर्गोंके मामलेमें मेरी अन्तरात्माने मुझे जिस तरह प्राणार्पण करनेकी प्रेरणा दी है, वैसा कोई कदम दूसरे भागोंके विरुद्ध उठाना मुझे जरूरी मालूम नहीं होता।

आपका विश्वस्त मित्र,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

भारत सरकार, होम डिपार्टमेंट, राजनीतिक, फाइल सं० ३१/११३/३२ पॉल०। सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

४५. पत्र : नारणदास गांधीको

९ सितम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

जैसे हो वैसे नीचे लिखी जानकारी तुरन्त भेजो:

१. हमें उतने ही आटेकी रोटियाँ और डबलरोटियाँ बनानेमें कितने ईंधनकी जरूरत होती है?

२. डबलरोटी बनानेका तरीका।

(क) खमीर कैसे तैयार करते हैं?

(ख) खमीरके सिवा क्या हम नमक, गुड़ या चीनी मिलाते हैं?

(ग) सारी प्रक्रियाएँ।

(घ) गूँधे हुए आटेको कितनी देर पड़ा रहने देते हैं?

(ङ) भट्ठीमें कितनी देर रखते हैं?

मतलब यह कि यह सब इस तरह लिखा जाये जिससे उसे पढ़कर यहाँ पूरा प्रयोग किया जा सके। इसका हेतु यह है कि मैं आश्रमके तरीके और यहाँके तरीकेकी तुलना करके देखना चाहता हूँ। इन दिनों हम वहाँ कितने आटेकी डबल-रोटी बनाते हैं? आटेकी कीमत क्या पड़ती है? एक ही परिमाणमें आटेकी डबल-रोटी बनानेमें कितने लोगोंकी जरूरत पड़ती है और रोटियाँ बनानेमें कितनेकी?

आशा है, बच्चा मजेमें होगा और शंकरभाईका हाथ कैदसे छूट गया होगा।[1]

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२४९ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

१. शंकरभाई पटेलके हाथपर प्लास्टर चढ़ा हुआ था; देखिए खण्ड ५०, पृष्ठ० ३८१।

४६. पत्र : भाऊ पानसेको

९ सितम्बर, १९३२

चि० भाऊ,

'गीताजी' के गूढ़ार्थपर विचार न किया करो। उसका जो अनासक्तिका सन्देश है, उसपर अमल करते रहनेसे गूढ़ार्थ अपने-आप खुलता जायेगा, और जब वह पकड़में आ जायेगा तब तुम्हें पूर्ण सन्तोष मिलेगा। इस बीच, विनोबाने जो गूढ़ार्थ बताया हो, उसपर विश्वास रखना। अधिकांशतः तो वे जो अर्थ करते हैं, वही मेरा भी होता है। लेकिन अगर कहीं हम दोनोंके अर्थोंमें अन्तर दिखाई दे तो मनको जो रुचे वह अर्थ कामचलाऊ तौरपर स्वीकार कर लो। इसमें तो कोई सन्देह ही नहीं कि अगर बाँसकी तकलीपर हाथ बैठ जाये तो उत्तम है। यह तकली बनाना भी सीख लेना चाहिए। कोष्ठबद्धताके लिए एनिमाका उपयोग न किया हो तो उसे कर देखो। इससे कई बार बहुत फायदा हुआ दिखाई दिया है। वर्धाकी कुछ थोड़ी-सी खबर मिलती है। लेकिन वहाँ तुम्हें जो मिले वह भी भेजते रहो। कोष्ठबद्धताके सम्बन्धमें निराश मत होना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७३६) से। सी० डब्ल्यू० ४४७९ से भी; सौजन्य : भाऊ पानसे

४७. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

९ सितम्बर, १९३२

चि० गंगाबहन,

इस बार तुमने मुझे काफी लम्बा और सुन्दर पत्र लिखा है।

मैं तो यह जानता ही हूँ कि हकीमजी तुम्हारे लिए सिर्फ हकीम ही नहीं, बल्कि भाई, कुटुम्बी, मित्र, सलाहकार और बुजुर्ग भी हैं। अतः यदि तुम उनकी पूरी-पूरी मदद लेती हो तो यह सर्वथा उचित ही है। तुमने मुसलमानोंके घरोंमें जाकर ठीक ही किया है। ऐसे काम भविष्यमें फलदायी सिद्ध होंगे। यदि हमारे हृदय शुद्ध हों और हमारे हृदयमें प्रेम हो तो हम सभी प्रकारके सन्देहोंको दूर कर सकेंगे।

काकासाहबके समाचार मुझे इंस्पेक्टर-जनरलने दिये। वे अच्छे हैं। काकाका एक पत्र भी मुझे मिला था। हालाँकि उनका वजन कम हो गया है, किन्तु उनके शरीरमें कोई रोग नहीं है। अतः चिन्ता करनेका कोई कारण नहीं।

लक्ष्मी तो सत्संगका लाभ उठा रही है।

नूरबानूसे[१] मिलीं, यह अच्छा किया। जबतक तुम वहाँ हो तबतक कुरैशीकी देखभाल करती रहना। रामीबहन तुम्हारे पास ही है, इससे मुझे प्रसन्नता हुई।

यदि तुम्हें शामलभाईके[२] साथ रहना अनुकूल जान पड़े तो उनके साथ अवश्य रहना। जैसा करनेसे तुम्हारा मन प्रफुल्लित रहे, वही करना। नाथ तुम्हारी सहायताके लिए सदा साथ हैं, अतः मैं निश्चिन्त हूँ।

बाबूके[३] बारेमें मेरी सलाह यह है कि फिलहाल तो उसे पढ़ना चाहिए। अर्थात् गुजराती, संस्कृत, हिन्दी, गणित, इतिहास, भूगोल, खादी बुनने तक रुईकी सभी क्रियाएँ, बढ़ईगिरी और थोड़ा-सा संगीत — इतना सब पक्का करे। इसके बाद ही पता चल सकेगा कि उसे कौन-सा क्षेत्र चुनना चाहिए। बाबूकी बुद्धिका विकास होना चाहिए और उसका हृदय विशाल होना चाहिए।

सरदार और महादेव तो तुम्हारे पत्र पढ़ते ही हैं। सभी तुम्हें याद करते हैं।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो-६ : गं० स्व० गंगाबहेनने, पृ० ६५-६। सी० डब्ल्यू० ८७९५ से भी; सौजन्य : गंगाबहन वैद्य

४८. पत्र : मथुरी ना० खरेको

१० सितम्बर, १९३२

चि० मथुरी[४],

इस बारकी लिखावट खराब है। भाषाकी भूलें भी काफी हैं। जहाँतक बने, सुधारना। अक्षर तो सावधानी बरतनेसे अच्छे आयेंगे ही।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २६८) से; सौजन्य : लक्ष्मीबहन ना० खरे

१. प्यारअलीकी पत्नी।

२. शामलभाई बेचरभाई पटेल, बोरसद ताल्लुकेके एक कार्यकर्ता तथा काकासाहबकी पहली नजर-बन्दीके दौरान साबरमती जेलके साथी।

३. गंगाबहनका पौत्र और पुरुषोत्तमदास सरैयाका छोटा भाई।

४. नारायण मोरेश्वर खरेकी लड़की।

५१. पत्र : नर्मदा राणाको

१० सितम्बर, १९३२

चि० नर्मदा,

चाहे लोभी ही मानी जाये, मुझसे लम्बा पत्र पानेकी आशा करती ही रहना। किसी दिन शायद लम्बा पत्र लिखनेकी बात भी मनमें आ जाये।

तेरी गुजराती अच्छी नहीं है। किसीसे सुधरवा लिया करे तो अच्छा हो। लेकिन, न सुधरवा सके तो भी हर्ज नहीं। तुझे जो लिखना हो, वह तो लिखती ही रहना।

मैं तो ऐसा चाहता हूँ कि आश्रममें जितना सीखने योग्य है, सब तू धीरे-धीरे सीख ले।

तुझे गुजराती कौन सिखाता है? और क्या-क्या सीखती है?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २७६३) से; सौजन्य: रामनारायण एन० पाठक

५२. पत्र : रेहाना तैयबजीको

१० सितम्बर, १९३२

प्यारी बेटी रेहाना,

तुमारा खत और भजन मिला है। भजन अच्छा है। आज ज्यादा लिखनेका बखत नहीं है। फाका करनेका मेरा इरादा तुम सबको पसंद आया होगा। अब्बाजानको तो यह चीज समझनेमें मुश्कील होनी ही नहीं चाहीये। खुदाके नामसे खुदाके कामके लिये शुरू किया है वही अंजाम पहोंचा देगा। मुझे अब्बाजानकी, अम्माजानकी दुवायें चाहीये। तु क्या भेजेगी? तुझे तो नाचना चाहीये कि बापुको खुदाने ऐसी पाक कुरबानी करनेका मौका दिया है। हमिदा[1] कब आवेगी? भाइजी वहां ही हैं क्या? उनको मेरे बंदेमातरम्। हम सब आरामसे हैं।

बापुके आशीर्वाद

उर्दूकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६७०) से।

[1]. रेहाना तैयबजीकी बहन।

५३. पत्र : आश्रमके बालक-बालिकाओंको

११ सितम्बर, १९३२

बालको और बालिकाओ,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम लोगोंने जैसे कोठार और सफाईके काममें से कई घंटे सहज ही बचा लिये, वैसे ही सोचनेपर दूसरे कार्योंमें से भी बचाये जा सकते हैं। इसमें सबसे ज्यादा आवश्यकता सच्ची भावना और सबके सहयोगकी है। सभी एक होकर, अपनी पूरी शक्ति लगाकर काम करें तो और भी बहुत-से काम किये जा सकते हैं।

यह बात सारी दुनियाके जीव-मात्रपर लागू होती है। तुम कीड़े-मकोड़ोंको देखो तो उनके कामों से भी यही शिक्षा मिलती है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

५४. पत्र : गुलाबको

११ सितम्बर, १९३२

चि० गुलाब,

अभ्याससे कातनेकी गति बढ़ेगी। अभी क्या गति है? पूनियाँ अच्छी होनी चाहिए। तकुआ सीधा होना चाहिए।

अक्षरोंमें सुधारकी बहुत गुंजाइश है। बने तो सुन्दर अक्षरोंके नमूने सामने रख कर कलमसे धीरे-धीरे अक्षर लिखा करो।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७२४) से।

५५. पत्र : छगनलाल जोशीको

११ सितम्बर, १९३२

चि० छगनलाल (जोशी),

मैं नहीं जानता कि यह पत्र तुम्हें मिलेगा या नहीं किन्तु मैं लिख तो रहा हूँ। यदि तुमने आश्रमके बारेमें पत्र लिखा होता तो अच्छा होता। यदि यह पत्र तुम्हें मिल जाये तो तुम मुझे अब भी लिख सकते हो। मुझे तो सब-कुछ जानना ही चाहिए।

और क्या लिखूं?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५०८) से।

५६. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

११ सितम्बर, १९३२

चि० प्रेमा,

तू धीरज और विश्वास रखेगी तो मेरी 'स्वभाव-पुस्तक' के सारे पृष्ठ तेरे सामने खुल जायेंगे। सत्य-भगवान्का वचन है कि "जो मुझ (सत्य) को प्रेमपूर्वक सतत भजता है उसे मैं बुद्धियोग देता हूँ।"[1] इसपर मनन करनेसे मेरे स्वभावके सभी पृष्ठ खुल जाते हैं। पुस्तक तेरे सामने पड़ी हो, किन्तु तुझे पढ़ना न आये या उसे पढ़नेकी कोई तकलीफ न उठाये तो दोष किसका? लेकिन यह तो मैंने बहुत कह दिया। फिर भी मैंने तुझे उक्त पुस्तकको पढ़नेका तरीका बता दिया। तू कहेगी कि यह तो तू जानती ही थी। ऐसा कहे तो मैंने तुझे जो 'सर्वज्ञ' कहा है, मेरा वह कथन सच ही सिद्ध हुआ माना जायेगा न?

तू . . .[2]को मेरे सब पत्र भेजती रहती है, उसमें मुझे कोई आपत्ति हो ही नहीं सकती। आखिरी पत्र तो उसीसे सम्बन्धित था, इसलिए मैंने उक्त पत्रको उसके पास भेजनेकी विशेष इच्छा प्रकट की थी। अब जो लिखने-जैसा लगे, सो अवश्य लिखना। . . .[3]की दवा मैं नहीं खोज सका, ऐसा . . .[4] लिखती है, वह सच है। लेकिन वह अधूरी बात है। दवा तो मैंने खोज ली थी, लेकिन वह मेरे पास न हो तो मैं क्या करूँ? उसकी दवा स्त्री थी — ऐसी स्त्री जो उसे पसन्द आये

१. भगवद्गीता, १०-१०।

२, ३ व ४. यहाँ नाम छोड़ दिये गये हैं।

और जिसके साथ वह विवाह कर ले, या जो उसके लिए सगी बहनसे भी बढ़कर हो। . . . पर मेरी नजर तभीसे थी जबसे मैंने . . . का उसके प्रति और उसका . . . के प्रति राग देखा था। इस रागकी निर्मलताको मैंने स्वीकार कर ही लिया था। फिर भी जबतक ठीक अवसर न आये . . . पर मैं जिम्मेदारी कैसे डालता? तेरे पत्रने मुझे वह अवसर दे दिया। मेरा निदान ठीक है या नहीं . . . वह दवा है या नहीं, यह मैं नहीं जानता। शायद . . . भी नहीं जानती। यह तो प्रयोग करनेपर ही मालूम हो सकता है। मैं तो . . . की मानसिक स्वस्थता चाहता हूँ। इसके बिना उसकी शक्ति प्रकट नहीं हो पाती और वह क्षीण होता जाता है। काम तो वह करता जाता है, लेकिन उसमें उसे रस आता है या नहीं, इसका भी उसे पता नहीं।

मेरे बचपनकी शायद तू काफी बातें चुरा लाई है।

क्या तू यह जानती है कि रमाबहन बीमार है? उसके साथ जरा बात तो कर। हमारी कल्पना हमें जितना डरपोक बनाती है, उतने डरका कारण वस्तुस्थितिमें कभी होता ही नहीं। 'कल्पना भूत और शंका डायन', यह कहावत बिलकुल सच्ची है, शत-प्रतिशत सच्ची।

आशा है, नवागत बहनोंकी तू अच्छी तरह देखभाल करती होगी। दूसरे काम कम करके भी इस कामको अच्छी तरह करना।

किसनके[1] बारेमें मैंने अखबारमें पढ़ा था। धुरन्धरका काम सुन्दर है। लेकिन उसे अपने शरीरको मजबूत बनाना चाहिए। उसका वजन कितना है?

मुझे याद नहीं कि तेरे बारेमें आनन्दी[2] के पत्रमें मैंने क्या लिखा है, या लीलावतीसे[3] क्या कहा है। मुझे तेरे आजके ब्रह्मचर्यके बारेमें जरा भी शंका नहीं है। कलकी बात मैं नहीं जानता। तू जानती हो तो कहना होगा कि तू नारदजी और रामजी से भी ज्यादा जानती है। इसके बावजूद तेरे संकल्पका तो मैंने हमेशा स्वागत ही किया है। मैं यह नहीं मानता कि तुझे कोई आसानीसे फुसला सकता है। लेकिन तेरी-जैसी ही दृढ़ स्त्रियोंको भी मैंने विवाह करते देखा है। इसमें उनका भी क्या दोष? इसलिए फिलहाल तो मैं तेरे बारेमें ऐसी इच्छा ही रख सकता हूँ और तुझे आशीर्वाद देता हूँ। मुझसे जहाँतक हो सकेगा, उतनी तेरी मदद करूँगा, और यथा-शक्ति प्रहार भी करूँगा। परिणाम तो तेरे और भगवान्‌के हाथमें है।

तेरे पत्र जिस रूपमें आते हैं, मुझे वैसे ही चाहिए। यदि तू कृत्रिम बन जायेगी तो मेरे लिए निकम्मी हो जायेगी। तेरे मनके भीतर गाँठें पड़ी हुई हैं। मैं ज्यों-ज्यों उन्हें देख पाऊँगा, त्यों-त्यों उन्हें खोलनेका प्रयत्न कर सकता हूँ। लेकिन मैं उन गाँठोंको खोलनेवाला कौन? यह काम मनुष्यके वशका नहीं है। मुझे भगवान् जिस हदतक निमित्त बनने देगा, उसी हदतक मैं निमित्त बन सकता हूँ। इसमें मेरा स्वार्थ है, क्योंकि तुझसे तो मुझे बहुत ज्यादा काम लेना है। यदि यह मान लूँ कि

१. प्रेमाबहनके मित्र, किसन घुमतकर।

२ और ३. लक्ष्मीदास पी० आसरकी कन्याएँ।

तेरे मनके भीतर जो बातें मैं बैठा रहा हूँ वे व्यर्थ जानेवाली हैं, तो क्या इतने लम्बे पत्र लिखनेकी तकलीफ उठाऊँगा?

किसी व्यक्ति या समाजकी अवनतिका कारण ठीकसे खोजा गया हो, ऐसा जाननेमें नहीं आया। अनुमान तो बहुत लगाये जाते हैं। तात्कालिक कारण नजर भी आ जाते हैं, किन्तु वे हमेशा एक-से नहीं होते। लेकिन सामान्य रूपसे यह जरूर कहा जा सकता है कि अवनतिके मूलमें धार्मिक न्यूनता जरूर होती है। परतन्त्रता कभी मूल कारण नहीं हो सकती, क्योंकि वह स्वयं अन्य कारणोंका, दुर्बलताओंका परिणाम होती है।

पड़ोसीका कर्त्तव्य पड़ोसीकी हमेशा धार्मिक रीतिसे मदद करना है।

अहंकारके बीज अपनी शून्यता अनुभव करनेसे ही नष्ट होते हैं। एक क्षणके लिए यदि कोई गहराईसे विचार करे, तो उसे 'अपनी' अति अल्पताका भान हुए बिना न रहेगा। पृथ्वीके सन्दर्भमें हम जन्तुको तुच्छ मानते हैं; किन्तु इस विश्वके सन्दर्भमें मनुष्य-प्राणी उससे भी हजार गुना अधिक तुच्छ है। मनुष्यमें बुद्धि है, उससे इस स्थितिमें कोई फर्क नहीं पड़ता। उसकी महिमा अपनी तुच्छता अनुभव करनेमें ही है। क्योंकि इस अनुभवके साथ ही यह दूसरा ज्ञान पैदा होता है; जैसे वह मनुष्यके रूपमें तुच्छ है, वैसे ही भगवान्का तुच्छतम अंश होते हुए भी जब वह भगवान्में विलीन होता है तो वह भगवान्-रूप बन जाता है; और यह सूक्ष्म अणु भगवान्की शक्तिसे भरपूर है।

मायावादको मैं अपने ढंगसे मानता हूँ। कालचक्रमें यह जगत् माया है। लेकिन जिस क्षणतक उसका अस्तित्व है, उस क्षणतक वह जरूर है। मैं अनेकान्तवादको मानता हूँ।

अगर कोई वस्तु मनुष्यके सामने प्रत्यक्ष है, तो वह मृत्यु ही है। ऐसा होते हुए भी इस अनिवार्य प्रत्यक्ष वस्तुका भारी डर लगता है, यही आश्चर्य है, यही ममता है, यही नास्तिकता है। उससे तर जानेका धर्म अकेले मनुष्यके लिए ही सुलभ है।

पाप-पुण्य मृत्युके बाद भी जीवके साथ जाते ही हैं। जीव, जीवके रूपमें उन्हें भोगता है, फिर भले वह दूसरे दृश्य शरीरमें हो या सूक्ष्म शरीरमें।

अब तो बहुत हो गया न?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३०२) से। सी० डब्ल्यू० ५७५३ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

५७. एक पत्र

११ सितम्बर, १९३२

किये हुए कामका मूल्य है। आचरण-रहित विचार कितने ही अच्छे क्यों न हों, तो भी उन्हें झूठे मोतीकी तरह समझना चाहिए।

हमें हमेशा अपने पड़ोसीके गुण और अपने दोष देखने चाहिए। तुलसीदास जैसे व्यक्तिने भी अन्ततः अपनेको कुटिल कहा है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १५

५८. एक पत्र

११ सितम्बर, १९३२

तू लिखती है कि तेरा मन ठिकाने नहीं, इसलिए पत्र नहीं लिखेगी। यह भी विकारकी निशानी है। विकारका ठीक अर्थ समझनेकी जरूरत है। क्रोध करना भी एक विकार ही है। मनमें अनेक प्रकारकी इच्छाओंका उठना भी विकार है। इसलिए यह पहनूँ, यह ओढ़ूँ, यह खाऊँ, यह न खाऊँ, यह भी विकार ही है; और विवाह करनेकी इच्छा हो या विवाहकी इच्छा तो न हो किन्तु बराबरीके लड़कोंका संग अच्छा लगे, उनके साथ गुप्त बातें अच्छी लगें, उन्हें छूना अच्छा लगे, उनसे हँसी-मजाक करना अच्छा लगे, तो यह भी विकार है। यह अन्तिम विकार एक भयंकर विकार माना जाता है। जबतक इनमें से कोई भी विकार रहेगा, तबतक स्त्रीको मासिक-धर्म होता रहेगा। पुरुषको वह नहीं होता, किन्तू दूसरा कुछ तो होता ही है। इस अर्थमें मीराबहनको भी विकार-रहित नहीं कहा जा सकता। इसीसे उसे अभीतक मासिक-धर्म होता है। इस रूपमें वह कोई पाप नहीं करती। वह तो बहुत ऊँची पहुँच गई है। वह अपने तमाम विकारोंको दूर करनेके लिए संघर्ष कर रही है। पुरुष-संग-रूपी इच्छाका विकार तो उसके मनसे बिलकुल चला गया है। मगर उसमें क्रोध है, राग है, अनेक इच्छाएँ हैं। इन सबको रोकनेकी भी वह कोशिश करती है। मैंने जिस विकार-रहित स्थितिका वर्णन किया है, जो वहाँतक पहुँच जाये, उस स्त्रीको मासिक-धर्म हो ही नहीं सकता। तुम सब लड़कियाँ उस स्थिततक पहुँचनेकी कोशिश करो तो मुझे अच्छा लगे। सम्भव है, इस जन्ममें सफलता न मिले, तो भी क्या हुआ? प्रथम पाठ यह है कि कुछ छिपाकर न रखा जाये। किसीके साथ गुप्त सम्बन्ध न रखा जाये। सत्यव्रतपर अडिग रहा जाये।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १७-८

५९. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

११ सितम्बर, १९३२

चि० ब्रजकृष्ण,

तुमारा खत मिला है। बनारसका और दिल्हीका तुमारा खत नहिं मिला। मैंने देवलाली तुमको खत लिखे हैं उसकी पहोंच तुमने नहिं दी है। अब तुमने सब हाल दिये हैं वह अच्छा हुआ।

पहले तो तुमारे स्वास्थ्यके बारेमें। नमकसे जो लाभ मीराबहनको हुआ उसमें मानसिक हिस्सा काफी है। सब कुछ नमकके स्थूल असरसे नहिं हुआ है। नमकमें इतनी शक्ति नहिं है। कोई भी खोराकका या औषधका इतना असर ब्रह्मचर्य पर पड हि नहिं सकता है। क्योंकि अन्तमें ब्रह्मचर्य मानसिक स्थिति है। मनके विकारका असर शरीरपर होता है। जबतक मन दृढ़ और विकाररहित नहिं हुआ है तबतक खोराकसे हि क्या हो सकता है। हाँ, खोराक अयोग्य या अधिक होनेसे नुकसान हो सकता है। नमक अल्प मात्रामें लेनेसे कोई हानि नहिं हो सकती है। ऐसे हि नमकके त्यागसे तुमको भारी नुकसान पहोंचा है ऐसी भी कोई बात नहिं है। नमकमें इतना लाभ या नुकसान पहोंचानेकी शक्ति हि नहिं है। खोराक क्या लेना इस बारेमें मैंने आगे लिखा है। अंतमें तुमारे प्रयोग करके देखना होगा कोन-सा खोराक अनुकुल आता है। यदि देवलालीका जलवायु अनुकुल प्रतीत हुआ है तो वहीं जाओ। और साथ-साथ राधाको और दामोदरदासको मदद मिलेगी यह भी अच्छा है। अगर उनको इसी मासके अंतमें देवलाली छोडना हि होगा तो दिन बहोत कम रहते हैं। कितना भी हो तुमारा जाना हितकर हि हो सकता है और उनको यदि सेनेटोरियम खाली करना हि पडे तो भी तुमारे स्वास्थ्यके कारण देवलालीमें थोडा और ठहरनेमें कोई हरज नहिं है। दूसरी जगह तो आसानीसे मिलनी चाहिये। कुवलयानन्दके पास जानेका क्या हुआ? दा० तलवलकरने क्या कहा? शरीर अच्छा बना लो।

अब आश्रमकी बात। सही है कि आश्रमके लोग जैसे होने चाहिये ऐसे नहिं है। उनमें काफी दोष भरे हैं। इसलिये लोगोंको आश्रमवासीयोंकी टीका और निंदा करनेका अधिकार है और आश्रमीयोंको उसकी बरदास करना चाहिये इतना हि नहिं परंतु उसमें से शिक्षा भी लेना चाहिये। तुमारे मनपर भी कुछ ऐसा हि असर हुआ है उसका मुझे आश्चर्य नहिं है। क्योंकि ऐसा है हि। लेकिन ऐसा होते हुए भी परीणाम बुरा नहिं है ऐसा मेरा विश्वास है। आश्रममें रहनेवालोंने कुछ-न-कुछ उन्नति की है। बात यह है कि करनेका बाकी बहोत है, हुआ है कम। और ऐसे हि हो सकता था। और आश्रमवासी किसको कहा जाय? तुमने यदि इस बारेमें नारणदाससे बात नहि की है तो दिल खोलकर सब बात करो और उसकी सुनो। नारणदाससे बडकर कोई आदमी इतना हि दृढ, विवेकी, समझदार और कर्त्तव्यपरायण

मुझको मिलनेकी मुझे कोई उमेद नहिं है और नारणदास मिला है उसको मैं ईश्वरका अनुग्रह मानता हुं। आश्रमके लोग व्याधिमुक्त नहिं है यह भी सत्य है। इतना है कि आश्रममें आकर बीमार नहिं पडते हैं, बीमारी लेकर आते हैं। बात यह है कि अपूर्णतामें से पूर्णता पैदा करनेका प्रयत्न करते हैं। ईश्वर आज्ञा है, प्रयत्न करते-करते मर जाओ फलका स्वामी मैं हुं। इसलिये यदि इतना कहा जा सकता है कि आश्रममें प्रयत्नमें मंदता नहिं है तो मुझे संतोष होगा। मैं तो यह भी कबूल कर लुंगा कि प्रयत्नमें भी सुधारणाकी गुंजायश है।

पं जगतरामके[1] लिये कोई कुछ प्रयत्न करते हैं क्या?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २३९४) से।

६०. कार्य और विचार[2]

११ सितम्बर, १९३२

कोई कार्य करते हुए वैचारिक शक्तिका पूरा उपयोग करनेके बारेमें मैं पहले लिख चुका हूँ[3]। उसमें मैंने अन्तमें जो-कुछ कहा था उसपर विस्तारसे विचार करना जरूरी है। उसमें मैंने कहा है कि हमारे विचार समाजको जीवन देनेवाले या उसका नाश करनेवाले होते हैं, दैवी होते हैं और आसुरी भी होते हैं। हो सकता है, चरखा चलाते हुए कोई व्यक्ति रोज ऐसे सुधारोंके बारेमें विचार करे कि जिससे चरखा चलानेवाले लाखों-करोड़ों व्यक्तियोंको आसानी हो और वे लाभान्वित हों। दूसरा यह सोच सकता है कि यदि वह एक ही चरखेसे लाखों चरखा चलानेवालों के बराबर सूत कातकर लाखों कमा सके तो कितना अच्छा हो। पहले व्यक्तिके विचार दैवी हैं, समाजको जीवन देनेवाले हैं; दूसरेके आसुरी हैं, सामाजिक हितके विरोधी हैं। इसलिए प्रत्येक कार्य करते हुए हमारे लिए विचार करना-भर काफी नहीं है बल्कि वह विचार सभीके हितका हो, केवल स्वार्थका नहीं। सचमुच, यदि देखा जाये तो जो व्यक्ति केवल अपना ही स्वार्थ साधनेकी कोशिश करता है वह दूसरोंका नुकसान तो करता ही है किन्तु आखिरकार अपना भी स्वार्थ सिद्ध नहीं कर पाता।

इस दृष्टिकोणको सामने रखकर यदि प्रत्येक अपनी-अपनी प्रवृत्तिके बारेमें विचार करे और समझदारीसे काम करे तो वह उत्तम शिक्षा प्राप्त करता है, अपने कामको रुचिपूर्ण बनाता है, अपनी बुद्धिका विकास करता है, अपने हृदयको निर्मल और

१. एक क्रान्तिकारी जो उन दिनों मुल्तान जेलमें सजा काट रहे थे।

२. सम्भवतः यह "पत्र: नारणदास गांधीको", [७]/११-९-१९३२ के साथ भेजा गया था; देखिए अगला शीर्षक।

३. देखिए खण्ड ५०, पृ० ४४५-६।

विशाल बनाता है, कार्यकुशलता प्राप्त करता है और ऐसे आविष्कार और सुधार करता है जिससे समाजका कल्याण हो। परिणामस्वरूप, कार्यमें उसकी रुचि बढ़ जाती है, जिससे उसे आनन्द मिलता है; थकावट महसूस नहीं होती और काम कलात्मक होता है — फिर चाहे वह काम पाखाना साफ करनेका हो या रास्तोंकी सफाईका, साग-भाजी सँवारनेका हो या गोशालाका, हिसाब-किताब लिखनेका या और कुछ। उसका दृष्टिकोण पारमार्थिक बन जाता है और उसे कोई काम हलका या नीरस नहीं लगता। जो काम उसे मिलेगा उसमें वह ईश्वरके दर्शन करेगा, उसमें उसे उसीकी सेवा नजर आयेगी। उसकी रुचि कामके रंग-ढंगपर निर्भर नहीं रहती। कामके प्रति उसका रस अन्तरसे, कर्त्तव्य-परायणतासे निकलता है। जो व्यक्ति अनासक्तियोगको समझना-साधना चाहता है, उसे इसी प्रकार प्रत्येक कार्य करना चाहिए।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ८२४८ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

६१. पत्र : नारणदास गांधीको

[७][1]/११ सितम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

अभी बुधवारकी सुबह है। बकरी-माताओंकी दोहनी हो रही है और वे अपना संगीत भी सुना रही हैं। तुम्हारी डाक नियमानुसार कल शाम मिली। तुम्हें अंजली भर-भरकर आशीर्वाद देता हूँ। क्यों न दूँ? मेरी सारी आशाएँ तुम पूरी कर रहे हो और अपनी अनन्य तथा ज्ञानमय सेवासे हम तीनोंको आश्चर्यचकित कर रहे हो। ईश्वरसे तुम्हें सारी अग्निपरीक्षाओंमें से सफल होकर निकलनेकी शक्ति प्राप्त हुई जान पड़ती है। मेरी यही कामना है कि तुम दीर्घायु बनो और अहिंसा-देवीकी साधनाके बलपर सत्यनारायणका साक्षात्कार करो तथा उसका साक्षात्कार करनेमें दूसरोंके लिए भी सहायक होओ।

बाबाके विषयमें तुम्हारे दो पोस्टकार्ड मिले, लेकिन प्रत्येक एक-एक दिन देरसे। कारण यह था कि वे डाकघर समयसे नहीं पहुँचे। दोनों पर "डिटेंड — लेट फी नॉट पेड" की[2] मुहर लगी हुई है। इसलिए डाकघरसे डाक निकलनेका समय मालूम कर लेना। तुम्हारी सोमवारकी मोटी डाक और रविवारका लिखा पोस्टकार्ड दोनों साथ ही पहुँचे।

१. गांधीजी ने यह पत्र बुधवारको लिखना शुरू किया था और उस दिन सितम्बरकी ७ तारीख थी।
२. "रोक रखा गया — विलम्बसे चिट्ठी डालनेका शुल्क नहीं दिया गया।"

१० सितम्बर, १९३२

आजतक तुम्हारी ओरसे कोई विशेष पत्र नहीं आया है, इसलिए मैं समझता हूँ कि कानजी सेठ खतरेसे बाहर हैं; इतना ही नहीं, बल्कि उनमें शक्ति भी आ गई है। आशा है, डाहीबहन[1] ठीक होगी। अखबारोंमें तुम्हारे यहाँ अच्छी वर्षा होनेकी खबर छपी है। केशूकी पूनियोंसे तो महादेवने १०५ अंकतक का सूत काता है। लगता है, अगर सीधा और बारीक तकुआ मिल गया तो १५० तक पहुँचनेमें भी कोई कठिनाई नहीं होगी। वहाँसे बारीक तकुआ मँगवाया है, लेकिन इसके बावजूद यहाँ भी बारीक तकुआ तैयार करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। आश्रमकी कपास अच्छी नहीं होती, इसके कारणका तो पता लगाना चाहिए। उसमें कीड़े लग जाते हैं, इससे यह प्रकट होता है कि या तो कम खाद दी जाती है या ज्यादा अथवा खराब खाद दी जाती है। किसी अच्छे जानकार आदमीसे पूछकर अथवा कपासकी खेती-सम्बन्धी पुस्तकमें से अलग-अलग खादों तथा भिन्न-भिन्न प्रकारकी जमीनसे सम्बन्धित जानकारी प्राप्त करके प्रयोग करना चाहिए। आजकलके कृषि-विशेषज्ञोंकी ऐसी मान्यता है कि अमुक मर्यादाके अन्दर चाहे जिस जमीनसे चाहे जो भी फसल पैदा की जा सकती है। इस मान्यताके अनुसार बरतते हुए फ्रान्समें, पहले जिन फसलोंका खयाल भी नहीं किया जाता था, उनकी बोआई होती है और उनसे मुनाफा भी कमाया जाता है। यदि किसीको अवकाश हो तो इस सम्बन्धमें छानबीन कर ले। मैं यह मानता हूँ कि मगनलालने खेतीके बारेमें पुस्तकें इकट्ठी की थीं। हमारे यहाँ 'कॉटन कमेटी'की रिपोर्ट भी है; उसमें भी कुछ मिलेगा। प्रोफेसर हिगिनबॉटमको इलाहाबादके पतेपर लिखकर देखा जाये तो वे भी शायद कुछ मदद कर सकें। आश्रमकी जमीन तो उनकी देखी हुई ही है।

गाण्डीव चरखेको सामने रखनेके बजाय बगलमें समकोणसे रखा जाये तो इच्छा होनेपर पैर पसारा जा सकता है। मचियापर बैठकर कातना हो तो वह भी सहज ही हो सकता है। चरखेको मचियाकी ऊँचाईके बराबर ऊँची पेटी अथवा उसके लिए खास तौरसे बनवाये चौखटेपर रखा जा सकता है।

अनन्तपुरकी रिपोर्टके बारेमें मैं समझा नहीं। यदि वह रजिस्ट्रीसे भेजी गई हो तो रजिस्ट्रीकी पहुँचकी रसीद होनी ही चाहिए। यह हो तो काम चल जायेगा, और डाकघरमें इतना पता लगाया जा सकता है कि पहुँचकी रसीदपर किसके हस्ताक्षर हैं। यह पता करनेके लिए शुल्क देना पड़ता हो तो दे देना। यदि अनन्तपुरकी रिपोर्ट फिर मँगवाई हो तो उसका अर्थ तो यह होगा कि अब तीसरी प्रति भेजनी है। यह तकलीफ उन्हें कैसे दी जा सकती है?

पद्माके विषयमें तुमने जो कहा है, वह ठीक है। मन्दिरके सम्बन्धमें पण्डितजी को लिखा है;[2] वह पत्र तुम देख लेना। मैंने ऐसा समझा है कि व्यायाम मन्दिरमें

१. आश्रमके निकट रहनेवाले बुधाभाईकी पत्नी।

२. देखिए "पत्र: नारायण मोरेश्वर खरेको", ३-९-१९३२।

गणपतिकी मूर्ति हमेशा स्थायी रूपसे नहीं रहेगी। मंजुला और कॉडलिवर ऑयलके[१] सम्बन्धमें मैं लिख चुका हूँ। इन्दुका खयाल रखना। अगर उसका दिमाग खराब हो जानेका भय हो तो बीमारीके उस सीमातक पहुँचनेके पहले ही[२] उसका निवारण करना।

आश्रममें रहनेवाले लोगोंकी संख्या अच्छी ही मानी जायेगी। जमना[३] राजकोटमें रुक गई है, वह तो अच्छा ही माना जायेगा। आशा है, अब देवभाभी[४] अच्छी हो गई होंगी। वीरमतीको[५] कहाँ रखा है? अमतुलबहनने अपने पत्रमें लिखा है कि उर्दूमें मैंने जो उसे उसका पूरा नाम अमतुलसलाम लिखा वह उसको अच्छा लगा। मैं तो उससे पूछने जा ही रहा हूँ,[६] लेकिन तुम भी पूरा नाम अच्छा लगनेका कारण जान लेना और अगर वही ठीक हो तो तुम सब उसे इसी नामसे बुलाना। हो सकता है, 'अमतुल' कोई नाम ही न हो, बल्कि 'अमतुलसलाम' ही एक अविभाज्य नाम हो। जिस प्रकार हम इब्राहीमके बदले किसीको इब्रा नाम नहीं दे सकते अथवा ब्रजकृष्णके बदले ब्रज नहीं कह सकते हैं, वैसे ही।

११ सितम्बर, १९३२

लगता है, डॉ० शर्मा कुछ दिन आश्रममें रहनेके लिए आना चाहते हैं। उन्हें आश्रमकी नियमावली भेज देना। जबतक वहाँ रहें, उनका पालन करते रहें तो उन्हें आनेके लिए लिखनेमें मुझे कोई अड़चन नहीं दिखाई देती। फिर भी, तुम्हें जैसा ठीक लगे वैसा ही करना।

ब्रजकृष्णको लिखा पत्र[७] पढ़ना। वह स्वच्छ-हृदय व्यक्ति है। उससे बात करना। उसकी शंका दूर की जा सकती हो तो दूर करना।

वहाँ जो रोटी बनती है, उसके सम्बन्धमें जानकारी भेजनेके लिए मैंने शुक्रवार को एक पोस्टकार्ड[८] लिखा था। वह पहुँच गया होगा। मैंने रोटी बनानेके तरीकेका ब्योरा माँगा है। अभी मैंने यहाँ जो रोटी बनती है, उसमें हाथ डाला है, और मैं भी रोटी खाने लगा हूँ। रोटी बड़ी अच्छी बनती है। इससे अच्छी रोटी शायद हम नहीं बनाते।

शारदाको लिखा पत्र पढ़ना। लड़कियोंकी समस्यापर हमें विचार कर लेना है। मुझे ऐसा भासित होता है कि उनके स्वास्थ्यकी कुंजी शायद हाथ लग गई

१. देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", ३/४-९-१९३२।

२. **बापुना पत्रो-९: श्री नारणदास गांधीने,** भाग-१ में इससे आगेका अंश ३ सितम्बरके अंतर्गत छापा गया है, जो कि अशुद्ध है, देखिए पृ० १६ की पाद-टिप्पणी २।

३. नारणदास गांधीकी पत्नी।

४. नारणदास गांधीकी माँ।

५. माधवलाल शाहकी पत्नी।

६. देखिए "पत्र: अमतुस्सलामको", ११-९-१९३२।

७. देखिए "पत्र: ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको", ११-९-१९३२।

८. देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", ९-९-१९३२।

है। बहुत कम शिक्षा पाई इन सारी बहनोंको हमें सब तरहसे कुशल बनाना है। यह कैसे हो सकता है, यह तो तुम्हारे ही सोचनेकी बात है।

३७ एक साथ बँधे हुए और १५ खुले हुए, कुल ५२ पत्र हैं।

बापू

[पुनश्च :]

मेरा वसीयतनामा वहीं कहीं पड़ा होगा। मुझे उसकी नकल भेजना। सीलबन्द हो तो सील तोड़कर निकाल लेना। उसके सम्बन्धमें कोई सुझाव देना हो तो देना। ट्रस्टियोंके नाम बदलनेकी तो अब जरूरत होगी न? इमाम साहब तो रहे नहीं। सभी नाम मुझे याद नहीं हैं।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२५० और ८२४८ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

६२. पत्रोंके अंश

११ सितम्बर, १९३२

परमेश्वर और प्रकृति एक ही वस्तु है। देवता परमेश्वरकी एक-एक शक्ति है। उसकी उपासनासे भी अन्तमें परमेश्वरतक पहुँचा जा सकता है।

× × ×

कर्मप्राधान्यका वर्णन करके तुलसीदासजी ने ईश्वरी न्यायकी प्रशंसा की है। भक्तके पापोंको भगवान् क्षमा करता है। शास्त्रकी भाषामें इसका अर्थ यह है कि भक्त जब भगवान्में लीन हो जाता है तब शुद्ध होता है। शुद्ध होना पापका क्षय ही है, जैसे सुवर्णमें से कुधातुका निकलना। . . .

× × ×

सन्त पुरुषका एकान्तमें रहकर विचार-मात्रसे भी सेवा कर सकना सम्भव है। ऐसा लाखोंमें एक निकल सकता है।

× × ×

शरीरका अस्तित्व पूर्ण अहिंसाका विरोधी है। बिना पूर्ण अहिंसा सत्यका साक्षात्कार असम्भव है। लेकिन जो निर्विकार हुआ है वह बहुत नजदीक जाता है, उतना काफी होना चाहिये।

× × ×

दण्डका अर्थ आजतक मैंने शरीर-दण्ड समझा है। भोजनादिक बन्द करना मेरी कल्पनाके वाहर नहीं है। उसे मैं दण्ड नहीं कहूँगा। भोजनका स्वतन्त्र अधिकार किसी संस्थामें किसीको नहीं है। समझौतेकी बात है। एक तरफसे नियम-पालनकी

शर्त है, दूसरी तरफसे भोजनादि देनेकी। संस्थामें भोजनकाक बदला पैसा ही नहीं, परन्तु नियमपालन है।

× × ×

भय और सत्य विरोधी वस्तु हैं। परन्तु जिसमें भयका अंश भी नहीं है उसे छिपाना सत्यका अविरोधी और आवश्यक हो सकता है। दरदीके स्वास्थ्यके लिये वैद्य अवश्य भयानक व्याधिकी बात छिपा सकता है, छिपानेका धर्म भी हो सकता है।

× × ×

सब इन्द्रियाँ जिसके वशमें हैं वह पूर्ण ब्रह्मचारी है। यह स्थिति शरीर रहते हुए सम्भवित है। खोराकका संयम आवश्यक है, ब्रह्मचर्य-पालनमें उसका हिस्सा कम है। असंयम अवश्य घातक है। दूध-घी, औषधकी मात्रामें लेनेसे हानिकारक नहीं हैं ऐसी कुछ मेरी प्रतीति है।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १५-१६

६३. पत्र : अमतुस्सलामको

११ सितम्बर, १९३२

प्यारी बेटी अमतुस्सलाम,

सिर्फ अमतुल[१] क्यों नहीं, मुझे समझाओ। जिस पैसाकी उम्मीद रखती है वह मिले तो ठीक है, न मिले तो भी ठीक समझना। तुम्हारे हरफ अच्छे तो हैं, लेकिन और भी साफ लिखो। ऐसे भी दो-चार खत पढ़नेसे सब समझा जायेगा। बम्बईमें लड़कियोंकी पढ़ाईका कोई इन्तजाम नहीं है, यह सुनकर ताज्जुब होता है। मेरा तो खयाल था कि अंजुमनने बहुत अच्छा इन्तजाम किया है। डॉ० शर्माके बारेमें नारणदाससे बात करो। मेरे खयालसे तो अगर वे आश्रमके कानूनके पाबन्द रहें, तो आनेमें कोई हर्ज नहीं है।

कुदसिया[२] के बारेमें मैं समझा हूँ। लड़की आश्रममें अच्छी हो जाये तो कैसा अच्छा होगा? तुम्हारी सेहतके लिए आराम ही बड़ी बात है।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २५७) से।

१. लगता है गांधीजी ने अपने पहलेके पत्रोंमें उन्हें 'अमतुल' से सम्बोधित किया था जिसका उन्होंने विरोध किया; देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", [७]/११-९-१९३२। उनका पूरा नाम दो शब्दोंसे मिलकर बना है—'अमतुल'—बन्दी और 'सलाम'—शान्ति अर्थात् शान्तिकी बन्दिनी।

२. अमतुस्सलामकी भतीजी।

६४. पत्र : कृष्णदासको

[१३ सितम्बर, १९३२ के पूर्व]

तुम्हारे पत्रकी राह ही देख रहा था, और आज वह मिल भी गया। दुर्घटना-में बच रहनेवाले लोगोंकी भावनाओंको मैं समझ सकता हूँ। लेकिन, तुम्हें उनमें मृत्युके प्रति निर्भयताका भाव भरना चाहिए और यह समझाना चाहिए कि मृत्यु तो एक मित्रकी तरह आती है। चाहिए तो यह था कि मृत्युके प्रति हम सबसे अधिक उदासीन होते, पर पता नहीं क्यों, अन्य धर्मोंके अनुयायियोंकी अपेक्षा हम लोग ही उससे अधिक डरते हैं। मुसलमान उससे सबसे कम डरते जान पड़ते हैं। उनके बाद ईसाइयोंका स्थान आता है। मेरा खयाल है, चीनी लोग भी मृत्युको जीवनकी अत्यन्त साधारण घटना मानते हैं, और वास्तवमें वह है भी ऐसी ही। लेकिन हम लोग किसी महत्त्वपूर्ण मृत्यु-प्रसंगके बाद बहुत दिनोंतक निर्जीव-से बने रहते हैं और उसपर शोक करना तो कभी नहीं छोड़ते।

तुम सबको मेरा स्नेह-वन्दन। वल्लभभाई और महादेवकी शुभकामनाएँ तुम्हारे साथ हैं।

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]
एडवांस, १३-९-१९३२

६५. तार : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

[१३ सितम्बर, १९३२][1]

चार्ली एण्ड्रयूज
११२ गोवर स्ट्रीट
लन्दन

तुम्हारा तार मिला। मैं इस उपवासको ईश्वरका आदेश मानता हूँ। दलित वर्गोंके लिए पृथक् निर्वाचक-मण्डल व्यवस्थाका वापस लिया जाना निश्चित हो, केवल इसी आधारपर उपवास स्थगित[2] कर

१. **महादेवभाईनी डायरी**के अनुसार।

२. सी० एफ० एण्ड्रयूजने यह तार भेजा था: "कृपया मेरे वहाँ आनेतक उपवास स्थगित रखें। शीघ्र ही रवाना हो रहा हूँ।"

सकता हूँ। तुम्हारा लन्दनमें रहना भारत आनेसे अधिक उपयोगी है। वल्लभभाई और महादेव इस बातसे सहमत हैं।

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०/१३ से; **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-२, पृ० २० से भी।

६६. पत्र : मोहनलाल एम० भट्टको

१३ सितम्बर, १९३२

मैं मानता हूँ कि यह मेरा परम धर्म है। इसलिए रामदास या तुम, कोई भी बिलकुल खिन्न न होना, बल्कि सब प्रसन्न होना और ईश्वरका अनुग्रह मानना कि तुम्हारे एक साथीको धर्मपालनके मार्गमें यह अन्तिम कदम उठानेकी बात सूझी और उसे इसका अवसर मिला है। यह तो सभी समझ सकेंगे कि इसका अनुकरण किसीको नहीं करना चाहिए। अनशन करनेका अधिकार सबको नहीं होता। और अधिकारके बिना जो अनशन करते हैं, उनका तप शास्त्रविरुद्ध और आसुरी है। इसलिए उनके पल्ले निरे कष्टके सिवा और कुछ पड़ता ही नहीं। इसलिए मेरे अनशनके विषयमें तुम सबका धर्म किसी भी प्रकारका विचार या चिन्ता किये बिना ज्यादा कर्त्तव्य-परायण बनना, ज्यादा शुद्ध बनना और ज्यादा जाग्रत रहना है। . . .[1] वहाँ किसी भी तरहकी खलबली न होनी चाहिए। यह निश्चित समझना कि जो [जेलके] अन्दर हैं, उनके लिए तो मैंने ऊपर जो-कुछ कहा है, उसके सिवा अन्य कोई कर्त्तव्य है ही नहीं।[2]

पुनर्जन्मका अर्थ है शरीरका रूपान्तर, आत्माका — शरीरीका — नहीं। इसलिए पुनर्जन्म [रूपान्तरकी] वैज्ञानिक मान्यतासे भिन्न है। आत्माका रूपान्तर नहीं, बल्कि स्थानान्तर होता है। अपनेको कर्त्ता न माननेवाले के हाथसे किसीकी मौत होती ही नहीं। कर्तृत्वको मानना, न मानना बुद्धिका नहीं, हृदयका विषय है। इसलिए सच पूछा जाये तो 'कर्त्ता न मानकर' और 'ईश्वरार्पण करके', यह प्रयोग ही गलत है। क्योंकि यह बुद्धिका प्रयोग हुआ। और 'गीता' या अन्य शास्त्रोंमें ईश्वरार्पणताके जो वचन आते हैं, उनका बुद्धिके साथ कुछ भी सम्बन्ध नहीं। मैं जिस रूपमें वेदान्तको समझता हूँ, उस रूपमें तो इसका हमारे कार्यके साथ अच्छी तरह मेल बैठता है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २१-२

१. साधन-सूत्रमें यह स्थान रिक्त है।

२. इसके बाद साधन-सूत्रमें एक अन्य पत्र दिया गया है (देखिए अगला शीर्षक) किन्तु यह स्पष्ट नहीं है कि इस अनुच्छेद और अगले अनुच्छेदके बीचमें कोई अंश छोड़ दिया गया है या नहीं।

६७. पत्र : देवदास गांधीको

१३ सितम्बर, १९३२

अनशनकी डौंड़ी पिट गई। मैं यह मान लेता हूँ कि तू बिलकुल घबराया न होगा। ऐसा अपूर्व अवसर किसीको माँगे नहीं मिलता। यह तो कभी-कभी और किसी-किसीको ही प्राप्त होता है। मैं यह मानता हूँ कि उक्त अवसर मुझे मिला है; और जो ऐसा मानता है, वह तो उसका स्वागत ही करेगा। इसलिए उद्वेगका कोई कारण नहीं। कलकत्तेमें घनश्यामदास मिलें तो उन्हें यह समझाना। मालवीयजी को समझानेकी जरूरत ही नहीं। मैं यह मानता हूँ कि वे तो हर्षके आँसू बहाते होंगे और उनके हृदयसे पल-पल मेरे लिए आशीर्वादके उद्‌गार निकलते होंगे। इतना तू उनसे कहना और यदि अन्य स्नेही खिन्न हों तो तू खुद बहादुरीसे उन लोगोंको खिन्न होनेसे रोकना। दूसरे अगर समझें तो उनका धर्म तो अधिक कर्त्तव्य-परायण होना, लोगोंको जाग्रत करना और लोकमत तैयार करना है। और यदि शान्त किन्तु प्रचण्ड लोकमत तैयार हो जाये तो शायद मुझे अन्ततक उपवास करना भी न पड़े। जहाँतक मैं अपनेको समझ सकता हूँ, उसके अनुसार मुझे ऐसा करना पड़े तो इसमें परम शान्ति ही है। और यदि यह अधूरा रहे और इस देहके द्वारा अभी और सेवा करनी बाकी होगी, तो भी मैं उसका स्वागत करूँगा। मेरा मन आखिरतक स्थिर रहे तो दोनों दृष्टियोंसे अच्छा है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २२

६८. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

१३ सितम्बर, १९३२

तेरा पत्र मिल गया। तूने शायद मेरे उपवासकी बात सुनी होगी। इससे तू जरा भी न घबराना, और न अन्य बहनोंको घबराने देना। तुझे तो हर्ष ही होना चाहिए कि ईश्वरने मुझे ऐसा कठिन धर्म पालन करनेका अवसर दिया है। आशा है, इस उपवासका अर्थ भी तू समझ गई होगी। अन्त्यज भाइयोंके बारेमें मैंने जो माँग की है, वह मंजूर हो जाये तो मेरे लिए उपवास करनेकी बात नहीं रह जाती; और यदि उपवास शुरू हो गया हो, तो उसे तोड़ा भी जा सकता है। लेकिन अन्त तक पूरा करना पड़े तो ईश्वरकी कृपा ही माननी चाहिए। करोड़ोंमें किसी-किसीको ही माँगी हुई मौत मिलती है। यदि ऐसी मौत मुझे मिले तो कितना अच्छा हो? और यह तो सूरजके प्रकाशकी तरह स्पष्ट है कि मौत न मिले तो और भी ज्यादा

शुद्ध होना, और ज्यादा सेवा करना मेरा धर्म हो जायेगा। मैं समझता हूँ कि पचास वर्षतक मेरे साथ रहनेके बाद इतनी आसान बात तो तू अच्छी तरह समझ ही जायेगी और इसे बरदाश्त कर सकेगी।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २२-३

६९. पत्र : नारणदास गांधीको

१३ सितम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

मेरे अनशनकी खबर अखबारोंमें देखी होगी। मैं मान लेता हूँ कि उससे वहाँ कोई घबराया नहीं होगा। यदि समझें तो यह तो सभी आश्रमवासियोंके लिए उत्सव का अवसर होना चाहिए। अनशन आश्रमकी कल्पनाकी सबसे अन्तिम और उत्तम वस्तु है। इसका अधिकार किसी-किसीको ही प्राप्त होता है। शुद्ध अनशन रोज-रोज नहीं किया जाता। इसका अधिकार किसी-किसी समय और बिरले लोगोंको ही मिलता है। मैंने यह मान लिया है कि इस बार यह अधिकार मुझको मिला है। अगर इसमें मुझसे भूल हुई होगी तो अनशन मिथ्याभिमान माना जायेगा और वह आसुरी तप होगा। अपने अन्तःकरणको इतना शुद्ध करनेके लिए कि अन्तरात्माकी आवाज ठीक-ठीक सुनाई दे, मैं लगभग आधी शताब्दीसे अविच्छिन्न प्रयत्न करता आ रहा हूँ। मैं मानता हूँ कि इस प्रयत्नके अन्तमें मुझे अन्तरात्माकी आवाज सुननेकी थोड़ी-बहुत शक्ति मिल गई है। अन्तरात्माकी इसी आवाजके वशीभूत होकर मैंने यह कदम उठाया है। २० तारीख तो अभी दूर है। अभी तो संकल्प-मात्र है। यह चीज क्या है, यह समझाने-भरके लिए और फिर यह सुझानेके लिए ही यह पत्र लिख रहा हूँ कि वहाँ कोई घबराहटमें न पड़े, बल्कि यह समाचार सुनकर अधिक कर्त्तव्यनिष्ठ बने, अधिक शुद्ध बने और अधिक जाग्रत हो। तुम खुद तो यह समझते ही होगे कि वहाँ किसीको इस उपवासका अनुकरण नहीं करना है। दूसरोंको भी समझाओ। अनशन करनेकी इच्छा मैंने गुप्त रखी और हम तीनके अलावा और किसीके कानमें यह खबर नहीं पड़ने दी, इससे वहाँ किसीको आश्चर्य तो नहीं हुआ होगा। जेलका तो यह नियम ही है कि ऐसे पत्रोंकी बात मुझे प्रकट नहीं करनी चाहिए; और यदि मैं अनुचित रूपसे इसे प्रकट करनेकी इच्छा भी करूँ तो इतनेसे ही मेरा सत्याग्रह कलंकित हो जायेगा और इसकी शुद्धतामें बहुत बड़ा धब्बा लगेगा। इस व्रतका महत्त्व इसकी सम्पूर्ण शुद्धतामें ही निहित है। तुम्हारा साप्ताहिक पैकेट मिल गया है। इस बार तो उसके उत्तरमें पत्र नियमपूर्वक लिख सकूँगा, ऐसा मानता हूँ। जरा शंकित मनसे लिख रहा हूँ, क्योंकि इन शेष दिनोंमें काम ज्यादा होनेकी सम्भावना है। तुम्हारे

जानने योग्य कोई नई बात होगी तो लिखूँगा। आश्रमके सम्पर्कमें रहनेवालों को यह पत्र दिखाना चाहो तो दिखा सकते हो।

आनन्दीसे कहो कि उसे मैं विस्तारसे पत्र लिखूँगा। उसका पत्र मुझे बहुत अच्छा लगा है। वह बिलकुल निर्भय रहे। सभी लड़कियोंको तुम निर्भय बनाना। आश्रममें यदि कोई लड़कियोंके बारेमें कानाफूसी करता हो तो इसे बुरी आदत मानना चाहिए। हमारे और लड़कियोंके भाग्यमें जो होगा वह होकर रहेगा। लेकिन, उनके बारेमें शंकाशील रहकर हमें उनको भयभीत नहीं करना चाहिए। जहाँ चेतावनी देनेका कारण मिले वहाँ चेतावनी दे देनी चाहिए और फिर निश्चिन्त हो जाना चाहिए। लड़कियोंको ऐसा लगना ही नहीं चाहिए कि उनको किसी प्रकारसे दबाया जा रहा है। उनपर जो प्रतिबन्ध लगाये जाते हों, उनके बारेमें उन्हें समझाना चाहिए और ये प्रतिबन्ध इस तरहसे लगाने चाहिए कि उनको अनुकूल पड़ें।

हरियोमलको वापस आनेकी इजाजत दे दी, यह मुझे तो ठीक ही लगता है। आशा है, बाबा अब बिलकुल अच्छा हो गया होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२५१ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

७०. एक पत्र

[१३ सितम्बर, १९३२ के पश्चात्][1]

प्रिय बहन,

तुम और दूसरी बहनें आकर मुझसे मिल सकती हो, मगर ऐसा नहीं है कि यह जरूरी हो। हाड़-मांसकी इस क्षयशील कायाको देखने आनेकी अपेक्षा उस कामको करना अच्छा है जिसके लिए तपश्चर्या की जा रही है।

बापू

[अंग्रेजीसे]

एपिक फास्ट, पृ० १२८

१. साधन-सूत्रके अनुसार यह पत्र १३ सितम्बरको गांधीजी का सरकारके साथ पत्र-व्यवहार छप जाने पर उन्हें मिले अनेक पत्रोंके उत्तरोंमें से एक है।

७१. पत्र : कामकोटि नटराजन्को

१४ सितम्बर, १९३२

प्रिय कामकोटि,

तुम्हारा स्नेहसिक्त हृदयस्पर्शी पत्र मिला। अपनी अन्तरात्माके आदेशपर मैंने जिस अग्नि-परीक्षासे गुजरनेका निश्चय किया है, उसपर दुःख करनेका कोई कारण नहीं है। यह ऐसा सौभाग्य है, जो किसीको बहुत कम ही मिलता है। पचास वर्षों तक अपने दलित वर्गोंके भाइयोंके साथ अपनत्वका नाता रखनेके बाद मुझे इस अग्नि-परीक्षासे बचनेका कोई रास्ता दिखाई नहीं दिया। फिर भी, यदि ईश्वर मेरे इस शरीरसे और अधिक सेवा चाहता होगा तो वह मेरे लिए रास्ता साफ कर देगा।

और प्रार्थनामें श्रद्धा क्यों नहीं? श्रद्धा या तो अपने अन्दरसे प्राप्त की जाती है या फिर वह वहाँ स्वतः प्रगट होती है। प्रत्येक देश और प्रत्येककालमें जो ऋषि-मुनी हो गये हैं, उन्होंने निर्विवाद रूपसे जिस बात की साक्षी दी है, उससे तुम्हें यह विश्वास हो जाना चाहिए। सच्ची प्रार्थना केवल ओठोंसे बुदबुदाई नहीं जाती। सच्ची प्रार्थना कभी झूठी नहीं पड़ती। निस्स्वार्थ सेवा प्रार्थना ही है। तुम्हें ऐसा कभी नहीं कहना चाहिए कि 'मुझे प्रार्थनामें श्रद्धा नहीं है'।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २४

७२. तार : घनश्यामदास बिड़लाको

[१५][1] सितम्बर, १९३२

त्वरित

घनश्यामदास बिड़ला
बिड़ला पार्क
बालीगंज, कलकत्ता

तार मिला। परेशान होनेका कोई कारण नहीं। खुशी मनानेका पूरा कारण है। दलितोंके लिए अन्तिम बलिदान करनेका ईश्वर-प्रदत्त अवसर मुझे प्राप्त हुआ है। मेरा निश्चित मत है कि उपवासकी तिथि टाली

१. देखिए "तार : घनश्यामदास बिड़लाको", १८-९-१९३२; लेकिन साधन-सूत्रमें तिथि १६ सितम्बर, १९३२ ही दी हुई है।

नहीं जानी चाहिए। किसी कामका निर्देश भेजने अथवा भावी कार्रवाईके विषयमें कुछ कहनेमें सर्वथा असमर्थ हूँ।[1]

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फा० नं० २०/९; **हिन्दू**, १७-९-१९३२, से भी।

७३. सन्देश : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

[१५ सितम्बर, १९३२][2]

चिन्ताकी कोई बात नहीं। इसके विपरीत मैं तो आपसे यह अपेक्षा रखता हूँ कि आपके एक साथीको दलितोंके हितमें सत्याग्रह-यज्ञमें अन्तिम आहुति देनेका ईश्वर-प्रदत्त अवसर प्राप्त हुआ है, ऐसा मानकर आप हर्षोल्लसित होंगे। अनशनकी तिथि पर पुनर्विचार करनेकी गुंजाइश नहीं है। अगर आप अनुमति ले सकें तो आपसे मिल सकता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका १८-९-१९३२

७४. पत्र : एम० जी० भण्डारीको

१५ सितम्बर, १९३२

प्रिय मेजर भण्डारी,

दो महत्त्वपूर्ण तार तत्परतासे भेजनेके लिए धन्यवाद। यदि आपको मेरे उत्तर भिजवानेका भी अधिकार हो तो मैं चाहूँगा कि साथके उत्तर आप एक्सप्रेस डाक द्वारा भिजवा दें। राजगोपालाचारीको भेजे मेरे उत्तरमें[3] आप देखेंगे कि मैंने लिखा है कि वे जब भी चाहें आ सकते हैं। ऐसा मैंने यह मानकर लिखा है कि जब आपने वह तार मुझतक पहुँचा दिया जिसमें मुझसे मुलाकातकी माँग की गई है तब तो मुलाकातकी इजाजत देनेका भी अधिकार आपको होगा ही। शायद आप मूल तारोंको देखना चाहें, ऐसा सोचकर उन्हें भी साथमें भेज रहा हूँ। इन्हें कल सुबह लौटा देनेकी कृपा क . . .

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५१२७) से।

१. देखिए "पत्र : एम० जी० भण्डारीको", १७-९-१९३२।

२. साधन-सूत्रमें तिथिका उल्लेख नहीं किया गया है। लेकिन, लगता है कि एम० जी० भण्डारीको सम्बन्धित व्यक्तियोंको भेजनेके लिए जो सन्देश दिये गये थे, यह उन्हींमें से था। देखिए अगला शीर्षक।

३. देखिए पिछला शीर्षक।

७५. पत्र : मीराबहनको

१५ सितम्बर, १९३२

चि० मीरा,

मैं तुम्हारे पत्रकी बाट देख रहा था। वह आज पहुँचा। प्रसन्नताकी बात है कि तुमने उपवासका कारण समझ लिया है। उसके सिवा कोई चारा नहीं था। यह एक सौभाग्य भी है और कर्त्तव्य भी। यह सौभाग्य एक या अनेक पीढ़ियोंमें किसी विरलेको और क्वचित् ही प्राप्त होता है। अहिंसाके मार्गमें उपवास सर्वोत्कृष्ट कदम है, बशर्ते कि वह अहिंसाकी भावनासे ओतप्रोत हो और जिस कार्यके लिए उपवास किया जाता है, उसमें स्वार्थका लेश भी न हो। इसलिए मैं कहता हूँ कि तुम भी मेरी तरह हर्ष मनाओ कि मुझे ऐसा अवसर प्राप्त हुआ दीखता है। 'दीखता है' इसलिए कहता हूँ कि अभी मेरी श्रद्धाकी परीक्षा होनी है। जीवन-मरणके मामलेमें कोई अपनी शक्तिकी बात करनेका साहस नहीं कर सकता। इसलिए प्रश्न यह है कि क्या मुझमें आवश्यक शक्ति है। दूसरे यह, कि जिस उद्देश्यके लिए वह किया जा रहा है, उसमें क्या अपेक्षित शुद्धता है; और तीसरे, कि क्या इस व्रतको लेनेमें मैं सचमुच हिंसासे सर्वथा मुक्त हूँ। जब मैं कहता हूँ कि मुझे ये सब बातें प्रतीत होती हैं, तब मैं केवल अपना विश्वास ही प्रकट करता हूँ। निर्णय तभी दिया जा सकता है, जब कार्य पूरा हो जाये। मैं चाहता हूँ कि तुम इस घटनाकी प्रगतिको जरा भी अशान्त हुए बिना देखती रहो। और न तुम्हें किसी भी स्थितिमें सहानुभूतिमें उपवास करना चाहिए। तुम्हें अपने ही काममें डूबे रहना चाहिए, और वह काम यह है कि पूर्ण धीरज और सन्तोषके साथ अपनी कैद पूरी करो और जो भी समय तुम्हें मिले, उसके हर क्षणका अच्छेसे-अच्छा उपयोग करो।

अगर तुम दूसरी तरहसे तन्दुरुस्त और अच्छी हो, तो तुम्हारे वजनके घटनेकी मुझे चिन्ता नहीं है। जब तुम्हारे लिए वहाँकी जलवायु अनुकूल हो जायेगी और मौसम सुधर जायेगा — जो अभी एक महीने और नहीं होगा — तब वजन धीरे-धीरे बढ़ जायेगा।

मैं तो बिलकुल अच्छा हूँ। अभी मेरी खुराक डबलरोटी, दूध, एक शाक, देसी खजूर (जो बुरे नहीं हैं) और मोसम्बी है।

यह जानकर खुशी हुई कि किसन तुम्हारे साथ है। अब तो तुम लोगोंका वहाँ एक खासा परिवार बस गया होगा। मुझे मालूम है कि तुममें स्वभावतः वृक्षों और पशुओंको मित्र बनानेकी कला थी। मैं चाहता था कि तुम इस विचारका विस्तार इस तरह कर लो कि तुम्हें बाहरी मित्रोंका अभाव न खटके। इसीलिए मैंने अजनबियोंको भी उसी श्रेणीमें रखा था। यानी हमें निश्चित रूपसे अनुभव होना चाहिए कि निजी मित्र और सम्बन्धी लोग अजनबी लोगों, पशु-पक्षियों और पेड़ोंसे

अधिक मित्र नहीं होते। वे सब एक ही हैं और अगर हम केवल महसूस कर सकें, तो वे सब ईश्वरके ही अंश हैं। जब हम जेलकी दीवारोंमें बन्द होते हैं, उस वक्त निश्चित तौरपर ऐसा अनुभव होनेसे बाहरके मित्रोंसे मिलनेकी सारी लालसा मिट जाती है।

इंग्लैंडसे परिवारकी जो खबरें तुम्हें मिली हैं, वे हर्षप्रद हैं। उन्हें पत्र लिखो तब सबको मेरा स्नेह लिखना।

हमारे बिल्ली-परिवारको या उसके कुछ सदस्योंको चरखेकी मालसे प्रेम है। उनमें से एकने पिछले दिनों उसे नष्ट कर दिया। वे भोजनके समय अपना संगीत छेड़ देते हैं और जब वल्लभभाई उन्हें खाना परोस देते हैं, तभी बन्द करते हैं। माँको शाकाहारका शौक है। उसे दाल, चावल और खासकर तरकारियाँ बहुत पसन्द हैं। क्या मैंने बता दिया कि इस परिवारमें वृद्धि हुई है? माँको जब प्रसव-पीड़ा हो रही थी तब, और प्रसवके बाद दो-तीन दिनतक उसमें मानवताके दर्शन हुए। वह हमें लाड़ करती और हमसे कराये बिना नहीं छोड़ती थी। वह करुण दृश्य था। अपने बच्चेकी वह कितनी सँभाल रखती है, यह देखकर बड़ा आश्चर्य होता है।

हम सबकी ओरसे तुम सबको स्नेह।

बापू

[पुनश्च :]

आजकल 'रामायण' का पाठ नियमित रूपसे हो रहा है; परशुराम हम सबको सुनाता है।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२३७) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७०३ से भी।

७६. पत्र : फ्रैन्सिस्का स्टैंडेनेथको

१५ सितम्बर, १९३२

मैं समझता हूँ, सत्यवानकी[1] समस्या सरल है। कोई भी आदमी अपनी शक्तिसे आगे नहीं जा सकता। किसीको ब्रह्मचर्यका पालन करनेके लिए मजबूर नहीं किया जा सकता। उसके लिए आन्तरिक विश्वासकी प्रेरणा होनी चाहिए। तुम उसे अपनेसे अलग होनेकी, और जरूरत पड़ जाये तो, तलाकका हुक्मनामा लेनेकी पूरी आजादी दे सकती हो। उसे अपनी पसन्दकी किसी दूसरी स्त्रीके साथ विवाह करनेकी स्वतन्त्रता होनी चाहिए। निरन्तर वासनाकी तृप्तिके सम्बन्धमें ही सोचता रहे, ऐसे विषयी मनका होना तो बहुत भयंकर बात है। तुम उसपर जितना प्रेम बरसा सको, बरसाओ। उसके प्रति कठोर दृष्टिकोण न रखो। इतने वर्षोंतक उसने अपनेपर काबू

१. फ्रैन्सिस्का स्टैंडेनेथके पति फ्रेडरिक स्टैंडेनेथ।

रखनेका प्रयत्न किया, यह उसके लिए बहुत माना जायेगा। उसकी वासनाको सन्तुष्ट करनेकी तुम्हें जरा भी इच्छा हो, तो यह मानो कि इसके लिए तुम्हें स्वतन्त्रता है। कारण, आत्मसंयमका निर्णय तुम दोनोंने मिलकर किया था। इसलिए इस करार पर फिरसे विचार करनेकी एक पक्ष इच्छा करे, तब दूसरे पक्षकी भी अगर ऐसी मरजी हो जाये, तो उसे यह करनेकी स्वतन्त्रता है। लेकिन यदि तुम्हें विश्वास हो कि तुममें वासनाका लेश भी नहीं है, तो यथासम्भव अधिकसे-अधिक प्रेमसे, परन्तु पूरी दृढ़ताके साथ, सत्यवानके हर अनुनय-विनयका तुम्हें विरोध करना चाहिए। यह पत्र उसे पढ़नेको देना। वह इसपर विचार करे और प्रकाशके लिए ईश्वरसे प्रार्थना करे। मगर उसे लगे कि वह अपने विकारपर काबू नहीं रख सकता और उसके अधीन होनेकी तुम्हारी इच्छा न हो, तो उसे दूसरी स्त्रीसे शादी कर लेनी चाहिए। तुम दोनोंको मित्र बनकर अलग होना चाहिए। तुम्हें अलग ही होना पड़े तो यह विचार गौण होना चाहिए कि बादमें मेरा क्या होगा। यदि तुम्हारे अन्दर शक्ति होगी और मैं जानता हूँ कि वह है, तो तुम अपनी मेहनतसे ही अपनी गुजर कर लोगी।

ईश्वर तुम्हारी मदद करे और तुम दोनोंको उसका आशीर्वाद मिले।

अपार प्रेम-सहित,

बापू

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २६

७७. तार : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

१६ सितम्बर, १९३२

सतीशबाबू
खादीप्रतिष्ठान
सोदपुर

तार मिला। तुमने मेरे हृदयकी भावनाको बिलकुल ठीक समझा है। अपने, हेमप्रभा [और] अरुणके[1] स्वास्थ्यका समाचार तारसे देना। बहुत समय हो गया हेमप्रभाका कोई पत्र नहीं मिला है। मैंने स्वयं कई लिखे। स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०/९।

१. सतीशचन्द्र दासगुप्तका पुत्र।

७८. तार : जमशेद मेहताको

१६ सितम्बर, १९३२

जमशेद मेहता
कराची

कृपया मुझे ईश्वरके नामपर और उसीके आदेशानुसार लिया गया निर्णय बदलनेको न कहें। यदि उसकी इच्छा होगी तो वह उपवास के बावजूद मुझे कोई समाधान होनेतक जीवित ही रखेगा। कीकीबहन[1] कैसी हैं? सस्नेह।

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०/९; **हिन्दू**, १७-९-१९३२, से भी।

७९. तार : तेजबहादुर सप्रूको

१६ सितम्बर, १९३२

सर तेजबहादुर सप्रू
इलाहाबाद

तारके[2] लिए धन्यवाद। आप मुझसे ईश्वरके नामपर लिया गया निर्णय बदलनेको तो नहीं ही कहेंगे और न वैसी अपेक्षा करेंगे। बिलकुल लाचार होकर मुझे यह निर्णय करना पड़ा। यदि ईश्वरकी इच्छा होगी तो मेरा शरीर उपवासको समझौता हो सकनेतक झेल लेगा और समझौता तो आप और जेलसे बाहर मौजूद अन्य मित्र ही करवा सकते हैं।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०/९। **अमृतबाजार पत्रिका**, १८-९-१९३२ से भी।

१. कीकीबहन लालवानी, जे० बी० कृपलानीकी बहन।

२. तार इस प्रकार था : "हार्दिक अनुरोध करता हूँ कि अभी आप उपवास न करें और उपवास करनेसे पहले एक बार दलित वर्गोंकी समस्याको सुलझानेकी कोशिश करके देखें। अगर इसमें आप विफल हो जायेंगे तो कोई अन्य तो सफल हो ही नहीं सकता। हिन्दू-समाजको इस कलंकसे मुक्त करनेके लिए आपको जीवित रहना ही है।"

८०. तार : वाइसरायके निजी सचिवको

१६ सितम्बर, १९३२

नि० स० वा०
शिमला

बड़े दुःखके साथ अभी-अभी मैंने इस सरकारी निर्णयकी घोषणा पढ़ी कि मैं जो उपवास करनेकी सोच रहा हूँ, उसको प्रारम्भ करते ही मुझे यहाँसे किसी अज्ञात खानगी आवासमें ले जाया जायेगा, जहाँ मुझे कुछ प्रतिबन्धोंके अधीन रखा जायेगा। इससे जो अनावश्यक झंझट होगी, सरकारी पैसेका जो निरर्थक व्यय होगा तथा खुद मुझे भी बेकारकी जो परेशानी होगी, उस सबको बचानेके लिए मैं सरकारसे यह अनुरोध करता हूँ कि वह मुझे चुपचाप जहाँका-तहाँ रहने दे, क्योंकि इस सोची जा रही रिहाईके साथ मुझपर यहाँ-वहाँ आने-जाने या अन्य गति-विधियोंपर जो प्रतिबन्ध लगाये जायेंगे, उनका पालन मैं किसी भी तरह नहीं कर पाऊँगा।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८५९) से।

८१. पत्र : एम० जी० भण्डारीको

१६ सितम्बर, १९३२

कृपया तुरन्त कार्रवाई करें

प्रिय मेजर भण्डारी,

साथमें एक सन्देश[1] भेज रहा हूँ। अगर इसे भेजना सम्भव हो तो मैं चाहूँगा कि इसे अभी भेज दिया जाये। यह देखते हुए कि यह सन्देश सरकारके लिए है, इसे भेजनेमें शायद कोई कठिनाई या विलम्ब न होना चाहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८५८) से।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

८२. पत्र : मु० अ० अन्सारीको

१६ सितम्बर, १९३२

आपके स्नेहपूर्ण कार्ड मुझे मिलते रहे हैं। यह पत्र तो बस आपको और शेरवानीको हम सबका स्नेह और यह शुभकामना पहुँचानेके लिए ही लिख रहा हूँ कि आप दोनों शीघ्र ही स्वस्थ होकर घर लौट आयें।

मैंने जो कदम उठाया है, उसके बारेमें तो आपने पढ़ा ही होगा। यह ईश्वरका ऐसा आदेश था जिसकी मैं अवज्ञा नहीं कर सकता था। आशा है, मेरे इस निर्णयका मर्म समझनेमें आपको कोई कठिनाई नहीं हुई होगी। भविष्य तो ईश्वरके ही हाथोंमें है।

परिस्थितियाँ इतनी तेजीसे नये-नये मोड़ लेती जा रही हैं कि इस पत्रके आपके पास पहुँचते-पहुँचते क्या हो चुका होगा, कहना कठिन है।

अगर कहीं यह आपको लिखा मेरा अन्तिम पत्र साबित हुआ तो इसको ध्यानमें रखते हुए मैं आपको बता दूँ कि हिन्दू-मुस्लिम एकतामें मेरा विश्वास आज भी उतना ही ताजा है जितना पहले कभी रहा है, और मेरे जो सगे भाइयों-जैसे इतने सारे मुसलमान मित्र हैं, उनके कारण मैं अपनेको और भी धन्य मानता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २८-९

८३. पत्र : म्यूरियल लेस्टरको

१६ सितम्बर, १९३२

अब जब कि मैं (अपनी दृष्टिमें) यह पवित्र कदम उठाने जा रहा हूँ, उसके पहले मैं तुम्हें यह बताना चाहता हूँ कि मैं पूरे किंग्सले-हॉल परिवारको, जिसके बीच मैंने अनेक सुखद महीने गुजारे[1] हैं, बराबर याद करता रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ३०

१. यह बात १९३१ की है, जब गांधीजी इंग्लैंड गये हुए थे; देखिए खण्ड ४८।

८४. पत्र : हे० सॉ० लि० और मिली पोलकको

१६ सितम्बर, १९३२

प्रिय हेनरी और मिली,

तो मैं तुम लोगोंसे यह उम्मीद रखता हूँ कि जो कदम[1] मैं उठाने जा रहा हूँ, उसे तुम ठीकसे समझोगे और उसके औचित्यको स्वीकार करोगे। यह निर्णय मैंने अन्तरात्माके दुर्निवार आदेशपर लिया है। चार्लीको सूचित कर देना। उसे पत्र इसलिए नहीं लिख रहा हूँ कि मुझे उसकी गति-विधिका ठीक पता नहीं है।

तुम सबको प्यार।

भाई

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग २, पृ० ३०

८५. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

१६ सितम्बर, १९३२[2]

अब कुछ ही दिनोंमें मैं जो उपवास करने जा रहा हूँ, उसका निश्चय मैंने ईश्वरके नामपर, उसीके कामसे, और जैसी कि मेरी विनम्र मान्यता है, उसीके आदेश पर किया था। मित्रोंने मुझसे यह अनुरोध किया है कि जनताको संगठित होनेका अवसर देनेके लिए मैं उपवास आरम्भ करनेकी तिथि आगे बढ़ा दूं। किन्तु, मुझे दुःखके साथ कहना पड़ता है कि प्रधान मन्त्रीको लिखे अपने पत्रमें मैंने जो कारण बताये हैं[3], उनके अलावा किसी अन्य कारणसे उपवास शुरू करनेकी तिथिमें तो क्या, उसके लिए निश्चत समयमें भी कोई परिवर्तन करनेकी गुंजाइश मेरे सामने नहीं है।

१. हरिजनोंको पृथक् निर्वाचक-मण्डल देनेके प्रस्तावके खिलाफ; देखिए "वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको", १६-९-१९३२।

२. २२-९-१९३२ के **बॉम्बे क्रॉनिकल**में छपी एक रिपोर्ट तथा **एपिक फास्टके** अनुसार यह वक्तव्य बम्बई सरकारको समाचार-पत्रोंमें प्रकाशनार्थ १५ सितम्बरको भेजा गया था। लेकिन गांधीजी के हस्ताक्षरयुक्त वक्तव्यपर "१६-९-१९३२"-की तिथि दी गई है, जो उन्हींकी लिखावटमें है। देखिए अगला शीर्षक भी।

३. यह कारण इस प्रकार था : "यदि उपवासके दौरान अपनी ही इच्छा अथवा जनमतके दबावके कारण ब्रिटिश सरकार अपना निर्णय बदल देगी और 'दलित' वर्गोंके लिए साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्वकी योजना वापस ले लेगी तो मैं उपवास समाप्त कर दूँगा। सरकारके यह योजना वापस ले लेनेपर 'दलित' वर्गोंके प्रतिनिधियोंका चुनाव मिले-जुले निर्वाचक-मण्डल द्वारा होगा।" देखिए खण्ड ५०, पृ० ३९३-४। साम्प्रदायिकता और अस्पृश्यता के सम्बन्धमें गांधीजीके विचारोंके लिए देखिए परिशिष्ट १।

यह आसन्न उपवास उन लोगोंके विरुद्ध है — चाहे वे भारतीय हों या विदेशी — जिनका मुझमें विश्वास है; और यह उन लोगोंके पक्षमें है जिनका मुझमें विश्वास नहीं है। इसलिए यह अंग्रेज अधिकारी-वर्गके खिलाफ नहीं, बल्कि उन अंग्रेज पुरुषों एवं स्त्रियोंके विरुद्ध है जो अधिकारी-वर्गके प्रतिकूल प्रचारके बावजूद मुझमें और जिस उद्देश्यको लेकर मैं चल रहा हूँ, उसकी न्याय्यतामें विश्वास रखते हैं। इसी तरह यह मेरे उन देशभाइयोंके भी विरुद्ध नहीं है — वे हिन्दू हों या मुसलमान — जिनका मुझमें विश्वास नहीं है। यह तो उन असंख्य भारतीयोंके विरुद्ध है — वे चाहे किसी भी धर्मके अनुयायी हों — जो यह मानते हैं कि मैं एक न्यायसंगत उद्देश्य को लेकर चल रहा हूँ। और सबसे ज्यादा तो इसका उद्देश्य हिन्दुओंकी अन्तरात्माको सही धार्मिक आचरण करनेको प्रेरित करना है।

जो उपवास करनेका विचार मैंने किया है, वह केवल लोगोंकी भावनाको प्रभावित करनेके लिए नहीं किया है। उपवासके द्वारा मैं अपना सारा प्रभाव (वह जितना भी है) विशुद्ध न्यायके पक्षमें डालना चाहता हूँ। इसलिए मेरी जान बचानेके लिए अनुचित जल्दबाजी या अतिशय चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं है। मैं इस कहावतमें पूरा विश्वास करता हूँ कि जगन्नियन्ताकी इच्छाके बिना पत्ता भी नहीं हिलता। यदि इस शरीरसे उसे और सेवा लेनी होगी तो वह इसे बचा ही लेगा। उसकी इच्छाके विरुद्ध तो इसे कोई बचा नहीं सकता। वैसे जहाँतक कहा जा सकता है, मैं तो कहूँगा कि कुछ समयतक मेरा शरीर इसे झेल लेगा।

पृथक् निर्वाचक-मण्डलने तो केवल उस तिनकेका काम किया है जिसके जुड़ जानेसे बोझ असह्य हो गया है। सवर्ण हिन्दुओं तथा विरोधी "दलित" वर्गीय नेताओं के बीच कोई कृत्रिम समझौता होनेसे काम नहीं चलेगा। समझौता कारामद तो तभी हो सकता है जब वह वास्तविक समझौता हो। यदि आम हिन्दुओंका मन अब भी अस्पृश्यताको समूल नष्ट कर देनेको तैयार न हो तो उसे मुझको तो तनिक भी हिचकिचाहटके बिना बलिदान कर देना चाहिए।

जो लोग सम्मिलित निर्वाचक-मण्डलके विरुद्ध हैं, उनके साथ कोई जोर-जबरदस्ती नहीं की जानी चाहिए। उनके तीव्र विरोधको समझनेमें मुझे कोई कठिनाई नहीं होती। मुझमें अविश्वास करनेका उनके पास पूरा कारण है। क्या मैं हिन्दू समाजके उसी वर्गका सदस्य नहीं हूँ जिसे उच्चतर वर्ग या सवर्ण हिन्दू, इस गलत नामसे जाना जाता है और जिसने तथाकथित अस्पृश्योंको अपने पैरों तले रौंदकर रख दिया है? आश्चर्यकी बात यह है कि इतनेपर भी तथाकथित अस्पृश्य लोग हिन्दू समाजसे अलग नहीं हुए हैं।

किन्तु, जहाँ मैं इस विरोधका औचित्य सिद्ध कर सकता हूँ, वहीं यह भी मानता हूँ कि विरोध करनेवाले लोग गलतीपर हैं। अगर उनका बस चले तो वे "दलित" वर्गको हिन्दू समाजसे अलग करके उनका एक पृथक् वर्ग खड़ा करना चाहेंगे। यह वर्ग हिन्दू धर्मके माथेपर कलंककी एक जीती-जागती निशानी होगा। अगर इससे उनका हित-साधन होता हो तो मैं इसका बुरा न मानूँ।

किन्तु, मेरा तो अस्पृश्यताके हर पहलूसे अन्तरंग परिचय है और उक्त परिचय मुझे यह माननेको बाध्य करता है कि अस्पृश्योंका जीवन — वह जैसा भी है — उन सवर्ण हिन्दुओंके जीवनसे, जिनके बीच और जिनकी सेवा करते हुए वे जीते हैं, इस तरह गुँथा हुआ है कि उनको उनसे अलग करना असम्भव है। वे एक ही अविभाज्य परिवारके अंग हैं।

जिन हिन्दुओंके बीच वे रहते हैं, उनके खिलाफ उनके विद्रोह तथा उनके हिन्दू धर्मसे विमुख होनेको मैं समझ सकता हूँ। लेकिन जहाँतक मैं समझ पाता हूँ, वे ऐसा नहीं करेंगे। हिन्दू धर्ममें कोई ऐसा सूक्ष्म तत्त्व है, कोई ऐसी परिभाषा-तीत चीज है जो उनके न चाहनेपर भी उन्हें इससे जोड़कर रखे हुए है।

और इस तथ्यको देखते हुए मुझ-जैसे आदमीके लिए, जिसको इसका जीवन्त अनुभव है, यह आवश्यक हो जाता है कि वह प्राणोंकी बाजी लगाकर भी उस पृथक्करणका विरोध करे जिसकी योजना बनाई गई है।

हमें तलाश है प्रस्तावित पृथक्करणके ठीक विकल्पकी, और ऐसा कोई भी समझौता उसका ठीक विकल्प नहीं हो सकता जो हिन्दू समाजमें "दलित वर्गों"को पूर्णतम स्वतन्त्रताकी गारन्टी नहीं देता। यदि इस सम्बन्धमें कोई विश्वासघात किया गया तो उससे केवल इतना ही हो सकता है कि मेरी आत्माहुति कुछ दिन और टल जाये, लेकिन वह होगी अवश्य और उसके बाद और भी बहुत-से लोग, जो मेरे-जैसे विचार रखते हैं, आत्माहुति देंगे। इसलिए अब जिम्मेदार हिन्दुओंको इस सवालपर विचार करना है कि "दलित वर्गों" पर सामाजिक, नागरिक अथवा राजनीतिक अत्याचार होते रहनेकी हालतमें मुझ-जैसा कोई एक सुधारक नहीं, बल्कि अनेक सुधारक — जो मेरे खयालसे आज भारतमें मौजूद हैं और जिनकी संख्या बढ़ती ही जा रही है तथा जो इन वर्गोंको स्वतन्त्रता दिलाने और इस प्रकार हिन्दू धर्मको इस युगों पुराने अन्धविश्वाससे मुक्त करानेके लिए अपने प्राणोंका कोई मूल्य नहीं समझेंगे — सतत उपवासके रूपमें जो सत्याग्रह करेंगे, क्या वे उस सत्याग्रहका सामना करनेको तैयार हैं।

मेरे साथ काम करनेवाले सहयोगी सुधारक भी इस उपवासके मर्मको समझें।

यह या तो मेरे मनका भ्रम है या फिर मुझे मिला हुआ प्रकाश। अगर यह मेरे मनका भ्रम है तो मुझे शान्तिपूर्वक अपना प्रायश्चित्त पूरा करने दिया जाये। इससे हिन्दू धर्म एक जड़ प्राणीके भारसे मुक्त हो जायेगा। और यदि यह मुझे मिला ईश्वरीय प्रकाश है तो मेरी यह कामना है कि मेरी पीड़ा हिन्दू धर्मको पवित्र बनाये और उन लोगोंके हृदयको भी द्रवित करे जो आज मुझमें अविश्वास करते हैं।

चूँकि मेरे उपवासके उद्देश्यके सम्बन्धमें कुछ भ्रम फैला जान पड़ता है, इसलिए मैं यह बात एक बार फिर कह दूँ कि मेरा उपवास "दलित" वर्गोंके लिए किसी भी प्रकारके संवैधानिक पृथक् निर्वाचक-मण्डलकी व्यवस्थाके खिलाफ है। ज्यों ही वह खतरा सदाके लिए मिट जायेगा, मैं अपना उपवास तोड़ दूँगा। [विधान-सभाओंमें] स्थानोंके आरक्षणके विषयमें तथा पूरे मामलेको सुलझानेका सबसे सही तरीका क्या है,

इसके 'सम्बन्धमें भी मेरे कुछ प्रबल आग्रह हैं। लेकिन, मैं नहीं मानता कि एक कैदीके नाते मुझे अपने सुझाव किसीके सामने रखनेका अधिकार है। लेकिन, सवर्ण हिन्दुओं तथा "दलित" वर्गोंके जिम्मेदार नेताओंके बीच सम्मिलित निर्वाचक-मण्डलके आधारपर जो समझौता होगा और ऐसे जिस समझौतेको सभी हिन्दुओंकी आम सभाओंमें स्वीकृति मिल जायेगी, उससे मैं अपनेको बँधा हुआ मानूँगा।

एक बात मुझे साफ कर देनी चाहिए। अगर "दलित" वर्गोंकी समस्याका सन्तोषजनक समाधान हो भी जाये, तो उसका मतलब किसी भी तरहसे यह नहीं लगाया जाना चाहिए कि साम्प्रदायिक प्रश्नके दूसरे पहलुओंके सम्बन्धमें महामहिमकी सरकारका निर्णय स्वीकार करनेके लिए तब मैं बँधा हुआ होऊँगा। खुद मैं तो इसकी और भी कई बातोंके खिलाफ हूँ। मेरे विचारमें ये ऐसी बातें है जिनके कारण किसी भी स्वातन्त्र्यपूर्ण तथा लोकतान्त्रिक संविधानका काम कर सकना लगभग असम्भव होगा। इसी तरह इस समस्याके सन्तोषजनक हलका यह मतलब भी नहीं होगा कि जो भी संविधान बनाया जाये, उसे मैं स्वीकार ही कर लूँ। ये सब तो राजनीतिक सवाल हैं, जिनपर राष्ट्रीय कांग्रेसको विचार करना और निर्णय लेना है। व्यक्तिके रूपमें मेरा जो क्षेत्र है, ये बातें उससे बिलकुल बाहरकी हैं। इसी प्रकार एक कैदीके नाते मुझे इन प्रश्नोंपर अपने व्यक्तिगत विचार प्रकट भी नहीं करने चाहिए। मेरे उपवासका उद्देश्य सीमित है। चूँकि "दलित" वर्गोंका सवाल मुख्यतः एक धार्मिक सवाल है, इसलिए मैं इसे खास अपना सवाल मानता हूँ, क्योंकि मैं जीवन-भर अपना ध्यान इसपर लगाता रहा हूँ। यह मेरा पवित्र निजी दायित्व है, जिससे मुझे मुँह नहीं मोड़ना चाहिए।

प्रकाश पाने और प्रायश्चित्त करनेके लिए उपवास करनेकी प्रथा अति प्राचीन है। मैंने इसे ईसाई धर्म और इस्लाममें भी देखा है। हिन्दू धर्म तो शुद्धि और प्रायश्चित्तके लिए उपवास करनेके उदाहरणोंसे भरा हुआ ही है। लेकिन अगर यह एक कर्त्तव्य है तो साथ ही एक विशेषाधिकार भी है — जिसके लिए समुचित तैयारी चाहिए। इसके अलावा, अपनी समझके अनुसार मैंने इसे एक शास्त्रका भी रूप दे दिया है। इसलिए, एक विशेषज्ञके नाते मैं अपने मित्रों तथा हमदर्दोंको इस बातके लिए आगाह कर देता हूँ कि वे आँख मूँदकर अथवा झूठी या भावुकतामूलक सहानुभूतिसे प्रेरित होकर मेरा अनुकरण न करें। ऐसे सभी लोग पहले "अस्पृश्यों" के लिए कठोर श्रम करके तथा उनकी निस्स्वार्थ सेवा करके इसकी योग्यता प्राप्त करें। फिर तो जब उनके उपवास करनेका समय आयेगा तो उन्हें स्वयं ही प्रकाश मिलेगा।

और अन्तमें, जहाँतक मैं अपने-आपको जानता हूँ, यह उपवास मैं विशुद्धतम उद्देश्योंसे तथा किसीके भी प्रति तनिक भी दुर्भावना अथवा क्रोध रखे बिना करने जा रहा हूँ। मेरे लिए तो यह अहिंसाकी एक अभिव्यक्ति, उसपर लगाई जा रही अन्तिम मुहर है। इसलिए इस विवादमें जो लोग ऐसे लोगोंके प्रति हिंसाका व्यवहार करेंगे जिन्हें वे मेरा अथवा जिस उद्देश्यको लेकर मैं चल रहा हूँ उसका विरोधी मानें, वे केवल मेरे अन्तको निकट लानेके ही साधन बनेंगे। विरोधियोंके प्रति

पूर्ण शिष्टता तथा सौजन्यका व्यवहार इस उद्देश्यकी सफलताके लिए तो नितान्त आवश्यक है[1]—सभी मामलोंमें ऐसा न हो तो न सही।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८५७) से।

८६. पत्र : एम० जी० भण्डारीको

१६ सितम्बर, १९३२

प्रिय मेजर भण्डारी,

अगर सरकारको मंजूर हो तो मैं चाहूँगा कि साथका वक्तव्य[2] तत्काल प्रकाशनार्थ एसोसिएटेड प्रेसको भेज दिया जाये।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८५७) से।

८७. पत्र : नरगिस कैप्टेनको

१६ सितम्बर, १९३२

दुःखी होनेका कोई कारण नहीं है। इसके विपरीत, यह तो हर तरहसे खुशियाँ मनानेका प्रसंग है, क्योंकि हमें ऐसा सोचना चाहिए कि ईश्वरने परिवारके एक सदस्यको, हम जिस पवित्रतम उद्देश्यकी कल्पना कर सकते हैं, उसके लिए सर्वोच्च बलिदान करनेका अवसर प्रदान किया है। इस उपवासका आंशिक रूपसे भी अनुकरण नहीं करना चाहिए। तुम सबके लिए यह कर्म और आत्म-शुद्धिकी दिशामें और अधिक लगनसे जुट जानेका समय है। तुम्हें उन सब लोगोंको हिम्मत बँधानी है जो तनिक भी दुःखी लगते हों।

पिंजरेके पंछियों-सहित सबको मेरा प्यार।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २७-८

१. यहाँतक यह वक्तव्य महादेव देसाईकी लिखावटमें है और इससे आगेके शब्द गांधीजीके अक्षरोंमें हैं।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

८८. पत्र : वेरियर एलविनको

[१६ सितम्बर, १९३२][1]

प्रिय वेरियर,

मैं जो कदम उठाने जा रहा हूँ, उसे समझनेमें तुम्हें कोई कठिनाई नहीं हुई होगी, ऐसी आशा करता हूँ। इसलिए यह पत्र तुम्हें सिर्फ यह बतानेके लिए लिख रहा हूँ कि प्रधान मन्त्रीको[2] पत्र लिखते समय मेरे मनमें सभी अंग्रेज मित्रोंका खयाल बना हुआ था। मैं ऐसी कामना करता हूँ कि प्रभु इसमें से शुभकी सृष्टि करेगा।

तुम सबको मेरा और सरदार तथा महादेवका भी प्यार।

आज (शुक्रवारकी) शाम हम वह भजन गायेंगे।

बापू

[अंग्रेजीसे]

ट्राइबल वर्ल्ड ऑफ वेरियर एलविन, पृ० ८३

८९. पत्र : अगाथा हैरिसनको

१६ सितम्बर, १९३२

प्रिय अगाथा,

तुम्हारा पत्र मिल गया था। मैं जो कदम उठाने जा रहा हूँ, उसके बारेमें तो तुम सब-कुछ जानती ही हो। इसलिए यह तो बस अपना प्यार बतानेको ही लिख दिया है।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४५५)से।

१. पत्रसे स्पष्ट है कि यह शुक्रवारको लिखा गया था। उपवास २० सितम्बरको शुरू होनेवाला था और उससे पहलेका शुक्रवार १६ सितम्बरको पड़ा था।

२. इंग्लैंडके प्रधान मन्त्री; देखिए "पत्र : रैम्जे मैकडॉनाल्डको", ९-९-१९३२ तथा खण्ड ५०, पृष्ठ ३९३-४।

९०. पत्र : एडमण्ड प्रिवा और श्रीमती प्रिवाको

१६ सितम्बर, १९३२

प्रिय आनन्द और भक्ति,

तुम्हारा पत्र मिल गया था। मैं जो कदम उठाने जा रहा हूँ, उससे पहले यह सिर्फ तुम दोनोंतक अपना प्यार पहुँचानेके लिए ही लिखा है।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७९३) से।

९१. पत्र : रोमाँ रोलाँको

१६ सितम्बर, १९३२

प्रिय मित्र और भाई,

अपने जीवनमें यह महत्त्वपूर्ण कदम उठानेसे पहले मैं आपसे यह कहना चाहता हूँ कि आपके और आपकी महान्, नेक और निष्ठावान बहनके साथ बिताये उन दिनोंको मैं कितना अधिक मूल्यवान् समझता हूँ। महादेव देसाई मेरे साथ ही हैं। हम लोग अकसर आपको याद करते हैं।

पता नहीं, मैं जो कदम उठाने जा रहा हूँ, उसके बारेमें आपको कैसा लगा है। मैं तो इतना ही कह सकता हूँ कि यह निर्णय मैंने अन्तरात्माके आदेशात्मक स्वरपर किया है।

आप दोनोंको स्नेह।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २९

९२. पत्र : सरलादेवी चौधरानीको

१६ सितम्बर, १९३२

तुम्हारा अत्यन्त प्रेमपूर्ण पत्र मिला। उस प्रेममें सब बच्चे भी शामिल हैं, जिससे यह मेरे लिए प्रसादी-रूप है। जब मुझे ऐसा करना अपना निश्चित धर्म जान पड़ा, तभी मैंने यह कदम उठाया है। ईश्वरके नाम और उसीके कामसे यह कदम उठाया है। वह लाज रखेगा, यह मानकर मैं बिलकुल निश्चिन्त हो गया हूँ। ऐसा शुभ अवसर तुम्हारे एक कुटुम्बीजनके हाथ लगा, यह जानकर सब खुश होना।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २८

९३. पत्र : अनसूयाबहन साराभाईको

१६ सितम्बर, १९३२

तुम्हारी और शंकरलालकी व्याकुलता मैं यहाँ बैठे हुए भी सुन और देख सकता हूँ। मगर इसे मोह ही समझना। तुम्हारा धर्म तो निर्मल आनन्दका अनुभव करना है। ऐसा शुभ अवसर ईश्वरने मुझे अनायास ही दिया है। तुम सबको भी तो ज्यादा कर्त्तव्यपरायण और ज्यादा शुद्ध होना है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २८

९४. पत्र : एम० जी० भण्डारीको

१७ सितम्बर, १९३२

प्रिय मेजर भण्डारी,

घनश्यामदास बिड़लाको भेजे गये मेरे तारमें[1], जो बम्बईके समाचार-पत्रोंमें छपा है, "हेल्पफुल इंसट्रक्शन" के बाद दो महत्त्वपूर्ण शब्द छूट गये हैं। मैं देखता हूँ इनके छूटनेसे अर्थ बदल जाता है। क्या कृपा कर आप एसोसिएटेड प्रेसको सूचित करेंगे कि वे आवश्यक सुधार[2] को प्रचारित करें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०/९

१. देखिए "तार : घनश्यामदास बिड़लाको", १५-९-१९३२।
२. देखिए "तार : घनश्यामदास बिड़लाको", १८-९-१९३२।

९५. पत्र : भीमरावको[1]

१७ सितम्बर, १९३२

आपका हृदयस्पर्शी तार मिला। उपवास ईश्वरके नामपर और उसीकी इच्छाके अनुसार करने जा रहा हूँ। अब रुकना गलत और कायरतापूर्ण होगा। आशा करनी चाहिए कि ईश्वर मुझे इसको झेल लेनेकी शक्ति देगा। आखिरकार उसकी इच्छाके बिना तो कोई जीवित रह नहीं सकता। अगर इस शरीरसे वह आगे कोई काम लेना चाहता है तो वह जानता ही है कि इसे सुरक्षित कैसे रखा जाये।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ३४

९६. पत्र : गोसीबहन कैप्टेनको

१७ सितम्बर, १९३२

तुम यह तो जानती हो न कि मुझे इस विचारसे बल मिलता है कि इस परीक्षामें बहुत-सी बहनें मेरे साथ हैं? कमलाको अलगसे लिखनेका मेरे पास समय नहीं है। लेकिन वह तो मुझको लिखे ही। तुम सबको प्यार। ईश्वरका चाहा होने दो, हमारा चाहा नहीं।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ३२

९७. पत्र : कृष्णदासको

१७ सितम्बर, १९३२

तुम मुझे यही समझकर लिखते रहो जैसे कुछ होनेवाला नहीं है। लेकिन सम्भव है कि तुम्हारे नाम मेरा यह आखिरी खत हो। ऐसा हो तो इतना ध्यानमें रखना कि मैं तुमसे यह अपेक्षा रखता हूँ कि तुम किसी दिन आश्रमकी तरफ खिंच आओगे और तुम्हारे बारेमें मैंने जो आशाएँ बाँधी हैं, उन्हें पूरा करोगे। जहाँतक उपवासकी बात है, मैं मानता हूँ कि तुम अच्छी तरह समझ गये होगे कि ईश्वरने मुझे यह एक दुर्लभ अवसर दिया है। इसलिए इसका दुःख न मानकर खुशी ही मनानी चाहिए। इसके साथ यह भी समझ लो कि किसीको इसका अनुकरण

१. बंगलौर कैंट्रनमैंट कांग्रेस कमेटीके मन्त्री।

नहीं करना है। अन्तरसे बहुत ही स्पष्ट आवाज आये, तभी उसका अनुकरण किया जा सकता है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ३४-५

९८. पत्र : एस० एम० माटेको

१७ सितम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका तार और पत्र दोनों एक ही साथ मिले, तदर्थ धन्यवाद। कैदीकी हैसियतसे मुझे व्यक्तिगत तौरपर पूछे गये प्रश्नोंके उत्तर नहीं देने चाहिए। लेकिन मैंने एक आम ढंगका वक्तव्य[1] अधिकारियोंके पास प्रकाशनार्थ भेज दिया है। अगर वे उसके प्रकाशनकी अनुमति दे देंगे तो आपको अपनी बातका उत्तर उसीमें मिल जायेगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत एस० एम० माटे, एम० ए०
तिलक रोड
पूना-२

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग-३, पृ० १८१

१. देखिए "वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको", १६-९-१९३२।

९९. पत्र : सरोजिनी नायडूको

१७ सितम्बर, १९३२

प्यारी वात्सल्यमयी गायिका, मेरी आत्माकी संरक्षिका,

तुम्हारा मनोहर पत्र मिला। उससे पहले पद्मजाका — अगर ऐसा सम्भव हो तो कहूँगा — इससे भी अधिक मनोहर पत्र मिला था। यह निर्णय मैंने खूब प्रार्थना करनेके बाद ईश्वरके नामपर और उसीके आदेशपर लिया है। इसलिए इसके अनुष्ठान के मुहूर्त्तको आगे बढ़ानेका मुझे अधिकार नहीं है।

मुझसे अपने निर्णयों तथा कार्योंपर फिरसे विचार करनेको कहनेका तुम्हें पूरा अधिकार है और अगर मुझे अपनी भूलका पता चल जाये तो तुम्हारी बात मानना मेरा कर्त्तव्य है। किन्तु, साथ ही मैं मानता हूँ कि मुझे भी यह अधिकार है कि अगर मैं अपने समस्त प्रार्थनापूर्ण प्रयत्नोंके बाद भी अपनी भूल नहीं ढूँढ़ पाता तो मैं तुमसे निर्विवाद 'आज्ञाकारिता' की अपेक्षा रखूँ। तुमने 'पुरुषोचित ढंगसे' अपने अधिकारका आग्रह किया है और नारी-सुलभ रीतिसे आज्ञा माननेकी रजामन्दी भी बताई है।

तुम्हारे वात्सल्यने तुम्हारी कवि-दृष्टिको धूमिल बना दिया है और उसीके वशीभूत होकर तुमने मेरे अभिमानको जगानेकी कोशिश करते हुए मुझसे अपना निर्णय बदलनेको कहा है और यह इसलिए कि मैं जीवनसे चिपटा रह सकूँ।

लेकिन मुझे मालूम है कि तुमने, मेरे अन्दर जो नारी बैठी हुई है, उसे तो लक्ष्य किया ही होगा। उसीके कारण मैंने जीवनका वह मार्ग अपनाया है जिसमें कष्ट — मृत्युका कष्ट भी — सहन करना पड़ता है। अतएव, मुझे अपने दौर्बल्यमें ही अपना बल ढूँढ़ना है।

अब यह बताता हूँ कि किस प्रकार तुम्हारी दृष्टि चूक गई है। साम्प्रदायिक प्रश्नसे सम्बन्धित निर्णय तो बस एक ऐसा प्रसंग था जिससे परिस्थिति सर्वथा असह्य हो गई। अस्पृश्योंके लिए अपने प्राणोंकी बलि चढ़ा देनेका मेरा विचार कोई नया नहीं है। यह तो बहुत पुराना है। वर्षोंतक अन्दरसे वैसा आदेश नहीं मिला था। लेकिन मन्त्रिपरिषद्का निर्णय खतरेका भयंकर बिगुल साबित हुआ, जिसने मुझे गहरी निद्रासे जगाकर सूचित किया — यही वह समय है। इस प्रकार उस निर्णयने मनोनु-कूल अवसर प्रदान किया और मैंने सहज ही उस अवसरको अंगीकार कर लिया। मैंने आधिकारिक तौरपर यह जो पत्र लिखा है, उसकी भाषा तो अनिवार्यतः मर्यादित है, किन्तु उसकी गहराईमें उतरनेपर तुमको उसमें वही चीजें मिलेंगी जिनके लिए तुम मुझसे मरने और जीनेका — दोनों तत्त्वतः एक ही हैं — अनुरोध कर रही हो। जो मृत्यु में जीवन और जीवनमें मृत्यु देखती है, वही सच्ची कवयित्री और द्रष्टा है। भोजन कैसा बना है, यह तो खाकर ही जाना जा सकता है। जल्दी ही तुम इसको परखोगी

१००. पत्र : नारायणराव देसाईको

१७ सितम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

तारके लिए धन्यवाद। जबतक कोई समझौता नहीं जो जाता, तबतक उपवास स्थगित करनेका मुझे अधिकार नहीं है। जहाँतक आपके सवालका सम्बन्ध है, मैंने सरकारको एक वक्तव्य[1] प्रकाशनार्थ भेजा है। अगर उसे प्रकाशित कर दिया जायेगा तो उसीमें आपको अपने सवालका जवाब मिल जायेगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत नारायणराव देसाई टोपीवाला
अध्यक्ष
डेकन मर्चेन्ट्स एसोसिएशन
बम्बई

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग-३, पृ० १८१

१०१. पत्र : बरजोरजी एफ० भरूचाको

१७ सितम्बर, १९३२

भाई बरजोरजी,

आपका तार तो आये बिना कैसे रहता? सीधी बात तो यह है कि अनशन व्रत कोई अपने बलपर नहीं ले सकता, और यदि लेता है तो वह मूढ़मति है। अपने सम्बन्धमें तो मैं कह सकता हूँ कि यह व्रत मैंने नहीं लिया, ईश्वरने मुझसे लिवाया है। तारीख भी उसीने निश्चित की है और तारीख बदलनेके नियम भी उसीने बनाये हैं। इन नियमोंमें आपके आग्रहके लिए कोई जगह नहीं है। अब क्या किया जाये?

दूसरी सीधी-सी बात यह है कि कैदी अपनी ओरसे और अपनी इच्छासे बाहरी दुनियाको कुछ कह नहीं सकता। इसलिए मैं जो कर रहा था, उसका एक शब्द भी यदि टेढ़े-मेढ़े तरीकेसे जनतातक पहुँचाता तो सत्याग्रहीकी हैसियतसे पापका भागी होता। सत्याग्रही कैदी स्वेच्छासे जेलके कानूनोंका पालन करता है; और उन्हें

१. देखिए "वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको", १६-९-१९३२।

तोड़नेका यदि कभी कोई मौका आये तो खुलेआम ही वैसा कर सकता है। इसलिए कैदीके नाते तो सरकारको जो नोटिस मिला, वह जनताको ही मिला माना जायेगा, अर्थात् जनताको उसकी जानकारी कराना सरकारकी न्यायप्रियतापर ही निर्भर था। यदि जनताको उसकी जल्दी जानकारी नहीं मिली तो इसका हमें यही अर्थ करना चाहिए कि ईश्वरने यह नहीं चाहा कि जनताको जल्दी मालूम हो। जनताकी असुविधाको दूर करनेके लिए मैं मीयाद कैसे बढ़ा सकता हूँ? लेकिन जो लोग खुदा-परस्त हैं, वे यह क्यों न मानें कि अगर ईश्वरको मुझसे ज्यादा सेवा लेनी होगी तो उपवासके बावजूद वह उतने दिनोंतक मेरी जिन्दगी बनाये रखेगा? आप तो खुदा-परस्त ही हैं। इसलिए मेरे इस पत्रको समझकर, जो भाई-बहन व्याकुल हों, उन्हें इसका अर्थ समझाइए और दिलासा दीजिए। इस समय साथियोंका धर्म सामने आ पड़े कामको तेजीसे करते रहना है। परिणाम ईश्वरके हाथमें है, वह जो करना चाहेगा सो करेगा।

इतना-भर याद रखिए कि मेरा यह उपवास किसीपर दबाव डालनेके लिए नहीं हो सकता, और है भी नहीं। इसका हेतु तो सिर्फ अन्त्यज भाइयोंके लिए जो उचित हो, वही करना है। मुझे जो ठीक लगता है, वह दूसरेको ठीक न लगे, तो उसे अपना विरोध जारी रखना ही चाहिए। सार्वजनिक हेतुसे किये जानेवाले ऐसे शुद्ध उपवास जन-जीवनमें जागृति लाते हैं। वे मोहवश नहीं किये जाते और इसलिए जन-जीवनको उलटे रास्ते तो हरगिज नहीं ले जा सकते। यदि अज्ञानपूर्वक उपवास करके मैं जनतासे कोई अनुचित वस्तु भी माँगने लगूँ तो मुझे विश्वास है कि भूतकालमें मैंने उसकी बहुत सेवा की है, ऐसा मानते हुए भी जनताको मुझे जिलानेकी खातिर मेरी अनुचित माँगके सामने हरगिज न झुकना चाहिए। उसके सामने न झुकनेमें जनताका भला तो है ही, मेरा भी भला ही होगा।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ३३-४

१०२. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

१७ सितम्बर, १९३२

भाई खम्भाता,

आशा है, तुम दोनों घबराये नहीं होगे। घबरानेका कोई कारण नहीं है, बल्कि इससे तुम्हें खुशी होनी चाहिए कि तुम्हारे एक साथीको ईश्वरने अहिंसाकी दृष्टिसे आखिरी कदम उठानेका सुन्दर अवसर प्रदान किया। हरएकको ईश्वरसे यही प्रार्थना करनी चाहिए कि उसके नामपर और उसकी प्रेरणासे जो कदम उठाया गया है, उसे वह अन्तिम हदतक ले जानेकी शक्ति दे। इसके साथका पत्र[1] पढ़ लेना और भाई बरजोरजी भरूचाको भेज देना। मैं पक्के तौरपर उनका पता-ठिकाना नहीं जानता।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

तुम्हारा मरहम तो मैं रोज हाथपर लगाता हूँ। कुहनीका दर्द बढ़ा तो नहीं किन्तु कम भी नहीं हुआ है। इस कारण मैं चिन्तित भी नहीं हूँ।

तुम दोनोंको,

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५५२) से। सी० डब्ल्यू० ५०२७ से भी; सौजन्य : तहमीना खम्भाता

१०३. पत्र : दरबारी साधुको

१७ सितम्बर, १९३२

मुझे भय है कि शायद अब हम नहीं मिल सकेंगे। फिर भी आप माँग तो करना ही। यदि मैं बुला सका तो बुलवा लूँगा। मगर मिलना न हो सके तो समझ लेना कि मिट्टीके पुतलेसे मिलनेमें कोई सार नहीं निकलता। मिलना तो मनके साथ मनका और हृदयके साथ हृदयका होता है; और इनमें तो दुनियाके किसी भी छोर पर बैठे होनेपर भी एक क्षणके भीतर मिल सकनेकी शक्ति है। और जहाँ इनमें मेल न हो वहाँ मिट्टीके पुतले एक-दूसरेके बहुत नजदीक और सटे हुए हों तो भी मनोंमें उत्तरी ध्रुव और दक्षिणी ध्रुवके बराबर अन्तर हो सकता है। इसलिए मिट्टी [के पुतले]के साथ मिलनेका कोई मूल्य नहीं रह जाता। लेकिन मिट्टीके पुतलेमें जीव हिल-डुल रहा है, इसीलिए हमें मिलना अच्छा लगता है। इसीको सबसे बड़ा मोह कहते हैं; और जबतक यह निकल न जाये, तबतक हम लोहेसे भी ज्यादा कठोर बेड़ियोंमें जकड़े हुए हैं। मगर इतना सब बुद्धिसे जान लेनेसे कोई लाभ नहीं। यह हृदयमें पैठना चाहिए। और यह ज्ञान जिसके हृदयमें उतर गया है, उसे सब-कुछ मिल गया। मगर इस ज्ञानको प्राप्त करनेमें कितने ही जन्म बीत जायें, तो भी थोड़े ही रहेंगे। इसलिए 'गीता'की ध्वनि यह है कि कर्त्तव्य करते-करते शरीरको घिस डालें। अनासक्ति या निर्मोह इसीसे पैदा हो सकता है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ३५

१०४. एक पत्र

१७ सितम्बर, १९३२

तेरा पत्र विचित्र है। एक तरफ तो उपवासकी बात करती है, दूसरी तरफ विवाहकी। तू अभी उपवास करने योग्य नहीं, और न तुझे वैसा करनेका अधिकार है।

जबतक गाँठ न जुड़ जाये, तबतक जिस युवकके साथ तेरा सम्बन्ध निश्चित हुआ है, माता-पिताकी आज्ञा लेकर उससे निर्विकार पत्र-व्यवहार तू जरूर कर सकती है। 'निर्विकार' शब्दका मैंने जान-बूझकर प्रयोग किया है। जो विकार आज कार्यरूपमें

परिणत नहीं होनेवाला, उसे मनमें पोसते रहनेमें दोष है। इससे मानसिक शक्ति व्यर्थ व्यय होती है। ऐसा करनेमें समझदारी बिलकुल नहीं है। मुझे पता नहीं, तेरी उम्र कितनी है। लेकिन यदि तेरी उम्र हो गई हो और तू विकारग्रस्त हो जाती हो, तो मैं तेरी शादी कर देना पसन्द करूँगा। अगर तेरी उम्र हो गई है तो तुझे विकारोंको काबूमें रखना चाहिए और अपने भावी पतिके साथ पत्र-व्यवहार करनेका लालच न रखना चाहिए। मेरे खयालसे तेरी सारी परेशानियोंका हल इसीमें है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ३२-३

१०५. पत्र : एफ० मेरी बारको

[१८ सितम्बर, १९३२ या उसके पूर्व][1]

प्रिय मेरी,

काम ज्यादा होनेसे जल्दीमें हूँ। इसलिए केवल यह कार्ड लिख रहा हूँ। मैसूरकी पत्रिकामें प्रकाशित कहानी मुझे अविश्वसनीय लगती है। यदि इस अग्नि-परीक्षामें मैं बच जाऊँ, तो तुम मुझे जरूर याद दिलाना और मैं पूछताछ करूँगा। 'गीता' पर मेरी भूमिका[2] 'यंग इंडिया' के एक अंकमें निकली है। आशा है, तुम इस अग्नि-परीक्षाको समझ पा रही हो। मेरे लिए तो यह विशुद्ध आनन्दकी बात है। तुम 'गीता' का ९वाँ और १२वाँ अध्याय पढ़ना, पर 'गाइड टु हेल्थ'[3] पुस्तकके बारेमें फिर पूछना।

सस्नेह,

बापू

मिस एफ० मेरी बार
करीमनगर
महाविभव निजामकी रियासत

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९८३) से। सी० डब्ल्यू० ३३११ से भी; सौजन्य : मेरी बार

१. डाककी मुहरसे।
२. **अनासक्तियोग**की भूमिकाका अंग्रेजी अनुवाद; देखिए खण्ड ४१, पृ० ९२-९।
३. **इंडियन ओपिनियन**में प्रकाशित गांधीजी के स्वास्थ्य-सम्बन्धी गुजराती लेखोंके अंग्रेजी अनुवादका संग्रह जो इस नामसे भारतमें प्रकाशित हुआ था; देखिए खण्ड ११ और १२।

१०६. तार: घनश्यामदास बिड़लाको

१८ सितम्बर, १९३२

घनश्यामदास बिड़ला
बिड़ला हाउस
मलाबार हिल, बम्बई

बम्बईके समाचार-पत्रोंमें आपके नाम मेरा १५ तारीखका तार[१] जैसा प्रकाशित हुआ है उसमें "हेल्पफुल इंसट्रक्शंस"के बाद दो महत्त्वपूर्ण शब्द "फ्रॉम हीयर" छूटे हुए हैं। कृपया यह भूल सुधरवा दीजिए।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०/९।

१०७. तार: छगनलाल पी० मेहताको

[१८ सितम्बर, १९३२[[२]

छगनलाल
मार्फत आर्य
रंगून

आवश्यकता महसूस होती हो तो जरूर आ जाओ। आशा है माँ का मन शान्त होगा।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०।९।

१. देखिए "तार: घनश्यामदास बिड़लाको", १५-९-१९३२।

२. साधन-सूत्रमें जिस स्थानपर इस शीर्षकको रखा गया है, उसके आधारपर यह तारीख दी गई है।

१०८. पत्र : एम० जी० भण्डारीको

१८ सितम्बर, १९३२

प्रिय मेजर भण्डारी,

मुझे अफसोस है। दोपहर १ बजेसे मैंने मौन प्रारम्भ कर दिया है, ताकि कल जल्दी ही उससे छुट्टी पा सकूं। अब सिर्फ यही हो सकता है कि जो लोग आ रहे हैं, उनसे मिल लूं और जो-कुछ वे कहें, उसे सुन लूं। मैं अपने उत्तर लिखकर दे सकता हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५१२६) से।

१०९. पत्र : एच० केलनबैकको

१८ सितम्बर, १९३२

प्रिय 'लोअर हाउस',

यदि मैं चला भी जाऊँ तो इस आशाके साथ ही जाऊँगा कि इतने दिनोंसे जो उम्मीद तुमसे मैं रखता रहा हूँ और तुम खुद रखते रहे हो, उसे तुम जरूर पूरा करोगे।

यदि ईश्वरको इस शरीरसे और काम लेना होगा तो यह इस अग्नि-परीक्षाको झेल लेगा। उस हालतमें तुम्हें जल्दी ही यहाँ आकर मुझसे मिलनेकी कोशिश करनी पड़ेगी। नहीं तो अलविदा और बहुत-बहुत प्यार,

अपर हाउसकी ओरसे

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ४३

११०. पत्र : डॉ० मुथुको

१८ सितम्बर, १९३२

आपके और आपकी पत्नीके अति कृपापूर्ण और प्रेमभरे पत्रका मेरे हृदयपर बहुत असर हुआ। यदि लोगोंको मेरे इस शरीरकी जरूरत है और ईश्वरकी इच्छा हुई, तो मेरा विश्वास है, मैं तबतक अवश्य बचा रहूँगा जबतक कि लोगोंको सम्मानपूर्ण समझौता प्राप्त नहीं हो जाता। उस समझौतेका अर्थ हमारे दलित भाइयोंके लिए सच्ची स्वतन्त्रता होगा। मेरे सामने जो अग्नि-परीक्षा है, मैं उसमें पूरा उतर सकूँ, इसके लिए मुझे आपकी और श्रीमती मुथुकी प्रार्थनाओंकी जरूरत है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ४५

१११. पत्र : पद्मजा नायडूको

१८ सितम्बर, १९३२

प्रिय पद्मजा,

तुम्हारे अति सुन्दर पत्रको मैं एक मूल्यवान निधि मानूँगा। तुम्हारे पत्रके बाद तुम्हारी माताजी के स्नेह-भरे उपदेश भी मिले। तुम मुझे इतना अभिमानी तो मत समझो कि मैं अपने लिए अपने "मित्रों, साथियों और हमजोलियों" की शुभकामनाओं और प्रार्थनाओंको जरूरी न मानता होऊँ। निस्सन्देह मैं महसूस करता हूँ कि मेरे चारों ओर जो हवा व्याप्त है और जिसमें मैं साँस लेता हूँ, उसकी अपेक्षा ईश्वर मेरे कहीं निकट है। लेकिन भोले-भाले लोगोंकी प्रार्थनाओंमें मुझे उसकी अदृश्य उपस्थितिकी अनुभूति होती है। उनसे मुझे बल मिलता है। इसलिए अवश्य ही उससे प्रार्थना करो कि, जो अग्नि-परीक्षा मेरी राह देख रही है, वह मुझे उसमें से गुजरनेकी शक्ति दे।

स्वस्थ हो जाओ और खूब सेवा करो।

तुम्हारे आश्रमवासी मित्र, साथी और हमजोली तुम्हें प्यार भेजते हैं।

दास-अधीक्षक

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ४२

११२. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

१८ सितम्बर, १९३२

प्रिय च० रा०,

तुम्हारे दुःखसे मेरा हृदय द्रवित है। अन्तर्नादकी सचाईके बारेमें मेरे मनमें जरा भी सन्देह नहीं है। और मुझे इसमें भी कोई सन्देह नहीं है कि तुम शीघ्र ही अंधकारमें प्रकाश देख सकोगे।

बहुत-बहुत प्यार।

बापू

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ४४

११३. पत्र : कुसुम देसाईको

१८ सितम्बर, १९३२

चि० कुसुम (बड़ी),

तेरे पत्र आजकल बिलकुल बन्द हैं। आशा है, अनशनसे तू घबराती नहीं होगी। यदि मैं चला जाऊँ तो मेरी आशा पूरी करना। यदि इसका उत्तर निश्चयपूर्वक दिया जा सके तो जल्दी देना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८४७) से।

११४. पत्र : छगनलाल और काशी गांधीको

१८ सितम्बर, १९३२

चि० छगनलाल और काशी,

रात थोड़ी है, पत्र बहुत लिखने हैं। तुम्हें क्या लिखूँ? ये दिन उत्सवके मानना। प्रभुदास,[1] तुझे घबरानेकी मनाई है। अपने ज्ञानका पूरा उपयोग कर्त्तव्यपरायण बने रहनेमें करना। ईश्वर तेरी मदद जरूर करेगा।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ४७

१. छगनलाल गांधीके पुत्र।

११५. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

१८ सितम्बर, १९३२

चि० मणिलाल और सुशीला,

मैं प्राय: तुम दोनोंके बारेमें सोचता रहता हूँ। किन्तु यह मानकर मैं अपनेको आश्वस्त कर लेता हूँ कि तुम दोनोंमें धीरज और साहस है। तुम दोनोंकी यहाँ भागे चले आनेकी इच्छा तो होती ही होगी। किन्तु उस इच्छाको दबाना। मेरी सभी आशाएँ पूर्ण करना। मैं तुमसे क्या आशा करता हूँ, सो तुम जानते हो। बापू जो विरासत छोड़ जाये, उसमें खूब वृद्धि करना। ईश्वर अवश्य तुम दोनोंका कल्याण करेगा।

प्रागजी[1] और पार्वतीको आशीर्वाद देते हुए अलगसे पत्र लिखनेका समय नहीं है। आज रविवार है। मैंने मौन ले रखा है। मैं बहुत-से पत्र लिख डालना चाहता हूँ।

यह तो तू जानता ही है कि मुझे कैलेनबैकका तार मिला था।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४७९५)से।

११६. पत्र : छगनलाल जोशीको

१८ सितम्बर, १९३२

चि० छगनलाल (जोशी),

तुम्हारे कुछ पत्र तो बीचमें ही गुम हो गये मालूम होते हैं। आशा है, अनशन-व्रतका पूरा रहस्य समझमें आ गया होगा। खबरदार, हिम्मत न हारना। प्रयत्नमें शिथिलता कदापि न आने पाये। देहसे चिपटे रहनेसे क्या होगा? देहकी ममता छोड़नेकी रट तो हम आश्रममें रोज ही लगाते रहे हैं। रटे हुए को हम हजम कर पाये हैं, यह साबित करनेका अवसर अब आया है। तुम सब यह कामना करना कि मैं इस परीक्षाको पार करूँ। उसमें प्रवेश करना तो अपेक्षाकृत आसान है, मगर तैरकर उस पार पहुँचना कौन जानता है? इसलिए जबतक परीक्षा पूरी न हो जाये, तब तक खुश होनेका कोई कारण ही नहीं है। परन्तु मैं तो यह आशा किये ही हुए हूँ कि मैंने यह कार्य भगवान्‌के नामपर आरम्भ किया है, तो वही पार उतारेगा।

शोभित होना, शोभित करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५०९)से।

१. प्रागजी खण्डूभाई देसाईने दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रह-आन्दोलनमें भाग लिया था। **इंडियन ओपिनियन**के गुजराती खण्डमें वे नियमित रूपसे लिखा करते थे।

११७. पत्र : माधवदास और कृष्णाबहन कापड़ियाको

१८ सितम्बर, १९३२

चि० माधवदास और कृष्णा,

तुम दोनोंके पत्र मिले। मेरे अनशनसे तनिक भी घबरानेकी आवश्यकता नहीं। उसके कारण खुशी ही होनी चाहिए। ऐसा अवसर किसी-किसीको कभी-कभी ही मिलता है। तुम दोनोंपर उसका असर यह होना चाहिए कि तुम्हारी त्यागवृत्ति और सेवावृत्ति बढ़े। आर्थिक कष्टका अफसोस न करके जो आ पड़ी है, उसे निभा लेना चाहिए। मेरे इस शरीरसे और सेवा लेनी होगी तो प्रभु उसे बनाये रखेगा और यदि न लेनी होगी तो उसका नाश कर देगा। दोनों ही तरहसे ठीक है। तुम्हें अपने मनमें इस विचारको दृढ़तापूर्वक जमा लेना चाहिए कि उसकी इच्छाके बिना एक तिनका भी नहीं हिल सकता।

यह पत्र मैंने मौन लेनेके बाद लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२२) से।

११८. पत्र : नानाभाई आई० मशरूवालाको

१८ सितम्बर, १९३२

भाई नानाभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। यह व्रत मैंने ईश्वरार्पित बुद्धिसे लिया है, अतः यदि इस शरीरसे उसे और अधिक सेवा लेनी होगी तो वह इसे बनाये रखेगा और नहीं लेनी होगी तो इसका नाश कर देगा। दोनों स्थितियाँ एक-जैसी ही हैं। इसलिए तुम दुःखी न होकर प्रसन्न होना कि तुम्हारे एक साथीको सहज ही ऐसा मौका मिला है।

तुम सबको,

बापूके आशीर्वाद

श्री नानाभाई मशरूवाला
अकोला (सी० पी०)

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६८६) से। सी० डब्ल्यू० ४३३१ से भी; सौजन्य : कनुभाई मशरूवाला

११९. पत्र : तारामती मथुरादास त्रिकमजीको[1]

१८ सितम्बर, १९३२

तेरा पत्र मिला। मेरे अनशनके कारण दुःखी मत होना। उसके बजाय खुश होना कि ईश्वरने मुझे ऐसी त्याग-बुद्धि सुझाई है। देह तो एक दिन छोड़नी ही है। लेकिन दुःखियोंके निमित्त छूटे, इसके समान शुभ और क्या हो सकता है? मनुष्य खाते-पीते हुए भी तो मरता ही है न? यदि ईश्वरको मुझसे और सेवा लेनी होगी तो सारे संयोग पैदा हो जायेंगे और मैं बच जाऊँगा। अगर मेरे दिन पूरे हो गये होंगे, तो किसी भी तरह बचनेका उपाय ही नहीं है।

इस पत्रका [उपर्युक्त] अंश मथुरादासके पत्रमें उद्धृत कर देना। मेरा चाहे जो हो, किन्तु मैं यह जानता हूँ कि मथुरादास मेरे कामको शोभान्वित करेगा। तू उसकी मदद करना।

आज दिलीपको अलगसे पत्र नहीं लिख रहा हूँ, क्योंकि मुझे और भी बहुत-से पत्र लिखने हैं।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी, पृ० ११६

१२०. पत्र : हंसा मेहताको[2]

१८ सितम्बर, १९३२

मेरे अनशनसे न तो तुम्हें घबराना चाहिए और न डॉक्टरको। मगर तुम्हें खुशी मनानी चाहिए कि तुम्हारे एक साथीको ईश्वरने ऐसा शुभ अवसर दिया। ऐसा अवसर तो कभी-कभी, किसी-किसीको ही प्राप्त होता है। यदि ईश्वरको मुझसे इस देहके द्वारा सेवा लेनी होगी तो वह किसी भी तरह जिलायेगा। और मेरी घड़ी आ पहुँची होगी तो खाते-पीते भी बच नहीं सकता।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ४७-८

१. मथुरादास त्रिकमजी की पत्नी।

२. डॉ० जीवराज मेहताकी पत्नी और म० स० यूनिवर्सिटी, बड़ौदाकी उप-कुलपति।

१२१. पत्र : वसुमती पण्डितको

१८ सितम्बर, १९३२

चि० वसुमती,

आखिरकार तेरा विस्तृत पत्र मिला। किन्तु फिलहाल तो तू मुझसे विस्तृत पत्रकी आशा नहीं करती न? देख, मेरे अनशन-व्रतसे दुःखी मत होना। और अधिक कर्त्तव्यपरायण बनना। मैं यह कबसे जानता हूँ कि तुझमें आत्मबलिदानकी शक्ति तो है ही। भगवान् तुझे पूरी शक्ति देंगे।

कभी हताश मत होना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९३३३) से। सी० डब्ल्यू० ५७९ से भी; सौजन्य : वसुमती पण्डित

१२२. पत्र : नारणदास गांधीको

१८/१९ सितम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

अभी दो बजे हैं। मैंने मौन ले रखा है। रोटीके बारेमें तुम्हारा पत्र मिल गया है। साप्ताहिक डाक तो मिली ही है। तुमने ठीक ही लिखा है कि ईश्वरकी लीला जानी नहीं जाती। मैं तो मानता हूँ कि वह जैसे नचा रहा है, वैसे मैं नाच रहा हूँ इसलिए मनपर कोई बोझ नहीं लगता। अन्तिम परीक्षा इसी तरह पार कर जाऊँ तो कितना अच्छा हो! वह जैसे रखेगा वैसे रहूँगा। मैं चाहता हूँ, वहाँ सभी लोग अन्ततक उल्लसित रहें, अपने-अपने निर्धारित कार्योंमें और भी दत्तचित्त होकर लगे रहें और विह्वल न हों। कल क्या खबर आयेगी, इसपर सोचें ही नहीं। जो होना हो उसके लिए तैयार रहें। ऐसे बने रहनेका सबसे अच्छा रास्ता यह है कि हरएक जिस क्षण जो काम कर रहा हो, उस क्षण उसी काममें मस्त रहे। मुझे इसका कुछ भी पता नहीं है कि मंगलवारको क्या होना है।

निर्मलाने[1] राजकोटसे पत्र लिखा है। वह लिखती है कि एक बार फईबाका[2] मोतियाबिन्दका ऑपरेशन हुआ था, उसका पैसा तुमने चुकाया था — शायद आश्रमके कोषसे ही? अब उन्हें फिर ऑपरेशन कराना होगा। इसपर ध्यान देना और जो जरूरी हो, करना।

१. गांधीजीकी बहन रलियातबहनकी पुत्र-वधू।

२. बूआ; रलियातबहनके लिए प्रयुक्त हुआ है।

चम्पा और रतिलालके विषयमें तो अभी मैं बहुत-सी बातोंका खयाल कर रहा हूँ। लेकिन अगर सारा भार तुम्हारे ही सिर आ पड़ा तो उसे सँभालनेकी शक्ति ईश्वरने तुम्हें दे रखी है। चम्पाके नाम २५,००० रुपये रेवाशंकरभाईके[1] पास जमा हैं, यह तो तुम जानते ही होगे। इससे सम्बन्धित रसीद मैंने शायद चम्पाको दी है। डॉक्टरके वसीयतनामेके आखिरी मसविदेपर उनका हस्ताक्षर नहीं है। तुम्हें वह मिल जाये, ऐसी व्यवस्था करूँगा। अगर मुझसे रह जाये तो मँगवा लेना। उस कागजके मुताबिक दोनोंको ५०,००० रुपये मिलने चाहिए और लाल बँगला भी उन्हीं दोनोंके लिए है। ट्रस्टियोंके नाम डॉक्टर दे गये हैं। लेकिन, छगनलालने उनके बदले दूसरे नाम सुझाये हैं, जो मुझे ठीक लगे हैं। मगर चाहे जो भी ट्रस्टी नियुक्त हों, बोझ तो आश्रमपर ही पड़नेकी सम्भावना है।

डॉक्टरके नामपर आश्रमको ६,५०० रुपये दान किये गये हैं। छगनलालने वह पैसा भेज देनेके लिए लिखा था, लेकिन ऐसा कहा था कि मिल्कियतकी व्यवस्था हो जानेके बाद ही उसे भेजना ठीक रहेगा। छगनलालके अलावा नानालाल यह सब जानता है। कहीं कोई कठिनाई पड़े तो उससे पूछना।

रातके ८-३० बजे

कुसुम्बाका[2] अत्यन्त दुःख-भरा पत्र आया है। उसने लड़कियोंको वापस भेजनेको कहा है। लड़कियोंने भी पत्र लिखा है। उसमें उन्होंने बताया है कि आश्रममें उनका जी नहीं लगता। उनके साथ साफ-साफ बात करना और मुझे लगता है कि यदि लड़कियाँ माँ के पास जाना ही चाहती हों तो उन्हें जाने देना चाहिए। जयसुखलालसे बात करके जैसा ठीक लगे वैसा करना। उसको भेजा मेरा पत्र भी पढ़ जाना।

प्रातः ४-१५ बजे, मौनवार [१९ सितम्बर, १९३२]

सुबहकी प्रार्थना करके, थोड़ा घूमनेके बाद अब आश्रमके लिए पत्र लिख रहा हूँ। जैसे-जैसे लिखता जा रहा हूँ, लिखनेकी जरूरत बढ़ती जा रही है। जितना लिख सकूँगा, लिखूँगा। जिसको पत्र न मिले, वह निराश न हो। जिसका कुटुम्ब बड़ा होता है, उसके सुखका भी पार नहीं होता और दुःखका भी नहीं। जिसे पत्र न मिले, वह जिसको मिले, उससे ईर्ष्या न करते हुए ऐसा माने कि एकको मिला तो सबको मिल गया। ऐसी छोटी-छोटी बातोंमें जो मैं-तू का भेद भूलना सीखेंगे, वे ही अन्तमें भेद-बुद्धिका त्याग कर सकेंगे। जिसको एकतक नहीं गिनना आता वह करोड़ोंका हिसाब कभी नहीं कर सकता। मैं तो, जितने पत्र लिखे जा सकें, उतने लिखकर अभी अपने मनको आश्रमसे जोड़नेकी कोशिश कर रहा हूँ। वहाँसे प्राण-रस खींचकर अपनेमें भर रहा हूँ और अपने प्राण-रससे वहाँ आश्रमका अभिसिंचन कर रहा हूँ। इस बारके तो लगभग सारे पत्र मैं इसीके साथ भेज रहा हूँ। सबको

१. डॉ० प्राणजीवन मेहताके भाई।

२. जयसुखलाल गांधीकी पत्नी।

पढ़ जाना। आश्रमके कार्यक्रमका सिलसिला एक क्षणके लिए भी न टूटने देना। कोई उलझन या चिन्तामें न पड़े, बल्कि सभी पूर्णाहुतिके लिए योग्यता प्राप्त करनेकी बराबर तैयारी करते रहें। मेरी अपनी योग्यता भी जब सिद्ध होगी तभी तो मानी जायेगी। सोलनका यह कथन सोलहों आने सच है: "मृत्युसे पहले कोई भला या सुखी नहीं माना जा सकता।" कौन जाने, मेरा तप आसुरी ही न हो? यदि मेरे हृदयकी गहराईमें कहीं द्वेष अथवा रोष हुआ या स्वार्थ हुआ तो उसे आसुरी तप ही माना जाना चाहिए और तब तो वह दुनियाके लिए भाररूप ही होगा। किन्तु मेरे सम्बन्धमें तुम सब इतनी साक्षी जरूर भर सकोगे कि यह व्रत द्वेषादिकी प्रेरणासे लिया गया हो, तो भी [इतना निश्शंक कहा जा सकता है कि] उसे इन भावनाओंका भान बिलकुल नहीं था। उसने तो निर्दोष जानकर ही यह व्रत लिया था। मेरा यह सब लिखना शायद अनावश्यक भी हो। जनता अबतक जो प्रयत्न करती रही है, सम्भव है, वह सफल सिद्ध हो और मुझे अन्ततक उपवास जारी न रखना पड़े। ऐसा हो तो ठीक ही है, मगर ऐसा होगा ही, यह समझकर तो यह पत्र नहीं लिख सकता। मुझे तो यह पत्र यही मानकर लिखना चाहिए कि शरीर छूट जायेगा।

रामभाऊका बहुत जोरदार पत्र मिला। उसको दिया मेरा उत्तर[1] पढ़ जाना। उसके पत्रसे लगता है कि अगर उसपर पड़े मैलकी परतको हम हटा सकें तो वह हीरा बनकर हमारे सामने आयेगा। काम कठिन है। लेकिन, चूँकि इस कामको तुमने हाथमें लिया है, इसलिए हो सकता है कि उसके अन्दर छिपा हीरा प्रकट हो जाये।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२५२ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

१२३. तार: राजा महेन्द्ररंजनको

[१९ सितम्बर, १९३२][2]

लम्बे तारके लिए धन्यवाद। संकल्प अन्तःकरणकी अलंघनीय पुकारपर किया गया है। उसे तबतक नहीं छोड़ा जा सकता जबतक उसके प्रतिकूल कोई दूसरी पुकार सुनाई न पड़े। ईश्वरकी जो इच्छा होगी, सो होगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २१-९-१९३२

१. देखिए "पत्र: रामचन्द्र ना० खरेको", १९-९-१९३२।

२. समाचार-पत्रमें इस तारपर "२० सितम्बर" की तारीख दी गई थी। किन्तु देखिए "दैनन्दिनी, १९३२" के अन्तर्गत १९ सितम्बरकी प्रविष्टि।

१२४. पत्र : रामचन्द्र ना० खरेको

मौनवार, (प्रातः), १९ सितम्बर, १९३२

चि० रामभाऊ,

तेरा पत्र मुझे बहुत अच्छा लगा। उसमें तूने अपनी सारी शक्ति लगा दी है। तेरी लिखावट सुन्दर है और भाषा भी वैसी ही है। तुझमें लिखनेकी सामर्थ्य खूब दिखाई देती है। तुझमें विनोद-वृत्ति खूब है और विनोदको तू खूब तीखा भी बना सकता है।

तूने प्रेमाबहनके दोष गिनाये किन्तु उन दोषोंको तो मैं यहाँ बैठे हुए भी देख सकता हूँ। किन्तु तू अपने दोष नहीं देखता या फिर उन्हें छिपा रहा है। सदाचारी और अहिंसक ब्रह्मचारी गुणग्राही होता है और वह दूसरोंके दोष देखनेकी बजाय उनके गुण देखता है तथा अपने राई-जैसे दोषको पहाड़-जितना मानता है। तुलसी-दास, सूरदास, तुकारामने इसी प्रकार अपने दोषोंको देखा और उनका वर्णन किया है। फिर प्रेमाबहन चाहे जैसी क्यों न हो, वह तेरी शिक्षिका है। यह कितनी आश्चर्य-जनक बात है कि तुझे उसमें कोई गुण नजर ही नहीं आया। मुझे तो उसमें अनेक गुण दिखाई देते हैं। मैंने तुझे लिखा नहीं था कि मुझे लिखे एक पत्रमें प्रेमाबहनने तेरी प्रशंसा की थी। देख, तेरे आलसी स्वभाव और झूठ बोलनेकी तेरी आदतकी बात तो बहुत-से लोग जानते हैं। और तू स्वयं भी यह जानता है। अपनी इस कुटेवका तो तूने उल्लेखतक नहीं किया। मेरा आग्रह है कि तू अपनी महान् शक्तिका सद्व्यय कर और माता-पिताका, मेरा तथा आश्रमका नाम रोशन कर। ईश्वर तेरी सहायता करे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २९८) से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे

१२५. पत्र : क्राइस्ट सेवा संघके सदस्योंको

१९ सितम्बर, १९३२

क्राइस्ट सेवा संघके प्रिय भाइयो तथा बहनो,

फूलोंकी भेंटके बिना भी मैं जानता हूँ कि आपके हृदय और आपकी शुभा-कांक्षाएँ मेरे साथ ही हैं। फिर भी इस भौतिक प्रतीकको मैं कीमती मानता हूँ।

सस्नेह,

बापू

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ५२

१२६. पत्र : वेलाबहन ल० आसरको[1]

१९ सितम्बर, १९३२

तुमने अच्छा धीरज रखा। आनन्दीकी तनिक भी चिन्ता न करना और मेरी भी चिन्ता न करना। यदि इस मिट्टीके पुतलेको जाना हो तो भले जाये। और फिर वह धर्मकार्यमें खप जाये, तो उससे अच्छा और क्या हो सकता है? मैं तो तुम्हारे पास ही रहूँगा। फिर किसके लिए रोओगी? आश्रमको शोभित करना, शरीरका खयाल करना और उसे सेवामें लगाये रखना।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ४९-५०

१२७. पत्र : आश्रमके बालक-बालिकाओंको

१९ सितम्बर, १९३२[2]

प्रिय बालको और बालिकाओ,

तुम्हें ऐसी कौन-सी छूट पहले मिलती थी जो अब नहीं मिलती? यदि तुम्हारी बात सही हो तो अपना एक प्रतिनिधि-मण्डल लेकर नारणदासके पास जाना। अपनी बात कहनेके लिए उनके तीन मिनट लेना और दो मिनट उन्हें जवाब देनेके लिए देना। इसके बाद यदि मैं तबतक अपनी खटियापर अशक्त पड़ा बचा होऊँ[3] तो तुम मुझे लिखना। और यदि मैंने आखिरी नींद ले ली हो तो तुम लोग खुशीसे नाचना और यह प्रतिज्ञा लेना कि इनका काम अब हम करेंगे। इसमें कैसा आनन्द और कैसा मजा आयेगा! इस अग्नि-परीक्षाके लिए तुम सब लोग अपने-आपको तैयार करना।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-२, पृ० ५३ से भी

१. लक्ष्मीदास आसरकी पत्नी।

२. यह तारीख **महादेवभाईनी डायरी**से दी गई है।

३. माइक्रोफिल्मका अवशिष्ट अंश पढ़ा नहीं जा सका, अतः आगेका भाग **महादेवभाईनी डायरी**से लिया गया है।

१२८. पत्र : जानकीदेवी बजाजको

१९ सितम्बर, १९३२

चि० जानकीमैया,

तुम-जैसोंको 'क' वर्ग ['सी' क्लास] का खाना खाकर मरनेका भय लगता है, इसीलिए मैंने बिना खाये जीनेका रास्ता पकड़ा है। कलसे यह देख लेना। खा-खाकर तो सारा संसार मरता है। 'अ' वर्ग ['ए' क्लास] का खाकर कितना जी लोगी, यह देख लूँगा। परन्तु अनशन करते-करते जीनेकी कलाकी बात कुछ और है। एक शर्त जरूर है। तमाम मैयाओंको जोगन बनकर बाहर निकलना पड़ेगा और अस्पृश्योंको स्पृश्य बनाकर स्वयं ईश्वरी शक्ति होनेका अपना दावा साबित करना पड़ेगा। इतना करना और फिर 'अ' वर्गका ही खाना खाती रहना। परन्तु यदि कोई 'अ' वर्गका खाना न दे तो 'क' वर्गके खानेसे ही सन्तोष करना।

परन्तु मान लो कि जोगनोंका भी कोई बस न चले तो भले ही यह मिट्टीका पुतला अभी टूटकर गिर जाये, मैं तो जीनेवाला ही हूँ। जबतक एक भी मैया मेरा काम करती रहेगी, तबतक कौन कह सकता है कि मैं मर गया? आत्माकी अमरता-सम्बन्धी 'गीता' का तत्त्वज्ञान हम भले छोड़ दें; किन्तु जो अमरता मैंने बताई है, उसे तो हम चर्म-चक्षुओंसे भी देख सकते हैं। इसलिए खबरदार, जो जरा भी घबराईं! स्वयं शोभित होना और शोभित करना। तन, मन, धन ईश्वरको सौंप कर सुखी होना और सुखी रहना। नखरेबाज ओम और ज्ञानी मदालसाको आज नहीं लिख सकूँगा। यह मान लेना कि यह तुम सबके लिए है।

तुम्हारा सौभाग्य अखण्ड रहे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९०१) से।

१२९. पत्र : विनोबा भावेको

१९ सितम्बर, १९३२

कृतयुगी[1] विनोबा,

हमारे लिए तुम्हारे कृतयुगसे द्वेष करनेका कोई कारण नहीं है, क्योंकि हमारे साथ भी कृतयुगी सरदार हैं। अतः तुमसे कमसे-कम एक मुट्ठी तो ऊँचे उठ ही आते हैं न? क्या तुम जानते हो कि सरदार तो अधिकांश समय चलते ही रहते हैं? उनकी चले तो वे खायें भी चलते-चलते और कातें भी चलते-चलते। बुढ़ापेमें 'गीता'

१. विनोबा भावेने 'कलिः शयानो भवति' का उल्लेख करते हुए लिखा था कि कृतयुगमें चलते रहना ही धर्म है। विनोबा उन दिनों गाँवोंमें घूम रहे थे।

तो चलते-चलते घोखते ही हैं। उच्चारण सुधारनेके लिए उन्हें तुम्हारे पास भेजना चाहिए और तुम्हारे हाथमें एक बेंत थमा देनी चाहिए। किन्तु यह सौभाग्य तो तुम्हें जब मिलेगा तब मिलेगा।

लगता है, तुम गरीबोंको काफी फुसला रहे हो। मुझ-जैसा गरीब आदमी जब तुम्हारे पत्रकी आतुरतापूर्वक प्रतीक्षा कर रहा था तब उसे बिलकुल न लिखा और जब वह मृत्युशय्यापर सोनेकी तैयारी करने लगा तब उसे यह लिखा है कि "अब लिखना शुरू कर दिया है, अतः नियमित रूपसे लिखता रहूँगा।" परन्तु भगवान् जाने! कृतयुगी लोगोंकी प्रतिज्ञा भंग होते नही सुनी गई, इसलिए तुम्हारी प्रतिज्ञाके पालनके लिए मुझे इस खटियासे भले ही उठना पड़े, मैं तो नियमित रूपसे तुम्हारे पत्र पानेकी आशा करूँगा।

इस प्रकार परिहास करके मैंने अपना मन [कुछ क्षणोंके लिए] उन गम्भीर पत्रोंसे हटा लिया है जो मैं लिखता रहा हूँ, और साथ-साथ यह भी सुझाया है कि तुम्हारे कामके बारेमें किसी प्रकारकी आलोचना करनेकी बात नहीं उठती। मुझे सूचित करते रहना। यदि इस अग्नि-परीक्षासे मेरा शरीर और मन दोनों पार निकल आये और यदि कुछ लिखने लायक हुआ तो मैं तुम्हें लिखूँगा। मैंने तुम्हारा पत्र सँभालकर रख लिया है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ५१-२

१३०. पत्र : नारायण म० देसाईको[1]

१९ सितम्बर, १९३२

कृष्णसे प्रश्न पूछनेवाला एक ही अर्जुन था, इसीलिए उन्हें उसे तरह-तरहसे दुलरानेकी और [उसके सब प्रश्नोंके] लम्बे उत्तर देनेकी सूझी। फिर, कृष्ण ठहरे ज्ञानी और मैं हूँ अल्पज्ञ, और पूछनेवाले अर्जुन कितने हैं? गिनकर तो देख। सभीको थोड़ा-थोड़ा बाँट दूँ तो कितनी बड़ी और कितनी 'गीताएँ' हो जायें? क्योंकि कृष्णसे तो एक बार ही प्रश्न पूछे गये थे, जब कि मुझसे तो इतने अर्जुन हर सप्ताह प्रश्न पूछते हैं।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ५४

१. महादेव देसाईके पुत्र।

१३१. पत्र : निर्मला एच० देसाईको

१९ सितम्बर, १९३२

चि० निर्मला[1] (बूआ),

हाँ, चित्रकी पूजा भी मूर्तिपूजा ही है, फिर भी तीज-त्योहारके दिन चित्र सामने रखकर बैठने और मन्दिर बनवाकर उसमें मूर्तिकी प्रतिष्ठा करने, इन दोनोंमें निश्चय ही अन्तर तो है न? आश्रममें हमें मूर्तिपूजा आरम्भ नहीं करनी चाहिए। आश्रममें तो सभी धर्मोंके लिए स्थान होना चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४६५) से।

१३२. पत्र : वालजी और दूधीबहन देसाईको

१९ सितम्बर, १९३२

चि० वालजी और दूधीबहन,

तुममें मेरा जो असीम विश्वास है उसे तुम जानते हो। इसको पूरी तरह सिद्ध करनेके लिए ईश्वर तुम्हें बल दे। महायज्ञमें शामिल होनेके लिए जहाँतक हो सके अपने शरीरकी रक्षा करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४३७) से; सौजन्य: वा० गो० देसाई

१३३. पत्र : जमनाबहन गांधीको

१९ सितम्बर, १९३२

चि० जमना,

बड़ोंकी सेवाके लिए राजकोटमें रहनेको मिला, यह तो श्रेयस्कर ही माना जायेगा। अपना स्वास्थ्य सुधारो। मेरे यज्ञके कारण दु:खी नहीं होना है बल्कि उसमें सुखका ही अनुभव करना है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८५०) से; सौजन्य: नारणदास गांधी

१. महादेव देसाईकी सौतेली बहन।

१३४. पत्र : केशव गांधीको

१९ सितम्बर, १९३२

चि० केशू,

स्याहीके धब्बे मिट नहीं सकते। इन्हें या तो रहने देना चाहिए या दूसरा कागज लेना चाहिए।

यदि अपने साथ कोई दुर्व्यवहार करे तो भी उसके प्रति नम्र रहना चाहिए, परन्तु उसके सामने झुकना नहीं चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२८१)से।

१३५. पत्र : खुशालचन्द गांधीको[1]

१९ सितम्बर, १९३२

जो यज्ञ कलसे आरम्भ होगा, आशा है, वह आपको भाया होगा। अगर वह आपको धर्मसंगत प्रतीत हुआ हो तो मैं चाहूँगा कि आप दोनों बुजुर्ग अंजली भरकर आशीर्वाद भेजें। अगर मैं आपसे पहले चला जाऊँ तो शोक न करें, बल्कि यह जानकर खुश हों कि आपको ऐसा छोटा भाई मिला जिसे ईश्वरने ऐसा यज्ञ पूरा करनेकी शक्ति दी। आपने भाईसे ज्यादा मेरी जरूरत पूरी की है। आशा है, मेरी भाभी[2] स्वस्थ हो गई होंगी।

प्रातःकालके समय सिर नवाते हुए आपके छोटे भाईका दोनोंको प्रणाम।

मोहनदास

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ४८-९

१. गांधीजी के चचेरे भाई और नारणदास गांधीके पिता।

२. देवकुंवर, खुशालचन्द गांधीकी पत्नी।

१३६. पत्र : निर्मलाबहन गांधीको

१९ सितम्बर, १९३२

तू जरा भी न घबराना। रामदास-जैसा वीर और साधु तुझे सौंपा है, फिर तू क्यों घबराये? मुझे कहाँ तक बचाकर रख सकेगी; और यदि बचाकर रखना ही हो तो [जिसे बचाना है] वह [आत्मा] तो सदा तुम सबके साथ ही है। देह तो जड़ है। उसका क्या करेगी? शुक्रवारको रामदासके साथ दो घंटे बिताये। उसने जरा भी घबराहट नहीं दिखाई। यह देखकर उसके पिता और शिक्षकके नाते मैं फूला न समाया। तू भी वैसी ही बनना और बच्चोंको सँभालना। घी-दूध लेती रहना।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ५१

१३७. पत्र : गजानन वी० खरेको[1]

१९ सितम्बर, १९३२

चि० गजानन,

तेरे बारेमें समाचार तो मिलते ही रहते हैं। यदि अन्य कोई सीखने नहीं आता तो कोई बात नहीं। धीरू तैयार हो तो ठीक ही है।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ३०८) से; सौजन्य : लक्ष्मीबहन ना० खरे

१३८. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

१९ सितम्बर, १९३२

चि० पण्डितजी,

रामभाऊके पत्रको बहुत अच्छा और बहुत खराब माना जा सकता है। मैंने उसे उत्तर दे दिया है।[2] परन्तु जिस बच्चेमें इतनी अधिक होशियारी हो उसकी आशा मैं छोड़नेवाला नहीं।

तो काकाने सुन्दरबहनका किस्सा जब मैं इंग्लैंड जा रहा था तब मुझे सुनाया था। उससे मैं यह समझ पाया था कि सुन्दरबहनने विवाह-सुख कभी नहीं भोगा। उसके पतिने शुरूसे ही उसका तिरस्कार किया, क्योंकि उसने उसे रूपवान अर्थात् गोरी

१. नारायण मोरेश्वर खरेका भतीजा।

२. देखिए "पत्र: रामचन्द्र ना० खरेको", १९-९-१९३२।

नहीं माना। इस प्रकार जिसे उसका पति सर्वथा त्याग दे उसे विवाहित माननेका कोई नीतियुक्त कारण नहीं है। जहाँ नीति नहीं है वहाँ कानूनकी उपेक्षा करके नीतिकी स्थापना करना उचित है। यदि सुन्दरबहन कुमारी रह सकती तो अच्छा होता।[1] किन्तु जब कि वह इस प्रकार रहनेमें असमर्थ थी तो उसके सामने नीति-सम्मत रास्ता यही था कि वह योग्य पति खोज ले। यह ठीक है कि ऐसा करनेमें उसे दण्डका भय था। इतनी जोखिम उसे उठानी चाहिए और उसने उठाई भी है। ऐसे विवाहमें किसी तरहका धार्मिक निषेध मुझे दिखाई नहीं देता। विवाह-सम्बन्धी विधि-विधान रूढ़ियोंसे ही निकले हैं। उन्हें जाँचनेके लिए संयमकी तुलाका प्रयोग करना चाहिए। जो कर्म कुल मिलाकर संयमके पालनमें सहायक हों, वे कर्म भले ही रूढ़ि-विरुद्ध हों फिर भी उनपर आचरण करना चाहिए।

बहनोंके बारेमें यदि मुझसे विशिष्ट प्रश्न पूछो तो मैं और अधिक स्पष्ट कर सकूँगा।

लक्ष्मीबहनकी दाढ़ यदि ठीक तरहसे भरी नहीं गई होगी तो वह अवश्य कष्ट देगी। यदि आवश्यक हो तो बम्बईमें धारगलकरको दिखाना। मेरा नाम ले देनेसे वे पीड़ितको ध्यानसे देखेंगे और फीस नहीं लेंगे। उनकी फीस बहुत अधिक होती है।

अनशनके बारेमें इस पत्रमें कुछ नहीं लिख रहा हूँ।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २३४) से; सौजन्य : लक्ष्मीबहन ना० खरे

१३९. पत्र : कुसुमको

१९ सितम्बर, १९३२

मेरे व्रतसे तुझे घबराना नहीं चाहिए। तेरा कर्तव्य पर्याप्त आराम लेकर अपना शरीर स्वस्थ बनाना है। इस बारेमें ज्यादा क्या लिखूँ? लड़कियोंकी बीमारीके समय उनकी शादी कर देनेकी बात उठानेवाले अज्ञानी हैं। विवाहिता स्त्रियाँ जितनी बीमार रहती हैं, कुमारियाँ उतनी बीमार कभी नहीं रहतीं। और तूने लड़कियोंकी लड़कोंके साथ तुलना की, सो भी ठीक है। फिर भी, हमें इस व्यंग्यका सीधा ही अर्थ करना चाहिए और बीमार पड़ना ही नहीं चाहिए। बीमार न पड़नेके लिए जैसा मैंने लिखा है, वैसे थोड़े ज्ञानकी जरूरत तो है ही। कुमारियोंके शरीर वज्रके समान होने चाहिए, और वैसे ही कुमारोंके भी। सच पूछा जाये तो आजकल दोनों ही बीमार रहते हैं। लेकिन ब्याह करके दोनों और ज्यादा बीमार रहते हैं। उमिया, रुखी और हरि-इच्छाको देख। रुखीको विवाह फला हो, ऐसा कुछ लगा जरूर मगर इतनेमें तो वह फिर बीमार पड़ गई। लेकिन लड़कियोंको इसका यह अर्थ भी नहीं लगाना चाहिए कि जो ब्याह करती हैं, वे बीमार अवश्य पड़ती हैं। यह सही है कि जो कुमारियाँ

१. अपने प्रथम पतिसे अलग होनेपर उसने पी० जी० देशपाण्डेसे शादीकर ली।

विकारसे जलती रहती हैं, उनका छुटकारा तो शादी करनेसे ही होगा। क्योंकि उनका विकार उन्हें खाता रहता है। मगर इसका मतलब तो यही हुआ कि वे विवाह किये बिना ही विवाहिता स्त्रीकी तरह व्यवहार करती हैं, इसलिए व्यभिचारिणी हैं। जो स्त्री या पुरुष मन-ही-मन विकारोंको पोसता रहता है, वह भी व्यभिचारी ही है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ५२-३

१४०. पत्र : लक्ष्मीदास पु० आसरको

१९ सितम्बर, १९३२

तुम्हारी आयु अधिक हो तो हो किन्तु मैंने शुरूसे ही, जब तुम अमृतसरमें पहली बार मिले थे, तभीसे तुम्हें समझदार बेटोंमें गिना है। अतः मैं यह मानता हूँ कि तुम मेरे अनशनका ठीक-ठीक अर्थ समझ गये हो; और यह भी कि यदि मैं चला जाऊँ तो तुम मेरे उत्तराधिकारकी शोभा बढ़ाओगे। और इसीलिए मैं आवश्यकताके बिना तुम्हें नहीं लिखता।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ४९

१४१. पत्र : मोहन एन० परीखको

१९ सितम्बर, १९३२

चि० मोहन,

मुझे हर बार लिखनेके लिए तुझे कुछ क्यों नहीं सूझता? हर सप्ताह तूने आगे जितना पढ़ा हो और इस बीच जितनी शरारत की हो उसका विवरण मुझे लिख भेजना चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९१८४) से।

१४२. पत्र : नर्मदाबहन राणाको

१९ सितम्बर, १९३२

चि० नर्मदा,

तेरा पत्र मिला। तू धीरज रखेगी तो तेरे दोष दूर हो जायेंगे। चिन्ता न करना। नारणदास जो कहे, वैसा करती जाना।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २७६४) से; सौजन्य : रामनारायण एन० पाठक

१४३. पत्र : शारदा सी० शाहको

१९ सितम्बर, १९३२

चि० बबुडी (शारदा),

तेरे प्रश्न कितने बढ़िया हैं? जिसे मरना है वह तो सदा ही मर सकता है: जीभ काटकर, कंठ दबाकर, कोई बाँध दे तो बन्धन तोड़नेमें हड्डियाँ तोड़कर और बहुत बड़ी सती स्त्री तो कल्पना-मात्रसे अपनी मृत्यु ला सकती है। यह आत्महत्या तो कही जायेगी, मगर कुछ मौकोंपर आत्महत्या करना धर्म हो जाता है। यदि किसी स्त्रीसे कोई राक्षस बलात्कार करना चाहे तो वह मौका आत्महत्या करनेका है, बशर्ते उससे बचनेका दूसरा कोई उचित उपाय न हो।[1]

मुझे विश्वास है कि तू सचिवके पदपर बनी रहेगी, क्योंकि तू ईमानदार और दृढ़निश्चयी है।

विद्यार्थी मुझसे शरमाकर नहीं झगड़ेंगे, ऐसा नहीं, बल्कि उन्हें खुद अपनी भूलोंकी वजहसे शर्म आयेगी और वे नहीं झगड़ेंगे। मुझसे तो किसीको शरमाना ही नहीं चाहिए।

तुझे अपना शरीर लोहेके समान मजबूत बना लेना चाहिए।

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९५६) से; सौजन्य: शारदाबहन जी० चोखावाला

१४४. पत्र : सुलोचनाको

१९ सितम्बर, १९३२

चि० सुलोचना,

गुलाब तुम्हें क्यों परेशान करती है? इस बारेमें प्रेमाबहनसे कहो।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७३९) से।

१. देखिए "संकटमें बहनें क्या करें", ४-९-१९३२।

१४५. पत्र : नानीबहन झवेरीको

१९ सितम्बर, १९३२

चि० नानीबहन झवेरी,

इतने दिनोंतक तूने मुझे पत्रके विना तरसाया, उसकी माफी तो नहीं देनी चाहिए। मगर यज्ञ आरम्भ करते समय तो बड़ेसे-बड़े वैरीको भी माफी दे दी जाती है, तभी यज्ञ सफल होता है। इसलिए यदि तुझ-जैसी लड़कियोंको माफी न दूँ तो मेरा सफाया ही हो जायेगा।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ५१

१४६. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

[१९ सितम्बर, १९३२][1]

चि० गंगाबहन,

तुम आजकल ठीक समयसे पत्र लिख रही हो। मेरे यज्ञसे बिलकुल विचलित न होना, उत्तेजित भी मत होना। ऐसे यज्ञ तुम सबसे कराने हैं। अगर इस देहको छूटना होगा तो इस विश्वासके साथ ही छोड़ूँगा कि तुम ऐसे यज्ञ कर सकोगी। जब बहुत-से पापोंकी तह जम जाती है तो उनका प्रायश्चित्त इसी प्रकार होता है।

ऐसे व्रतोंका अनुकरण नहीं किया जा सकता। इसकी प्रेरणा हमें अपने अन्तरसे मिले, तभी वह पार लगता है। अन्तर शुद्ध न होनेके बावजूद यदि ऐसी प्रेरणा मिले तो वह अनशन राक्षसी हो सकता है। अतः पहले अन्तर शुद्ध हो जानेपर ही ऐसे यज्ञ किये जा सकते हैं। ऐसी शुद्धि करनेके लिए ही आश्रमका अस्तित्व है।

किन्तु तुम तो कहती हो कि उसकी बहुत निन्दा सुनती हो। तुम्हें इस निन्दाको सहन करना चाहिए। निन्दाके पीछे जितनी सचाई जान पड़े, उसे ग्रहण कर लेना चाहिए, और सुधार करना चाहिए। जो गलत जान पड़े, उसके बारेमें तटस्थ रहना चाहिए। लोगोंको जैसा लगता है, उन्हें वैसा कहनेका अधिकार है। और कुछ लोग तो केवल द्वेषवश भी निन्दा करते हैं। ऐसी निन्दाके बारेमें विचार भी क्या करना?

. . .[2]के बारेमें जो-कुछ हम सुन रहे हैं, उसमें कुछ सचाई है। जितनी है, उसकी उपेक्षा की जा सकती है। . . .[3]का मेरा थोड़ा-सा अनुभव बहुत अच्छा है। वह सीधा-सादा आदमी है। . . .[4]ने वहाँ मौज नहीं की। . . .[5]को आबोहवा

१. **महादेवभाईनी डायरीसे**।

२, ३, ४ व ५. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिये गये हैं।

बदलनेकी जरूरत थी। आसानीसे ऐसा मौका मिल जानेके कारण उसने उसका लाभ उठाया। . . .[1] का सम्बन्ध सर्वथा निर्मल है। . . .[2] वहाँ अशोभन ढंगसे नहीं रही। उसके पत्रसे मेरे मनपर ऐसी छाप पड़ी है कि वह अपनी सामर्थ्य-भर आत्म-शुद्धिका निरन्तर प्रयास करती रही है। . . .[3] तो अब बिलकुल थक गया है। इस-लिए मैंने उसे आश्रम-जीवन बितानेकी सलाह दी है।

अब तुम्हारी अशान्तिके बारेमें। उसके दो कारण हो सकते हैं। एक तो तुम्हें अपने कामसे सन्तोष नहीं मिलता। जितना तुमसे हो सकता है, उससे बहुत अधिक करनेका लोभ बना रहता है। एक हदतक यह लोभ बहुत अच्छा है। किन्तु हदके बाहर चले जानेके बाद दुःख होता है। उससे भी अधिक अशान्तिका कारण तुम्हारी असहिष्णुता है। जितना तुम कर सकती हो यदि उतना दूसरे न करें या तुम्हारी बात न मानें तो तुम व्याकुल हो जाती हो। इसकी दवा आसान है। तन-मनसे करने पर जितना काम हो सके, उतनेसे सन्तोष करना और जितना आगे बढ़ा जा सके, उतना आगे बढ़ते जाना चाहिए। इतना जान लो कि स्वर्ग जानेका जितना अधिकार वेदोंके ज्ञाताको है उतना ही अधिकार भंगीका काम करनेवाले को है। किन्तु यदि वेदोंका ज्ञाता कोरा पण्डित या पाखण्डी हो तो वह चाहे जितना बड़ा विद्वान् क्यों न हो, फिर भी नरकमें पड़ेगा और भंगी 'ब्रह्म' शब्द न जानते हुए भी यदि ईश्वरार्पण-बुद्धि तथा सेवा-भावसे रोज पाखाना साफ करे तो अवश्य ऊँचा उठ जायेगा। एक दवा तो यह सन्तोष है। दूसरी दवा है — उदारता। हम जितना चाहें या करें, उतना दूसरे न करें तो भी मनको बुरा नहीं लगना चाहिए। ऐसा करने पर ही पास-पास रहनेके बावजूद हम समाजमें शान्ति बनाये रख सकेंगे। नाथके[4] साथ इस पत्रको दो-चार बार पढ़कर विचार करना। . . .[5] बहनको अपना आश्रय देना। शेष तो ईश्वरेच्छा होगी तो तुम सुशोभित होओगी।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो - ६ : गं० स्व० गंगाबहेनने, पृ० ७३-५। **महादेवभाईनी डायरी,** भाग-२, पृ० ५०-१ से भी

१, २ व ३. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिये गये हैं।

४. केदारनाथ कुलकर्णी, किशोरलाल मशरूवालाके गुरु।

५. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिया गया है।

१४७. एक पत्र

१९ सितम्बर, १९३२

तुम्हारा अत्यन्त सुन्दर पत्र पढ़कर हम सबको बड़ा हर्ष हुआ। तुम बहुत ऊँचे पहुँच गये हो। और भी ऊँचे उठना। ईश्वर तुम्हें बल जरूर देगा। तुम्हारे पत्रका तो विस्तारपूर्वक उत्तर देना चाहिए। मगर फिलहाल मैं उतना वक्त नहीं दे सकता। मैं तुम्हारा यह पत्र रख छोड़ूँगा। यदि समय और शक्ति होगी तो लिखूँगा, नहीं तो कोई बात नहीं। आशा है, इस यज्ञसे तुम या अन्य भाई घबराये न होंगे। ईश्वर ही यह [उपवास-रूपी यज्ञ] करा रहा है, वही इसे पार लगायेगा। कहा नहीं जा सकता कि इस अस्पृश्यताको मिटानेके लिए हमें कितने यज्ञ करने पड़ेंगे। उसके लिए तैयारी करना। तैयारीका अर्थ आत्मशुद्धि ही है। आत्मशुद्धिमें कार्यदक्षता आ ही जाती है।

बारीक सूत महँगा तो पड़ेगा ही। परन्तु हममें ढाकेकी मलमलका पुनरुद्धार करनेकी शक्ति होनी चाहिए। ऐसा करते हुए हम छोटी-छोटी अनेक शोध कर सकते हैं। पहले ऐसा सूत राजा लोग बेगारमें कतवाते और बुनवाते थे। अब हम उसे यज्ञके रूपमें कातें और बुनें। इस प्रकार उसकी कीमतका प्रश्न ही नहीं रह जाता, और हाथ-कताईकी महिमा बढ़ती है। ईश्वरकी इच्छा होगी तो इस बातको और अच्छी तरह समझाऊँगा।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ४९

१४८. एक पत्र

१९ सितम्बर, १९३२

अपने स्थानको सुशोभित करना। सीताजी रामकी जायदाद नहीं थीं, पर राम की आँखकी पुतली थीं। सीताको वनवास देकर वे स्वयं वनवासी हो गये थे, क्योंकि उनके हृदयने सीताका अनुगमन किया था। किन्तु कोई सामान्य व्यक्ति अपनी स्त्रीके प्रति ऐसा व्यवहार नहीं कर सकता, क्योंकि उनकी स्त्री और वे स्वयं एक ही हैं, ऐसा अलौकिक प्रेम हमें नजर नहीं आता।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ५५

१४९. पत्र : कन्हैयालालको

१९ सितम्बर, १९३२

दरिद्र वह है जिसमें शुद्ध प्रेमकी बुंदतक नहीं है। धनवान वह जिसके प्रेममें जंतुसे लेकर मस्त हाथी समा सकता है। नास्तिक वह जो शरीरके बाहर विश्वव्यापी आत्माको नहीं पहचानता। आस्तिक वह जो हर जगह आत्माके सिवा और कुछ देखता नहीं।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ५४

१५०. पत्र : रामेश्वरदास पोद्दारको

१९ सितम्बर, १९३२

चि० रामेश्वरदास,

तुमारे गंगादेवीको[१] सताना नहिं चाहिये। जैसे वह तुमको नहिं सताती है, तुमारी सब चेष्टा ताक-ताककर नहिं देखती वैसे हि तुमारे उनके प्रति बर्ताव रखना है।

राम विनोबाके पास खुश है। वहीं रहने दो।

मेरे यज्ञका सुनकर नाचो और राम-नामपर अधिक विश्वास रखो। देखो वह क्या करता है। अनशन मेरा नहिं रामका है। चिंता मुझे नहिं उसको है। यदि निष्फल हुआ तो निंदा उसकी होगी मेरी नहिं, सफल हुआ तो उसे स्तुति नहिं चाहिये। इसलिये मैं भीखारी उसके द्वार पड़ा रहता ले लुंगा।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७६) से।

१. रामेश्वरदास पोद्दारकी पत्नी।

१५१. पत्र : लक्ष्मीको[1]

१९ सितम्बर, १९३२

क्या जाने ईश्वर क्या करना चाहता है। मेरे यज्ञसे तुम्हें घबरानेका नहीं है। देखो देवदासने कैसा सुंदर खत अखबारमें निकाला है? वह घबराया नहीं है, परन्तु हर्षमें आ गया है। और होना भी ऐसा ही चाहिये। धर्मके कारण देहका बलिदान देनेका अवसर किसीको क्वचित ही मिलता है।

ईश्वर तुम सबका कल्याण ही करेगा। और उसकी इच्छा होगी तो इस मृत्यु-शय्यापर से मैं उठ खड़ा होऊंगा।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ५१

१५२. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१९ सितम्बर, १९३२

चि० प्रेमा,

आज तो पत्र लिखते-लिखते थक गया हूँ। डाक निकलनेका समय भी हो गया है। इसलिए छोटा ही पत्र लिखता हूँ। दूसरा बादमें। हमारे पास यहाँ एक बिल्ली है। वह 'स्मार्ट लिटल गर्ल' है। इसलिए उसका नाम तेरे कॉलेजकी याद बनाये रखनेके लिए प्रेमा रखा है। तू कितनी 'स्मार्ट' (चुस्त) है, इसकी परीक्षा अब हो जायेगी।

पास हो सकेगी क्या?

समय मिला तो दूसरा पत्र बादमें लिखूंगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३०३) से। सी० डब्ल्यू० ६७४२ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

१. च० राजगोपालाचारीकी पुत्री।

५३. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

२० सितम्बर, १९३२

प्रिय गुरुदेव,

आज मंगलवार है और सुबहके तीन बजे हैं। दोपहरको मुझे अग्निद्वारमें प्रवेश करना है। इस प्रयासको यदि आप अपना आशीर्वाद दे सकते हों तो मुझे वह चाहिए। आप मेरे सच्चे मित्र हैं, क्योंकि आप स्पष्टवादी मित्र रहे हैं और अपने विचारोंको प्रायः साफ-साफ कहते आये हैं। मैंने आपसे अपने उपवासके सम्बन्धमें निश्चित रायकी आशा रखी थी, वह चाहे पक्षमें हो या विपक्षमें, पर आपने आलोचना करनेसे इनकार कर दिया। अब तो आपकी आलोचना मेरे उपवासके दौरान ही आ सकती है, फिर भी यदि आपका हृदय मेरे इस कार्यकी निन्दा करता हो तो मेरे लिए वह आलोचना अमूल्य होगी। यदि मुझे अपनी भूलका पता चल जाये तो मैं इतना अभिमानी नहीं हूँ कि उसे खुलेआम स्वीकार न कर सकूँ, फिर चाहे उस स्वीकृतिका मुझे कितना ही मूल्य क्यों न चुकाना पड़े। और यदि आपका हृदय मेरे इस कार्यका अनुमोदन करता है, तो मुझे आपका आशीर्वाद चाहिए। उससे मुझे बल मिलेगा। आशा है, मैं अपनी बात स्पष्ट कर सका हूँ।

सप्रेम,

मो० क० गांधी

१०-३० प्रातः

[पुनश्च :]

इस पत्रको सुपरिंटेंडेंटको दे रहा था, तभी मुझे आपका प्रेमपूर्ण और उत्कृष्ट तार मिला। जिस तूफानमें मैं प्रवेश करने जा रहा हूँ, यह उसमें मुझे बल देगा। मैं आपको एक तार[1] भेज रहा हूँ। धन्यवाद।

मो० क० गां०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६३४) से।

१. देखिए "तार: रवीद्रनाथ ठाकुरको", २०-९-१९३२।

१५४. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

२० सितम्बर, १९३२

मेरे सबसे प्रिय मित्र और बंधु,

मंगलवारका दिन है और वेला ब्राह्म मुहूर्तकी — तीनसे कुछ ही अधिक हुए हैं। मैंने अभी-अभी गुरुदेवको एक छोटा-सा पत्र[1] पूरा किया है।

दुःखके इन दिनोंमें आप सदा मेरे सम्मुख रहे हैं। आपके विचारोंको शायद मैं पढ़ पाया हूँ। आपके प्रति मेरी जो आदरकी भावना है, उसे आप जानते ही हैं। यद्यपि बहुत-से विषयोंपर हमारे दृष्टिकोणोंमें जमीन-आसमानका अन्तर है, या लगता है, पर हमारे हृदय एक हैं। इसलिए जहाँ-कहीं भी मैं आपके साथ सहमत हो सका हूँ, उससे मुझे वास्तविक आनन्द मिला है। मेरा यह कदम शायद आपको कहावतके उस अन्तिम तिनकेकी तरह असह्य लगा होगा। फिर भी आपकी ताड़नाकी मुझे जरूरत है, क्योंकि मैं यह नहीं चाहता कि आप मुझे रास्तेपर लानेकी अपनी कोशिश बन्द कर दें — अपने सबसे बड़े भाईसे, मेरा खयाल है, मैं कोई चौदह साल विछुड़ा रहा। हर साल वे रजिस्ट्रीसे मुझे भर्त्सनाके शब्द लिख भेजते थे। उनकी इस भर्त्सनामें मुझे आनन्द मिलता था। उनके वे शब्द प्रेमकी चिनगारियाँ होते थे — अन्तमें मैंने उनका मन जीत लिया। अपनी मृत्युसे छः महीने पहले वे यह समझ गये कि मैं सही राहपर था।[2] उनके रोषका एक कारण अस्पृश्यताका यह प्रश्न ही था। हमारे मामलेमें गलत कौन है, मैं नहीं जानता। पर मैं यह जानता हूँ कि आप मेरे लिए सगे भाई-जैसे हैं। इस संकटमें भी, जो हो सकता है आखिरी हो, आप मुझसे झगड़ना बन्द न कीजिए। मुझे अपने अभिशाप या आशीर्वाद भेजिए। यदि आप यह सोचते हैं कि मैं गलतीपर हूँ तो आप मेरी आँखें खोल सकते हैं, जबकि दूसरे ऐसा नहीं कर सके हैं। आप मुझे खूब अच्छी तरह जानते हैं, इसलिए आपको यह मालूम है कि यदि मुझे अपनी गलतीका विश्वास हो जाये तो मुझमें उसे स्वीकार करनेकी ईश्वर-प्रदत्त क्षमता है। मुझे अवश्य पत्र लिखिए या तार दीजिए।

एक महीने पहले मैंने आपको पत्र लिखकर आपके स्वास्थ्यके बारेमें पूछा था। मुझे उसका कोई उत्तर नहीं मिला। पता नहीं मेरा पोस्टकार्ड आपको मिला भी या नहीं।

हार्दिक प्रेम-सहित,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री, पृ० २३४

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. देखिए खण्ड ३९, पृ० २०२-३।

१५५. पत्र : मीराबहनको

२० सितम्बर, १९३२

चि० मीरा,

आज सुबह मैं ढाई बजे ही उठ गया क्योंकि पहले गुरुदेवको, फिर शास्त्रीजी को और फिर तुम्हें पत्र लिखना था। तुम्हारा हृदय-विदारक पत्र मिला। पहले मैंने सोचा कि उसे गवर्नरके पास भेज दूँ। पर तत्काल ही वह विचार मैंने छोड़ दिया। तुमने जब भट्ठीमें प्रवेश करना पसन्द किया है, तो उसीमें तुम्हें रहना चाहिए। जैसा कि इन सालोंमें तुमने देख लिया है, मेरी संगति कोई आसान चीज नहीं है। तो इस जहरको अब आखिरी बूँदतक पियो।

अपने संकल्पका समाचार देते हुए जब मैंने वह पहला पत्र लिखा तो मुझे तुम्हारा और बा का खयाल आया था। और कुछ देरके लिए मेरा सिर चकरा गया। तुम दोनों इसे कैसे सहन करोगी? परन्तु मेरे अन्त:करणने कहा, "अगर तुम्हें इसमें पड़ना है तो सभी तरहकी आसक्तिका विचार छोड़ना होगा।' और पत्र चला गया। अस्पृश्यताके पापको धोनेके लिए कितनी भी भयंकर यातना सही जाये, वह ज्यादा नहीं कही जा सकती। इसलिए तुम्हें इस कष्टमें प्रसन्न होना चाहिए और इसे वीरतापूर्वक सहना चाहिए। यह सब करना कितना कठिन है — यह मैं जानता हूँ। फिर भी तुम्हें ठीक इसीकी कोशिश करनी है। जरा सोचो और समझो कि अन्तिम दर्शन करनेका कोई अर्थ नहीं है। जिस आत्मासे तुम्हें प्रेम है, वह सदा तुम्हारे साथ है। जिस शरीरके द्वारा तुमने इस आत्मासे प्रेम करना सीखा, उसकी उस प्रेमको कायम रखनेके लिए अब आवश्यकता नहीं है। जबतक इसका उपयोग है, तबतक इसका बने रहना अच्छा है। जब इसका कोई उपयोग न रहे, तब इसका नष्ट हो जाना भी उतना ही अच्छा है। और क्योंकि हमें नहीं मालूम कि इसका उपयोग कब समाप्त हो जायेगा, इसलिए हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि मृत्यु चाहे किसी भी कारणसे हो, उसका अर्थ यही है कि इसका अब कोई उपयोग नहीं रहा। अगर तुम्हें इससे कोई तसल्ली होती हो तो यह जान लो कि वल्लभभाई, महादेव, रामदास, सुरेन्द्र, देवदास, जिनसे भी मैं मिला हूँ, सभी इसे बहुत ही अच्छी तरह सहन कर रहे हैं। तुम्हारी साथिनोंको प्यार। किसन तुम्हारे साथ है, मुझे इसकी खुशी है। वह भली और बहादुर लड़की है। भगवान् तुम्हें शक्ति दे।

सस्नेह,

बापू

श्री० मीराबाई (स्लेड)
आर्थर रोड जेल
बम्बई

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५०९) से; सौजन्य : मीराबहन

१५६. तार : होरेस जी० अलेक्जेंडरको

[२० सितम्बर, १९३२][1]

होरेस अलेक्जैंडर
फ्रेंड्स हाउस
यूस्टन, लन्दन

जिसे मैं ईश्वरका आदेश मानता हूँ उसकी अवज्ञा कैसे कर सकता हूँ। तो उसकी इच्छा पूरी हो। स्नेह।

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०-९।

१५७. तार : अगाथा हैरिसनको

[२० सितम्बर, १९३२][2]

अगाथा हैरिसन
मार्फत कैलोफ लन्दन

तुम्हारी कशमकशको समझता हूँ। ईश्वर तुम्हारा मार्गदर्शन करेगा।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४५७) से।

१. "दैनन्दिनी, १९३२" से।

२. "दैनन्दिनी, १९३२" से। यह अगाथा हैरिसनके १७ सितम्बरके निम्न तारके उत्तरमें भेजा गया था: "इस समय आपकी दी हुई कोई भी सलाह मैं मूल्यवान् समझूँगी।"

१५८. तार: महमूदजी अल्लीजीको

[२० सितम्बर, १९३२][1]

महमूदजी अल्लीजी
अहमदाबाद

प्रस्तावके लिए धन्यवाद। किन्तु मैं अब भी कैदी हूँ यह तो आप देख ही रहे हैं।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

वम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०-९।

१५९. तार: आशुतोष चौधरीको

२० सितम्बर, १९३२

आशुतोष चौधरी
६, लायल रोड
इलाहाबाद

अपर्णासे कहिए उपवास बिलकुल न करे। सब लोगोंको खुश होना चाहिए और अस्पृश्यता दूर करनेके लिए अपनी पूरी शक्ति लगाकर सर्वोत्तम प्रयत्न करना चाहिए।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०-९।

१. साधन-सूत्रमें जिस स्थानपर इस शीर्षकको रखा गया है, उसके आधारपर यह तारीख दी गई है।

१६०. तार : बलवन्तराय देसाईको

[२० सितम्बर, १९३२][1]

बलवन्तराय देसाई वकील
पैलेस रोड
बड़ौदा

अखबारोंको दिये गये मेरे वक्तव्यमें[2] शायद तुम्हें अपने प्रश्नोंका उत्तर मिल जायेगा।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०-९।

१६१. तार : रमणीकलाल देसाईको

[२० सितम्बर, १९३२][3]

रमणीकलाल देसाई
गोकुलदास तेजपालका अहाता
विले पार्ले
बम्बई

कृपया भावी घटनाओंकी प्रतीक्षा कीजिए।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०-९।

१. साधन-सूत्रमें इस शीर्षकको जिस स्थानपर रखा गया है, उसके आधारपर यह तारीख दी गई है।
२. देखिए "वक्तव्य: समाचार-पत्रोंको", १६-९-१९३२।
३. "दैनन्दिनी, १९३२" के अनुसार।

१६२. तार : जमनादास द्वारकादासको

[२० सितम्बर, १९३२][1]

जमनादास द्वारकादास
वलकेश्वर रोड
बम्बई

आपको और आपके परिवारको हम सबकी संवेदनाएँ। स्नेह।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०-९।

१६३. तार : डाह्याभाई जिनवालाको

[२० सितम्बर, १९३२][2]

डाह्याभाई जिनवाला
मार्फत सर्वइंडिया
बम्बई

धन्यवाद। नहीं जानता कि भविष्यके गर्भमें क्या है।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०-९।

१. साधन-सूत्रमें इस शीर्षकको जिस स्थानपर रखा गया है उसके आधारपर यह तारीख दी गई है।
२. "दैनन्दिनी, १९३२" से।

१६४. तार : हरिबख्श सिंहको

[२० सितम्बर, १९३२][1]

हरिबख्श सिंह
मार्फत रोज
सियालकोट

सहानुभूतिमें उपवास करना गलत होगा किन्तु अस्पृश्यताके अभिशापको निश्चिह्न करनेके लिए आप जो भी कर सकते हों अवश्य करें।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०-९।

१६५. तार : ए० जे० दूदामती जक्कीलीको

[२० सितम्बर, १९३२][2]

ए० जे० दूदामती जक्कीली
कर्नाटक-बन्धु कार्यालय
गदग

तुम जो कर रहे हो वह अच्छा है किन्तु ठोस सेवाकार्य और भी अच्छा रहेगा।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०-९।

१ व २. साधन-सूत्रमें इस शीर्षकको जिस स्थानपर रखा गया है, उसके आधारपर यह तारीख दी गई है।

१६८. तार : ताइपिंग, पेराकके भारतीयोंको

[२० सितम्बर, १९३२][1]

भारतीय
ताइपिंग
पेराक

भगवान्‌की इच्छा पूरी होने दीजिए।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०-९।

१६९. तार : डॉ० विधानचन्द्र रायको

[२० सितम्बर, १९३२][2]

डॉ० विधान राय
३६, विलिंगटन स्ट्रीट
कलकत्ता

कृपया उर्मिलादेवीसे कहिए कि तुम्हारा हृदयद्रावक तार मिला ही नहीं। जिन पत्रोंका तुमने उल्लेख किया है उनमें से कुछको मैंने निराशाकी मन:स्थितिमें लिखा था। उत्तर नहीं मिला। अवश्य लिखो। मैं जानता हूँ कि इस व्यथा को तुम बहादुरीसे सहोगे। महादेव भी मेरे साथ तुम्हें अपना स्नेह भेजता है।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०-९।

१. "दैनन्दिनी, १९३२" से।
२. साधन-सूत्रमें यह शीर्षक जिस स्थानपर रखा गया है, उसके आधारपर यह तारीख दी गई है

१७०. तार : अम्बालाल साराभाईको

[२० सितम्बर, १९३२][1]

सेठ अम्बालाल साराभाई
शाहीबाग
अहमदाबाद

बेशक तुम्हारा घर मेरी विश्रामस्थली है। जानता नहीं क्या होगा।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०-९।

१७१. तार : अम्बालाल साराभाईको

[२० सितम्बर, १९३२][2]

अम्बालाल साराभाई
शाहीबाग
अहमदाबाद

सुना कि भारती घोड़ेसे गिर पड़ी थी। तारसे सूचित करो कि कैसी हालत है। तुम सब जब चाहो मुझसे मिल सकते हो। स्नेह।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०-९।

१. "दैनन्दिनी, १९३२" से।
२. साधन-सूत्रमें यह तार जिस स्थानपर रखा गया है, उसके आधारपर यह तारीख दी गई है।

१७२. एक तार

[२० सितम्बर, १९३२][१]

मेहद[२]
मार्फत भद्रजी ध्रु महाराज मैंशन्स
सैंडहर्स्ट रोड
बम्बई

सहायताके [प्रस्तावके] लिए धन्यवाद। आप देखते ही हैं अब चिन्ताकी कोई बात नहीं रही।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०-९।

१७३. तार: रवीन्द्रनाथ ठाकुरको[३]

२० सितम्बर, १९३२

गुरुदेव
शान्तिनिकेतन

ईश्वरकी कृपाका परिचय मुझे सदा मिलता रहा है। आज प्रातः ही बहुत सवेरे[४] मैंने यह लिखा था कि यदि आप इस कार्यका अनु-

१. साधन-सूत्रके अनुसार यह शीर्षक जहाँ रखा गया है उसके आधारपर यह तारीख दी गई है।

२. मूलके अनुसार।

३. यह रवीन्द्रनाथ ठाकुरके १९ सितम्बर, १९३२ के तारके उत्तरमें था, जिसमें कहा गया था: "भारतकी एकता और सामाजिक अखण्डताके लिए अमूल्य जीवनका बलिदान उचित है। यद्यपि हम पहलेसे यह नहीं जान सकते कि हमारे शासकोंपर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा, क्योंकि हो सकता है वे हमारे लोगोंके लिए इसके भारी महत्त्वको न समझते हों — पर हमें विश्वास है कि हमारे अपने देशवासियोंके अन्तःकरणको आत्माहुतिका इस तरहका सर्वोच्च आह्वान छुए बिना नहीं रहेगा। मुझे पूर्ण आशा है कि हम ऐसे हृदयहीन नहीं हैं कि इस तरहकी राष्ट्रीय विपत्तिको उसकी चरम सीमातक पहुँच जाने दें। हमारे दुःखी हृदय आपकी महान् तपस्याको श्रद्धा और प्रेमसे निहारते रहेंगे।"

४. देखिए "पत्र: रवीन्द्रनाथ ठाकुरको", २०-९-१९३२।

मोदन कर सकें तो अपना आशीर्वाद दें, और लीजिए अभी-अभी प्राप्त आपके सन्देशमें वह मुझे भरपूर मिल गया। धन्यवाद।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
विश्वभारती न्यूज, पृ० २५

१७४. तार : मथुरादास त्रिकमजीको

२० सितम्बर, १९३२

मथुरादास त्रिकमजी
कैदी, 'ब' श्रेणी
बेलगाँव जेल

तुम्हें बहादुर बनना चाहिए। 'पैरोल' पर छूटनेकी कोशिश मत करना। जहाँ दिल मिले हुए हों वहाँ रूबरू मिलनेकी क्या जरूरत? ईश्वरकी जैसी इच्छा हो वैसा होने दो। स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, गृह विभाग, आई० जी० पी० फाइल नं० २०-९।

१७५. पुरजा : एम० जी० भण्डारीको

२० सितम्बर, १९३२

प्रिय मेजर भण्डारी,

आपके पुर्जेके लिए धन्यवाद। मेरा खयाल है कि यदि आप बुरा न मानें तो मुझे 'रायटर'के प्रतिनिधिसे अब मिल लेना चाहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५१२५)से।

१७६. पत्र : जी० के० देवधरको

२० सितम्बर, १९३२

प्रिय देवधर,

बेशक सोसाइटीका घर मेरा घर है।[१] मैं स्वेच्छासे ही निर्वासित रहा हूँ। ईश्वरकी जब इच्छा होगी वह मुझे वापस घर भेज देगा।

उपवास कहाँ शुरू होगा इसका मुझे जरा भी खयाल नहीं है। यह अद्भुत परीक्षा है। पर मैं इसी सबके लायक हूँ, क्योंकि मेरा मन हिन्दूका ही मन है। अस्पृश्योंके प्रति अपने व्यवहारके लिए क्या हमें ईश्वरकी ओरसे भयंकरसे-भयंकर सजा नहीं मिलनी चाहिए? इसलिए मुझे अस्पृश्योंकी बिरादरीमें शामिल करनेसे पहले वह मेरी पूरी तरह परीक्षा कर रहा है। मेरा यह प्रयास पिछले पचास वर्षोंसे चल रहा है। साथका पत्र[२] कृपया शास्त्रीजी को भेज दें।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ५७-८

१७७. पत्र : पी० एन० राजभोजको

२० सितम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मुझे कल ही, जब मैं मिलनेके लिए आये कुछ मित्रोंसे बातें कर रहा था, मिला। अब मैं सबसे पहला मौका मिलते ही उसका जवाब दे रहा हूँ। आपके पत्रके लिए धन्यवाद।

मेरी स्थिति यह है: मेरे उपवासका सम्बन्ध केवल पृथक निर्वाचक-मण्डलकी व्यवस्थासे है। जैसे ही वह वापस ले लिया जायेगा, व्रतके शब्दार्थकी पूर्ति हो जायेगी और मुझे उपवास तोड़ना होगा। पर तब मुझपर पृथक् निर्वाचक-मण्डलसे बेहद अच्छा एक विकल्प रखनेकी भारी जिम्मेदारी आ जायेगी।

यदि आपको मेरी बात बुरी न लगे तो मैं यह कहना चाहूँगा कि जहाँ मैं जन्मसे 'स्पृश्य' हूँ, वहाँ स्वेच्छासे 'अस्पृश्य' हूँ। इसी दुहरी हैसियतसे मैंने सर सैम्युअल होरको और फिर प्रधान मन्त्रीको लिखा था। इसी दुहरी हैसियतने मुझे

१. श्री देवधरने गांधीजीको उपवासके दौरान पूनामें सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटीके भवनमें रहनेके लिए आमन्त्रित किया था।

२. देखिए "पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको", २०-९-१९३२।

उपवासके लिए मजबूर किया। इस मामलेको इस रोशनीमें देखते हुए, मैं यह कहता हूँ कि कानूनी आरक्षणका विचार मुझे प्रिय नहीं है। यद्यपि इसपर वही आपत्ति नहीं है जो पृथक् निर्वाचक-मण्डलपर है, पर मुझे इसमें जरा भी सन्देह नहीं है कि इससे पीड़ित वर्गोंका स्वाभाविक विकास रुकेगा और पीड़कोंकी ओरसे पीड़ितोंको, क्षतिपूर्तिके रूपमें, जो सम्मानपूर्ण सुविधाएँ दी जानी चाहिए उनके लिए कोई प्रेरणा नहीं रह जायेगी। मैं जिस चीजकी कोशिश कर रहा हूँ वह दोनोंका हार्दिक मेल है, पीड़कोंको पश्चात्ताप और क्षतिपूर्तिका सबसे बड़ा अवसर प्रदान करना है। मुझे यकीन है कि यह समय उनके हृदय-परिवर्तनके लिए उपयुक्त है। इसलिए मैं इस बातका समर्थन करूँगा कि दलितोंको यथासम्भव अधिकसे-अधिक व्यापक मताधिकार हों और दोनों समुदायोंके बीच पीड़ितोंके प्रतिनिधियोंके उपयुक्त चुनावके लिए एक परम्परा स्थापित हो जाये। मैंने आजमाइशके लिए एक योजनाका मसविदा मोटे तौरपर तैयार किया है, वह मैंने मित्रोंको दिया है और कल अपने पुत्र देवदासको पूरी तरह समझाया है। परन्तु जो सुधार मैं चाहता हूँ यह मेरे लिए उसका अधिकतम नहीं बल्कि न्यूनतम भाग है।

जबतक अस्पृश्यताका नामो-निशान नहीं मिटता, मैं किसी भी तरह सन्तुष्ट नहीं हूँगा। इसलिए मैं इस आशयकी एक कानूनी घोषणापर जोर दूँगा कि सभी सार्वजनिक पूजा-स्थान, कुएँ, स्कूल आदि पीड़ितोंके लिए बिलकुल उन्हीं शर्तोंपर खुले होने चाहिए जो पीड़कोंके लिए हैं। मोटे तौरपर मेरा विचार यह है। परन्तु यदि पीड़ित वर्गोंके प्रतिनिधि मेरे विचारपर ध्यान न दें, तो उन्हें 'सीटों' का कानूनी आरक्षण प्राप्त करनेकी स्वतन्त्रता होगी। मैं उसके विरुद्ध उपवास नहीं करूँगा, पर आप मुझसे इस तरहकी किसी योजनाके लिए आशीर्वादकी अपेक्षा न करें। सरकारसे उसकी स्वीकृतिके लिए मेरा आशीर्वाद आवश्यक भी नहीं है। यदि मुझे मौका मिला तो मैं निश्चय ही पीड़ितोंमें कानूनी आरक्षणके विरुद्ध जनमत पैदा करनेकी कोशिश करूँगा।

यदि मेरी स्थिति आपको स्पष्ट या सन्तोषजनक न लगे तो आप और आपके मित्र आर० बी० राजा और डॉ० अम्बेडकर सहित पहलेसे समय निश्चित करके, मुझसे मिल सकते हैं। मुझे इससे प्रसन्नता होगी। जैसा कि आपको विदित है, यह चीज केवल अभी सम्भव हुई है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७८३) से। **ऐपिक फास्ट**, पृ० १६८-९ से भी

१७८. पत्र : विट्ठल आर० शिन्देको[1]

२० सितम्बर, १९३२

आपका मर्मस्पर्शी पत्र मिला। मुझे इसका जरा भी आभास नहीं है कि मेरा क्या किया जायेगा। इसलिए अभी कुछ भी कहना सम्भव नहीं है। मैं निश्चय ही यहाँ १२ बजे उपवास शुरू कर रहा हूँ। कहाँ, कब और कैसे उसका अन्त होगा, यह केवल ईश्वर ही जानता है। खैर, आपकी सहानुभूति और आमन्त्रणके लिए धन्यवाद।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ५८

१७९. पत्र : द० बा० कालेलकरको

२० सितम्बर, १९३२

चि० काका,

तुम्हारा पत्र मिला। कल १९-९ . . .।[2] जिस तरह कताई बन्द करके तुम आराम करते हो उसी प्रकार यदि पढ़ाई-लिखाई छोड़कर भी आराम करो तो इसमें कोई बुराई नहीं है। तुम घूमना-फिरना बन्द नहीं कर सकते, यह हम यरवडाके अपने पिछले अनुभवसे जानते हैं। खूब चलना-फिरना। कसरत करते, खाते-पीते, आराम करते हुए जितना पढ़ा-लिखा जा सके उतना लिखना-पढ़ना। [सर जेम्स] जीन्स कृत जो तीन पुस्तकें मेरे पास हैं, वे मैं भेज रहा हूँ। मुझे वे बहुत अच्छी लगीं। किन्तु देखता हूँ कि उनके विचारोंका विरोध करनेवाले लोग भी हैं। उक्त पुस्तकें मुझे तो दो-तीन बार पढ़नी चाहिए। उनमें बहुत-सी चीजें ऐसी हैं जो मुझे स्पष्ट नहीं हो पाईं। फिर भी अब तो इन्हें पढ़नेमें मुझे आनन्द आता है। तुम जो गेलीलियो आदिको ऋषिकी संज्ञा देते हो सो एक प्रकारसे गलत नहीं है। 'एक प्रकारसे' कहनेका तात्पर्य यह है कि ऋषिगण अपनी अन्तर्दृष्टिसे काम लेते थे। और जो इस दृष्टिसे काम ले उसका नाम ही यह शब्द विशेष है। ऐसा कहनेसे गेलीलियो आदिकी तनिक भी निन्दा नहीं होती। किन्तु यह ध्यानमें रखना आवश्यक लगता है कि दोनोंके क्षेत्र अलग-अलग हैं। अतः यदि और कोई नाम खोज सको तो खोजना।

१. श्री शिन्देने गांधीजी को अहल्या आश्रममें आमन्त्रित किया था।

२. जेलके अधिकारियोंने एक वाक्यपर स्याही फेर दी है।

मेरी अग्नि-परीक्षाके बारेमें तो तुमने सुना ही होगा।[१] सुनकर तुम्हें खूब हर्ष हुआ होगा। दुःखका तो कोई कारण ही नहीं हो सकता। जिस प्रकार जन्म और मरण एक ही हैं उसी प्रकार अनशन और अशन दोनों एक हैं।[२] पर यदि कोई साथी केवल धर्म-पालनके लिए देह छोड़े तो वह शोकका कारण हो ही नहीं सकता। ऐसा अवसर किसी-किसीको कभी-कभी ही मिलता है। उसे तो उसका स्वागत ही करना चाहिए। अतः तुम व्याकुल न होकर अधिक जाग्रत, और अधिक कर्त्तव्यपरायण बनना। शरीरको अधिक स्वस्थ बनाकर बाहर निकलना। बहुत-सी आहुतियाँ देने पर ही अस्पृश्यता-रूपी मैल धुलेगा।

हम सब आनन्दमें हैं।

शंकर[३] ठीक है। मैं उससे मिला था।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४८९) से; सौजन्य: द० बा० कालेलकर

१८०. पत्र : केदारनाथ कुलकर्णीको

२० सितम्बर, १९३२

मैं तुम्हारे पत्रकी राह देख ही रहा था। कल रातको ही मिला। तुम्हारे साथ चर्चा हो सकती तो अच्छा लगता। उपवासके दौरान भी यदि मुझे उपवास करना अधर्म जान पड़ेगा तो मैं निःसंकोच उसी क्षण उसे छोड़ दूँगा। इस संसारमें मुझे एक ही बातका संकोच है: असत्य बात विचारने, बोलने या आचरण करनेका।

यह काम बुद्धिसे नहीं हुआ, अन्तर्नादसे हुआ है। मगर बुद्धिने यों कहा: 'अस्पृश्यताके मैलको धोनेके लिए शायद तुम्हारे-जैसे सैकड़ोंको मरना पड़े।' अनशन हिन्दू धर्ममें बहुप्रचलित है। मुझे वह हमेशा प्रिय रहा है। यह तो अन्तर्नाद है। प्रधान मन्त्रीका प्रस्ताव तो निमित्त-मात्र है। वह सहज ही अनशनका मुहूर्त बन गया। अनशनका हेतु केवल निर्णय बदलवाना नहीं, परन्तु बदलवाने के उस प्रयत्नसे जो जागृति और शुद्धि उत्पन्न होनी चाहिए, उसे पैदा करना है। मतलब यह है कि अस्पृश्यताकी जड़को हिलानेका यह अवसर था।

यह सही है कि वांछित परिणाम निकल आनेसे ही यह कदम धर्म-संगत है, ऐसा निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। यह निश्चय तो सबको अपने-अपने लिए करना होगा; और अगर हममें ऐसा करनेकी शक्ति न हो तो गुरुजनोंकी राय माननी चाहिए। इतना ही नहीं कि मुझे यह कदम धर्म-संगत लगता है, मुझे तो

१ व २. इन वाक्योंपर भी जेल-अधिकारियोंने स्याही फेर दी थी, अतः ये **महादेवभाईनी डायरी** भाग-२, पृष्ठ ६१ से लिये गये हैं।

३. सतीश कालेलकर, द० बा० कालेलकरके पुत्र।

यह कर्त्तव्य — आवश्यक — मालूम होता है। मेरी बातपर विचार करके मुझे फिर लिखना। मेरी ओरसे निराश न होना। आशा है, तुम्हारा एक्जीमा ठीक हो गया होगा।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ६०

१८१. पत्र : जयशंकर पी० त्रिवेदीको

२० सितम्बर, १९३२

आपकी प्रेमपूर्ण पंक्तियाँ मिलीं। आपके प्रेमको मैं जानता हूँ। ईश्वर कोई आकाशमें नहीं रहता। मेरे लिए ऐसा निर्मल प्रेम ईश्वर-रूप है और वही मुझसे ऐसे यज्ञ करवाता है।

[गजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ६२

१८२. पत्र : नारणदास गांधीको

शामके ४-४५ बजे, २० सितम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारा पैकेट मिला। जो हुक्म निकला है, वह तो देखा ही होगा। अभी तो ऐसा मालूम होता है कि हम जहाँ थे वहीं हैं। आज तो यही स्थिति है, कलकी राम जाने। इसलिए अभी तो तुम चाहो तो रोज लिख सकते हो। यहाँसे तो रोज डाक निकलेगी ही। लेकिन मेरे पत्रकी बहुत आशा न करना। जितनी बने उतनी शक्ति संचित करना चाहता हूँ। और काम तो अच्छे-खासे परिमाणमें रहेंगे ही। किसीको मिलने आनेकी इच्छा हो तो आ सकता है। लेकिन मिलने आनेका बहुत लोभ न रखना चाहिए। अनसूयाबहन, शंकरलाल और रमासे यह कह देना। सरलादेवीको भी खबर देना। लेकिन मेरी सलाह यह है कि जिससे आये बिना रहा ही न जाये, वही आये। सब लोग जितनी बने उतनी अन्त्यज-सेवा करें।

दूसरे जो पत्र हैं, उनमें से किसीका जवाब देते बना तो दूँगा। न दिया जाये तो समझें कि दूसरे काम होनेके कारण नहीं दे सका।

आज सवेरे प्रार्थनामें "वैष्णव जन" वाला भजन गाया गया था। ६-३० से ८ बजेतक महादेवने 'गीता'का पारायण किया। वल्लभभाई और महादेवने आज-भरके लिए उपवास रखा है। दोपहरको अनशन प्रारम्भ होते समय रेहानाबहनवाला यह भजन गाया गया :

उठ जाग मुसाफिर भोर भई,
अब रैन कहाँ जो सोवत है।
जो सोवत है वह खोवत है,
जो जागत है सो पावत है।

वहाँ यह भजन मिल जाये तो पण्डितजी सुनायें। न हो तो यहाँसे भेज दूँगा।

कुसुमको लेकर थोड़ी चिन्ता होती है। वह पूरा विश्राम लेती है न? इसके लिए वह भले ही चरखा भी छोड़ रखे।

मेरी कलवाली भारी-भरकम डाक तो मिली ही होगी। आज इतना ही। हाँ, कल पुँजाभाईको पत्र लिख ही नहीं पाया। आज एक छोटा-सा पुरजा साथमें भेज रहा हूँ।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिलम (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२५३ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१८३. भेंट : समाचार-पत्रोंके प्रतिनिधियोंको[1]

२० सितम्बर, १९३२

नौ महीनोंमें पहली बार, आज शाम ५-३० बजे पत्रकारोंको यरवडा जेलमें महात्मा गांधीसे मिलनेकी इजाजत दी गई। गांधीजी ने अपनी बात जिस सहज-स्वाभाविक ढंगसे कही और उनके विचारोंमें जो चिन्तनकी गहराई थी, उसकी दृष्टिसे यह एक विरल भेंट-वार्ता थी और संवाददाताओंको उसमें उपस्थित रहकर कृतार्थताका अनुभव हुआ। 'आमरण उपवास' आरम्भ होनेके पाँच घंटे बाद, आज महात्मा गांधीसे मिलकर और उनके साथ सारी स्थितिपर विचार-विमर्श करके कोई भी पत्रकार ऐसा न था जो बेहद प्रभावित न हुआ हो . . .

उनसे जब यह पूछा गया कि क्या उन्हें इस प्रकरणके सुखद अन्तकी आशा है तो उन्होंने कहा :

मैं अदम्य आशावादी हूँ। ईश्वरने ही मुझे त्याग दिया हो तो बात दूसरी है, नहीं तो मुझे आशा है कि यह उपवास मरण पर्यन्त नहीं चलेगा।

महात्मा गांधीने बताया कि उन्हें लोगोंके बहुत-से ऐसे तार मिले हैं जिनमें उन्होंने सहानुभूतिमें उपवास करनेका निश्चय किया है या वे उपवास करना चाहते हैं।

प्रत्येक व्यक्तिसे मेरा यह आग्रह है कि वह सहानुभूतिमें उपवास न करे। मैंने यह ईश्वरके आदेशपर शुरू किया है। इसलिए जबतक उन लोगोंको वैसा ही निश्चित

१. भेंटकी यह रिपोर्ट पहले **टाइम्स ऑफ इंडिया**, २१-९-१९३२ में छपी थी।

आदेश न मिले, उनके उपवास करनेका कोई कारण नहीं है। आत्मशुद्धिके लिए या इस ध्येयके साथ एकता दिखानेके लिए एक दिनका उपवास ठीक है; पर बस इतना ही काफी है। इस तरहका उपवास विशेषाधिकार और कर्त्तव्य, दोनों है, और विशेषाधिकार केवल उन्हींको प्राप्त होता है जिन्होंने उसके लिए आवश्यक साधनाकी हो।

बातका रुख तब आजके मुख्य प्रश्न दलित वर्गों, या जैसा कि महात्मा गांधी उन्हें कहते हैं, पीड़ित वर्गोंके प्रतिनिधित्वकी ओर मुड़ गया।

सबसे पहले उन्होंने इस बातपर आश्चर्य प्रकट किया कि बम्बई सरकारको जो वक्तव्य दिया गया था, वह अभीतक प्रकाशित नहीं किया गया है। वह पाँच दिन पहले भेजा गया था। अगर वह उन्हें आज फिर लिखना पड़े तो तबसे हुई घटनाओंके प्रकाशमें वह कुछ और ही होगा। और भेंटके अन्तमें उन्होंने कहा कि उनका नया वक्तव्य उस वक्तव्यका पूरक है, पर उसपर आधारित नहीं। वे बोले :

मेरी स्थिति तो स्पष्ट ही है, पर जहाँतक इस विषयका सम्बन्ध है, मैं जेलके सीखचोंके भीतरसे कुछ कह नहीं सकता था। अब क्योंकि प्रतिबन्ध हटा दिये गये हैं, इसलिए समाचार-पत्रोंका पहला ही अनुरोध मैंने स्वीकार कर लिया है। मेरा उपवास केवल पृथक् निर्वाचक-मण्डलके विरुद्ध है, कानून द्वारा सीटोंके आरक्षणके विरुद्ध नहीं है। यह कहना कि मैं कानून द्वारा सीटोंके आरक्षणका अडिग विरोध कर उनके ध्येयको नुकसान पहुँचा रहा हूँ, आंशिक रूपसे ही सच है। मैं इसके विरुद्ध था और अब भी हूँ, पर कानून द्वारा सीटोंके आरक्षणकी कोई योजना स्वीकृति या अस्वीकृतिके लिए मेरे आगे कभी नहीं रखी गई। इसलिए उस मुद्देपर मेरे लिए कोई फैसला करनेका सवाल ही नहीं उठता। मैंने जब उस मुद्देपर अपने विचार स्थिर किये तो निश्चय ही मैंने निराशा प्रकट की। मेरी विनम्र रायमें इस तरहके कानूनी आरक्षणसे लाभकी बजाय उलटे इस अर्थमें हानि हो सकती है कि इससे स्वाभाविक विकासकी क्रिया रुक जायेगी। कानूनी आरक्षण वैसा ही है जैसे आदमीके लिए सहारा। इस तरहके सहारेपर देरतक निर्भर रहनेसे वह अपनेको दुर्बल कर लेता है।

अगर लोग मुझपर हँसें नहीं तो मैं नम्रतापूर्वक अपना यह दावा रखूंगा और इसपर मैं हमेशा जोर देता आया हूँ कि मैं जन्मसे 'स्पृश्य' हूँ, पर स्वेच्छासे 'अस्पृश्य' हूँ। और मेरी कोशिश अस्पृश्योंमें भी ऊपरकी दस जातियोंका प्रतिनिधि बननेकी नहीं रही है — अस्पृश्योंके लिए यह एक शर्मकी बात है कि उनमें भी जातियाँ और वर्ग हैं — मेरी महत्त्वाकांक्षा तो, यथासम्भव अस्पृश्योंके सबसे निचले स्तरका, उनका प्रतिनिधि बननेकी रही है जिन्हें 'अदर्शनीय' कहा जाता है, जिन्हें पास नहीं आने दिया जाता। मैं तो उनके साथ उन्हींमें से एक होकर रहना चाहता हूँ। मैं चाहे कहीं भी जाऊँ, वे सदा मेरी मनकी आँखोंके आगे रहते हैं, क्योंकि जहरका प्याला उन्हें पूरा पीना पड़ा है। मैं उनसे मलाबारमें मिला हूँ और उड़ीसामें मिला हूँ। और मुझे इस बातका विश्वास हो गया है कि यदि कभी

उनका उत्थान होगा तो वह सीटोंके आरक्षणसे नहीं बल्कि हिन्दू सुधारकोंके उनके बीच जी-तोड़ काम करनेसे होगा। मुझे लगता है कि यह अलगाव सुधारकी सारी सम्भावनाको खत्म कर देगा, इसीलिए मेरी समूची आत्माने इसके खिलाफ विद्रोह किया है। मैं यह बात स्पष्ट कर दूँ कि पृथक् निर्वाचक-मण्डलोंको वापस लेनेसे मेरे प्रणका शब्दार्थ पूरा हो जायेगा, पर उसके पीछे जो भावना है उसकी पूर्ति नहीं होगी। मैंने तो अपने लिए स्वेच्छासे अस्पृश्यताका वरण किया है और अपनी इस हैसियतसे, मुझे 'स्पृश्यों' और अस्पृश्योंके किसी कामचलाऊ समझौतेसे सन्तोष नहीं होगा।

मैं जिस चीजके लिए जी रहा हूँ, और जिसके लिए मरनेमें भी मुझे खुशी होगी, वह तो अस्पृश्यताको जड़-मूलसे खत्म करना है। इसलिए मैं एक सजीव समझौता चाहता हूँ, जिसका जीवनदायी प्रभाव सुदूर भविष्यमें नहीं बल्कि आज ही महसूस होना चाहिए। उस समझौतेकी पुष्टि 'स्पृश्यों' और अस्पृश्योंके मिलनके अखिल भारतीय प्रदर्शनसे होनी चाहिए, और वह कोई नाटकीय प्रदर्शन नहीं बल्कि भाइयोंका सच्चा मिलन होना चाहिए। अपने जीवनके पिछले पचास वर्षोंके इसी स्वप्नको पूरा करनेके लिए मैंने आज अग्नि-द्वारमें प्रवेश किया है। ब्रिटिश सरकारका फैसला मेरी सहिष्णुताकी सीमाको पार कर गया। वह निर्णायक लक्षण था, और इस तरहके मामलोंमें मैं चिकित्सककी जिस अचूक नजरका दावा करता हूँ उससे मैंने उस लक्षणको पहचान लिया। अतः, पृथक् निर्वाचक-मण्डलोंकी समाप्ति मेरे लिए अभीष्टकी प्राप्तिका केवल आरम्भ ही होगा, और मैं बम्बईमें इकट्ठे हुए और अन्य सभी नेताओंको सावधान करना चाहूँगा कि वे जल्दबाजीमें कोई निर्णय न करें।

अपने जीवनको मैं कोई महत्त्व नहीं देता। हिन्दुओंने अपने ही धर्मके असहाय नर-नारियोंके साथ लगातार जो नृशंस अनाचार किये हैं, उसके प्रायश्चित्तमें यदि इस महान् ध्येयके लिए सौ जीवन भी बलिदान कर दिये जायें तो वे भी काफी नहीं होंगे। इसलिए मैं उनसे यह आग्रह करूँगा कि वे पूर्ण न्यायके पथसे तिल-भर भी विचलित न हों। अपने उपवासको मैं न्यायके पलड़ेपर रखना चाहता हूँ। यदि यह सवर्ण हिन्दुओंको उनकी तन्द्रासे जगा देता है, और यदि उनमें अपने कर्त्तव्यकी चेतना पैदा हो जाती है तो इसका उद्देश्य पूरा हो जायेगा। लेकिन यदि मेरे प्रति अन्ध प्रेमके कारण वे पृथक् निर्वाचक-मण्डलकी व्यवस्थाको रद्द करवानेके खयालसे जैसे-तैसे कोई उलटा-सीधा और गढ़ा-गढ़ाया समझौता कर लेते हैं, और फिर सो जाते हैं तो वे भयंकर भूल करेंगे और मेरे जीवनको दुःखसे भर देंगे। पृथक् निर्वाचक-मण्डलके रद्द हो जानेसे मैं उपवास तो तोड़ दूंगा, पर जिस सजीव समझौतेके लिए मैं प्रयत्नशील हूँ वह यदि नहीं हुआ तो वह मेरे लिए जीते-जी मौतकी स्थिति होगी। उसका अर्थ केवल यह होगा कि उपवास तोड़ते ही मुझे प्रणकी भावनाको सोलहों आने प्राप्त करनेके लिए, एक और उपवासकी सूचना देनी होगी।

यह चीज दूसरेको बचकानी लग सकती है, पर मुझे नहीं लगती। इस अभिशापको खत्म करनेके लिए यदि मेरे पास कुछ और होता तो मैं वह भी दे देता। पर अपने जीवनसे अधिक मेरे पास कुछ है ही नहीं।

मेरा यह विश्वास है कि यदि अस्पृश्यता जड़से खत्म हो जाये तो इससे न केवल हिन्दू धर्मका एक भयानक कलंक दूर हो जायेगा, बल्कि इसका प्रभाव विश्व-व्यापी होगा। अस्पृश्यताके खिलाफ मेरी लड़ाई पूरे मानव-समाजमें पैठे हुए एक दूषणके खिलाफ है। इसलिए जब मैंने सर सैम्युअल होरको अपना पत्र[1] लिखा तो मुझे पूरा विश्वास था कि यदि मैंने यह कार्य ऐसे हृदयसे शुरू किया है जो अशुद्धिसे, हर तरहके द्वेष और क्रोधसे उस सीमातक मुक्त है जो एक मानव-प्राणीके लिए सम्भव है तो मानवकुलके सर्वोत्तम तत्त्व मेरी सहायताको आ जायेंगे। इस तरह आप देखेंगे कि मेरा उपवास सर्वप्रथम हिन्दू समाजमें आस्था, मानव-स्वभावमें आस्था और अधिकारी-वर्गतकमें आस्थाके ध्येयपर आधारित है।

अस्पृश्यताके खिलाफ अपने इस संघर्षमें मैं समस्याकी तहतक जा पहुँचा हूँ, और इसलिए मैं कहता हूँ कि प्रश्न चिरन्तन महत्त्वका — किसी राजनीतिक संविधानके चौखटे में जड़कर दिये जा सकनेवाले स्वराज्यसे बहुत अधिक महत्त्वका — है; और मैं तो यह कहूँगा कि स्वराज्यका जो संविधान आवश्यक नैतिक आधारपर खड़ा न हो — करोड़ों पददलित लोगोंके मनमें जगी इस आशाको साकार करनेकी सम्भावनासे आपूरित न हो कि उनके सिर पड़ा हुआ बोझ अब उतरनेवाला है — वह संविधान भी एक दुर्वह भार ही साबित होगा। अंग्रेज अधिकारी चित्रके इस सजीव पहलूको देख ही नहीं सकते। इसीलिए अपने अज्ञान और आत्म-सन्तोषमें वे ऐसे प्रश्नोंपर अपना फैसला देनेकी हिम्मत कर रहे हैं जो करोड़ों लोगोंके मूल अस्तित्वको प्रभावित करते हैं — मेरा आशय यहाँ सवर्ण हिन्दुओं और अस्पृश्यों, अर्थात्, पीड़कों और पीड़ितों दोनोंसे है, अधिकारी-वर्गको उसके इस घोर अज्ञानसे — इस तरहके शब्दका प्रयोग यदि मैं आघात पहुँचानेका दोषी हुए बिना कर सकूँ तो — जगानेके लिए भी मेरे अन्तःकरणने मुझे पूरी शक्तिसे प्रतिरोध करनेको प्रेरित किया है।

उन्होंने बताया कि आपत्कालीन समितिका जो प्रतिनिधि-मण्डल कल उनसे मिला था उसके आगे उन्होंने सुनिश्चित सुझाव रखे थे और उनका यह खयाल है कि आज बम्बईमें समाचार-पत्रोंको उनकी सूचना दे दी गई होगी।

क्या उनका एक फोटो लिया जा सकता है, यह पूछनेपर महात्मा गांधीने मजाकमें अपने अन्तिम संस्कारकी बात कही। इसपर मैंने उनसे पूछा कि यदि कहीं ऐसा अनिष्ट हो जाये तो अन्तिम संस्कारकी तैयारियोंके बारेमें क्या उन्होंने कल अपने पुत्र देवदाससे अपनी भेंटमें कुछ कहा है। इसका उन्होंने यह विलक्षण उत्तर दिया :

मैंने अपने पुत्रसे कहा है कि वह बम्बईके सम्मेलनमें यह कह दे कि आवेशपूर्ण जल्दबाजीमें दलित वर्गोंको कोई क्षति होने देनेके बजाय, वह, अपने पिताका पुत्र होनेके नाते, अपने पिताके जीवनका बलिदान होने देनेको तैयार है।

उनका उपवास कबतक चल सकता है, इस बारेमें वस्तुतः वे क्या सोचते हैं? उनका उत्तर था :

१. देखिए खण्ड ४९, पृ० १८१-४।

जीनेकी मुझे भी उतनी ही इच्छा है जितनी कि औरोंको होती है। जलमें जीवनको कायम रखनेकी असीम क्षमता है, और मुझे उसकी जब भी जरूरत महसूस होगी मैं उसे लूँगा। आप मुझपर इतना विश्वास रखिए कि मैं अपने-आपको जीवित रखनेका अधिकसे-अधिक प्रयत्न करूँगा, ताकि हिन्दू चेतना और ब्रिटिश चेतना भी जाग्रत हो जाये और इस वेदनाका अन्त हो। मेरी पुकार सर्वशक्तिमान् ईश्वरके सिंहासनतक पहुँचेगी।

[अंग्रेजीसे]

एपिक फास्ट, पृष्ठ ११८-२३

१८४. तार: हे० सॉ० लि० पोलकको[1]

[२१ सितम्बर, १९३२][2]

कैलोफ[3]
इस्ट्रैन्ड
लन्दन

उपवास और उससे सम्बन्धित मामलोंपर अपनी स्थिति स्पष्ट करते हुए पन्द्रह तारीखको सरकारको एक खुला वक्तव्य[4] भेजा था और प्रार्थना की थी कि वह प्रकाशित कर दिया जाये। मुझे बताया गया है कि वह अब प्रकाशित किया जायेगा।[5] सप्रेम।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८५३४) से। बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल सं० २०-९ से भी

१. यह श्री पोलकके २० सितम्बरके तारके उत्तरमें था, जो इस प्रकार था: "**टाइम्सके** संवाद-दाताकी रिपोर्ट है कि आपने शिकायत की है कि अपनी शर्तें बताते हुए जो प्रलेख आपने सरकारको दिया था वह सरकारने प्रकाशित नहीं किया है। क्या इसका सम्बन्ध दलित वर्गोंके प्रश्नसे है? इंडिया ऑफिससे यह सूचना मिली है कि उन्हें उस प्रलेखकी कोई जानकारी नहीं है।"

२. "दैनन्दिनी, १९३२" से।

३. श्री पोलकका तारका पता।

४. देखिए "पत्र: एम० जी० भण्डारीको", १९-६-१९३२।

५. यह २१ सितम्बर, १९३२ के **हिन्दूमें** छपा था।

१८५. पत्र : जयरामदास दौलतरामको

२१ सितम्बर, १९३२

मैं जानता हूँ कि तुम्हें मेरी इस प्रायश्चित्त-स्वरूपकी जा रही तपस्यासे कैसा लग रहा होगा। पर तुम इतने बहादुर तो हो ही कि यह समझ सको कि यह अवसर शोकका नहीं, आनन्दका है। अस्पृश्यताके इस दानवके अन्तिम रूपसे नष्ट होनेसे पहले, हममें से बहुतोंको मरना पड़ सकता है। तुम्हें तो इससे खुशीसे फूले न समाना चाहिए कि एक साथीने अग्नि-द्वारमें प्रवेश किया है। यदि मैं इसमें से सही-सलामत बाहर आ जाता हूँ तो यह अच्छा है; और यदि यह अग्नि मुझे भस्म कर देती है तो यह भी ज्यादा नहीं तो उतना ही अच्छा तो जरूर है। ईश्वरने मुझे मार्ग दिखाया है, और अन्ततक दिखायेगा।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ६७

१८६. पत्र : जमनालाल बजाजको

[२१ सितम्बर, १९३२][1]

चि० जमनालाल,

आशा है, तुम तनिक भी परेशान नहीं होगे। तुम्हें तो आनन्दसे नाचना ही चाहिए कि जिसे तुमने पिता माना है वह तुम्हारे प्रिय कामके लिए पूर्णाहुति दे। तुम्हारे लिए तो यह उत्सव मनानेकी ही बात हो सकती है।

जानकीमैयासे मेरा विनोद जारी है। सरदार और महादेव तुम्हें याद कर रहे हैं।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ९४-५

१. साधन-सूत्रमें २७ सितम्बर है। लेकिन **महादेवभाईनी डायरी**, पृ० ६८ पर २१ सितम्बर है, जिसकी पुष्टि श्री जमनालाल बजाजके इसी तिथिको मदालसाको लिखे पत्रसे होती है, जिसे **बापू-स्मरण**, पृ० २७४ पर इसी तिथिके अन्तर्गत रखा गया है।

१८७. पत्र : मणिलाल वी० कोठारीको

२१ सितम्बर, १९३२

सरदार कहते हैं कि अपने पट्ट शिष्यको तो मुझे अलगसे ही पत्र लिखना चाहिए। मैंने कहा, जमनालालजी के साथ मणिलाल भी आ जाता है। तो इसपर वे लाल-लाल आँखें दिखाकर बोले कि जमनालालजी और अन्य सब लोगोंका समावेश मणिलालमें हो सकता है, पर मणिलालका समावेश किसी अन्यमें नहीं हो सकता। मेरा कहना है कि ऐसा नहीं है। मणिलाल तो अहिंसाका पुजारी होनेके कारण सबमें समा सकता है, किन्तु किसीको उसमें समाविष्ट माना जाये, ऐसा वह कदापि नहीं चाहेगा। हमारी कोठरीमें उठ खड़े हुए इस विवादको अब तुम्हीं मिटा सकते हो। देखना, इन्साफ करना। कौन सच्चा है, सरदार या मैं? और जहाँ इस तरहका वाद-विवाद चलता हो, वहाँ जैनोंको प्रिय लगनेवाले अनशनकी ऊहापोहमें हम पड़ें ही क्यों?

तुम इस पत्रसे हमारे आनन्दका अन्दाज लगा सकोगे। रोना सख्त मना है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ६८

१८८. पत्र : किशोरलाल घ० मशरूवालाको

२१ सितम्बर, १९३२

तुम्हें मेरा कदम नीतिमय लगा या नहीं, यह जाननेकी इच्छा तो रहती ही है। नाथको शंका है। मैंने उन्हें उत्तर[1] दे दिया है। यदि तुमने इस बारेमें विचार किया हो तो लिखना। यह तो समझ ही लिया होगा कि अगर यह कदम धर्मके अनुकूल जान पड़े तो यह हमारे लिए आनन्दोत्सवका मौका है।

वल्लभभाईकी संस्कृतके बारेमें तुम्हें जो डर है, उसके लिए कोई कारण नहीं है। वल्लभभाईकी देहाती गुजराती तो कोई उनसे छीन ही नहीं सकता। संस्कृत इस प्रवाहको ज्यादा मजबूत बनायेगी। और इस बार वे जो भगीरथ प्रयत्न कर रहे हैं, हमें तो उसीका स्वागत करना है। इसका असर विद्यार्थियोंपर पड़े बिना नहीं रह सकता। हमारी भाषाके लिए संस्कृत गंगा नदी है। मुझे लगता रहता है कि यदि वह सूख जायेगी तो भाषाएँ निःसत्त्व हो जायेंगी। मुझे लगता है कि उसका साधारण ज्ञान आवश्यक है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ६७

१. देखिए "पत्र: केदारनाथ कुलकर्णीको", २०-९-१९३२।

१८९. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

२१ सितम्बर, १९३२

तुम्हें उपवासका क्षोभ नहीं होना चाहिए। जिसकी लालसा थी, उसे प्रभुने घर बैठे भेज दिया। इच्छित वस्तु मिल जाये, तो यह शोकका विषय नहीं हो सकता। हम तीनों आनन्दमें हैं, और प्रभुकी लीला देखकर नाचनेकी कोशिश करते हैं। नाचना अभीतक पूरी तरह तो नहीं आया है। लोग मुझे लिख सकें, इसकी इजाजत मैंने प्राप्त कर ली है, इसलिए लिखना।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ६६

१९०. पत्र : मणिबहन पटेलको

२१ सितम्बर, १९३२

चि० मणि,

तुझे आश्वासनकी जरूरत होगी क्या? खबरदार, यदि एक भी आँसू गिराया तो। जो सौभाग्य मुझे मिला है, वह बिरलोंको ही कभी-कभी मिलता है। इस कारण खुश हो सकते हैं, रो तो सकते ही नहीं। तेरे और तुझ-जैसोंके लिए उपवास नहीं है। परन्तु पूर्ण तन्मयताके साथ कर्त्तव्य-पालन करना है। मुझे जब लिखना हो तब लिख सकती है; इसकी अनुमति मैंने ले ली है। इसलिए मुझे लिखना।

यह पत्र तुझे तुरन्त मिलना चाहिए। अन्य बहनोंको आशीर्वाद।

बापूके आशीर्वाद

मणिबहन पटेल
प्रिजनर,
सेंट्रल प्रिजन, बेलगाँव

[गजरातीसे]

बापुना पत्रो-४ : मणिबहेन पटेलने, पृ० ८७

१९१. पत्र : फूलचन्द बा० शाहको

२१ सितम्बर, १९३२

भाई फूलचन्द,

उपवासकी खबर सुनकर सब खुशी मनायें। रोना हरगिज नहीं। ऐसा शुभ अवसर कहाँ मिलता है? मुझे देखकर कोई उपवास न करे। सब अपना-अपना अवसर आनेपर अपनी आहुति दें। जो मरना न जाने वह मनुष्य काहेका? फिलहाल तो तुम सबको अधिक जाग्रत, अधिक कर्त्तव्यपरायण, और ऐसे बलिदानके लिए शुद्ध होनेका ज्यादा प्रयत्न करना चाहिए।

सभीको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ६८। सी० डब्ल्यू० ९४७२ से भी; सौजन्य: चन्द्रकान्त फू० शाह

१९२. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

२१ सितम्बर, १९३२

तेरे तारसे मैं तेरा संताप देख सका हूँ। मेरा तार मिला होगा।[1] मैंने तुझे ज्ञानी माना है, और आशा है, तू वैसा ही निकलेगा। मेरे कदमके नीति-संगत होनेमें यदि तुझे सन्देह हो तो मुझे लिखना। मैंने ऐसा प्रबन्ध किया है कि तुझे यह पत्र जल्दी ही पहुँचा दिया जायेगा और जवाब लिखनेकी इजाजत दे दी जायेगी। तू जानता है कि मैं तुझे अपनी नीतिका रक्षक मानता हूँ। अपने इस अधिकार और धर्मका अच्छी तरह पालन करना। अगर तुझे मेरा कदम पसन्द आया हो, तो यह सिर्फ उत्सव मनानेका अवसर है, यह तो समझमें आ जाना चाहिए। मुझे खुलकर लिखना। तारामती और बच्चोंको मैं मिलनेके लिए बुला रहा हूँ।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी, पृ० ११५-६

१. देखिए "तार: मथुरादास त्रिकमजीको", २०-९-१९३२।

१९३. पत्र : ई० ई० डॉयलको

२१ सितम्बर, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

आपसे हुई बातचीतके अनुसार मैं साथमें आठ पत्र भेज रहा हूँ। आशा है, आप इन्हें सम्बन्धित कैदियोंको भिजवा देंगे और साथ ही यह निर्देश भी दे देंगे कि इन्हें तुरन्त पहुँचा दिया जाये और जिनके नाम ये पत्र लिखे गये हैं उन्हें मुझे उत्तर लिखनेकी छूट है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० ९

१९४. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

२१ सितम्बर, १९३२

चि० हेमप्रभा,

यह क्या बात है, मेरे खत तुमको नहिं मिलते तुमारे मुझको नहिं मिलते हैं। यह खत मिलने पर मुझे तार दो कि इस उपवासको तुम समझ गई है। और समझी है तो रोवेगी नहि पर गायगी। तुमारा कर्तव्य अपने कार्यमें रत रहनेका है। हम सब ईश्वरके हाथोंमें है। वह चाहे वैसा करेगा और सो भला हि होगा। अरुणसे कहो लिखे।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १६८८) से।

१९५. भेंट: एस० एम० माटे, पी० एन० राजभोज और लिमयेको[1]

२१ सितम्बर, १९३२

यदि मेरा बस चले तो मैं आपसमें सम्पन्न होनेवाले किसी भी समझौतेमें मन्दिर-प्रवेश और इसी तरहकी चीजें शामिल करनेपर जोर दूँगा और सभी सुधारकों और अस्पृश्योंको ऐसा करनेके लिए आमन्त्रित करूँगा। मैं यह जानता हूँ कि मेरा शरीर जितने दिन उपवास झेल सकता है, उस अति सीमित समयमें मन्दिर-प्रवेशकी सिद्धि एक कठिन काम है। परन्तु समझौतेसे सम्बन्ध रखनेवाले सभी पक्षोंको मानव-प्राणियोंके इस मूल अधिकारको शीघ्रातिशीघ्र साकार करनेका प्रण कर लेना चाहिए। साथ ही, मैं यह नहीं चाहता कि उपवासका उपयोग कट्टरपन्थियोंको विवश करनेके लिए किया जाये। उसका उद्देश्य कट्टरपंथियोंतक को सोच-विचारके लिए प्रेरित करना अवश्य है। किन्तु यदि वे मानव-अधिकारोंके सम्बन्धमें इस मूल सत्यको ग्रहण नहीं कर पाते हैं तो हमें धैर्य रखना चाहिए। लेकिन मन्दिर और इसी तरहके स्थान केवल कट्टर-पंथियोंकी नहीं, बल्कि सभी हिन्दुओंकी सम्पत्ति हैं। इसलिए, हिन्दुओंके एक भागको सार्वजनिक सुविधाओंके उपयोगसे वंचित करनेका यह विचार, अपने-आपमें, एक प्रकार की हिंसा है। अतः इस मूल अधिकारकी रक्षाके लिए कानूनकी सहायताकी माँग करनी होगी। पर, मैं यह मानता हूँ कि यदि हिन्दुओंकी बहुसंख्या इस बातके विरुद्ध है कि तथाकथित अस्पृश्य इस अधिकारका उपयोग करें, तो केवल कानून बिलकुल बेकार रहेगा। लेकिन मेरा यह खयाल है कि यदि यह सुधार चुपचाप आये तो बहुसंख्याका मन इसके पक्षमें है। इसलिए सुधारकोंको चाहिए कि वे अब सुधारके प्रति लोगोंके इस निष्क्रिय रुखको सुधारके सक्रिय समर्थनमें बदलनेके लिए सावधानीसे लगातार जमीन तैयार करें। सुधारके पक्षमें जनमतकी इस उत्तरोत्तर बढ़ती बाढ़से कट्टरपंथियोंको यह यकीन हो जायेगा कि यह अनिवार्य है। अतः यह कार्य सभी तरहकी हिंसासे, मानसिक हिंसातकसे मुक्त होना चाहिए।

स्वतन्त्र राज्यमें कानून सदा बहुसंख्याकी इच्छाका प्रतिनिधित्व करता है। किसी कानूनके पक्षमें आम राय बननेके पहले यदि वह कानून पास कर दिया जाता है तो उससे उसकी खातिर काम करनेवाले लोगोंकी कोशिशें बेकार हो जाती हैं, वांछित उद्देश्य सिद्ध नहीं हो पाता। इसलिए मैं ऐसे कामके बारेमें सदा उन्हीं लोगोंके पराक्रमपर भरोसा रखता हूँ जो उस कामको अपने जीवनका व्रत मानकर चल रहे हैं। अतः समझौतेको एक सजीव समझौता बनानेके लिए यह नितान्त आवश्यक है

१. साधन-सूत्रके अनुसार, यहाँ जो दिया गया है, वह गांधीजी की वार्ताका सार है।

कि उसके राजनीतिक अंशकी स्वीकृतिके लिए पहले एक शर्त यह हो कि समझौतेमें भाग लेनेवाले सवर्ण हिन्दू इसका केवल अनुमोदन ही नहीं करेंगे बल्कि इस मामलेमें सक्रिय कार्य भी करेंगे। मेरी अपनी राय बिलकुल साफ है। मैं किसी भी ऐसे समझौतेको जिसमें पृथक् निर्वाचक-मण्डलकी छायातक न होगी, स्वीकार कर लूँगा। संयुक्त निर्वाचक-मण्डलकी किसी योजनाके अधीन सीटोंके आरक्षणको मैं बहुत ही अनिच्छाके साथ सहन करूँगा। लेकिन मैं सामाजिक और धार्मिक सुधारपर, जो मेरे लिए समझौतेका मुख्य भाग है, जोर दूँगा। इसलिए, जहाँ मैं संयुक्त निर्वाचक-मण्डलकी योजनापर कोई समझौता हो जाने और पृथक् निर्वाचक-मण्डलके ब्रिटिश सरकार द्वारा वापस ले लिये जानेकी हालतमें अपना उपवास तोड़ दूँगा, वहाँ मैं लाखों-करोड़ों हिन्दुओंको, जो भारतके एक छोरसे दूसरे छोरतक अनेकानेक सभाओंमें मेरे गिर्द इकट्ठे होते रहे हैं, तुरन्त ही यह सूचित कर दूँगा कि यदि, मान लीजिए, छः महीनेके अन्दर सामाजिक सुधार स्पष्ट रूपसे सम्पन्न नहीं होता है तो उपवास फिर शुरू कर दिया जायेगा। क्योंकि यदि मैं ऐसा नहीं करता हूँ तो मैं ईश्वरके प्रति, जिसके नामपर मैंने यह महान् उपवास शुरू किया है, और अस्पृश्योंके हितोंके प्रति, जिनके लिए यह शुरू किया गया है, विश्वासघातका दोषी हूँगा।

कालाराम मन्दिरके बारेमें नासिक सत्याग्रहको मैंने अभीतक स्वीकृति केवल इसलिए नहीं दी है कि उस सत्याग्रहमें मुझे हिंसाकी कुछ गन्ध आ रही थी, और सत्याग्रहका हिंसासे, वह चाहे जितनी थोड़ी हो, कोई मेल नहीं है। मुझे यह भी मालूम हुआ है कि पार्वती मन्दिर-जैसे मन्दिरोंके बारेमें 'ट्रस्ट'-सम्बन्धी कठिनाई है। ट्रस्टनामा खुद ट्रस्टियोंपर यह जिम्मेदारी डालता है कि वे अस्पृश्योंको मन्दिरमें दाखिल न होने दें। जहाँ इस तरहकी निर्योग्यता है, वहाँ ट्रस्टियोंकी लाचारी मेरी समझमें आ सकेगी। इस तरहके मन्दिरोंके सम्बन्धमें कोई भी सत्याग्रह विशुद्ध हिंसा होगी। मैं यह कहूँगा कि आजके वातावरणमें इस तरहकी शर्त किसी भी ट्रस्टमें सार्वजनिक सभ्याचारके विरुद्ध समझी जानी चाहिए और, इसलिए अप्रभावी होनी चाहिए। और यदि इस तरहका अदालती निर्णय प्राप्त हो सके, तो इस तरहकी धाराको अवैध करनेवाला कानून बन जाना चाहिए। श्रीयुत राजभोजको डर है कि यदि डॉ० अम्बेडकर एक युक्तियुक्त समझौता स्वीकार कर लेते हैं, तो सरकार कोई और नेता पैदा कर सकती है, जो उसका विरोध करेगा, और यदि यह डर सच निकलता है, तो सरकार द्वारा किसी भी समझौतेका सदा ही विरोध होगा, और इसलिए मेरे उपवासकी परिणति, मेरी मृत्युमें ही होगी, अतः मुझे उपवास तोड़ देना चाहिए। श्री राजभोजका डर उचित मानते हुए भी, मैं ईश्वरको साक्षी मानकर लिये गये प्रणको तोड़ नहीं सकता। सभी भावी घटनाओंकी हम पहलेसे कल्पना नहीं कर सकते। इसलिए हम केवल अपने कर्मोंको ही नियन्त्रित कर सकते हैं। यदि हम भारीसे-भारी कठिनाइयोंके बावजूद विचलित हुए बिना ईमानदारीसे अपना कर्त्तव्य करते जायें तो हमें यह श्रद्धा रखनी चाहिए कि परिणाम हमारे और हमारे ध्येयके लिए शुभ ही होगा। सत्यकी सुनिश्चित विजयमें हमारा अटल विश्वास होना चाहिए। इस तरहके सही कार्यसे, बिना किसी अपवादके, विरोधियोंको परास्त होते और अभीष्ट परिणाम

पैदा होते देखा गया है। पर शर्त यही है कि कार्य जितना सही है, ध्येय उतना ही न्यायोचित होना चाहिए। अतः जबतक उपवासकी शर्तें पूरी नहीं होतीं तबतक मैं इसे किसी भी कारण स्थगित नहीं कर सकता।

[अंग्रेजीसे]

एपिक फास्ट, पृ० १६५-७

१९६. पत्र: विद्या आर० पटेलको

२२ सितम्बर, १९३२

चि० विद्या,

खाने और सोनेकी जैसी आदत हम डालना चाहें, पड़ सकती है। सवेरे उठें और दिनमें न सोयें तो जल्दी सोनेकी आदत पड़े बिना न रहेगी।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४३३) से; सौजन्य: रवीन्द्र आर० पटेल

१९७. तार: विलियम शाइररको[1]

[२३ सितम्बर, १९३२ या उसके पूर्व][2]

विलियम शाइरर
शिकागो ट्रिब्यून
वियना (आस्ट्रिया)

धन्यवाद। अमेरिकाकी हैरानीपर मुझे आश्चर्य नहीं है। मेरा यह दुर्भाग्य या सौभाग्य रहा है कि मैं दुनियाको चौंकाऊँ। नये प्रयोग या नये ढंगसे किये जा रहे पुराने प्रयोग कभी-कभी गलतफहमी पैदा कर ही देते हैं। औचित्यके नियमोंके फलस्वरूप सरकारको लिखे गये अपने पत्रोंमें मुझे कठोर संयम बरतना पड़ता है। जेलके प्रशासनिक नियमोंके अनुसार बाहरकी दुनियासे कोई भी पत्र-व्यवहार निषिद्ध ठहरता था। उन नियमोंके शब्दों और भावका मैंने पूरी तरह पालन किया। इस समय जो समझौता तैयार हो रहा है वह दलित वर्गोंको ब्रिटिश फैसलेसे कहीं अच्छा और अधिक प्रतिनिधित्व प्रदान करेगा। यदि मुझे यह विश्वास न होता कि दलित वर्गोंका जनमत — यानी उनके नेताओंके मतसे भिन्न

१. यह अमेरिकी पत्रकार विलियम शाइररके वियनासे भेजे गये तारके उत्तरमें था, जिसमें कहा गया था कि गांधीजी के उपवाससे अमेरिकी जनमत "हतबुद्धि" है और उसकी समझमें नहीं आता कि वे "भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलनपर अपने निर्विवाद राजनीतिक नेतृत्वको आमरण अनशन द्वारा" जान-बूझकर क्यों छोड़ रहे हैं।

२. यह तार **बॉम्बे क्रॉनिकल**में "पूना, २३ सितम्बर, १९३२" की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत छपा था।

दलित जनताका मत — मेरे साथ है तो यह उपवास जिस तरह मैंने शुरू किया है उस तरह न किया होता। जहाँतक मुझे मालूम है, दलितोंके नेताओंकी भी भारी बहुसंख्या मेरे पीछे है। मैं उनके साथ, दलित वर्गोंके मुख्य हितोंकी रक्षा करते हुए जिस हदतक जाना सम्भव हो, उस हदतक जाकर समझौता करना चाहूँगा। दलितोंके हितोंको उनके नेताओंसे भी अधिक जाननेके मेरे दावेकी ढिठाईसे आपको चौंकना नहीं चाहिए। जन्मसे स्पृश्य होते हुए भी, मैं पिछले पचास वर्षोंमें स्वेच्छासे अस्पृश्य बन गया हूँ। अमेरिकियोंको यह जान लेना चाहिए कि मेरी राजनीति मेरे धर्ममें से ही पैदा हुई है। यदि ईश्वरने मेरी मृत्यु अनशनसे ही निश्चित की है, तो मुझे यह मालूम है कि इससे मेरे राजनीतिक नेतृत्वपर आखिरी मुहर लग जायेगी। एक यज्ञ-कार्यमें हो रही इस मृत्युसे राष्ट्रीय आन्दोलन और मजबूत होगा। भारतीय समाजकी विशाल बहुसंख्या अपनी सहज प्रेरणासे ही इस उपवासकी सचाई और गूढ़ार्थोंको समझ गई है। मुझे विश्वास है कि इस तपस्यासे सच्चा स्वराज्य कुछ निकट आ गया है और यदि ईश्वरने मुझे तन और मनसे विचलित हुए बिना इस उपवासको पूरा करनेकी शक्ति दी, तो वह और निकट आ जायेगा। अविचलित शान्तिकी अवस्थामें बीता प्रत्येक दिन स्वराज्यको इतना निकट लाता जा रहा है जितना कोई और कदम नहीं ला सकता। अस्पृश्यताकी समाप्तिके लिए मृत्युकी यह तैयारी, वस्तुतः, समूचे भारतके हितके लिए मृत्युकी तैयारी है, क्योंकि अस्पृश्यताकी समाप्ति मेरे लिए स्वराज्यका अभिन्न अंग है। मैं ऐसे स्वराज्यको जिसके प्रसादमय प्रभावसे क्षुद्रतम या अधमाधम भारतीय भी वंचित रहे, स्वीकार नहीं करूँगा। मेरे लिए धर्म, सार-रूपमें, एक ही है, पर उसकी शाखाएँ अनेक हैं। हिन्दू शाखासे सम्बन्धित मैं यदि उसके मूल तनेके प्रति अपने कर्त्तव्यसे च्युत होता हूँ, तो मैं उस अखण्ड और प्रत्यक्ष धर्मका एक कुपात्र अनुयायी ही हूँगा। इस तर्कके अनुसार, मेरा बलिदान मानवताको अस्पृश्यताके हर रूप या प्रकारसे मुक्त करनेके कार्यको आगे बढ़ाता है और, इसलिए, सभी धार्मिक समुदायोंकी उससे सेवा होती है। अमेरिकाने ज्ञात और अज्ञात मित्रोंके जरिये मेरी विपत्तिमें मुझे बहुत सहानुभूति भेजी है। इसलिए यदि अब वह इस बलिदानके मर्मको समझ लेता है तो मैं उससे यह अपेक्षा करता हूँ कि वह इस बलिदानके पक्षमें विश्वमत संगठित करे। प्रकट रूपसे यद्यपि यह इस दुनियाके एक कोनेपर लागू करनेके लिए किया गया है, पर वस्तुतः इसका उद्देश्य सारी दुनियाको अपनी लपेटमें लेना है। मेरी जीवन-यात्रा पर जिनकी जरा भी दृष्टि रही है, चाहे वह सरसरी ही क्यों न हो, वे यह देखे बिना नहीं रह सकते कि मेरे जीवनमें कोई

भी काम किसी व्यक्ति या राष्ट्रको क्षति पहुँचानेके लिए नहीं किया गया है। मेरा राष्ट्र-प्रेम और मेरा धर्म बहिष्कारक नहीं, समावेशक है और सभी प्राणियोंके कल्याणका उनमें सदा समावेश होना चाहिए। मुझसे कभी कोई दोष हो ही नहीं सकता — मेरा यह दावा नहीं है। मैंने हिमालय-जैसी गलतियाँ की हैं, इसका मुझे बोध है। पर मैंने वे जान-बूझकर की हों या कभी किसी व्यक्ति या राष्ट्रके प्रति अथवा किसी मानव या अन्य प्राणीके प्रति मैंने मनमें शत्रुता रखी हो, इसका मुझे बोध नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल सं० २०-९

१९८. तार : हेमप्रभा दासगुप्तको

२३ सितम्बर, १९३२

हेमप्रभादेवी
खादीस्थान
कलकत्ता

आशा है तुम अब पहलेसे अच्छी होगी। तुम आ जातीं तो अच्छा रहता। उपवास ठीक चल रहा है। शक्ति बनी हुई है। सस्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १६२१) से।

१९९. तार : नारणदास गांधीको

२३ सितम्बर, १९३२

नारणदास
आश्रम
साबरमती

जो भी इच्छुक हैं तुम उन सबके साथ आ सकते हो, पर आश्रमके काममें बाधा नहीं पड़नी चाहिए। मैं बिलकुल ठीक हूँ। सतीशबाबू कल सुबह साबरमती पहुँच रहे हैं। तुमसे मिलेंगे।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२५४ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

२००. तार : मगनलाल वे० मेहताको

[२३ सितम्बर, १९३२][1]

मगनलाल वेलजी मेहता
११४, चिंचपोकली
वम्बई

यदि मुझमें तुम्हारा विश्वास है तो तुम्हें उपवास नहीं करना चाहिए — न पानी लेते हुए, न निर्जल।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०-९

२०१. तार : श्रीकृष्णदास मोरको

[२३ सितम्बर, १९३२][2]

श्रीकृष्ण मोर
वैंकटेश्वर स्टीम प्रेस
७, खेतवाड़ी
वम्बई

यदि मुझमें विश्वास रखते हो तो उपवास मत करो।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०-९

१. साधन-सूत्रमें इस तारको इसी तिथिके अन्तर्गत रखा गया है।
२. साधन-सूत्रमें यह शीर्षक इसी तारीखके अन्तर्गत रखा गया है।

२०२. तार : सी० कृष्ण नायरको

[२१ सितम्बर, १९३२][1]

कृष्ण नायर
स्वदेशी लीग
चाँदनी चौक
दिल्ली

तुम्हें उपवास नहीं करना चाहिए। तुम तो अनुशासनके अधीन हो और ऐसा कदम उठानेसे पहले स्वीकृति लेनेके लिए बँधे हुए हो। तुम्हारा [यह] समय कठिन कार्य करनेका है। तुम्हारे उपवासके लिए ईश्वर स्वयं समय निश्चित करेगा।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०-९

२०३. पत्र : मीराबहनको

२३ सितम्बर, १९३२

चि० मीरा,

तुम्हारा खयाल मुझे भीतर-ही-भीतर कुतर रहा है। तुम अपनेको शान्त रख सको तो कितना अच्छा हो। रोज पत्र लिखती रहो और कल अपनी हालत तारसे बताओ। मेरा उपवास बहुत अच्छी तरह चल रहा है। यह पत्र मैं, पहलेकी तरह, एनिमाके बाद लेटा-लेटा लिख रहा हूँ। सुस्थिर और दृढ़ रहो। ईश्वरमें आस्था रखो। महादेवके जरिये तुम्हें रोज खबर भेजूँगा। शायद खुद न लिख सकूँ।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५१०)से; सौजन्य : मीराबहन

१. साधन-सूत्रमें यह शीर्षक इसी तिथिके अन्तर्गत रखा गया है।

२०४. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको[1]

२३ सितम्बर, १९३२

यद्यपि दुर्बलता तो स्वाभाविक रूपसे, दिन-प्रतिदिन बढ़ेगी ही, फिर भी पहलेके उपवासोंकी अपेक्षा मैं इस उपवासको बहुत आसानीसे झेल रहा हूँ। अपने-आपको मैं पूर्णतया शान्त भी अनुभव कर रहा हूँ और अभीतक मुझे अस्पृश्यताके प्रश्नपर विभिन्न प्रतिनिधि मण्डलोंके साथ लम्बी और लगातार हुई बातचीतोंमें कोई कठिनाई पेश नहीं आई है। इसके लिए भारी एकाग्रता आवश्यक थी, फिर भी मुझे कोई कठिनाई महसूस नहीं हुई। पर मुझे मालूम है कि मैं इस तरह बहुत दिन चला नहीं सकूँगा। आज तीसरे पहरके सम्मेलनके बारेमें मैं पूरी तरह आशावान हूँ।[2] मेरा आशावाद बिलकुल मूर्खतापूर्ण हो सकता है; क्योंकि यदि आप मुझसे इसके कारण बतानेको कहें, तो मेरे पास सिवा इसके और कोई कारण नहीं है कि इस उपवासमें, जिसे मैं ईश्वरादिष्ट मानता हूँ, मेरी बहुत आस्था है और उतनी ही आस्था इस ध्येयमें भी है।

ब्रिटिश और अमेरिकी लोगोंके लिए मेरा सन्देश यह है कि उन्हें इसे राज-नीतिक कदम समझनेकी गलती नहीं करनी चाहिए। यह गहरा आध्यात्मिक प्रयास है, एक आदर्शको पचास वर्षतक लगातार प्रयोगमें लानेका परिणाम है। यह एक तपस्या है, क्योंकि इसके पीछे जो आदर्श है, वह लाखों-करोड़ों मानव-प्राणियोंकी भयानक धार्मिक दासतासे मुक्तिसे कम और कुछ नहीं है, इसलिए इसकी सफलता समूची मानव-जातिपर अपना प्रभाव डाले बिना नहीं रह सकती। सही या गलत, मैं यह मानता हूँ कि पृथक् निर्वाचक-मण्डल थोपनेका ब्रिटिश फैसला पिछले दस वर्षोंसे गुणोत्तर गतिसे हो रहे सुधारके रास्तेमें भारी बाधा खड़ी करता है। इसीलिए उसका प्रतिरोध करनेके लिए मैंने अपने प्राणोंकी बाजी लगाई है।

अब तीन दिन बाद, मेरा यह विश्वास और भी पक्का हो गया है कि मैंने जो कदम उठाया है, वह बिलकुल सही है। मेरी स्थापना यदि सच्ची है, तो इस ध्येयके लिए विश्वमत संगठित किया जाना चाहिए, ताकि ब्रिटिश सरकारको सही आचरणके लिए बाध्य किया जा सके।

[अंग्रेजीसे]

टाइम्स ऑफ इण्डिया, २४-९-१९३२

१. यह वक्तव्य "एक-दो प्रश्नोंका उत्तर देनेकी प्रार्थनाके उत्तरमें था" और महादेव देसाई द्वारा लिया गया था।

२. **महादेवभाईनी डायरी,** भाग-२ में इस तारीखकी प्रविष्टिके अन्तर्गत कहा गया है: "डॉ० अम्बेडकर-सहित कमेटीके सभी लोग शामको ४ बजे पहुँचनेवाले थे।"

२०५. तार: हेमप्रभा दासगुप्तको

२४ सितम्बर, १९३२

हेमप्रभादेवी
खादीस्थान
कलकत्ता

तुम्हारा तार मिला। ईश्वर तुम्हारा कल्याण करे और तुम्हारी रक्षा करे। आना जरूरी नहीं है। मैं ठीक हूँ। सस्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १६२२) से।

२०६. तार: सफ़िया जगलुल पाशाको[1]

२४ सितम्बर, १९३२

प्रेम और प्रेरणापूर्ण सन्देशके लिए धन्यवाद। ईश्वरकी इच्छा पूरी हो।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग ३, पृ० ३५५

१. मिस्रके राष्ट्रवादी नेता जगलुल पाशाकी विधवा। गांधीजी के उपवासकी खबर सुनकर उन्होंने २३ सितम्बरको तारसे निम्नलिखित सन्देश भेजा था:

"मिस्रके नर-नारी, जो भारत और उसके महान् नेता महात्मा गांधीके वीरतापूर्ण स्वाधीनता-संघर्षको भाइयों-जैसी सहानुभूतिसे देखते आये हैं, भारतकी एकता और स्वतन्त्रताके लिए महात्माके आत्मबलिदानके इस महान् कार्यको अब धड़कते दिलोंसे देख रहे हैं। अपने स्वर्गीय पतिके साथ मैं मिस्रके ईसाइयों, मुसलमानों, कौप्टों और विभिन्न धर्मों और सम्प्रदायोंके अन्य समुदायोंकी भी पवित्र एकताके लिए काम करने और उसे प्राप्त करनेके आनन्दमें भाग ले चुकी हूँ। इसलिए मैं यह हार्दिक आशा प्रकट करती हूँ कि भारतके लोग गांधीजी के आत्मबलिदानके इस महान् कार्यसे प्रेरणा प्राप्त कर, भारतकी आजादीकी रक्षाके लिए बन्धुओं और देशभक्तोंके एक विराट समूहमें एकजुट हो जायेंगे और भारतके इस महान् सपूतके प्राणोंको बचायेंगे, जिसका जीवन और कार्य पूर्व और पूरी मानवजातिकी बपौती है।"

२०७. पत्र : मीराबहनको[1]

२४ सितम्बर, १९३२

मेरी सबसे प्यारी बच्ची,

तुम्हें हिम्मत नहीं हारनी है। तुम देख ही रही होगी कि ईश्वरकी कृपाकी कैसी प्रचुर और अपूर्व वर्षा हो रही है। यह शायद अभूतपूर्व ही है।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२३८) से; सौजन्य : मीराबहन

२०८. तार : जवाहरलाल नेहरूको

२४ सितम्बर, १९३२

पण्डित जवाहरलाल नेहरू
देहरादून जेल

कसौटीके इन दिनोंमें तुम सदा मेरी मनकी आँखोंके आगे रहे हो। तुम्हारी राय जाननेको मैं बहुत उत्सुक हूँ।[2] तुम्हारी रायका मेरे लिए क्या मूल्य है, तुम जानते ही हो। इन्दु[3] और सरूपके[4] बच्चोंसे भेंट हुई। इन्दु खुश नजर आई, देह भी कुछ भर गई है। मेरी तबीयत बहुत अच्छी है। जवाब देना। स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३२। सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. यह गांधीजी ने मीराबहनको लिखे गये महादेव देसाईके उस पत्रपर ही घसीट दिया था जिसमें उन्हें उपवासके पाँचवें दिन गांधीजी की हालतकी जानकारी दी गई थी।

२. २६ सितम्बरको प्राप्त अपने तारमें जवाहरलाल नेहरूने कहा था : "आपके तार और संक्षिप्त समाचारने, कि कोई समाधान हो गया है, मुझे राहत दी और मेरा मन खुशीसे भर गया। आपके उपवासके निर्णयका समाचार जानकर पहले तो मन व्यथित हुआ, लेकिन आखिर इस निराशापर आशा हावी हो गई और मनकी शान्ति लौट आई। दलित वर्गोंकी मुक्तिके लिए कोई भी बलिदान ज्यादा बड़ा नहीं। स्वतन्त्रताको तो निम्नतम वर्गोंकी स्वतन्त्रताकी कसौटीपर ही परखा जा सकता है। लेकिन डर है कि कहीं और सवालोंके नीचे हमारा एक-मात्र ध्येय दब न जाये। धार्मिक दृष्टिसे विचार करके कुछ कहनेमें असमर्थ हूँ। यह खतरा है कि आपकी पद्धतिसे कहीं दूसरे नाजायज फायदा न उठायें।" . . .

३. इन्दिरा नेहरू।

४. श्रीमती विजयलक्ष्मी पण्डित।

२०९. भेंट: 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिको

२४ सितम्बर, १९३२

हाँ, अगर जरूरत हुई तो मैं निस्सन्देह फिर उपवास करूँगा, क्योंकि मेरा यह पक्का विश्वास है कि व्यक्ति इस उपायसे दुनियाको अपने दृष्टिकोणकी सचाईका यकीन दिला सकता है।

गांधीजी के उपवासके पाँचवें दिन जब मुझे उनसे यरवडा जेलमें देरतक बातचीत करनेका सौभाग्य मिला, तो ये शब्द उन्होंने मेरे एक प्रश्नके उत्तरमें कहे। . . .

सुबह सातसे भी पहले मैं जब पूना स्टेशनसे चला था तो निश्चय ही मुझे यह आशा नहीं थी कि मैं गांधीजी से इतनी जल्दी मिल सकूँगा . . .। इसलिए जेल-अधिकारियोंसे जब यह जवाब मिला कि यह समय भेंटके लिए उपयुक्त है तो वह एक सुखद आश्चर्य लगा। यरवडाका बड़ा फाटक खुला और मैं भीतर चला गया। . . .

पहरेदार पहले एक आँगनसे और फिर एक छोटे दरवाजेसे गुजरता हुआ मुझे एक छोटे सहनमें ले आया, जो मोटे हिसाबसे कोई १५० फुट लम्बा और ४० फुट चौड़ा होगा। उसमें एक तरफ राजकीय बन्दियोंके लिए कुछ कोठरियाँ बनी थीं, पर वे सब खाली लगती थीं। सहनके एक सिरेपर आमके एक छोटे-से पेड़की छायामें गांधीजी खाटपर लेटे थे जिसपर जेलका कम्बल बिछा था।

सिरहाने बैठा उनका एक श्रद्धालु अनुयायी जिद्दी मक्खियोंको उड़ानेके लिए, तौलियेसे धीरे-धीरे हवा कर रहा था। उनके इर्द-गिर्द श्री वल्लभभाई पटेल, श्रीमती गांधी, श्री महादेव देसाई बैठे थे। परिचयके बाद, गांधीजी ने तुरन्त ही मुझसे पूछा कि मैं कौन-सा विशेष प्रश्न उनसे पूछना चाहता हूँ। पर वे इतने क्षीण और दुर्बल दिख रहे थे और उनके स्वास्थ्यकी हालत स्पष्टतः इतनी नाजुक थी कि सवाल-जवाब शुरू करना मुझे ज्यादती लगा।

लेकिन मेरे प्रश्नका जब उन्होंने इस लेखके आरम्भमें उद्धृत उत्तर दिया तो उनकी आँखोंमें चमक आ गई। उसके बाद, पास ही रखी बोतलमें से पानी पीनेको अपनी कुहनियोंके बल कुछ उठते हुए वे फिर अपने-आपमें सिमटते मालूम हुए।

वे बोले:

आपको पता है, कभी-कभी यह बहुत ही बेस्वाद लगता है। मैं एक चुटकी नमक डालकर इसे बदलनेकी कोशिश करता हूँ, पर इससे मेरे मेदेमें बड़ी मतली-सी उठती है।

गांधीजी ने कहा कि यदि उनकी माँगें मान ली जाती हैं तो वे तीसरे सम्मेलन के लिए खुशीसे लन्दन जायेंगे, लेकिन अन्यथा नहीं।

उसके बाद मैंने उनसे जो पूछा वह मेरे खयालसे एक प्रासंगिक प्रश्न था; अलबत्ता मुझे निश्चय ही उत्तरकी आशा न थी। पर वह बीमार व्यक्ति उत्तरके लिए सदैव तैयार था। उन्होंने जो कहा वह इस प्रकार है:

आपका सवाल है, 'अगर सभी भारतीय नेता, चाहे जिस कारणसे भी हो, अपने-अपने उद्देश्योंकी प्राप्तिके लिए इस तरीकेको अमलमें लानेका फैसला कर लें तो?' देखिए, मैं यह मानता हूँ कि इस तरीकेमें बहुत खतरा है। पर यह तो दुनियाकी हर बड़ी शक्तिके लिए कहा जा सकता है। उनका दुरुपयोग अनिष्टकारी होता है। हम एक सुप्रसिद्ध विष — संखियाका ही उदाहरण लें। वह बहुत ही शक्तिशाली औषध है। यद्यपि हम यह जानते हैं कि बहुत-से लोग उसका दुरुपयोग करते हैं, पर इसीलिए उसका अस्तित्व मिटा नहीं देना चाहिए। अत: यदि कोई चीज स्वभावत: अच्छी है, और वह ठीक समयपर ठीक मात्रामें प्रयुक्त की जाती है तो आशा करनी चाहिए कि वह विशाल पैमानेपर सबकी भलाई करनेवाली लगभग चमत्कारी ही होगी। उस शक्तिका, इस सचाईके बावजूद कि दूसरे उसका दुरुपयोग कर सकते हैं, उपयोग किया जाना चाहिए।

इसके अतिरिक्त, जहाँतक इस तरहके उपवासका सम्बन्ध है, इसके खूब बढ़ने या लोकप्रिय होनेकी बहुत गुंजाइश नहीं है, और उसका सीधा-सादा कारण यह है कि यह इतनी यातनादायी प्रक्रिया है कि साधारण मानव-स्वभाव इससे गुजरनेके विचारसे ही काँप उठता है।

इस तरह आप देखेंगे कि खतरा बहुत ज्यादा नहीं है। शरीरको प्रशिक्षित करके ही कोई लम्बे समयतक भोजनके बिना रह सकता है। जिन्होंने अपने शरीरको इसकी शिक्षा नहीं दी है और जो कमजोर हैं वे शीघ्र ही इसका विचार छोड़ देंगे।

इस लम्बे वक्तव्यके बाद गांधीजी थकावटसे कमजोरी महसूस करते हुए अपने बिस्तरके सहारे टिक गये। जेलके दो डॉक्टर तुरन्त ही सहायता देनेके लिए उनके पास आ गये। परन्तु ऐसा लगता था कि गांधीजी को सबसे ज्यादा आराम श्रीमती गांधीसे मिल रहा था, जो स्पष्टत: स्वयं दु:खी होते हुए भी उनका तकिया बदलने, उनके माथेपर जैतूनके तेलकी मालिश करने और धीरे-धीरे उनसे बातें करनेका अवसर प्राप्त कर प्रसन्न लगती थीं।

इस बीच गांधीजी के अनुयायी अन्य राजनीतिक अभ्यागतोंका स्वागत करने लगे और वह सहन शीघ्र ही चहल-पहलसे भर गया।

उनके सचिवसे मुझे पता लगा कि गांधीजी अपने उपवासके दिनोंमें रोज सुबह चार बजे उठते हैं; उसके बाद साढ़े चार या पाँचतक प्रार्थना होती है; फिर जेलका नाई उनकी हजामत बनाता है; तब वे अपना नाश्ता — यानी पानी लेते हैं; और फिर शायद एक घंटे सोते हैं। परन्तु विश्व-भरसे आनेवाले विशेष तारोंके कारण उसमें बराबर विघ्न पड़ता रहता है। . . .

[अंग्रेजीसे]

एपिक फास्ट, पृ० १३८-४१

२१०. तार : सुन्दरसिंह ऐंड सन्सको[1]

[२४ सितम्बर, १९३२ या उसके पश्चात्]

बधाइयाँ। आशा है, आपके दृष्टांतका और भी बहुत-से लोग अनुकरण करेंगे।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८५५१) से।

२११. तार : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

२५ सितम्बर, १९३२

भारत-भरमें [इस विषयमें भावनाका] जैसा प्रदर्शन हुआ है वह आधुनिक युगका एक आश्चर्य है। गुरुदेव शक्ति-स्तम्भ सिद्ध हुए हैं। सभी मित्रोंको हार्दिक स्नेह। मनमें पूरी शान्ति है। समझौतेकी शर्तबन्द स्वीकृतिसे मेरा उपवास टूट नहीं सकता।

[अंग्रेजीसे]
एपिक फास्ट, पृ० १३४

२१२. तार : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको[2]

[२५ सितम्बर, १९३२][3]

आपके सन्देशकी नित्य लालसा लगी थी। इसने मुझे नई हिम्मत और आशा दी है। आशा है आप ठीक होंगे। सप्रेम।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
एपिक फास्ट, पृ० १९६-७

१. यह सुन्दरसिंह ऐंड सन्सके २४ सितम्बरके इस तारके उत्तरमें भेजा गया था: "आपके आदेशानुसार अपने शर्बत-घरके द्वार, गत बीस वर्षोंमें पहली बार, अस्पृश्योंके लिए भी खोल रहा हूँ। इसमें रूढ़िवादी ग्राहक खो बैठनेका खतरा है। मोची जातिके विधान-परिषद् सदस्य रामदयाल मंगलवारको विधिवत् उद्घाटन करेंगे। आपके पितृवत् आशीर्वादकी प्रतीक्षा है।"

२. यह श्रीनिवास शास्त्रीके तारके उत्तरमें था जो इस प्रकार था: "अपनी उत्कृष्ट शैलीमें आपने जो उत्कृष्ट सेवा की है, उसपर लाखों घरोंमें आनन्द मनाया जा रहा है और आपके लिए मंगलकामना की जा रही है। मैं यह जानता हूँ कि मेरा मन शंकासे काँपा था, पर परिणाम आपको सही ठहराता है और निर्विवाद रूपसे सर्वोच्च अस्पृश्य और 'अगम्य' सिद्ध करता है।"

३. **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-२, पृ० ८२ से।

२१३. तार: पाण्डुरंग महादेव बापटको[1]

२५ सितम्बर, १९३२

उपवासके लिए आप जो कारण देते हैं, वह मेरे हृदयको छूता है। किन्तु ऐसे मामलेमें मैं निष्णात माना जाऊँगा; और मेरी राय इसके खिलाफ है, इसलिए मैं चाहता हूँ कि आप फिरसे विचार करें। मेरा विश्वास है कि आपके उपवासको धर्मकी मंजूरी नहीं है। आपका मेरे प्रति प्रेमभाव है, तो उसके लिए आपको मेरे साथ मरना नहीं चाहिए। आपको तो मेरा काम करनेके लिए जीना चाहिए। सभी साथी मेरे साथ मर जायें, तो क्या परिणाम होगा, इसे सोचिए। ऐसा करना क्या अपराध नहीं होगा? इसलिए मेरा कहा मानिए। ईश्वर आपका कल्याण करे।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ८२-३

२१४. तार: लॉरेंस हाउसमैनको[2]

२५ सितम्बर, १९३२

लॉरेंस हाउसमैन
४६, लैंकास्टर गेट
लन्दन

तारके लिए धन्यवाद। मेरा यह उपवास एक अपील है — केवल हिन्दुओं या सारे भारतसे ही नहीं, बल्कि ब्रिटिश जनताकी अन्तरात्मा और तमाम दुनियासे भी। जो आदमी ब्रिटिश लोगोंसे प्रेम करता है उस पर यह अविश्वास और उसके बारेमें यह गलतबयानी मेरे लिए एक पहेली है, क्योंकि मेरी हार्दिक आस्था मुझे शारीरिक बलका आसरा लेनेसे रोकती है। मैं ईश्वरसे प्रार्थना कर रहा हूँ कि वह मुझे चरम कोटिके सामूहिक कष्टसहनका अन्तिम मार्ग दिखाये और मुझे उसमें से गुजरनेकी शक्ति दे। मैं यह जानता हूँ कि जब इस तरहका अपेक्षित

१. सेनापति बापटके नामसे प्रसिद्ध महाराष्ट्रके एक लोकसेवक।

२. २७ सितम्बर, १९३२ को गांधीजी के उपवासका महत्त्व समझानेके लिए फ्रेन्ड्स ऑफ इंडियाकी एक विशेष बैठक होनेवाली थी; लॉरेंस हाउसमैनने गांधीजी से उक्त बैठकके लिए सन्देश भेजनेकी प्रार्थना की थी।

समय आयेगा, तो इसका असर प्रत्येक ब्रिटिश घरतक पहुँचेगा। मुझे आशा थी कि इस अग्निशय्यासे मेरी यह अपील ब्रिटिश जनताको भी कुछ जगायेगी, जैसे कि उसने भारतको आश्चर्यजनक रूपसे जगा दिया लगता है। परन्तु ईश्वरकी इच्छा शायद कुछ और थी। ब्रिटेनकी सहानुभूति और सहायता मुझे चाहिए, इसलिए आपकी सभा जो भी कुछ करेगी वह मेरे लिए मूल्यवान होगा। मैं यह जानता हूँ कि मेरे लिए हजारों ब्रिटिश स्त्री-पुरुषोंके मनमें मूक सहानुभूति और प्रार्थना है।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०-९। **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-२, पृ० ८३-४ से भी

२१५. तार: डॉ० नीलरंजन राय और डॉ० विधानचन्द्र रायको

२५ सितम्बर, १९३२

डॉक्टरोंकी हैसियतसे आपकी सलाह बिलकुल ठीक है। पर मानवताकी दृष्टिसे उसका कोई मूल्य नहीं है। एक बन्धु-मानव अपने धर्मसे इनकार कर दे, यह तो आप नहीं चाहेंगे। बहुत-बहुत धन्यवाद। उपवास ठीक चल रहा है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ८४

२१६. प्रस्ताव: हिन्दू नेता सम्मेलन, बम्बईमें[1]

२५ सितम्बर, १९३२

इस सम्मेलनका संकल्प है कि आजसे हिन्दुओंमें किसीको जन्मके कारण अछूत नहीं समझा जायेगा। और जिन्हें अभीतक अछूत समझा गया है, उन्हें सार्वजनिक कुओंसे पानी भरने तथा सार्वजनिक सड़कों और अन्य सार्वजनिक संस्थाओंका उपयोग करनेके वे सभी अधिकार होंगे जो अन्य हिन्दुओंको हैं। इस अधिकारको पहला मौका मिलते ही वैधानिक मान्यता प्रदान कर दी जायेगी और यदि इसे स्वराज्य सरकारकी स्थापनासे पहले ही मान्यता नहीं मिली तो यह स्वराज्य पार्लियामेंटके सर्वप्रथम कार्योंमें से एक होगा।

१. इस प्रस्तावका मसविदा गांधीजी ने तैयार किया था।

यह सम्मेलन इस बातको भी स्वीकार करता है कि सभी हिन्दू-नेता समस्त वैधानिक और शान्तिपूर्ण तरीकोंसे — मन्दिर-प्रवेश-सहित — उन सभी सामाजिक निर्योग्यताओंको यथाशीघ्र दूर करवायेंगे जो प्रचलित रिवाजने आज तथाकथित अछूत वर्ग पर लाद रखी हैं।

[अंग्रेजीसे]

महात्मा, खण्ड ३, पृ० २१३

२१७. सन्देश : ग्रेट ब्रिटेनके लिए[1]

२५ सितम्बर, १९३२

उपवासका प्रत्येक दिन मुझे इस बातका अकाट्य प्रमाण लगता है कि इसमें ईश्वरका हाथ है। ईश्वर और उसकी दयामें अगाध श्रद्धा रखते हुए भी मैं अस्पृश्यताके विरुद्ध जागृतिकी इस भारी लहरके लिए तैयार नहीं था। किसीके बिना कुछ कहे कुछ बड़े मन्दिरोंने अपने द्वार अस्पृश्योंके लिए निर्बाध रूपसे खोल दिये हैं, यह घटना मुझे एक आधुनिक चमत्कार ही लगती है। मैं तो कहूँगा कि उनमें ईश्वरका प्रवेश अब हुआ है। अबतक वे मूर्तियाँ जिनमें उनके पुजारी गलतीसे और अपने अहंकारवश ईश्वरका अस्तित्व मानते थे, ईश्वरविहीन थीं।

मन्त्रिमण्डलके फैसलेके द्वारा ईश्वरने समय रहते मुझे यह चेतावनी दे दी कि जब वह मेरा द्वार खटखटा रहा था और मुझे जगा रहा था तब मैं सोया हुआ था। जो समझौता[2] हुआ है वह मेरे लिए शुद्धिके कार्यका केवल आरम्भ-मात्र है। जबतक अस्पृश्यताका नामो-निशान मिट नहीं जाता, तबतक आत्माकी इस वेदनाका अन्त नहीं होगा। मैं नहीं चाहता कि ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल जल्दबाजीमें कोई निर्णय ले। मेरी जान बचाने या दुनियाके आगे सही दीखनेके लिए वे बेमनसे इसे स्वीकार करें, यह मैं नहीं चाहता। समझौतेके असली मर्मको यदि उन्होंने न समझा हो तो उन्हें इसे तुरन्त अस्वीकार कर देना चाहिए। लेकिन यदि उन्होंने उसे समझा है, तो तथाकथित अस्पृश्यों और तथाकथित स्पृश्योंके बीच पूरे दिलसे और ईश्वरकी साक्षीमें हुए इस महान् समझौतेमें उन्हें एक भी शब्द या विराम-चिह्नका फेर-बदल किये बिना इसकी प्रत्येक शर्तको अमलमें लाना चाहिए।

मुझे आशा है कि मंत्रिमण्डलके सदस्य और दुनिया यह महसूस करेगी कि यह समझौता मन्त्रिमण्डलके फैसलेसे बहुत अच्छा है। मैं यह बात बहुत ही विनम्रतासे कह रहा हूँ और इसमें कोई अहंकार नहीं है। मन्त्रिमण्डलमें तो सिर्फ विदेशी लोग हैं। अतः उसे भारतकी परिस्थितियोंकी या अस्पृश्यताका क्या अर्थ है, इसकी सीधी जानकारी

१. यह सन्देश इंडिया लीगके एलेन विल्किंसन और वी० के० कृष्ण मेननको एक भेंटके दौरान दिया गया था और पहली बार लन्दनके **डेली हेरॉल्ड**में प्रकाशित हुआ था।

२. २४ सितम्बरको सम्पन्न हुए समझौतेके मजमूनके लिए देखिए परिशिष्ट २।

नहीं है। इसलिए यह कार्य ठीक तरहसे कर सकनेमें उनके रास्तेमें बड़ी कठिनाई थी। यद्यपि कुछ भारतीयोंने ही यह मामला उन्हें सौंपा था, पर उन्हें यह जिम्मेदारी, जो उनके बूतेके बाहरकी थी, लेनी नहीं चाहिए थी।

प्रायश्चित्तकी अपनी शय्यापर पड़े-पड़े मैं यह सब छिद्रान्वेषणकी भावनासे या झुँझलाहटके कारण नहीं कह रहा हूँ।

मैं ब्रिटिश जाति और मन्त्रिमण्डलका भी सच्चा मित्र होनेका दावा करता हूँ। इसलिए इस घड़ी यदि मैं अपनी प्रसंगोचित रायको दबाकर रखूं तो मैं उनके प्रति, अपने प्रति और अपने कार्यके प्रति सच्चा नहीं रहूँगा। अन्तमें, मैं ब्रिटेनको यह विश्वास दिलाना चाहूँगा कि जबतक मुझमें प्राण हैं, मैं हिन्दू धर्मको इस असह्य कलंकसे मुक्त करनेके लिए जितने भी उपवास आवश्यक होंगे करूँगा। ईश्वरकी कृपा-से इस आन्दोलनमें केवल एक आदमी नहीं बल्कि, मेरे खयालसे, हजारों ऐसे लोग हैं जो इस सुधारको पूर्णतया सम्पन्न करनेके लिए अपने प्राण न्योछावर कर देनेको तैयार हैं।

[अंग्रेजीसे]

एपिक फास्ट, पृ० १३६-७

२१८. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

२५ सितम्बर, १९३२

यदि प्रधान मन्त्री समझौतेको ज्योंका-त्यों स्वीकार कर लेते हैं तो मैं उपवास ड़नेको बाध्य हूँगा। समझौता, जहाँतक उसके राजनीतिक भागका सम्बन्ध है, केवल उस जबरदस्त बाधाको दूर करता है जो मन्त्रिमण्डलके फैसलेसे सुधारके रास्तेमें पैदा हो गई थी। समझौतेका असली भाग अब शुरू होना है और यद्यपि समझौतेके, जो प्रधान मन्त्रीके पास तारसे भेजा गया है, उनके द्वारा ज्योंका-त्यों स्वीकृत हो जानेपर, मेरा उपवास अवश्य समाप्त हो जायेगा, पर मेरे लिए असली संघर्ष तो इसके बाद ही शुरू होता है। वस्तुतः, यदि मन्त्रिमण्डलने पत्रव्यवहार समय रहते ही प्रकाशित कर दिया होता, तो जो कर्त्तव्य तथाकथित सवर्ण हिन्दुओंपर आता है उसकी समुचित पूर्तिपर जोर देनेको मैं नैतिक रूपसे बाध्य होता।

यदि मैं सवर्ण हिन्दुओंसे कर्त्तव्य-पालन नहीं करवा पाता हूँ तो विश्वासघातका दोषी होता हूँ। पर क्योंकि उन्हें उपवासके मेरे इरादेकी समय रहते कोई सूचना नहीं मिली थी, इसलिए मैं उनसे हिन्दू विचारधारामें अचानक क्रान्ति कर देनेकी अपेक्षा नहीं कर सकता। अतः उन्हें कामके लिए कुछ विराम अवश्य मिलना चाहिए। इसीलिए मैंने अपने साथी कार्यकर्त्ताओंको बता दिया है कि यदि यह उपवास मन्त्रिमण्डलसे सन्तोषजनक उत्तर मिलनेपर तोड़ दिया जाता है, तो भी यह केवल स्थगित ही रहेगा और जो भूमिका सवर्ण हिन्दुओंको निभानी है वह यदि

आगामी महीनोंमें अच्छी तरह नहीं निभाई गई तो यह बिलकुल निश्चित है कि यह फिर शुरू कर दिया जायेगा।

इन पाँच दिनोंमें देशमें जो जबरदस्त जागृति आई है वह मुझमें यह आशा पैदा करती है कि कट्टरता समाप्त हो जायेगी और हिन्दू धर्म अस्पृश्यताके इस विकारसे, जो उसकी जड़ोंको खा रहा है, मुक्त हो जायेगा।

मैं समझता हूँ, आगेकी योजना सरकारके हाथोंमें है।

[अंग्रेजीसे]
एपिक फास्ट, पृ० १३५

२१९. सन्देश : दक्षिण भारतके लिए

२५ सितम्बर, १९३२

यह जानकर दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक हर्ष हो रहा है कि बड़े-बड़े प्राचीन मन्दिर तथाकथित 'अस्पृश्यों' के लिए खुलते जा रहे हैं और इस प्रकार पवित्र होते जा रहे हैं। तन, मन और आत्माकी पीड़ाके इन दिनोंमें, बहुत-सी अन्य बातोंके साथ यह तथ्य मेरे लिए एक बड़ी जीवनदायी शक्तिका काम करता रहा है। परन्तु मन्दिरोंके खुलनेसे मिला यह हर्ष दुःखसे अछूता नहीं रहा है, क्योंकि दक्षिणने अपने मन्दिरोंके द्वार अवर्णोंके लिए खोलनेमें वैसी तत्परता और उदारता नहीं दिखाई है जैसी कि इस बातको ध्यानमें रखते हुए अपेक्षित थी कि दक्षिणके अस्पृश्योंके बीच मैंने दक्षिण आफ्रिकामें रहते हुए ही बड़े पैमानेपर काम शुरू कर दिया था। एक ऐसे हिन्दूके नाते जो उसके मूल तत्त्वको जानने और उसके अनुसार रहनेके लिए प्रयत्नशील है, मुझे यह कहनेमें रत्ती-भर भी झिझक नहीं है कि इन मन्दिरोंकी मूर्तियोंमें ईश्वरकी प्रतिष्ठा केवल तभी होगी जब अवर्णोंके लिए उनके द्वार पूरी तरह खोल दिये जायेंगे। आज तो समाज-बहिष्कृत मानवोंके साथ-साथ ईश्वर भी उनसे बहिष्कृत है।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २६-९-१९३२

२२२. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

२६ सितम्बर, १९३२

ईश्वरके नामपर शुरू किये गए उपवासका पारण मैंने गुरुदेव तथा उनके सामने बैठे हुए कुष्ठग्रस्त कैदी और विद्वान् पण्डित श्री परचुरे शास्त्रीकी और मेरे आसपास घेरा डालकर बैठे हुए अनेक प्रियजनोंकी मौजूदगीमें किया। पारणा करनेसे पहले कविने अपना एक बँगला भजन गाया, फिर परचुरे शास्त्रीने उपनिषदोंके मंत्र बोले और बादमें मेरा प्यारा भजन 'वैष्णवजन' गाया गया।

उपवासके सप्ताहमें देशके एक कोनेसे दूसरे कोनेतक भावनाके जिस भव्य ज्वारके दर्शन हुए, उसमें ईश्वरका हाथ साफ दिखाई देता था। दुनियाके अनेक भागोंसे उपवासके प्रति शुभकामनाओंके जो तार मिले, उन्होंने इन सात दिनोंमें शरीर, मन और हृदयकी जिस यातनासे मैं गुजर रहा था, मुझे टिकाये रखा। पर जिस ध्येयके लिए यह उपवास किया गया वह इस योग्य था कि यह यातना सही जाये।

एक बार प्रगट हुई यह यज्ञाग्नि तबतक नहीं बुझेगी जबतक हिन्दू धर्ममें अस्पृश्यताका लेश भी रहेगा। यदि ईश्वरकी ऐसी मर्जी होगी कि अस्पृश्यताका नाश मेरे जीवनमें न हो तो मुझे विश्वास है कि सच्ची लगनवाले ऐसे हजारों सुधारक मौजूद हैं, जो इस भयंकर कलंकसे हिन्दू धर्मकी शुद्धि करनेकी खातिर अपने प्राण दे देंगे।

जो समझौता हुआ है उसमें, जहाँतक मैं समझ सकता हूँ, सभी पक्षोंने उदारता दिखाई है। यह हृदयोंका मिलन है, और मैं एक हिन्दूकी हैसियतसे एक ओर डॉ० अम्बेडकर, रावबहादुर श्रीनिवासन् और उनके दल तथा दूसरी ओर रावबहादुर एम० सी० राजाका आभारी हूँ। वे यदि चाहते तो, तथाकथित सवर्णोंको पीढ़ियोंके पापोंका दण्ड देनेके लिए, हठीला और विद्रोही रुख अपना सकते थे। उन्होंने यदि ऐसा किया होता तो कमसे-कम मैं तो उनके रवैयेपर रोष प्रकट नहीं कर सकता था और जो अत्याचार हिन्दू समाजके बहिष्कृत लोगोंपर न जाने कितनी पीढ़ियोंसे होते आ रहे हैं, मेरी मृत्यु उनकी एक बहुत ही तुच्छ कीमत होती। परन्तु उन्होंने उससे अधिक सुशोभन मार्ग चुना और इस तरह यह दिखा दिया कि उन्होंने क्षमाके सिद्धान्तका अनुकरण किया है, जिसका सभी धर्म आदेश देते हैं। मुझे आशा है कि सवर्ण हिन्दू अपने-आपको इस क्षमाके योग्य सिद्ध करेंगे और समझौतेके शब्दों और भावको, उसके सारे गूढ़ार्थों-सहित, अमलमें लायेंगे।

यह समझौता अन्तिम लक्ष्यका आरम्भ-मात्र है। इसका राजनीतिक भाग यद्यपि निःसन्देह बहुत ही महत्त्वपूर्ण है, फिर भी सवर्ण हिन्दुओंको आनेवाले दिनोंमें जो सुधार करना है—यानी, हिन्दू आबादीका एक बड़ा भाग जिन सामाजिक और धार्मिक

निर्योग्यताओंसे कराह रहा है उन्हें बिलकुल समाप्त करना — उसके विशाल क्षेत्रमें इसका स्थान बहुत ही छोटा है। मैं यदि अपने साथी सुधारकों और आम तौरपर सभी सवर्ण हिन्दुओंको यह चेतावनी न देता कि उपवास एक सुनिश्चित प्रतिज्ञाके साथ तोड़ा गया है, तो मैं विश्वासघातका दोषी होता। वह प्रतिज्ञा यह है कि यदि इस सुधारके लिए कड़ाईसे प्रयास नहीं हुआ और यह एक मर्यादित अवधिमें नहीं हुआ तो उपवास फिर शुरू कर दिया जायेगा। पहले मैंने एक अवधि निर्धारित कर देनेकी बात सोची थी, पर मुझे लगता है कि अन्तःकरणसे निश्चित पुकार सुने बिना मैं ऐसा नहीं कर सकता

स्वतन्त्रताका सन्देश प्रत्येक अस्पृश्यके घरमें पहुँचना चाहिए और यह केवल तभी हो सकता है जब सुधारक गाँव-गाँव पहुँचें। फिर भी, उत्साहकी इस लहरमें और मुझे इस यातनाकी पुनरावृत्तिसे बचानेकी अत्यधिक इच्छाके कारण, किसी तरहकी जोर-जबर्दस्ती नहीं होनी चाहिए। हमें धैर्यसे मेहनत करके और स्वयं दुःख उठाकर अज्ञानियों और अंधविश्वासियोंके विचारोंको बदलना चाहिए, लेकिन उन्हें बल-प्रयोग द्वारा बाध्य करनेकी कोशिश नहीं करनी चाहिए।

मेरी यह भी इच्छा है कि यह जो लगभग आदर्श समझौता हुआ है, अन्य सम्प्रदाय भी इसका अनुकरण करें और हम आपसी विश्वास, आदान-प्रदान और सभी सम्प्रदायोंकी मूल एकताकी स्वीकृतिसे उज्ज्वल नवयुगका सुप्रभात देख सकें। यहाँ मैं अकेले हिन्दू-मुस्लिम-सिख प्रश्नको ही लूँगा। मुसलमानोंके प्रति मैं जैसा १९२०-२२ में था वैसा ही आज भी हूँ। उनमें जीवन्त एकता और स्थायी शान्ति स्थापित करनेके लिए जिस तरह मैं दिल्लीमें[1] अपने प्राण देनेको तैयार था, उसी तरह अब भी तैयार हूँ। मैं यह आशा रखता हूँ और प्रार्थना करता हूँ कि इस उथल-पुथलके फलस्वरूप इस दिशामें अपने-आप प्रयत्न होगा और तब अन्य सम्प्रदाय भी निःसन्देह अलग नहीं रह सकेंगे।

अन्तमें, मैं सरकार, जेलके कर्मचारियों और मेरी देखभालके लिए सरकारने जो डॉक्टर आदि नियुक्त किये थे उन सबके प्रति आभार प्रकट करना चाहता हूँ। मेरी अधिकसे-अधिक फिक्र और देखभाल की गई। कोई भी कसर नहीं छोड़ी गई। जेलके कर्मचारियोंपर कामका जबरदस्त दबाव रहा, और मैंने देखा कि उन्होंने मेहनतमें कोताही नहीं की। मैं उन छोटे-बड़े सभी कर्मचारियोंका आभारी हूँ।

ब्रिटिश मन्त्रिमण्डलने इस समझौतेपर निर्णय लेनेमें जो तत्परता दिखाई, उसके लिए मैं उसका आभारी हूँ। उस निर्णयकी जो शर्तें मुझे भेजी गई हैं उनके बारेमें मुझे कोई अन्देशा न रहा हो, यह बात नहीं है। मेरे खयालसे उसमें, स्वाभाविक रूपसे समझौतेका केवल वही भाग स्वीकार किया गया है जिसका सम्बन्ध ब्रिटिश मन्त्रिमण्डलके साम्प्रदायिक फैसलेसे है। मैं समझता हूँ कि उन्हें पूरे समझौतेके लिए अपनी स्वीकृतिकी घोषणा करनेमें वैधानिक कठिनाई होगी। परन्तु मैं अपने हरिजन-मित्रोंको, अबसे मैं उन्हें यही नाम देना चाहूँगा, यह विश्वास दिलाता हूँ कि जहाँ

१. सितम्बर, १९२४ में; देखिए खण्ड २५।

तक मेरा सवाल है, मैं पूरे समझौतेसे बँधा हुआ हूँ, और इसकी समुचित पूर्तिके लिए वे मेरे प्राण बन्धक समझें। हाँ, यदि हम स्वयं अपनी स्वतन्त्र इच्छासे इससे भी अच्छा कोई और समझौता कर लें तो बात दूसरी है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २७-९-१९३२ तथा **एपिक फास्ट**, पृ० १४२-५

२२३. तार : एम० कृष्णन् नैयरको[1]

[२७ सितम्बर, १९३२ या उसके पूर्व][2]

आप जानते हैं कि केलप्पन केरलके एक सर्वश्रेष्ठ कार्यकर्ता हैं जिन्हें अस्पृश्योंके कार्यकी सबसे अधिक लगन है। यदि आवश्यक हो तो आप और अन्य प्रभावशाली लोगोंको उपवासकी जगह जाना चाहिए और मन्दिरको हरिजनोंके लिए खुलवाकर[3] केलप्पनके[4] प्राण बचाने चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-९-१९३२

२२४. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको[5]

[२७ सितम्बर, १९३२ या उसके पूर्व][6]

आपकी बधाइयोंके लिए धन्यवाद। सरकार और गोलमेज परिषद्के साथ कांग्रेसके सहयोगपर किसी भी उपयुक्त सुझावका समर्थन करनेसे मुझे सबसे अधिक प्रसन्नता होगी। मैं केवल "उपयुक्त" विशेषणपर जोर देना और उसे रेखांकित करना चाहूँगा। बार-बारकी मेरी घोषणाओंके बावजूद, यह बात आम तौरपर स्वीकार नहीं की जाती है कि मैं अपनी नैसर्गिक प्रवृत्तिसे ही सहयोगी हूँ। मेरे असहयोगका उद्देश्य ही उस सहयोगको खत्म कर देना है जो निःसार है। इसलिए, जहाँतक

१. कृष्णन् नैयर मद्रासके लॉ मेम्बर थे।

२. समाचार-पत्रकी रिपोर्टपर २७ सितम्बरकी तारीख है।

३. कृष्णन् नैयरका विचार था कि मन्दिर क्योंकि निजी सम्पत्ति है, इसलिए उनका या सरकारका उसमें हस्तक्षेप करना उचित नहीं होगा।

४. केलप्पन २० सितम्बरसे अनशन कर रहे थे; देखिए "तार: त्रावणकोरके महाराजाको", २७-९-१९३२।

५. यह समाचार-पत्रोंके प्रतिनिधियोंके एक बधाई-सन्देशके उत्तरमें था, जिसमें यह भी जिज्ञासा की गई थी कि गोलमेज परिषद्के कार्यमें कांग्रेसके सहयोगकी क्या सम्भावनाएँ हैं।

६. समाचार-पत्रकी रिपोर्टपर २७ सितम्बरकी तारीख है।

व्यक्तिगत रूपसे मेरा सवाल है, उचित समय आनेपर मैं अपना सारा प्रभाव सहयोगके पक्षमें प्रयुक्त करूँगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २८-९-१९३२

२२५. तार : एम० आर० जयकरको

२७ सितम्बर, १९३२

एम० आर० जयकर
मलाबार हिल
बम्बई

तारके लिए धन्यवाद। अस्पृश्यताके पूर्णतया मिटनेतक आप अथक प्रयास जारी रखेंगे ऐसी अपेक्षा है।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

जयकरके निजी कागज-पत्र : पत्राचार फाइल सं० ४२१, पृष्ठ ४६ से। सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

२२६. तार : रामेश्वरदास पोद्दारको

२७ सितम्बर, १९३२

रामेश्वर सेठ
धूलिया

तेजीसे पुनः स्वास्थ्य-लाभ कर रहा हूँ। चिन्ता मत करो।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७४०) से।

२२७. तार : त्रावणकोरके महाराजाको

२७ सितम्बर, १९३२

केरलके एक महान् समाजसेवी, केलप्पनके प्राण गुरुवायूरको खुलवानेके लिए अधरमें लटके हैं। यह देखते हुए कि देश-भरमें उठ रही जागृतिकी अपूर्व लहर सभी मन्दिरोंको खुलवानेके पक्षमें है, क्या आप अपना महान् प्रभाव गुरुवायूर और, यदि सम्भव हो तो, अन्य मन्दिरोंको खुलवानेके लिए प्रयुक्त नहीं करेंगे? आपको शायद मालूम ही है कि केलप्पनने मन्दिरको खुलवानेके लिए २० सितम्बरसे उपवास कर रखा है।[१]

गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १-१०-१९३२

२२८. तार : अब्बास तैयबजीको

२७ सितम्बर, १९३२

अब्बास साहब तैयबजी
मार्फत डॉक्टर शाह
वढ़वान सिटी

तुम्हारी घबराहट आस्थाकी कमी जाहिर करती है। सन्तरों और अंगूरोंसे ताकत आती जा रही है। अल्लाहो अकबर।

भुर्रर[२]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५७९) से।

१. पुरुषोतमदाससे इसी तरहका एक तार मिलनेपर त्रावणकोरके दीवानने उन्हें उत्तरमें लिखा था: "महामान्यकी सरकारको इस वक्तव्यपर आश्चर्य है कि गुरुवायूर मन्दिरको खोलनेके लिए महाराजकी स्वीकृति आवश्यक है। गुरुवायूरपर अपने किसी अधिकार या विशेषाधिकारकी सरकारको कोई जानकारी नहीं है। . . . कृपया श्री गांधीको सूचित कर दें।"

२. साधन-सूत्रमें, 'बरी' है जो गलतीसे 'भुर्रर' की जगह लिखा गया लगता है; गांधीजी और तैयबजी अपने पत्र-व्यवहारमें एक-दूसरेके लिए यह दूसरा शब्द ही प्रयुक्त करते थे।

२२९. पत्र : ई० ई० डॉयलको

२७ सितम्बर, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

कल अपना उपवास तोड़नेसे पहले मैंने आपसे जो-कुछ कहा, उसका सार यह था। उपवास तोड़ते समय मेरे मनमें इस बातको लेकर कुछ आशंकाएँ जरूर थीं कि समझौतेके लिए ब्रिटिश सरकारकी स्वीकृति केवल उस भागसे सम्बन्धित थी जो ब्रिटिश सरकारके साम्प्रदायिक निर्णयमें शामिल था। यह शायद स्वाभाविक था। परन्तु मेरे लिए अपनी स्थिति स्पष्ट कर देना आवश्यक था। मेरी स्थिति यह है कि पूरे समझौतेको यथोचित रूपसे पूरा करानेके लिए कर्त्तव्यबद्ध हूँगा। दूसरी बात जिसकी ओर मैंने आपका ध्यान आकर्षित किया था यह थी कि मैं सरकारसे यह अपेक्षा रखूँगा कि इस २० तारीखसे अस्पृश्यताके प्रश्नपर मुझे मित्रोंसे मिलने और सन्देश भेजनेकी जो सुविधाएँ दी गई हैं, वह उन्हें जारी रखेगी। ब्रिटिश स्वीकृतिमें समझौतेके केवल राजनीतिक भागका ही उल्लेख है, पर पूरे हिन्दू समाजके लिए सबसे महत्त्वपूर्ण भाग वह है जिसका सम्बन्ध सामाजिक और धार्मिक सुधारसे है। उसे एक सुदृढ़ आधार प्रदान करनेके लिए मेरा कुछ समयतक कार्यकर्त्ताओंसे सम्पर्क रखना आवश्यक है। किसी तरहकी कोई गलतफहमी न हो, इसीलिए मैंने उपवास तोड़नेसे पहले यह अति महत्त्वपूर्ण बात आपसे कह दी थी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८६०) से। बॉम्बे सीक्रेट ऐब्सट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८००(४०)(४), भाग-१ पृ० १४१ से भी

२३०. पत्र : मीराबहनको

२७ सितम्बर, १९३२

चि० मीरा,

ईश्वर महान् और दयालु है। अपने सेवकोंकी वह उनकी सहन-शक्तिसे अधिक परीक्षा नहीं लेता। इसीलिए सरकारका जवाव समयपर आ गया, और मैं कल पाँच वजे उपवास तोड़ सका। पहले कविवरने प्रार्थना कराई और उनके बाद कुष्ठ-पीड़ित कैदी परचुरे शास्त्रीने, जो कुछ समय आश्रममें रह चुके हैं।

आजके लिए इतना ही काफी है।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२४०) से; सौजन्य : मीरावहन

२३१. पत्र : मीराबहनको

२८ सितम्बर, १९३२

चि० मीरा,

कल तुम्हारे दो पत्र मिले। मैंने खुद एक छोटा-सा पुरजा[1] लिखा था, जो आशा है तुम्हें मिल गया होगा। यहाँसे रोज तुम्हारे पास कुछ-न-कुछ जाता रहा है और आई० जी० ने मुझे आश्वासन दिया था कि मेरे पत्र तुम्हें तुरन्त पहुँचा दिये जायेंगे। इसलिए मेरे पत्र तुम्हें क्यों नहीं मिले, मैं समझ नहीं पाता।

परन्तु, अब तो सब समाप्त हो गया है। मैं खूब संतरे और अंगूर ले रहा हूँ और ताकत आती जा रही है। नींद अच्छी आती है। इसलिए अब चिन्ताकी कोई बात नहीं है।

उड़ीसाका दृश्य, जिसका तुमने वर्णन किया, और मलाबारके दो अन्य दृश्य इन दिनों मेरे मनपर छाये रहे और उनके कारण मैं पीड़ाको सह सका। गुरुदेवके आगमनसे बड़ी सान्त्वना मिली और अब भी मिल रही है। उनसे पूरा-पूरा समर्थन मिला है।

आशा है तुम अब प्रसन्न होगी। अपनी साथिनोंको मेरा आशीर्वाद कहना।

तुम्हें और किसनको प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२४१) से; सौजन्य : मीरावहन

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२३२. पुरजा : पी० एन० राजभोजको

२८ सितम्बर, १९३२

सवर्ण हिन्दुओंके नाम मैं उनके कर्त्तव्यके बारेमें अपनी अपील निकाल चुका हूँ। परन्तु, स्वेच्छासे बने एक हरिजनके नाते, मैं दो शब्द उनसे भी कहना चाहूँगा। आत्म-शुद्धिके इस पर्वमें उन्हें भी अपनी भूमिका अदा करनी है। अपनी दलितावस्थाके कारण, वे सफाई आदिके सामान्य नियमोंका पालन करनेके उपायों और साधनोंसे वंचित रहे हैं और उन्हें उसके लिए प्रोत्साहन भी नहीं मिला है। पर हमें यह आशा करनी चाहिए कि हमारे लिए एक नये युगका अरुणोदय हुआ है। मुझे आशा है कि हरिजन इस चीजको समझेंगे और जहाँतक सम्भव है, सफाईके नियमोंका पालन करेंगे, मादक पेयों और द्रव्योंसे बचेंगे और सभी सामाजिक बुराइयोंसे मुक्त होनेके लिए जबरदस्त कोशिश करेंगे।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९०) से।

२३३. तार : के० केलप्पनको

२९ सितम्बर, १९३२

जमोरिनने तार देकर मुझसे कहा है कि मैं आपसे उपवासको कुछ महीनोंके लिए स्थगित करनेकी अपील करूँ। उनका कहना है अभी अस्पृश्योंके प्रवेशसे कट्टरपंथी चेतनाको आघात पहुँचेगा और इस तरहका आघात पहुँचाना जोर-जबरदस्ती होगी। आप स्वयं सोचिए कि इस आधारपर उपवासको स्थगित करनेकी आपके लिए कोई गुंजाइश है या नहीं, और जमोरिनने अपने उक्त तारमें इस सम्बन्धमें जो कुछ कहा है क्या आप उसे ध्यानमें रखते हुए, ऐसा कह सकते हैं कि इस आखिरी कदमका नोटिस आपने काफी समय पहले दिया था।[1]

गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ३०-९-१९३२

१. केलप्पनने इसका उत्तर इस प्रकार दिया था : "जमोरिन इस बातकी शिकायत नहीं कर सकते कि नोटिस काफी दिन पहले नहीं दिया गया था। एक-दो आदमी हमेशा ऐसे मिल जायेंगे जो किसी भी सुधारका अनंत कालतक विरोध करेंगे। पर हजारों दलित बंधुओंके हृदयों और आत्म-सम्मानको आघात पहुँचानेका सवाल कट्टरपंथी चेतनाको तथाकथित आघात पहुँचानेसे अधिक यथार्थ और महत्त्वपूर्ण है।"

२३४. तार: के० केलप्पनको

[२९ सितम्बर, १९३२][१]

तुम्हारा पत्र अभी-अभी मिला। आज बहुत सवेरे मैंने पण्डित मालवीय, श्री रंगस्वामी अय्यंगार और अन्य लोगोंसे मालवीयजी के वहाँ जानेके औचित्यके बारेमें सलाह-मशविरा किया। कुछ और लोगोंके साथ मैंने तार द्वारा भी सम्पर्क किया है। वे सब मुझपर यह दबाव डाल रहे हैं कि मैं तुम्हें उपवास बन्द करनेका आदेश दूँ। मैं झिझक रहा था। पर तुम्हारा पत्र मेरा मार्ग स्पष्ट कर देता है। मैं निश्चित रूपसे यह सोचता हूँ कि तुमने दो गलतियाँकी हैं। यद्यपि तुम्हें मुझसे सलाह करनी चाहिए थी, पर चाहे किसी भी कारण हो, तुमने वैसा नहीं किया। दूसरे, तुम्हें उपवासके इरादेका काफी पहलेसे नोटिस देना चाहिए था। इसलिए मेरी पक्की सलाह यह है कि तुम्हें इस तारके आधारपर उपवास स्थगित कर देना चाहिए और उसे स्थगित करनेकी तारीखसे पूरे तीन मासका नोटिस दे देना चाहिए। यदि इस बीच मन्दिर हरिजनोंके लिए नहीं खोला जाता है तो मेरी सहमति मिलनेपर तुम उपवास फिर शुरू कर दोगे। इस अवधिमें मन्दिरको खुलवानेके लिए पूरी एकाग्रतासे प्रयत्न किया जायेगा और यदि आवश्यकता हुई तो मालवीयजी वहाँ जायेंगे। तुम मुझे यह सूचना देकर कि तुमने मेरी सलाह मान ली है, मुझे चिन्तासे बहुत राहत दे सकते हो।[२]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३-१०-१९३२

१. **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-२, पृ० ८९।

२. केलप्पनका उत्तर था: "न तो जमोरिन और न जन-साधारण ही यह कह सकते हैं कि नोटिस काफी पहले नहीं दिया गया था। सत्याग्रहके लिए दस महीनेका नोटिस पर्याप्त था। स्वयंसेवक धूप और वर्षामें खड़े हैं — यह दृश्य मेरे उपवाससे भी अधिक हृदय-स्पर्शी है। . . . मेरा खयाल है, मेरे उपवासने जनताको जगा दिया है और यदि यह जारी रहा तो संघर्षमें शीघ्र ही विजय मिल जायेगी। मेरी रायमें उपवास तोड़ देनेसे आन्दोलन कमजोर पड़ जायेगा। . . ."

२३५. तार : रामस्वामी अय्यर गोपाल नायरको

[२९ सितम्बर, १९३२][1]

रामस्वामीअय्यर गोपालनायर
चावक्काट

स्वयं वैसी ही परिस्थितिमें होनेके कारण मैं केलप्पनकी अन्तःप्रेरणामें हस्तक्षेप नहीं कर सकता। यदि ऐसा निःस्वार्थ और सच्चा सेवक चला जाता है तो इसकी लज्जा आपको और उन दूसरे लोगोंको उठानी होगी जो वहाँ हैं। मैं मानता हूँ, केलप्पनके उपवासका मेरे उपवाससे कोई सम्बन्ध नहीं तथापि पूरा विश्वास कर लेनेके लिए मैंने अभी-अभी केलप्पनको लम्बा तार भेजा है [कि] यदि उनका उपवास मेरे अनुकरणमें हो तो वे उसे तोड़ दें।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० २०-९।

२३६. पत्र : एम० जी० भंडारीको

२९ सितम्बर, १९३२ (अपराह्न १-४५)

प्रिय मेजर भण्डारी,

आज प्रातः १२-३० बजे जो जबानी आदेश आपने मुझतक पहुँचाये हैं, उनका अर्थ मैं इस प्रकार लगाता हूँ: आजसे मुझे अस्पृश्यता या अन्य किसी सार्वजनिक कार्यके सिलसिलेमें श्रीयुत घनश्यामदास बिड़ला और मथुरादास वसनजीके सिवा और किसी भी मुलाकातीसे मिलनेकी अनुमति नहीं होगी। दूसरे, श्रीमती गांधीको तुरन्त जनाने यार्डमें भेज दिया जायेगा। और सब मुलाकातें उपवाससे पहलेकी तरह, उन आम हिदायतों द्वारा नियमित होंगी जो मुझे मेरे यहाँ प्रवेशके तुरन्त बाद दी गई थीं और जो बादमें संशोधित हुई थीं। इसका अर्थ यह है कि मुझे श्रीमती सरोजिनी देवीसे, जिनकी उपस्थिति मेरी बीमारीमें मेरे लिए आरामदेह सिद्ध हुई है, या अपने पुत्र देवदास और उसकी भावी पत्नीसे, या आश्रमवासियोंसे, जो इस संकट-कालमें मेरी सेवा-शुश्रूषा करते रहे हैं, मिलनेका अधिकार नहीं रहेगा। इस तरह बहुत ही

१. देखिए पिछला शीर्षक।

आकस्मिक और कठोर ढंगसे मुझे यह याद दिलाया गया है कि मैं केवल एक कैदी हूँ जिसका शरीर पूर्णतया सरकारकी दयापर निर्भर है। मुझे स्वीकार करना चाहिए कि मैं इस चीजके लिए कतई तैयार नहीं था। परन्तु मैं सरकारको यह बताना चाहूँगा कि मुझे अब [उपवासके बाद] भी काफी कमजोर माना जा रहा है और अपने बिस्तरसे उठनेतककी इजाजत नहीं है। मैंने यह आशा की थी कि कमसे-कम पूर्ण स्वस्थ होनेतक मुझे सभी तरहके अनावश्यक स्नायविक आघातसे बचाया जायेगा। तथापि मैं स्वीकार करता हूँ कि सरकार इस चीजको बहुत महत्त्वकी समझे, यह जरूरी नहीं है और यदि इससे मुझे चिन्ता होती भी है तो बहुत नहीं होनी चाहिए। वस्तुत: मैं सरकारका आभारी हूँ कि उसने उपवासके दौरान मेरे लिए डॉक्टरी देख-भालकी व्यवस्था की और मुलाकातियों और मित्रोंको स्वतन्त्रतासे मेरी सेवा-शुश्रूषा करने दी। लेकिन जो चीज मैं नहीं समझ पाता हूँ वह तो यह है कि अस्पृश्यतातकके सिलसिलेमें सिवा श्रीयुत घनश्यामदास और मथुरादासके और सभी मुलाकातियोंका आना अचानक रोक दिया गया है। सरकार देशमें आई अपूर्व जागृति और इस उपवासकी प्रतिक्रियाओंसे अनभिज्ञ नहीं हो सकती। उपवासकी सीमाओंको अभी ठीकसे समझा नहीं गया है और जोशीले नौजवान उसकी अंधाधुंध नकल कर रहे हैं। अत: मैं यह बहुत ही आवश्यक समझता हूँ कि अस्पृश्यताके सिलसिलेमें मैं जिससे भी आवश्यक समझूँ उससे मिलनेकी मुझे पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए। पत्र-व्यवहारके सिलसिलेमें सरकारने अपने आदेश अभी बदले नहीं लगते हैं। यह बतानेकी जरूरत नहीं है कि जो बात अस्पृश्यताके सिलसिलेमें मुलाकातियोंपर लागू होती है वही पत्र-व्यवहारपर भी लागू होती है। मुझे यह कहनेकी भी जरूरत नहीं है कि यदि मुलाकातियोंसे मेरी भेंटोंके समय सरकारी अधिकारी या दुभाषिये उपस्थित रहते हैं और मेरे पत्र-व्यवहारकी जाँच की जाती है, तो मुझे उसमें रत्ती-भर भी आपत्ति नहीं होगी। क्योंकि यह मामला बहुत ही आवश्यक है, इसलिए मैं आशा करता हूँ कि सरकार यथासम्भव शीघ्रातिशीघ्र अपने निर्णयसे मुझे सूचित कर देगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८६१) से। बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८००(४०)(४), भाग १, पृ० १९१ से भी

२३७. पत्र : मीराबहनको

२९ सितम्बर, १९३२

चि० मीरा,

उपवास टूटनेके बाद यह तीसरा पत्र है, जो संतरों और अंगूरके रसका पहला फलाहार लेनेके तुरन्त बाद लिखा जा रहा है। यही मेरा मुख्य आहार रहा है। कल मैंने तोरईका पतला रसा लिया था। आज दूध लेनेका विचार है।

तुम्हारे पत्र नियमित रूपसे आते रहे हैं। मेरे तुम्हें क्यों नहीं मिले, मैं समझ नहीं पाता। मैं पूछताछ कर रहा हूँ।

ताकत तेजीसे आती जा रही है। कलतक डेढ़ पौंड वजन बढ़ गया था, यानी ९५ पौंड हो गया था।

रोमाँ रोलाँको मैंने पत्र[1] लिखा था। उपवास टूटनेपर उनका तार मिला था।

तुम्हारा सन्देश मैंने कल गुरुदेवको सुनाया और तुम्हारी ओरसे उनके चरण छूए क्योंकि कविमना महादेव तो ऐसा करना भूल ही गया था।

बा, बेशक, यहाँ आते ही अपना सब दुःख भूल गई। ऐसा लगता है कि उसने इस सबको, सचमुच, बड़ी बहादुरीसे सहा है।

आशा है, तुम सब अब बिलकुल निश्चिन्त हो गयी होगी। अछूतोंने युगोंसे जो कष्ट सहे हैं, उपवास उनकी तुलनामें वस्तुतः कुछ नहीं था।

तुम्हें और किसनको प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२४२) से; सौजन्य : मीराबहन

१. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

२३८. पत्र : नारणदास गांधीको

२९ सितम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

सबको लिखनेके लिए आकुल हो रहा हूँ। आशा है, दो-तीन दिनोंमें लिखनेको तैयार हो जाऊँगा। आज सुबह कुछ फल खाकर चार-पाँच पत्र, जो बहुत जरूरी लगे, लिख डाले।

त्रिवेदीकी[1] भाभीके दुर्घटनाग्रस्त हो जानेके कारण गुजर जानेकी खबर शायद तुमने सुनी होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२५७ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

२३९. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रचूजको

३० सितम्बर, १९३२

मेरे उपवाससे आपके मनपर क्या बीती है, यह तो आपके पहले तारसे ही समझमें आ गया था। मेरे लिए यह ईश्वरका स्पष्ट आदेश था। घटनाओंने मजाक उड़ानेवालोंके विचार भी बदल दिये हैं। सनातनियोंकी ओरसे भारी प्रमाणमें और अनुकूल उत्तर मिलेगा, इसकी तो मुझे अपेक्षा थी, पर [सहानुभूति और समर्थनकी] भावनाका जो विराट् प्रदर्शन सहसा हुआ उसके लिए मैं तैयार नहीं था। लेकिन मैं इससे धोखा नहीं खाऊँगा। अभी यह देखना है कि जो मन्दिर खोले गये हैं वे खुले रहते हैं या नहीं और इस दिशामें जो अन्य विविध कार्य किये गये हैं वे जारी रहते हैं या नहीं। इसलिए उपवासका यह टूटना उसका केवल स्थगित होना ही है। फिर भी मुझे कोई चिन्ता नहीं है। उपवास और उसका टूटना ईश्वरके किये हुआ है। और उसका फिर शुरू होना भी, यदि वह फिर शुरू हुआ, उसीपर निर्भर है।

गुरुदेवका आगमन आशीर्वाद-रूप था। हम अब पहलेकी अपेक्षा एक-दूसरेके अधिक निकट आ गये हैं। पता नहीं महादेवने आपको यह लिखा या नहीं कि उपवाससे पहले दिन उन्हें लिखे मेरे पत्र[2] और मुझे भेजे गये उनके आशीर्वादके

१. कृषि-विश्वविद्यालय, पूनाके जे० पी० त्रिवेदी।

२. देखिए "पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको", २०-९-१९३२।

तारका संगम हो गया था। और उसके बाद ही आ गया शास्त्रीजी का अत्यन्त प्रेम-भरा तार।

पर यह सब तो अब इतिहासकी बात हो गई है। मैं रोज शक्ति प्राप्त कर रहा हूँ। कृपया कतई चिन्ता न करें।

[पुनश्च :]

मैं अभी जब यूरोपको प्रेम-पत्र लिख रहा था कि बेरियरके हस्ताक्षरोंवाला आपका तार भी मिला। ईश्वरको धन्यवाद। मैं जानता हूँ कि आप कठोर श्रम कर रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ९०-१

२४०. पत्र : हॉरेस एलेक्जैंडरको

३० सितम्बर, १९३२

प्रिय हॉरेस,

आज मैं अपनी शक्ति अपने इंग्लैंडवासी मित्रोंको प्रेम-पत्र लिखनेमें खर्च कर रहा हूँ। मैं अभीतक इतना अधिक लिख चुका हूँ कि अब तुम्हें, ऑलिवको और आश्रमके सभी भाई-बहनोंको अपना प्यार भेजनेके अतिरिक्त और कुछ नहीं कहूँगा। उपवासके दिनोंमें अंग्रेज मित्रोंका खयाल मेरे हृदयमें बराबर बना रहा।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४१४) से।

२४१. पत्र : एफ० मेरी बारको

३० सितम्बर, १९३२

प्रिय मेरी,

यह केवल तुम्हें अपना प्यार भेजनेके लिए लिख रहा हूँ। तुम्हारे भेजे सुस्वादु सन्तरे मिले। बनयन [की पुस्तक]से जो अंश तुमने भेजा है बहुत ही अच्छा है। मैं बराबर शक्ति अर्जित कर रहा हूँ। हर घड़ी मैं यही रटता रहता हूँ कि ईश्वर महान् और दयालु है।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९८४) से। सी० डब्ल्यू० ३३१२ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

२४२. पत्र : चि० य० चिन्तामणिको

३० सितम्बर, १९३२

त्रिविध सन्तापके उन दिनोंमें ईश्वर मेरा पथ-प्रदर्शक और सहारा था।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ९४

२४३. पत्र : वेरियर एल्विनको

३० सितम्बर, १९३२

संघके[1] सदस्योंके साथ मेरे सीधे सम्पर्कके लिए, बहुत-सी अन्य बातोंके अलावा, मेरा उपवास भी आवश्यक था। फादर विन्सलोसे मेरी प्रेम-भरी बातचीत हुई। इन भाइयोंके साथ परिचय करके प्रसन्नता हुई। श्यामराव भी उनके साथ थे।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ९२

२४४. पत्र : अगाथा हैरिसनको

३० सितम्बर, १९३२

प्रिय अगाथा,

तुम्हारी व्यथाको मैं तुम्हारे तार और तुम्हारे पत्रमें पढ़ सका था। पर जिस उद्देश्यके लिए हम यह-सब सह रहे हैं उसके लिए यह कोई बड़ी कीमत नहीं है। मुझे इस बातकी प्रसन्नता थी कि चार्ली एन्ड्र्यूज तुम्हारे साथ हैं। मुझे पूर्ण विश्वास था कि तुम जो भी कर सकती हो कर रही हो, इससे अधिककी किसीसे अपेक्षा नहीं की जा सकती। एक-दूसरेके पत्र शायद तुम पढ़ती ही होगी, इसलिए मैं प्रेमके इस छोटेसे पुरजेमें अधिक कुछ नहीं कह रहा हूँ।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४५८) से।

१. पूनाका क्राइस्ट सेवा संघ।

२४५. पत्र : म्यूरिएल लेस्टरको

३० सितम्बर, १९३२

सब समाप्त हो गया है और जिस उपवासकी इतनी धूम मची थी, वह अतीत की बात हो गई है। यह अनुभव भोगने लायक ही था, और नहीं तो केवल इसी लिए कि इससे विश्वके सभी भागोंसे प्रेमकी वर्षा हुई और भारतमें एक सिरेसे दूसरे सिरेतक सुधारकी लहर दौड़ गई।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ९२

२४६. पत्र : एस्थर मेननको

३० सितम्बर, १९३२

मेरी प्यारी बच्ची,

इतनी दूरसे भी मैं तुम्हारी व्यथाको समझ सकता था। परन्तु ईश्वर हमारे पास अग्निपथसे ही आता है। इस तरहकी पावन वेदनामें एक गहरे अगोचर आनन्द का अनुभव होता है। मुझे आशा है इस परीक्षामें तुम भी इस तरहके आनन्दमें भागीदार बनी होगी। इंग्लैंडसे प्रेम-सन्देश भेजनेवालों में हॉरेस एलेक्जैंडर और एन्ड्र्यूजके साथ मैंने तुम्हारा नाम भी देखा या कहूँ कि सुना था। मैं दिन-प्रतिदिन शक्ति प्राप्त कर रहा हूँ।

आज तुम मुझसे लम्बे पत्रकी अपेक्षा तो नहीं रखती होगी। मुझमें जो शक्ति है, वह मैं इंग्लैंडके मित्रोंको प्रेम-पत्र लिखनेमें खर्च कर रहा हूँ।

सस्नेह। बच्चोंको प्यार।

बापू

[अंग्रेजीसे]

माई डियर चाइल्ड, पृ० ९३

२४७. पत्र : हे० सॉ० लि० पोलक और मिली पोलकको

३० सितम्बर, १९३२

प्रिय हेनरी और मिली, या तुम चाहो तो, मिली और हेनरी,

तुम्हारे तारों और मन-ही-मन मिले संदेशोंसे मुझे यह पता चल गया है कि आनन्दमयी पीड़ाके इन तमाम दिनोंमें तुमने क्या महसूस किया होगा और क्या किया होगा। यह नये जन्मकी पीड़ा थी और निस्सन्देह, यह मेरे लिए और मेरा खयाल है, अंधविश्वास और अज्ञानमें डूबे हिन्दू धर्मके लिए भी नया जन्म रहा है। लोगोंकी भावनाका जो महान् दर्शन हुआ, वह एक इतनी बड़ी उपलब्धि थी कि उसके लिए उपवास उचित ही था। भारतके बाहरसे, इंग्लैंडसे प्रेमके बहुत-सारे और सच्चे संकेत मिले। इन सब बातोंको देख-सुनकर मेरा वह त्रिविध ताप बहुत कम हो गया था।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ९३

२४८. पत्र : रेजिनाल्ड रेनॉल्ड्सको

३० सितम्बर, १९३२

प्रिय रेनॉल्ड्स

तुम्हें मुझसे प्रेमके किसी लिखित संकेतकी आवश्यकता नहीं है। पर क्योंकि मैं अंग्रेज मित्रोंको लिख रहा हूँ, इसलिए प्रेमका यह अनावश्यक शब्द तुम्हें भी भेज रहा हूँ।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४५४२)से; सौजन्य : स्वार्थमोर कॉलेज, फिलाडेल्फिया

२४९. पत्र : रोमाँ रोलाँ और मैडलिन रोलाँको

३० सितम्बर, १९३२

आपका प्रेम-भरा सन्देश मिला। पीड़ाकी इस अवधिमें आप सदा मेरी स्मृतिमें झूलते रहे। इस महान् नाटकमें ईश्वरकी दया भरपूर रही और आदिसे अन्ततक उसका प्रमाण मिलता रहा। इसे समाप्त करते-करते मीराका पत्र मिला है। उसने आनन्द अनुभव किये बिना पीड़ा सही है। पर उसने काँटोंकी सेज ही चुनी है और वह उसपर बहादुरीसे लेटी हुई है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ९३

२५०. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

३० सितम्बर, १९३२

परम प्रिय भाई और मित्र,

आपका तार[1] और आपका पत्र मेरा धन और मेरा आहार है। आपके बारेमें मुझे गलतफहमी नहीं होगी। मैं समझता हूँ कि अधिक अच्छी परिस्थितियोंमें, मुझे लन्दनके अपने कार्यका पूरा-पूरा और समझमें आने लायक हिसाब देनेमें कोई कठिनाई नहीं होगी। पर वह एक छोटी बात है। मैं तो यह चाहता हूँ कि हमारा प्रेम कठिनसे-कठिन परीक्षामें भी पूरा उतरे।

मैं स्वास्थ्य-लाभ कर रहा हूँ। हार्दिक प्रेम।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ९४

१. देखिए "तार : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको", २५-९-१९३२।

२५१. पत्र : अब्बास तैयबजीको

३० सितम्बर, १९३२

प्रिय भुर्रर,

आपकी आस्था सचमुच जबरदस्त थी और घटनाओंसे वह सही सिद्ध हुई है। वह इतनी जीवन्त थी कि आपको दूसरे बहुत-से मित्रोंकी तरह मेरे पास दौड़ आनेसे अपनेको रोकनेके लिए किसी प्रयासकी आवश्यकता नहीं पड़ी। सचमुच बेगम अब्बास की भविष्यवाणी या उनका पूर्वाभास सच निकला। उन्हें मेरी हार्दिक बधाई दीजिए।

दूध और फलोंसे मुझमें शक्ति आती जा रही है।

हम सबका प्रेम स्वीकार करें।

तुम्हारा,
भुर्रर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५८०) से।

२५२. पत्र : एडा वेस्टको

३० सितम्बर, १९३२

प्रिय देवी,

मेरे उपवासकी खबर सुनकर तुमपर क्या बीती होगी, मैं जानता हूँ। पर ईश्वरकी इच्छा यही थी। उसके बादकी हर घटनामें क्या तुम उसे देख नहीं सकती थीं?

सप्रेम,

भाई

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४४३४) से; सौजन्य : ए० एच० वेस्ट

२५३. पत्र : नाजुकलाल और मोतीबहन चोकसीको

३० सितम्बर, १९३२

चि० नाजुकलाल और मोती,

तुम्हारा पोस्टकार्ड मिला था। ईश्वरने मुझे नया जीवन ही दिया है। वह अपनी इच्छाके अनुसार राह दिखायेगा।

आशा है, तुम तीनों कुशल होगे। मेरी शक्ति धीरे-धीरे बढ़ रही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० १२१५१) से।

२५४. पत्र : डॉ० हीरालाल शाहको

३० सितम्बर, १९३२

इस उपवासमें शारीरिक यातना काफी भोगनी पड़ी। अन्त्यज भाई-बहनोंके प्रति हमने जो पाप किया है, उसके प्रायश्चित्तके लिए यह यातना भोगनी पड़ी, सो ठीक ही हुआ है। मगर शरीर चोर है। जितना दुःख टाल सके, उतना टालना चाहता है। मैं नहीं जानता, अभी मेरे भाग्यमें कितने उपवास और लिखे हैं। मगर पानी आनेसे पहले मेंड़ बाँधना चाहता हूँ। जैन उपवासमें अंबर किसलिए लेते हैं? कितना लेते हैं? क्या इससे मुँहमें लारका आना मिटता है? पानी पीनेमें मदद मिलती है? अम्बर किससे पैदा होता है? कोई-कोई तो कस्तूरी लेते हैं। इस बारेमें अनुभवियोंसे जानकारी मिल सके, तो भेजना।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ९४

२५५. पत्र : शारदा चि० शाहको

३० सितम्बर, १९३२

तुम्हारे पत्रकी हर पंक्तिसे प्रेम टपकता है। तुम-जैसी पुत्री मुझे मिले, यह मेरा सौभाग्य ही है न? तुम-जैसी बहनोंने मुझे जो पद दिया है, वह ले तो बैठा हूँ, लेकिन ईश्वरके नामपर लिया है। इसकी शोभा और मेरी प्रतिष्ठा उसीके हाथमें हैं। मुझमें बड़ी तेजीसे शक्ति आ रही है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ९४

२५६. पत्र : सेठ गोविन्ददासको

३० सितम्बर, १९३२

अंत्यज भाइयोंके प्रेमके बारेमें मुझे कभी अविश्वास था ही नहीं। ईश्वरने सब अच्छा ही किया है अब हम आशा रखें कि जो उत्साह पैदा हुआ है, चिरस्थायी रहेगा और अस्पृश्यताकी जड़ उखड़ जायेगी।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ९५

२५७. तार : डॉ० मु० अ० अन्सारीको

[१ अक्टूबर, १९३२][1]

एम० ए० अन्सारी
पेरिस

हिन्दू-मुस्लिम-सिख एकताकी अपील जारी करके मैंने आपकी इच्छा पहले ही पूरी कर दी।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग ३, पृ० २६५

१. यद्यपि साधन-सूत्रमें इस तारका उल्लेख ५ अक्टूबरकी तारीखमें है, पर गांधीजी की "दैनन्दिनी, १९३२"में यह इसी तारीख में दर्ज है।

२५८. तार : गणेशन्को[1]

१ अक्टूबर, १९३२

शंकरकी तरहके उपवास चाहे अनुचित न कहे जायें किन्तु वे उपयुक्त समयके पूर्व किये जा रहे हैं, ऐसा तो है ही। उसे उपवास छोड़ देनेको कहो।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ९७

२५९. तार : के० केलप्पनको

[१ अक्टूबर, १९३२][2]

आपका तार मिला। विशुद्ध नीतिके आधारपर जो निर्णय लिया गया है उसे उसके तुरन्त ही होनेवाले परिणामोंसे प्रभावित नहीं होने देना चाहिए। मैं यह राय फिर दोहराता हूँ कि आप उपवास स्थगित कर दें और मेरे तारके अनुसार नोटिस दें।[3] ईश्वर सहायक रहा तो मैं इस भारमें हाथ बँटाऊँगा। सहमतिकी[4] तारसे सूचना दें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३-१०-१९३२

१. यह गणेशन्के तारके उत्तरमें था जिसमें कहा गया था कि शंकर पार्थसारथि एक मन्दिरको हरिजनोंके लिए खुलवानेके लिए उपवास कर रहे हैं।

२. तारीख **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-२, पृ० ९७ से ली गई है।

३. देखिए "तार : के० केलप्पनको", २९-९-१९३२।

४. केलप्पनने अपना उपवास २ अक्टूबरको प्रातः ८ बजे तोड़ा।

२६०. तार: डॉ० मोहनलालको[1]

१ अक्टूबर, १९३२

डॉ० मोहनलाल
अलीगढ़

यदि बिलकुल सचाईसे हो और भंगीभाई इसकी असली भावनाको समझें, तो सवर्ण हिन्दुओंका इस तरह असली भंगियोंके साथ सफाईका काम करना अच्छा हो सकता है।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८५६२) से। **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-२, पृ० ९८से भी

२६१. पत्र: अब्दुल रहीमको

१ अक्टूबर, १९३२

आपकी इस बातसे मैं बिलकुल सहमत हूँ कि दूसरे साम्प्रदायिक सवाल भी आपसी आदान-प्रदानकी भावनासे सुलझाये जाने चाहिए। मुझे आशा है कि उस दिशामें प्रयत्न किये जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ९६

२६२. पत्र: ऋसवेलको

१ अक्टूबर, १९३२

हाँ, ईश्वरकी मुझपर बड़ी कृपा रही है।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ९६

१. यह डॉ० मोहनलालके तारके उत्तरमें था जिसमें कहा गया था कि सवर्ण हिन्दुओंने अस्पृश्यता-निवारण-कार्यमें अपने सहयोगका प्रदर्शन करनेकी दृष्टिसे टट्टियोंकी सफाई शुरू कर दी है।

२६३. सन्देश : फिलिप किंग्सलेको

१ अक्टूबर, १९३२

मैं चाहता हूँ कि पिछले कुछ दिनोंमें भारतमें जो घटनाएँ घटी हैं, अमेरिका उन सबमें ईश्वरका हाथ देख सके। वह मनुष्यका काम नहीं था; वह निस्सन्देह ईश्वरकी कृपा थी।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ९५

२६४. पत्र : मीराबहनको

[१ अक्टूबर[1]], १९३२

चि० मीरा,

क्योंकि मेरे पत्र तुम्हें नियमित रूपसे नहीं मिल रहे थे, इसलिए कल मैंने तुम्हें जान-बूझकर नहीं लिखा। यह पत्र मैं बहुत सवेरे और अंगूरका रस लेनेके तुरन्त बाद लिख रहा हूँ। मैं स्वस्थ होता जा रहा हूँ। मेरा वजन, जो सोमवारको ९३½ था, कल ९९¾ हो गया। यह सुधार आश्चर्यजनक है। मैं एक या दो दिनमें थोड़ा चलने लगूँगा। आँतोंको अब भी एनीमाकी जरूरत होती है, पर मुझे उम्मीद है कि वे शीघ्र ही सामान्य स्थितिमें आ जायेंगी। आहार है : आठ सन्तरे, अंगूर, चार चायके चम्मच-भर ग्लूकोज पाउडर, १½ पौंड दूध, सब्जियोंका पतला रसा और टमाटर। इनमें से कोई-न-कोई चीज औसतन हर ढाई घंटे बाद लेता हूँ। कल मैंने २३५ तार काते पर कोई खास थकान महसूस नहीं हुई। कताई दो बारमें की गई थी। इंग्लैंडकी डाक और यहाँ जिनके पत्रोंका उत्तर देना था, उन्हें भी कुछ पत्र लिखे। बीच-बीचमें भोजन और विश्रामका अन्तराल देते हुए कल मैंने रात आठ बजेतक काम किया था और ऐसा नहीं लगता कि उससे तबीयतपर कोई बुरा असर हुआ है। यह सब बड़ी अच्छी प्रगति है। अतः मैं बराबर यही रटता रहता हूँ कि "ईश्वर महान् और दयालु है"। उपवासका जो फल निकला उसकी तुलनामें वह कुछ नहीं था। वह उपलब्धि मनुष्यकी नहीं थी। वह ईश्वरका काम था। तुम्हारा विषाद इस सबसे मिट जाना चाहिए।

समाचार-पत्रोंसे तुमने यह जान ही लिया होगा कि मुलाकात आदिके बारेमें उपवाससे पहलेके प्रतिबन्ध एक तरहसे लागू ही हैं। बा दिनमें मुझसे मिल सकती है।

१. साधन-सूत्रमें ३१ सितम्बरकी तारीख दी गई है जो कि अशुद्ध है। यह पत्र **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-२, पृ० ९६ पर इसी तिथिके अन्तर्गत रखा गया है।

तुम्हें और किसनको प्यार।

बापू

[पुनश्च :]

मेरा खयाल है तुम्हारे साथ अब और कोई नहीं है।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२४३) से; सौजन्य : मीराबहन

२६५. पत्र : आनन्दशंकर बा० ध्रुवको

१ अक्टूबर, १९३२

मेरे खयालसे मेरे अनुभव ईश्वर-साक्षात्कार ही हैं। दूसरे साक्षात्कारमें और ज्यादा क्या होगा?

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ९६

२६६. पत्र : मनमोहनदास पी० गांधीको

[१ अक्टूबर][1], १९३२

भाई मनमोहनदास,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं धीरे-धीरे शक्ति प्राप्त कर रहा हूँ।

किसी एक अन्त्यज बालक या वयस्कको घरमें रखकर सीधी सेवा तो अवश्य ही करना।

तुम्हारी पुस्तकका[2] अनुवाद हो गया, यह ठीक हुआ।

तुम्हारा नाम मेरे-जैसा है इसलिए कभी-कभी मेरे नामके पत्र तुम्हारे पास पहुँचेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १६) से।

१. "दैनन्दिनी, १९३२" से। पत्रमें "३१-९-१९३२" तिथि ही दी गई है, जो स्पष्टतः चूक है।

२. **परदेशी कापड़नो सामे हरीफाई केम करवी**का अंग्रेजी अनुवाद **हाउ टु कम्पीट विद फॉरेन क्लॉथ** शीर्षकसे।

२६७. पत्र : जमशेद मेहताको

१ अक्टूबर, १९३२

ईश्वरके नामका कितना दुरुपयोग होता है, यह सोच लीजिए। जब वह इस दुरुपयोगको सह लेता है, तो फिर महान् शक्तियोंका उपयोग करनेमें उनका दुरुपयोग भी हो जाये, तो वह सहने लायक है। फिर भी, जैसा आप कहते हैं, उसे रोकनेके लिए भरसक कोशिश करनी ही चाहिए। वह करनेमें मैं नहीं चूकूँगा।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ९६

२६८. पत्र : कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशीको

[१ अक्टूबर][1], १९३२

भाईश्री मुंशी,

तुम्हारा प्रेमार्द्र पत्र मिला था। जो शक्ति मुझमें आ गई है उसका उपयोग ऐसे पत्रोंके उत्तर देनेमें कर रहा हूँ। जो-कुछ हुआ है वह मनुष्यका काम ही नहीं था। 'मैंने' कुछ किया है, ऐसा खयालतक मेरे मनमें नहीं आता। "जो-कुछ कर वह मुझे अर्पित करके मेरे लिए कर", 'गीता' के इस वाक्यका अनुभव मैं प्रतिक्षण करता रहता हूँ और [आनन्द] रसके घूँट पीता रहता हूँ। लीलावतीको पत्र दो तो लिखना कि समय-समयपर मैं तुम दोनोंको याद करता हूँ।

सरदार और महादेव मजेमें है। वहाँ जो भाई हैं, उनको हमारा वन्देमातरम्।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७५१७) से; सौजन्य: क० मा० मुंशी

२६९. तार : जबलपुरके एक वकीलको

१ अक्टूबर, १९३२

मैं कोई राय नहीं दे सकता।[2]

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ९८

१. **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-२ से। साधन-सूत्रमें "३१-९-१९३२" तारीख दी गई है, जो स्पष्टतः चूक है।

२. इस तारका मूल पाठ उपलब्ध नहीं है। नागपुरके एक वकीलने गांधीजी से पूछा था कि कांग्रेसके विरोधके बावजूद क्या अन्तर्जातीय भोज करना ठीक होगा।

२७०. पत्र : रेहाना तैयबजीको

१ अक्टूबर, १९३२

प्यारी बेटी रेहाना,

फाकाके बाद यह पहला उर्दू खत है। तुम्हारे भजन बहुत अच्छे हैं। फाका शुरू करनेके वक्त जो भजन गाया वह तुम्हारा नहीं है, तो क्या हुआ? आखिर है तो तुमने दी हुई उमदा चीज। हाँ, तुम्हारा ही होता तो मुझे बहुत ज्यादह अच्छा लगता। ठीक है, दुबारा जब फाकाका मौका खुदा भेज देगा तब तुम्हारा ही बना हुआ भजन मुझे चाहिए। आजसे तैयार करो। बाकी सब अब्बाजानके खतसे।[1]

बापू

उर्दूकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६८६) से।

२७१. तार : रामशेषन्को

[१ अक्टूबर, १९३२ या उसके पश्चात्][2]

[तथाकथित अछूतोंको] न छूने, न देखने और पास न आने देनेकी बुराईको मिटानेपर सारा ध्यान लगा दो।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १८५६८) से।

२७२. तार : रलियातबहन वृन्दावनलालको[3]

२ अक्टूबर, १९३२

ईश्वरकी कृपासे फूलकी तरह खिल रहा हूँ। पर अस्पृश्यताके बारेमें क्या तुमने अपनेको सुधार लिया है?

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १०२

१. देखिए "पत्र: अब्बास तैयबजीको", ३०-९-१९३२।

२. रामशेषन्के तारपर, जिसमें गांधीजी से उनके जन्म-दिवसके अवसरपर कोचीन-निवासियोंके लिए एक संदेश माँगा गया था, १ अक्टूबरकी तारीख है।

३. गांधीजी की बड़ी बहन, जिन्होंने गांधीजी के जन्म-दिवसके अवसरपर उन्हें तारसे शुभकामनाएँ भेजी थीं।

२७३. तार : मोतीलाल रायको[1]

[२ अक्टूबर, १९३२][2]

आपका तार मिला। उपवासके सात दिनोंमें [लोगोंकी भावनाओंका] जो प्रदर्शन हुआ उसमें ईश्वरका हाथ होनेका निश्चित संकेत था।
सप्रेम,

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८५६६)से।

२७४. पत्र : एस० एम० माटेको

२ अक्टूबर, १९३२

आपका तर्क मैं समझ सकता हूँ।[3] पर मेरा उपवास किसीको भी बाध्य करनेके लिए नहीं है। यह तो मन्द पड़ गई धर्म-चेतनाको तेज और सजीव करनेके लिए है। दुर्भाग्यवश यह सच है कि कुछ लोगोंको यह बाध्य भी कर सकता है। पर इस तरहकी बाध्यता न तो देरतक रहती है और न व्यापक ही होती है। धार्मिक सुधारक मनपर आधिपत्य जमानेकी कोशिश नहीं करता। वह तो लोगोंको जाग्रत करता है और उन्हें विचार करने तथा कर्ममें जुट जानेकी प्रेरणा देता है।

मुझे अपने सिद्धान्तोंका बलिदान करके अपनी रिहाई नहीं खरीदनी चाहिए। अस्पृश्यताको मिटाना मेरे जीवन-कार्यका महत्त्वपूर्ण अंग है, पर वही उसका एकमात्र अंग नहीं है।[4] मेरा जीवन ईश्वरके हाथोंमें है। वह उसे जैसे चाहेगा, ढालेगा। आपके खयालसे क्या मैं सुरक्षित हाथोंमें नहीं हूँ?

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १००

१. यह श्री रायके ३० सितम्बरके तारके उत्तरमें था जिसमें कहा गया था कि वे खासकर गांधीजी के इस ऐतिहासिक उपवासको ध्यानमें रखकर उनके जीवन-कार्यपर एक पुस्तक लिख रहे हैं। उन्होंने उसके लिए गांधीजी का आशीर्वाद माँगा था।

२. "दैनन्दिनी, १९३२" में गांधीजी ने ३ अक्टूबरकी प्रविष्टिके अन्तर्गत यह उल्लेख किया है कि कल मोतीलाल रायको तार भेजा। अनुमानतः यही वह तार है।

३. श्री माटेने गांधीजी को सलाह दी थी कि उपवासके द्वारा लोगोंको बाध्य करनेकी बजाय उन्हें शान्तिसे समझाने-बुझानेकी पद्धति अपनानी चाहिए।

४. श्री माटेने यह भी कहा था कि यदि वे यह घोषणा कर दें कि एक सालतक वे केवल अस्पृश्यताको मिटानेका ही कार्य करेंगे, तो शायद उन्हें रिहा कर दिया जाये।

२७५. पत्र : पुरातन बुचको

२ अक्टूबर, १९३२

चि० पुरातन,

तुमने अच्छा प्रश्न पूछा है। अर्जुनके मनमें शंका उत्पन्न हुई तो वह उसने [कृष्णके][1] सामने रखी। मेरे मनमें शंका नहीं उठी बल्कि कृष्णने ही कहा : "उठ, क्या सो रहा है! समय आ गया है चूकना मत।" अनशन अहिंसाकी पराकाष्ठा हो सकता है और मूर्खता भी हो सकता है। मैं यह मानता हूँ कि मेरे बारेमें यह अहिंसाकी पराकाष्ठा थी। उसके परिणामसे भी यही सूचित होता जान पड़ता है। हिन्दू धर्ममें वर्णित तपश्चर्यामें अनशनका स्थान है, इतना ही नहीं, महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस प्रकार अर्जुन और [मेरे][2] मामलेमें अन्तर है। किन्तु मेरे कहनेका यह तात्पर्य नहीं कि मैं अधिक ज्ञानी हूँ। मैं सिर्फ इतना बताना चाहता हूँ कि इस उदाहरणमें मेरे मोहकी बात नहीं है। क्या यह स्पष्ट हो गया? तुमने देखा होगा कि मुझसे मुलाकात करना बन्द हो गया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१६९) से।

२७६. पत्र : लक्ष्मी दूधाभाई दाफड़ाको

२ अक्टूबर, १९३२

चि० लक्ष्मी,

बम्बईमें तूने क्या किया? अब दिन कैसे बिताती है? मेरे उपवाससे तेरी जिम्मेदारी बढ़ी है, ऐसा मैंने तुझे लिखा था न? तू यह समझ तो गई है न?

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ७७५५ से भी; सौजन्य : मगनभाई देसाई

१ व २. **महादेवभाईनी डायरी,** भाग-२, पृ० १०३ से।

२७७. पत्र : जमनाबहन गांधीको

२ अक्टूबर, १९३२

चि० जमना,

तुम्हारा पत्र मिला था। उपवासकी बात तो अब पुरानी हो गई। हमें अपना कर्त्तव्य करते रहना चाहिए।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८६०)से; सौजन्य : नारणदास गांधी

२७८. पत्र : रामदास गांधीको

२ अक्टूबर, १९३२

तू जो निश्चय करनेकी सोच रहा है, वह बेशक बढ़िया है। तूने स्वतन्त्र रूपसे खुद ही निश्चय कर लिया हो तो अभी नीमूसे उसकी चर्चा करनेकी जरूरत नहीं। तेरी शान्तिका प्रभाव उसपर पड़ता ही रहेगा। यह ब्रह्मचर्यकी खूबी है। जब दोनों एक-से दुर्बल होते हैं, लेकिन दोनों संयम रखनेकी इच्छा रखते हैं, तब एक-दूसरेके साथ चर्चा करना ठीक होता है और फिर एकका निश्चय दूसरेकी मदद करता है। जब [दोमें से] एक दृढ़ हो, तब वे चर्चा करें; उसकी निर्विकारता तो अपने-आप काम करती रहेगी। यह तो मैंने तुझे अपना अनुभव बताया। अन्तमें जो तुझे ठीक लगे, वही करना। इसमें दूसरेकी समझदारी काम नहीं आती। मेरा तो तुझे ऐसे शुभ संकल्पमें आशीर्वाद होगा ही। अन्तिम निश्चय जेलके बाहर ही हो सकता है। जेलमें किये हुए बहुतोंके निश्चय बाहर जानेपर टूट गये हैं। दोनों वातावरण एक-दूसरेसे भिन्न हैं। दोनों अलग-अलग दुनिया हैं।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ९९

२७९. पत्र : छगनलाल जोशीको

२ अक्टूबर, १९३२

चि० छगनलाल (जोशी),

लम्बे पत्रकी आशा अभी न करना। आश्रमको पत्र लिखना शुरू तो कर दिया है और जितने लोगोंको लिख सकता हूँ, लिखनेका इरादा है। तुमने मुझे देखने न आकर संयमका अच्छा पालन किया। आ जाते तो तुम्हें दोष न देता, बल्कि तुम्हारा स्वागत ही करता। लेकिन न आये, इसे बड़ी बात मानता हूँ। 'आश्रमवासी प्रत्ये' की रूप-सज्जा बहुत बढ़िया हुई है; अन्दर कैसा बन पड़ा है, यह तो देखकर ही बताऊँगा।

मैं यह जानता हूँ कि गाँवोंमें अन्त्यजोद्धारका काम बहुत कठिन है। उपवास-सप्ताहकी जागृति गाँवोंमें कितनी पहुँची, यह तो तुम-जैसे लोग ही बता सकते हैं। उसके लिए उपवास और भी लम्बा होना चाहिए था, लेकिन यह तो मनुष्यकी कल्पना हुई। ईश्वरने जितना तय कर रखा था, उतना उपवास कराया। अभी उसे कितने और कराने हैं, यह कौन कह सकता है। वह जैसे रखे वैसे ही रहना चाहिए और अगर वह खौलते तेलमें डाल दे तो भी हमें खुशीसे नाचनेके लिए तैयार रहना चाहिए। क्या उसने यह वचन नहीं दे रखा है कि [जिसका उसमें विश्वास होगा उसे] इस प्रकार कष्टमें भी खुशीसे नाच उठनेकी शक्ति वह देगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५१०)से।

२८०. पत्र : हरिइच्छा पी० कामदारको

२ अक्टूबर, १९३२

चि० हरिइच्छा,

तूने अक्षर अच्छी तरह बना-बनाकर लिखे हैं किन्तु आखिरमें स्याहीके धब्बे लगाकर पत्र बिगाड़ दिया है। सार यह कि सुघड़ता एक क्षणमें नहीं आ जाती, उसका निरन्तर अभ्यास करना चाहिए। याद रखना, तूने आलस्य छोड़ देनेकी प्रतिज्ञा की है। उसका पालन करना। हर पत्रमें अपना पता लिखना। यहाँ मैं पतोंकी पूरी सूची नहीं रख सकता। आशा है, बच्चे अब स्वस्थ होंगे।

क्या कभी रेहानाबहनसे मिलती है?

लड़कियोंको मैंने पत्र लिखे हैं और उन्हें आश्रमके लिफाफेमें रख दिया था।

मेरे उपवासकी बात अब पुरानी हो गई अतः उसके बारेमें कुछ नहीं लिख रहा हूँ। मुझमें ताकत आती जा रही है। मैं अपनी ताकत काफी हदतक खो बैठा था। रसिकको[1] मेरे आशीर्वाद लिखना। उसके समाचार तो मिलते ही रहते हैं।

सरदार और महादेवभाई प्रसन्न हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७४७१) से। सी० डब्ल्यू० ४९१७ से भी; सौजन्य : हरिइच्छा पी० कामदार

२८१. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२ अक्टूबर, १९३२

चि० प्रेमा,

आज लम्बा पत्र नहीं लिखा जायेगा। तेरे काटनेसे कौन डरता है? हमारी बिल्लीबहन अपने बच्चोंको जैसे-जैसे काटती है, वैसे-वैसे वे उसकी गोदमें घुसते हैं। बिल्ली अपने दाँतोंके बीचमें जब सोमा[2] को लेती है तब सोमा रोता नहीं, बल्कि अपनेको सुरक्षित मानता है। वैसा ही तेरा काटना भी होगा।

तूने सुन्दर कड़ियाँ लिख भेजी हैं। तेरे संयमको भी अच्छा मानता हूँ। लेकिन तेरे या आश्रमवासियोंके लिए खुश होनेका कोई कारण नहीं है। बूढ़े अब्बासजी, रेहाना वगैरह उपवासके बारेमें जानकर नाच उठे। मेरे पास आनेकी इच्छा भी प्रकट नहीं की। ईश्वरका हाथ मेरे सिरपर है ही, ऐसा मानकर वे अपने-अपने काममें लगे रहे। ऐसा दूसरोंने भी किया। लेकिन बोल, उपवासके दिनोंमें तूने अपना वजन कितना बढ़ाया?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३०४) से। सी० डब्ल्यू० ६७४३ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

१. हरिइच्छा कामदारके भाई।
२. बिल्लीके एक बच्चेका नाम।

२८२. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

२ अक्टूबर, १९३२

चि० पण्डितजी,

मुझसे आज लम्बे पत्रकी आशा नहीं करनी चाहिए। मेरे लिए तो यह नया जन्म ही है। ईश्वरको जो करना होगा सो करेगा। लक्ष्मीबहनको अपने दाँतोंका इलाज अच्छी तरह करा लेना चाहिए।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २३५) से; सौजन्य लक्ष्मीबहन ना० खरे

२८३. पत्र : मोहन न० परीखको

२ अक्टूबर, १९३२

चि० मोहन,

तुम्हारा केले और दूधका उपवास खूब है! मैं तो इसे फलाहार भी नहीं कहूँगा। दूधको फल किसने बताया?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९१८५)से।

२८४. पत्र : पद्माको

२ अक्टूबर, १९३२

चि० पद्मा,

तेरा पत्र मिला। पिताजी मिले थे। हिसाब-किताब रखना सीख लेना चाहिए। यह बहुत आसान है। जो खर्च हो उसे उसी समय लिख लेना चाहिए। उसकी साफ नकल करनेकी जरूरत नहीं है। और वही कागज नारणदासको भेज देना चाहिए। यदि तेरे हाथमें गाँठ हो गई हो तो कताई भी बन्द कर देनी चाहिए। बिलकुल थकावट महसूस नहीं होनी चाहिए। उपवासका आनन्द कुछ और ही था।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१३८) से। सी० डब्ल्यू० ३४९० से भी; सौजन्य : प्रभुदास गांधी

२८५. पत्र : शारदा चि० शाहको

२ अक्टूबर, १९३२

चि० शारदा,

मेरा उपवास तो पुरानी बात हो गई। क्या इसी प्रकार तेरा बुखार भी पुरानी बात नहीं हो सकती?

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९१८) से; सौजन्य : शारदाबहन जी० चोखावाला

२८६. पत्र : महालक्ष्मी माधवजी ठक्करको

२ अक्टूबर, १९३२

चि० महालक्ष्मी,

तुम्हारा पत्र मिला। चूड़ियाँ पहन लीं, सो ठीक ही किया। उन्हें कभी न पहननेका निश्चय दोषपूर्ण था। अतः कहा जा सकता है कि बुजुर्गोंकी खातिर चूड़ियाँ पहनकर तुमने उस दोषको सुधार लिया। इससे यह शिक्षा लेना कि खूब सोच-विचारकर ही कोई निश्चय करना चाहिए। किन्तु एक बार निश्चय कर लेनेके बाद किसीकी खातिर उससे डिगना नहीं चाहिए। जो-कुछ हुआ उसके लिए अफसोस मत करना।

यदि रोटी अनुकूल न आती हो तो दूध, शाक-सब्जी और फलोंपर रहना। दूधमें दही और छाछ भी आ जाते हैं। क्या बच्चे अब भी आश्रममें रहने लायक नहीं हैं? आश्रमको जरा देख आना और समझना कि वह आजकल कैसा चल रहा है। यदि ऐसा न कर सको तो उन्हें कलकत्तासे मत हटाना बल्कि वहीं जो-कुछ हो सके उसीसे सन्तोष करना। अन्ततोगत्वा उनका स्थान तो आश्रममें ही है। उन्हें आश्रम से परचानेके लिए यदि तुम्हें कुछ समय आश्रममें बिताना पड़े तो बिताना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६८२१) से।

२८७. पत्र : नारणदास गांधीको

रातके ८ बजे [२ अक्टूबर, १९३२][1]

चि० नारणदास,

साथके पत्रोंसे मेरी शक्तिका कुछ अन्दाजा लगाया जा सकता है। ठीक शक्ति आ गई मानी जायेगी। जितना सोचा था उससे ज्यादा कमजोरी तो जरूर आ गई, लेकिन शक्ति वापस आते देर नहीं लगती। उपवासके बीचमें पड़नेवाले रविवारको मेरा वजन ९३½ पौंड था, और आज इस रविवारको १०० पौंड आया। इसे काफी अच्छा सुधार माना जायेगा। डेढ़ पौंड दूध, आठ-दस संतरे, अनार या अंगूरोंका रस, लौकी-टमाटरका सूप, मधु और नींबू-पानी — यह खुराक चल रही है। दूधकी मात्रामें कुछ वृद्धि होगी, ऐसी आशा रखता हूँ। सोचता हूँ, अभी कोई और परिवर्तन न करूँ। आज और कल थोड़ा-थोड़ा चला। आज दस्त अपने-आप कुछ ज्यादा आया। नींद ठीक है। वा सारा दिन यहीं गुजारती है। शामको लेडी विट्ठलदासके यहाँ चली जाती है।

उपवासमें कष्ट तो काफी भोगा, लेकिन शान्तिका तो अन्त ही नहीं था। ईश्वरने कसौटी तो खासी की, फिर भी वह हलकी थी। सात दिनोंका उपवास तो कुछ है ही नहीं। लेकिन, इस दौरान जो शारीरिक और मानसिक कष्ट हुआ, वह काफी कहा जायेगा। मुझे जो अनुभव हुआ उससे भिन्न प्रभु-दर्शन कैसा होता होगा, मैं नहीं जानता। अलबत्ता, मेरा मतलब यह नहीं है कि वह दर्शन पूर्ण ज्ञान प्राप्त करनेकी स्थितिका पर्याय है। यह अकथनीय अनुभव है। पूर्ण दर्शन तो यह भी नहीं कहा जा सकता।

तुम तथा और भी जो लोग मुझसे मिलने आये, सबने ठीक किया। जो न आये, उन्होंने बहुत संयम दिखाया। मैं मानता हूँ कि दोनोंने अपने-अपने धर्मका पालन किया। मेरी यही कामना है कि इस यज्ञके फलस्वरूप हम और अधिक शुद्ध तथा जाग्रत हों।

डाक अब फिर नियमित कर डालो। जरूरत पड़े तो एकाधिक बार लिखो।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२५८ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. **महादेवभाईनो डायरी,** भाग-२ में यह पत्र ३ अक्टूबरको लिखा बताया गया है, लेकिन पत्रके पाठसे ऐसा लगता है कि यह २ अक्टूबरको लिखा गया था, रविवार उसी दिन था।

२८८. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

२ अक्टूबर, १९३२

चि० हेमप्रभा,

तुम्हारा खत मिला है। अब मुझे शक्ति ठीक आई है। दूध फल और कोई एक भाजी लेता हुँ। वजन १०० रतल तक पहोंच गया हुँ। इसलिये चिंताका कोई कारण नहिं है। तुमारा स्वास्थ्य अच्छा होना चाहिए। क्षितिश बाबुका कैसे है? अरूणके हाल लिखो।

बापूके आशीर्वाद

श्री हेमप्रभादेवी
खादी प्रतिष्ठान
सोदपुर
वाया कलकत्ता

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १६८९) से।

२८९. पत्र : मैथिलीशरण गुप्तको

२ अक्टूबर, १९३२

भाई मैथिलीशरणजी,

आपकी प्रसादियां[१] आती रहती हैं। ईश्वरकी बड़ी कृपा है।

आपका,
मोहनदास

सी० डब्ल्यू० ९४६१ से; सौजन्य : भारत कला भवन

१. गांधीजी के उपवासके समय और उसके बाद भी गुप्तजी ने अपनी कविताएँ उन्हें भेजीथीं।

२९०. पत्र : सोहनलाल शर्माको

२ अक्टूबर, १९३२

भाई मोहनलाल,[१]

इतनी शीघ्रतासे उपवास नहिं हो सकता है। अब तो विनयपूर्वक आंदोलन हि करना चाहिये।

मोहनदास गांधी

श्री मोहनलाल शर्मा
हिंदू सभा कार्यालय
पुष्कर
अजमेरके पास
राजपूताना

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २८२५) से।

२९१. एक पत्र

२ अक्टूबर, १९३२

मेरी दृष्टिमें स्पर्श, मन्दिर प्रवेश, आदि अस्पृश्यता-निवारणका अंग है। भोजन ऐच्छिक बात है।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १००

१. महादेव देसाईने अपने ३-१०-१९३२ के पत्र (जी० एन० २८२६) में सही नाम दिया है; देखिए खण्ड ५२, "पत्र : सोहनलाल शर्माको", १९-१२-१९३२।

२९४. पत्र : पर्सी डब्ल्यू० बार्टलेटको

३ अक्टूबर, १९३२

प्रिय श्री बार्टलेट[1],

आपका पत्र मिला, और साथमें कविवरको लिखे आपके पत्र तथा फेलोशिपके उत्तरकी नकलें भी मिलीं; उनके लिए धन्यवाद। मुझे पूर्ण विश्वास है कि फेलोशिप शान्तिके ध्येयके लिए प्रयत्नशील है।

हृदयसे आपका,

पर्सी डब्ल्यू० बार्टलेट महोदय
१७ रेड लॉयन स्क्वेयर
लन्दन, डब्ल्यू० सी०-१

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० (८००) (४०) (३), भाग ३, पृ० २०१

२९५. पत्र : वेरियर एलविनको

३ अक्टूबर, १९३२

प्रिय वेरियर,

तुम्हारा हृदयस्पर्शी पत्र मिला। मैं तुम्हारे हृदयमें प्रवेश कर सकता हूँ। हमारे बसमें तो इतना ही है न कि अपनी शक्ति-भर प्रयत्न करें। परिणाम ईश्वरके हाथमें है। इसलिए किसी बातकी चिन्ता मत करो। मैंने तुम्हें यह बताया या नहीं कि फादर विन्सलो और संघके[2] अन्य मित्रोंसे मेरी मुलाकात हो गई थी? उनसे मिलकर बड़ी खुशी हुई।

मैं इतने-सारे पत्र लिखता रहा हूँ कि उन पत्रों और उनके मजमूनोंके बारेमें मुझे कुछ याद ही नहीं है।

बापू

१. क्वेकर और फेलोशिप ऑफ रिकन्सिलिएशनके महामन्त्री।
२. देखिए "पत्र: वेरियर एलविनको", ३०-९-१९३२।

[पुनश्च :]

सरदार और महादेव तुम्हें, माताजी और एलडिथको स्नेह-वन्दन भेजते हैं।

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९६९८) से; सौजन्य : एलडिथ एलविन

२९६. पत्र : सैम्युअल फ्रांसिसको

३ अक्टूबर, १९३२

प्रिय सैम्युअल,

आपका पत्र पाकर प्रसन्नता हुई। मैं, एक बंदी, आपके लिए क्या कर सकता हूँ, पता नहीं। पर आपके बच्चे यदि भारतीय जीवन अपनायें तो यह सम्भव है कि उन्हें साबरमती आश्रममें प्रवेश मिल जाये।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

सैम्युअल फ्रांसिस महोदय
मार्फत जे० टी० क्रिश्चियन महोदय,
८, मार्ट लेन, ईस्ट लन्दन
दक्षिण आफ्रिका

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८००(४०)(३), भाग ३, पृ० २०१

२९७. पत्र : एस० के० जॉर्जको

३ अक्टूबर, १९३२

प्रिय जॉर्ज,

तुम आश्रम आये इस बातसे खुशी हुई। आशा है, तुम्हारा बुखार उतर गया होगा। अभी तो इस छोटे-से पत्रसे ही सन्तोष करो। हाँ, यदि कार्यकर्त्ता सच्चे हों तो इस मिश्रणसे भी रामराज्य सम्भव है। कार्यकर्त्ताओंमें मैं भी शामिल हूँ। यदि मैं सच्चा हूँ तो साथी-कार्यकर्त्ता भी सच्चे होंगे; यदि मैं झूठा हूँ तो साथी-कार्यकर्त्ता भी झूठे होंगे। जब भी लिखनेकी इच्छा हो अवश्य लिखो।

सस्नेह,

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधीज चैलेंज टु क्रिश्चियनिटी, पृ० ८९

२९८. पत्र : जे० एस० हॉयलैंडको

३ अक्टूबर, १९३२

प्रिय हॉयलैंड,

टॉल्स्टॉय होमकी अपनी यात्राओंका तुमने मुझे संक्षिप्त विवरण भेजा, इसकी मुझे प्रसन्नता है। और अच्छा होता यदि आधुनिक रूसकी तुम्हारे मनपर जो छाप पड़ी उसके बारेमें भी तुम मुझे कुछ बताते।

खोई हुई शारीरिक शक्ति मैं तेजीके साथ पुनः प्राप्त कर रहा हूँ। उपवासके बारेमें मुझे कुछ और कहनेकी जरूरत नहीं है, क्योंकि वह अब बीता इतिहास हो गया है। मैं यही कह सकता हूँ कि ईश्वर उन दिनों मुझपर बहुत ही दयालु रहा।

हम सभीका प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४५०६) से; सौजन्य : वुडब्रुक कॉलेज, बर्मिंघम, और श्रीमती जैस्सी हॉयलैंड

२९९. पत्र : जयकृष्ण पी० भणसालीको

३ अक्टूबर, १९३२

तुम्हारा पत्र देखकर तो मैं बाग-बाग हो गया। मगर तुम्हारा संन्यास तभी शोभा दे सकता है, जब तुम ज्ञानपूर्वक वापस आश्रममें आकर सेवा करो और सेवा करते हुए अलिप्त रहो। पत्थरकी गुफा और मुर्दे जलानेका श्मशान सच्ची गुफा या श्मशान नहीं है। असली गुफा हृदयमें है और श्मशान भी वहीं है। हम इस गुफामें रहकर विकार-मात्रको राख कर डालें, तब सच्चा संन्यास कहलायेगा। इसकी महिमा 'गीता' में गाई गई है। अभीतक तो मेरी आत्मा यही गवाही दे रही है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १०३

३००. पत्र : दूधीबहन वा० देसाईको

३ अक्टूबर, १९३२

चि० दूधीबहन,

तुमने रोटीके बारेमें पूछा है। किन्तु मेरी रोटी तो सूख गई है। वह भगवान्ने छीन ली। अब मैं दूध और फलोंसे शक्ति प्राप्त कर रहा हूँ।

आशा है, तुम सब स्वस्थ होगे। वालजी से मुझे लिखनेको कहना। [जेलमें] उनका स्वास्थ्य कैसा रहा?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४३८)से; सौजन्य : वालजी गोविन्दजी देसाई

३०१. पत्र : महेन्द्र वा० देसाईको

३ अक्टूबर, १९३२

चि० मनु,

अपनी लिखावट सुधारो। प्रार्थनामें हँसना अविवेकपूर्ण है, क्योंकि वह खेलनेका समय नहीं है। वह समय भगवान्का नाम लेनेका है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४३९)से; सौजन्य : वा० गो० देसाई

३०२. पत्र : मैत्री गिरिको

३ अक्टूबर, १९३२

चि० मैत्री,

बहुत दिनों बाद तेरा पत्र मिला। वहाँ जो सीखा हो उसके बारेमें मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२३७) से।

३०३. पत्र : गुलाबको

३ अक्टूबर, १९३२

चि० गुलाब,

पींजना तो बहुत आसान है। थोड़ी ज्यादा मेहनत करनेमें अच्छी तरह आ जायेगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७२५)से।

३०४. पत्र : पुंजाभाई एच० शाहको

३ अक्टूबर, १९३२

मैंने तुम्हारे साथ दौड़ तो लगाई, लेकिन अभी तो हारा हुआ ही हूँ। खैर, कोई चिन्ता नहीं। "जीवन-मरण दोनों समान ही हैं।" मेरे लिए यह नया जन्म है। ईश्वरको जो करना हो, करे। प्रभुने लाज रखी है। बहुत आसान-सी परीक्षा ली। मैं तो क्षण-क्षण ईश्वरकी कृपाका अनुभव कर रहा हूँ।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १०२

३०५. पत्र : रामचन्द्र ना० खरेको

३ अक्टूबर, १९३२

चि० रामभाऊ,

गतांकसे चलनेवाला सम्वाद भी मनोरंजक माना जा सकता है। किन्तु इस बार तूने अक्षर बिगाड़ दिये हैं। इस सबमें निहित दोष तो मैंने तुझे बताये ही हैं। बड़ोंकी हँसी और उनके तिरस्कारकी बात हम अपने मनमें कैसे ला सकते हैं? और इस तिरस्कारमें छिपी अपने दोषोंके प्रति हमारी उदासीनता कितनी हानिकर है।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २९९) से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे

३०६. पत्र : निर्मला बा० मशरूवालाको

३ अक्टूबर, १९३२

चि० निर्मला,

तेरा १३ तारीखका पत्र मिला था। मुझमें ताकत आती जा रही है। 'गीता-मंथन'[1] के प्रूफ मिल गये थे। बालुकाका[2] का पत्र भी मिला था।

उपवासके दौरान मेरी कुहनीका दर्द तो खत्म हो गया लगता है। शरीर भरनेपर यदि वह फिर उभर आये तो कहा नहीं जा सकता। सुरेन्द्रसे पत्र लिखनेको कहना।

बापूके आशीर्वाद

श्री० निर्मलाबहन
मार्फत — बालुभाई मशरूवाला
टोपीवालेका बँगला
सैंडहर्स्ट रोड
बम्बई

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २८८७) से; सौजन्य : निर्मलाबहन सर्राफ

३०७. पत्र : भाऊ पानसेको

३ अक्टूबर, १९३२

चि० भाऊ,

आज लम्बा पत्र नहीं लिख सकता।

अनासक्तिकी भावना धीरे-धीरे अवश्य आयेगी। सत्यादिके प्रति आसक्ति रह सकती है। जगत् सत्य है और नहीं भी है। इस कारण उसकी सत्यताका बोध कुछ-न-कुछ तो बना ही रहेगा। कब्जके बारेमें गंगाबहनसे पूछना। तुमने भोजनमें जो परिवर्तन किया है उसका क्या परिणाम निकला, लिखना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७३७) से; सी० डब्ल्यू० ४४८० से भी; सौजन्य : भाऊ पानसे

१. किशोरलाल मशरूवाला द्वारा लिखित।
२. किशोरलाल घ० मशरूवालाके बड़े भाई।

३०८. पत्र : शान्ता शं० पटेलको[1]

३ अक्टूबर, १९३२

चि० शान्ता[1],

तू अपनी लिखावट बिगाड़ रही है। पत्र भी ऐसा ही है। आशा है, अब स्वास्थ्य ठीक हो गया होगा। सरदारको विनोद करना हो तो भले ही करें। लेकिन तुझे जो लिखना हो, लिख।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०६६) से। सी० डब्ल्यू० १७ से भी; सौजन्य : शान्ताबहन पटेल

३०९. पत्र : शारदा चि० शाहको

३ अक्टूबर, १९३२

चि० शारदा,

तेरे पत्रका विस्तृत उत्तर देना चाहिए, परन्तु ऐसा करनेके लिए न तो मेरे पास समय है और न इतनी शक्ति ही। यदि मासिक स्रावमें रुकावट होती है तो ठंडे पानीमें कटिस्नान लेना चाहिए। उक्त स्नान मासिक शुरू होनेके पहले लेना चाहिए, मासिक होनेके दौरान नहीं। एक दूसरा घर्षण-स्नान है। प्रेमाबहनको उसका ज्ञान होना चाहिए। सम्भवतः संतोक भी इसके बारेमें जानती होगी। मासिक-धर्मके समय तुझे बिलकुल आराम करना चाहिए। यदि सफेद स्राव होता है तो यह चिन्ता की बात है। किन्तु यह भी कटि और घर्षण-स्नानसे ही ठीक होगा। यदि तू इसके पीछे पड़ जाये और मैं जो इलाज बताऊँ सो करती रहे तो अवश्य ठीक हो जायेगी।

पुरुष और स्त्रीमें कुदरती भेद है, इसलिए दोनोंके धर्मोंमें भी कुछ अन्तर है। इसलिए यदि पुरुष स्त्री-धर्मका अथवा स्त्री पुरुष-धर्मका पालन करने लगे तो कठिनाई अवश्य आयेगी। लेकिन दोनों आत्मिक रूपसे एक होनेके कारण बहुत-सी कठिनाइयोंसे पार पा सकते हैं। उक्त स्थिति तो निर्विकारी होनेपर ही आ सकती है। इस बातको समझनेमें शायद तुझे कठिनाई होगी। दो-तीन बार पढ़नेके बाद इसपर विचार करना। फिर भी न समझ पाये तो चिमनलाल[2] या नारणदाससे या फिर प्रेमाबहन से पूछना और फिर मुझे लिखना कि तू क्या समझी। हमें उन बातोंको मुँहसे कहते

१. शंकरभाई पटेलकी पुत्री।

२. शारदाके पिता।

शर्म आती है किन्तु लिखनेमें कम शर्म आती है क्योंकि न तो हमें दूसरे व्यक्तिके सामने आना पड़ता है और न उसकी बात सुननी पड़ती है। दूर बैठकर कलम चलाना आसान है किन्तु चार आँखें मिलनेपर शर्म आ ही जाती है। किन्तु ज्यों-ज्यों हम निर्मल होते जाते हैं, त्यों-त्यों यह शर्म कम होती जाती है।

तेरी माँ बननेका प्रयास करता हुआ,

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९५७) से; सौजन्य: शारदाबहन जी० चोखावाला

३१०. एक पत्र[1]

३ अक्टूबर, १९३२

उस दुकानदारके साथ तुम्हारा सम्बन्ध जाने बिना मैं राय नहीं दे सकता। वहाँ नानाभाई[2] हैं, उनसे पूछना चाहिए। और फिर, कदम उठानेके बाद तुम सलाह माँगते हो, यह भी ठीक नहीं है। यह संभव नहीं कि अनशन करनेसे विरोधी अपना स्वभाव तुरन्त बदल दे।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १०४

३११. पत्र : जोहरा बानू अन्सारीको[3]

३ अक्टूबर, १९३२

प्यारी बेटी जोहरा,

तुम्हारे दोनों खत मिल गये हैं। खुदाकी मेहरबानीसे मेरी सेहत अच्छी हो रही है। खुदाने ही फाका करवाया था खुदाने ही खाना दिया। अब हम सब खुदासे माँगे कि हिन्दू-मुस्लिमके बीच भी मिलाप पैदा करा दे। जबतक यह नहीं हुआ है मुझे पूरी शान्ति हो नहीं सकती।

अब्बाजानके खत मुझे भी मिलते रहते हैं।

अब तुम्हारे उस्तानीका काम शुरू कर देना है। तुम्हारे खत मेरे लिए सबक हो जाते हैं। मेरेपर काफी उर्दू खत आते हैं। तुमसे बढ़कर किसीके हरफ खूब-सूरत नहीं होते। तुम्हारे हरफके ही लिये तुम्हारे खत बार-बार पढ़नेका दिल होता है।

१. यह एक युवकसे प्राप्त पत्रके उत्तरमें लिखा गया था। उस युवकने एक दुकानदारके खिलाफ अनशन शुरू किया था। दुकानदारने अपनी दुकानसे अस्पृश्योंको चीजें खरीदनेकी छूट देनेका वचन दिया था, लेकिन बादमें मुकर गया।

२. नृसिंहप्रसाद कालिदास भट्ट।

३. डॉ० मु० अ० अंसारीकी कन्या।

हाँ, आजकल बा दिन-भर मेरे साथ रहती है। सरदार और महादेव देसाई तो साथ हैं ही। अब्बाजानको हम सबकी तरफसे बहोत सलाम। तुम्हारे लिये बहोत दुआ।

गांधी

महात्मा, भाग-२, पृ० ३०४ के सामने प्रकाशित उर्दूकी प्रतिकृतिसे।

३१२. पत्र : हॉरेस जी० एलेक्जैंडरको

४ अक्टूबर, १९३२

प्रिय हॉरेस,

तुम्हारा पत्र मिला। उपवासके बारेमें मैं इतने-सारे मित्रोंको इतना अधिक लिख चुका हूँ कि अब इस पत्रमें कुछ कहनेकी मुझे इच्छा नहीं होती। इस सप्ताहकी डाकसे जो पत्र जा रहे हैं उनमें से कुछ, निस्सन्देह, तुम देखोगे ही। परन्तु मैं यह कहूँगा कि इस उपवासमें ईश्वर मेरे जितना निकट रहा उतना पहले कभी नहीं रहा था, और यद्यपि मुझे तब इंग्लैंडसे कोई पत्र नहीं मिला था फिर भी तुम सबके प्रेमको मैंने अनुभव किया था। तुम्हें और ऑलिवको प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४१५) से।

३१३. पत्र : स्कॉट हैंडरसनको[1]

४ अक्टूबर, १९३२

यदि मैं कहता हूँ कि उपवासकी प्रेरणा मुझे ईश्वरने दी और आप कहते हैं कि उसने नहीं दी, तो इसका फैसला कौन करेगा? क्या आप बता सकते हैं कि अपने अन्तःकरणकी आवाजकी अपेक्षा मुझे आपकी राय क्यों पसन्द होनी चाहिए? क्या आप यह नहीं मानते कि मनुष्योंके हाथोंकी अपेक्षा मैं ईश्वरके हाथोंमें अधिक सुरक्षित हूँ?

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १०६

१. एक ईसाई मिशनरी।

३१४. पत्र : ईसपको[1]

४ अक्टूबर, १९३२

आपकी मार्मिक अपीलके लिए धन्यवाद। फिलहाल तो यह मामला खत्म हो गया है। पर आपको मेरा यह सुझाव है कि तर्कसे इस तरहकी बातोंकी थाह नहीं पाई जा सकती। उन्हें ईश्वर और उसके बंदोंपर छोड़ देना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १०५

३१५. पत्र : एस्थर मेननको

४ अक्टूबर, १९३२

मेरी प्यारी बच्ची,

तुम्हारा ४ सितम्बरका लम्बा पत्र मिला। वह अब अतीतकी बात हो गई है।

उपवासके बाद यह मेरे लिए नया जन्म है। मुझमें तेजीसे ताकत आती जा रही है। जो वजन गिर गया था लगभग पूरा हो गया है। पर खोई शक्तिको प्राप्त करनेमें अभी थोड़ा समय लगेगा। पीड़ाके वे दिन आन्तरिक आनन्दके भी दिन थे। लाखों लोगोंने अपने बन्धु-मानवोंके साथ अस्पृश्यताका जो महान् पाप किया है, वह उसका छोटा-सा प्रायश्चित्त था। पर वह-सब तो तुम अब जानती ही हो।

तुम्हें वाष्प-स्नान और ऐसे आहार द्वारा जिसमें श्वेतसार और प्रोटीन अधिक न हो और ताजे फल खूब हों, अपनी गठियासे छुटकारा पानेकी कोशिश करनी चाहिए।

मैं चाहता हूँ कि तुम नान और तंगैको किसी पब्लिक स्कूलमें जाने और वहाँ रहकर अपने पूर्वग्रहको छोड़नेके लिए तैयार कर सकतीं, यानी यदि अध्यापक उनके वहाँ जानेका स्वागत करें तो।

डेन्मार्कसे जन्म-दिनपर बधाईका एक तार मिला है। पर उसपर भेजनेवाले का नाम नहीं है।

आज केवल इतना ही।

हम सबका स्नेह, और बच्चोंको प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (नं० ११४) से; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार। **माई डियर चाइल्ड**, पृ० ९४से भी

१. पत्र-लेखकका कहना था कि आमरण अनशन आत्महत्याके समान है।

३१६. सन्देश : एक हस्ताक्षरेच्छुको[1]

४ अक्टूबर, १९३२

ईश्वर तुम्हें शीघ्र स्वस्थ करे।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १०५

३१७. एक पत्र[2]

४ अक्टूबर, १९३२

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओंके जीवन और उनके हेतुओंके बारेमें गलतफहमी हमेशा पैदा होगी। आपकी दोष-स्वीकृति आपको शोभा देती है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १०५

३१८. एक वक्तव्य[3]

४ अक्टूबर, १९३२

अस्पृश्यताकी समाप्तिमें सहभोज शामिल नहीं है। अलबत्ता, यदि दूसरोंको तो ऐसे भोजमें सम्मिलित किया गया हो किन्तु अस्पृश्योंको उनके अस्पृश्य होनेके कारण बहिष्कृत किया गया हो तो बात दूसरी है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १०६

१. सन्देश तपेदिकके रोगी एक अमरीकी युवकके लिए था। साधन-सूत्रमें उसका नाम नहीं दिया गया है। युवककी माँ ने अपनी लाचारीका जिक्र करते हुए गांधीजी को लिखा था कि उसका बेटा अपने इलाजका खर्च महत्त्वपूर्ण व्यक्तियोंके हस्ताक्षर बेचकर पूरा करता है।

२. पत्र जिसे लिखा गया था, साधन-सूत्रमें उसका नाम नहीं है — वह पहले हिन्दू धर्म और गांधीजी का बड़ा विरोधी था। परन्तु गांधीजी के उपवासके बाद उसे गांधीजी की सच्ची लगनका विश्वास हो गया और प्रायश्चित्त-स्वरूप, उसने चालीस दिन मौन रखने और दिनमें केवल एक बार भोजन करनेका निश्चय किया।

३. यह वक्तव्य किसे दिया गया था, यह स्पष्ट नहीं है।

३१९. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

४ अक्टूबर, १९३२

यदि तुम नन्हे-मुन्ने लोग अपने नामोंके साथ 'भाई' और 'बहन' लिखोगे, तो मुझ-जैसोंका क्या होगा? उपेन्द्रको 'उपेन्द्रभाई' और भद्रिकाको 'भद्रिकाबहन' किसने बनाया? मैं वहाँ आऊँगा, तो किसीको भाई या बहन कहनेवाला नहीं हूँ। क्या यह शर्त मंजूर है? दूसरी शर्तें तो मैंने मनमें ही इकट्ठी कर रखी हैं।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १०५

३२०. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

४ अक्टूबर, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। प्रस्तावना लिखकर प्रसिद्धि पानी हो तो उसे लिखनेकी योग्यता प्राप्त करनी चाहिए। यह योग्यता कैसे प्राप्त की जा सकती है सो नारण-दाससे पूछ लेना।

मुझे आराम तो मिल ही रहा है। छः दिनोंका उपवास मेरे जीवनमें कोई बड़ी बात नहीं है। खोई हुई शक्ति लगभग वापस आ गई है। चिट्ठी-पत्रीके काममें तो अब कोई कठिनाई होती ही नहीं।

आश्रममें लोगोंका बीमार पड़ना मुझे तनिक भी अच्छा नहीं लगता। किसी तरहकी लापरवाहीसे ही लोग बीमार पड़ते हैं। इस बीमारीके महीनेमें खुराकका पूरा ध्यान रखना चाहिए। ज्यादातर बीमारियोंकी जड़ पेटका खराब होना ही होता है।

वाली[1] तो मजबूत लड़कियोंमें गिनी जाती थी। वह भी कमजोर होकर पड़ गई। देखता हूँ, तेरे पास जो लड़कियाँ हैं उनमें से कुछ कठिन किस्मकी हैं। शान्ताके बारेमें ज्यादा जाने बिना यहाँसे उसके सम्बन्धमें मैं तेरा मार्ग-दर्शन नहीं कर सकता। नारणदासके साथ सलाह-मशविरा करके जो योग्य लगे, करना। . . .[2] के किस्से भी सोचने लायक तो हैं ही। दस वर्षकी लड़कीको मासिक धर्म होना भयंकर बात है। . . .[3] से उसके बारेमें ज्यादा जानकारी लेना। हो सकता है, जब वह पाठशाला जाती थी, उन्हीं दिनों कोई बुरी आदत सीख ली हो।

१. आश्रमकी पाठशालाकी एक छात्रा, जो बादमें लक्ष्मीदास आसरके पुत्र पृथुराजसे विवाह-सूत्रमें बँधी।

२ व ३. नाम छोड़ दिये गये हैं।

अपन प्रेमीसे[1] तो हम बिछुड़ गये हैं, क्योंकि हमें दूसरी जगह भेज दिया गया है। उसका वियोग तो हृदयको सालता है, लेकिन क्या करें? जीवन तो वियोगोंका समुदाय ही है न?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३०५) से। सी० डब्ल्यू० ६७४४ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

३२१. पत्र : चन्द्रशंकर एन० पण्डयाको

४ अक्टूबर, १९३२

जमाना बदल जाये, लेकिन तुम क्यों बदलने लगे? कुछ लोग अपनी बीमारीको वर लेते हैं, और तुम तो इसकी भी परवाह नहीं करते कि ऐसा करके तुम पति-धर्मको भंग कर रहे हो। शायद तलाकके लिए भी गुंजाइश न रहे।

मुझमें तो बड़ी तेजीसे शक्ति आ रही है। सरदार अपनी सरदारी यहाँ बैठ कर भी नहीं छोड़ते और छोड़नेको कहें, तो कहते हैं कि "अफीमची काठी[2] अफीम छोड़े, तो मैं सरदारी छोड़ूँ।" यह दुखड़ा कहाँ रोने जाऊँ?

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १०६

३२२. पत्र : जयशंकर पी० त्रिवेदीको

४ अक्टूबर, १९३२

तारागौरीके[3] अवसानका हृदयद्रावक वर्णन भेजा, सो अच्छा किया। छायाकी तरह हमारे पीछे-पीछे चलनेवाली मौत कब हमारी गर्दन पकड़ लेगी, यह कौन जानता है? मनुको धक्का लगेगा। मगर वह बहादुर है। घाव सह लेगा। तारागौरीके श्राद्धके निमित्तसे अगर आपके कुटुम्बसे प्राइमस स्टोवको तिलांजलि दे दी जाये, तो बहुत बड़ा त्याग नहीं माना जायेगा, और शायद दूसरी बहनें भी इस राक्षसके पंजेसे छूट जायेंगी।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १०६

१. गांधीजी की पालतू बिल्ली।
२. काठियावाड़की एक जाति।
३. जयशंकर त्रिवेदीकी भाभी।

३२३. पत्र : रामेश्वरलाल बजाजको

४ अक्टूबर, १९३२

भाई रामेश्वरदास,

चि० पूर्णचंद्रने तुमारे ठिकानेके लिफाफे भेजे हैं। उपवासकी कहानी तो पुरानी हो गई। अब शक्ति आ रही है। चिंताका कोई कारण नहिं।

नये साहससे कुछ लाभ मिलता है? मुझे अवश्य सब हाल लिखो।

मेरा आगला पत्र पहोंचा होगा।

बापूके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ९४४८ से; सौजन्य : बनारसीलाल बजाज

३२४. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रचूजको

[५ अक्टूबर, १९३२][1]

आशा है, तुम अब कुछ चैन महसूस कर रहे होगे। लेकिन इस बातसे तो तुम्हें जरूर बल मिला होगा कि गुरुदेवका इस मामलेमें घनिष्ठ सम्बन्ध रहा। उपवासके पहले ही दिन उन्होंने जो प्रवचन दिया था, महादेवने उसका अनुवाद किया है और मुझे सुनाया है। प्रवचन बहुत ओजपूर्ण है। पर ईश्वरीय प्रेमके उन दिनों बहुत-से संकेत मिले। ईश्वर बराबर पथ-प्रदर्शन कर रहा है, इसमें मुझे कभी रत्ती-भर भी सन्देह नहीं हुआ।

पर कार्यका सबसे बड़ा भाग निस्सन्देह अभी बाकी है। तुम्हारी जगह अभी वहीं है, इसमें मुझे कोई शक नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १११

१. साधन-सूत्रमें इस पत्रपर ६ अक्टूबरकी तारीख दी गई है, पर यह ५ अक्टूबरको ही लिखा गया लगता है; देखिए अगला शीर्षक।

३२५. पत्र : अगाथा हैरिसनको

५ अक्टूबर, १९३२

प्रिय अगाथा,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं जानता हूँ कि मैंने तुम सबके लिए भारी चिन्ता पैदा कर दी थी। वह अनिवार्य था। वह सब ईश्वरका ही काम था। उन दिनों जो-कुछ हुआ, उस सबमें मैं ईश्वरका हाथ देख सकता था।

मेरा और महादेवका प्यार।

[पुनश्च :]

इसके साथ एक पत्र चार्लीके लिए है।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४५९)से।

३२६. पत्र : प्रेमी जयरामदासको

५ अक्टूबर, १९३२

प्रिय प्रेमी,

हाँ, तुम्हारा भेजा हुआ सब मिल गया। पिताजी को यह बता देना कि उनका प्रेम-पत्र मुझे मिल गया था और मैं अच्छी तरह हूँ।

तुम्हें अपनी गति तेज कर देनी चाहिए और हिन्दीमें पत्र लिखना शुरू कर देना चाहिए।

तुम सबको हम सबका प्यार।

कुमारी श्री प्रेमी जयरामदास
प्रेम भवन
हैदराबाद, सिन्ध

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९२४२) से; सौजन्य : जयरामदास दौलतराम

३२७. पत्र : सेंट फ्रांसिसकी मठवासिनियोंको[1]

५ अक्टूबर, १९३२

तुम्हारा २ सितम्बरका प्रेम-भरा पत्र यथासमय मिल गया था। अपने पवित्र उपवासके दिनोंमें तुम्हारा वह सुन्दर तार भी मिला था। तुम्हारे-जैसे प्रेम-संकेत मेरे लिए ईश्वरका भेजा आहार थे।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १०८

३२८. पत्र : डॉ० सैयद महमूदको

५ अक्टूबर, १९३२

प्रिय डॉ० महमूद,

फलोंकी टोकरीके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। आपके लिए मेरे पास कोई पत्र नहीं है। आशा है, अब आप पहलेसे बेहतर होंगे और पारिवारिक कष्ट यदि समाप्त नहीं तो कम तो हो ही गये होंगे। मेरी कितनी इच्छा है कि अस्पृश्यताका यह समाधान हमें और अधिक एकताकी दिशामें ले जाये। ईश्वर आपके प्रयत्न सफल करे। मौलानासाहबको मेरा सलाम कहिए।

सप्रेम,

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५०७३) से।

१. "दैनन्दिनी, १९३२" से। साधन-सूत्रमें केवल इतना ही उल्लेख है कि यह पत्र सेंट फ्रांसिस नामके एक इतालवी कन्वेंटकी मठवासिनियोंको लिखा गया था।

३२९. पत्र : मीराबहनको

[५][1] अक्टूबर, १९३२

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र आज (बुधवारको) आया। मैंने दायें हाथसे लिखा था। तुम्हें लिखावट साफ इसलिए मालूम हुई कि शारीरिक दुर्बलताके कारण मैंने अक्षर मजबूरन धीरे-धीरे बनाये थे। बाईं कोहनीमें कुछ गड़बड़ थी। कलतक कतई दर्द नहीं था। लेकिन आज कुछ ऐसा महसूस हो रहा है कि मांस भरनेके साथ-साथ दर्द फिर शुरू हो जायेगा। यदि ऐसा हुआ तो उसकी चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं। बेशक, कताई मैं पूरी, यानी कमसे-कम २०० तार, रोज कर रहा हूँ। केशू एक नया गांडीव लाया था। वह बहुत ही अच्छा चलता है। मेरे ख़यालसे मुझे डेढ़ घंटेसे अधिक नहीं लगता। मेरा वजन ९९ पौंडपर टिका हुआ है। आजकल चूंकि मैं कुछ व्यायाम करता हूँ, इसलिए वजन तेजीसे न बढ़ सकता है और न बढ़ना चाहिए। आज मैंने दो पौंड दूध और पहली बार २० खजूर लिये हैं। बा दिनमें मेरे साथ रहकर मुझे खिलाती-पिलाती और सेवा-शुश्रूषा करती है। पत्र-व्यवहारका काम बहुत ज्यादा बढ़ गया है, इसलिए उसमें बहुत समय देना पड़ता है।

किसनको एक पत्र लिखा था, पता नहीं उसे मिला या नहीं।

अगर तुम नारणदाससे मिलना चाहो तो उसे तुमसे मिलनेकी अनुमति प्राप्त हो गई है। क्या तुमको सप्ताह-भरमें इकट्ठे हुए सारे पत्र मिल जाते हैं या सप्ताहमें केवल एक ही मिलता है?

तो तुम्हारी समझमें आ गया कि कुछ दिनों या महीनोंके निरीक्षणसे भी तुम कोई सिद्धान्त नहीं बना सकतीं। अब नमककी मात्रा यन्त्रवत् निश्चित करनेकी कोशिश न करो। अनुभवसे उसकी उचित मात्रा अपने-आप निश्चित हो जायेगी। कभी-कभी छोड़ देना बराबर लाभदायक ही रहेगा। अगर तुम्हें बहुत गरमी लगती हो और ठंडा पानी बरदाश्त कर सकती हो तो तुम्हें दो-तीन बार ठंडे पानीसे स्नान करना चाहिए, लेकिन बहुत जल्दी। गहरी साँस भी लेकर देखना चाहिए। इससे शरीर तुरन्त शीतल हो जाता है। जैसा सीटी बजाते समय करते हैं, वैसा ही करके मुँहसे साँस लेनी पड़ती है। खुली हवामें जाकर गहरी साँस लेनेका प्रयत्न करोगी, तो उसी क्षण ठण्डक मालूम होगी। और ताजा फल लेनेमें कंजूसी न करना। नारंगियाँ जितनी चाहो, लेना और बिना पकाये हुए (मगर पके) टमाटर भी लेना।

महादेव गुरुदेवको तुम्हारा सन्देश सुनाना और तुम्हारी ओरसे उनके पैर छूना भूल गया था। इसलिए तुम्हारा पत्र पासमें होनेके कारण मैंने वह अंश उन्हें पढ़कर

१. साधन-सूत्रमें "६" है, लेकिन बुधवार, जिस दिन गांधीजी ने पत्र लिखा, ५ अक्टूबरको था।

सुनाया, जो उन्हें अटपटा तो बहुत लगा, मगर मैंने तुम्हारी तरफसे उनके पैर छू लिये। वे मौन बैठे रहे और अपनी मुद्रासे उन्होंने कृतज्ञता प्रकट की।

मुझे खुशी है कि तुम और किसन ठीक पूनियाँ बनाना सीखनेमें लगी हुई हो। यह बारीक कताईकी कुंजी है। अभी तो मैं ४५ नम्बरका सूत बिलकुल आसानीसे कात लेता हूँ। कदाचित् सूत इससे भी बारीक ही हो। कल जाँचा जायेगा।

हॉरेस, एस्थर, म्यूरियल और दूसरे बहुत-से मित्र, जो मुझे लिखते रहते हैं, हमेशा तुम्हारा उल्लेख करते हैं और तुमतक अपना स्नेह पहुँचा देनेको कहते हैं। मगर ये सन्देश पहुँचानेमें तो मैं बहुत ही ढीला हूँ। मुझे यहाँ उन इतालवी बहनोंका उल्लेख करना भी नहीं भूलना चाहिए। मुझे वे बहुत सुन्दर पत्र भेजती रही हैं।

तुम दोनोंको प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२४४) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७१० से भी

३३०. पत्र : वीरेन्द्रप्रकाशको[1]

५ अक्टूबर, १९३२

प्रिय मित्र,

स्वामी दयानन्दजी महाराजके प्रति अपनी श्रद्धा प्रदर्शित करनेका मेरे खयालसे, इससे अधिक कारगर तरीका और कोई नहीं हो सकता कि प्रत्येक आर्यसमाजी सुधारकी इस लहरमें अपनी सारी शक्ति हरिजनोंके ध्येयमें लगा दे।

आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४५) से। **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-२, पृ० १०९ से भी

१. पूरा नाम "दैनन्दिनी, १९३२" से लिया गया है। साधन-सूत्रमें केवल 'वीरेन्द्र' दिया गया है।

३३१. पत्र : फ्रांसिसका स्टैंडेनेथको[1]

५ अक्टूबर, १९३२

मेरा यह कथन कि यूरोपमें लोग किसी-न-किसी तरहका समझौता किये बिना नहीं रह सकते, निश्चय ही सत्यवान-जैसे मनुष्यके लिए नहीं था। परन्तु आपको और मुझे उनके बारेमें कोई निर्णय नहीं देना चाहिए। आखिर दृढ़से-दृढ़ व्यक्तिको भी कुछ हदतक समझौता करना पड़ता है। दूसरोंके लिए नियम निर्धारित करना किसीके लिए भी सम्भव नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १०७

३३२. पत्र : एडा वेस्टको

५ अक्टूबर, १९३२

प्रिय देवी,

तो तुमने भी उपवास रखा! यह तुम्हारे योग्य ही था। अपनी खोई हुई शक्ति मैं पुनः तेजीसे प्राप्त कर रहा हूँ। यह सब एक बहुमूल्य अनुभव था। मैंने बहुत-से और इससे लम्बे उपवास रखे हैं, पर उनमें से कोई भी इतना आनन्ददायी नहीं रहा था।

लगता है कि वहाँके कार्यका तुमपर बहुत अधिक जोर पड़ रहा है। तुम्हें निश्चय ही अपनी सामर्थ्यसे अधिक काम नहीं करना चाहिए।

बा और देवदास आजकल अकसर मुझसे मिलते हैं। मणिलाल एक-दो दिनमें बम्बई पहुँचनेवाला है। बेचारा लड़का! वह मुझे मरता देखने आ रहा है। उसे भारी निराशा होगी। बा बूढ़ी हो गई है।

सप्रेम,

भाई

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४४३५) से; सौजन्य : ए० एच० वेस्ट

१. साधन-सूत्रमें पत्र पानेवालेका नाम नहीं दिया गया है, किन्तु "दैनन्दिनी, १९३२" में ५ अक्टूबरको गांधीजी ने जिन लोगोंको पत्र लिखे थे उनमें स्टैंडेनेथका नाम भी है। पत्रमें उल्लिखित सत्यवान नामक सज्जन फ्रांसिसका स्टैंडेनेथके पति फ्रेडरिक स्टैंडेनेथ थे।

३३३. एक पत्र

५ अक्टूबर, १९३२

श्री लॉयड जॉर्जके उद्यानसे आनेवाली यह बयार मुझे बहुत पसन्द है, क्योंकि इसमें उनके स्नेहकी गन्ध व्याप्त है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १०७

३३४. एक पत्र

५ अक्टूबर, १९३२

अब वह उपवास चूँकि अतीतका विषय बन गया है और उसने शायद अपना गौचित्य भी सिद्ध कर दिया है, इसलिए [मैं मानता हूँ कि] जॉर्ज लंकास्टर अब यह आग्रह नहीं करेंगे कि मैं उसकी नैतिक भूमिकाकी चर्चा करूँ। ईश्वरके संकेत आनेवाली किसी चीजका मर्म बुद्धिसे पूरी तरह समझाया भी तो नहीं जा सकता।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १०७

३३५. एक पत्र

५ अक्टूबर, १९३२

हाँ, ये दिन बड़े अद्भुत रहे हैं। मैं तो यही आशा करता हूँ कि यह उत्साह मन्द नहीं पड़ेगा।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १०९

३३६. पत्र : बद्रीदत्त पाण्डेको

५ अक्टूबर, १९३२

आपका दुःख[1] अवर्णनीय है। लेकिन सुख और दुःख दोनों ईश्वरदत्त हैं। इसलिए दोनोंका हम स्वीकार शान्तिपूर्वक और एक ही भावसे करें। और मौतका डर क्यों? वह तो सबके लिए है। जो गये वे गये नहीं हैं, जो रहे वे रहे नहीं हैं। दोनों हैं ही। सिर्फ स्थान-भेद है। यह तो हुई ज्ञानवार्ता। ईश्वर आप दोनोंको शान्ति देवे, सहनशीलता देवे।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १०९

३३७. पत्र : खगेन्द्रप्रिया बरुआको

६ अक्टूबर, १९३२

प्रिय बहन,

तुम्हारा पत्र, खादीका टुकड़ा और मोजे मिले। इन सबके लिए धन्यवाद। जरूरत पड़नेपर उनका उपयोग करूँगा। तुमने अप्रैलमें [खादीका] जो सुन्दर टुकड़ा भेजा था, वह भी मिल गया था। उसे मैं अब भी प्रतिदिन ओढ़ता हूँ। उसकी प्राप्तिकी सूचना तो मैंने १५ अप्रैलको[2] भेज दी थी। आश्चर्य है कि तुम्हें वह पोस्ट-कार्ड नहीं मिला।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

श्रीमती खगेन्द्रप्रिया बरुआ
नवगाँव
असम

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी डब्ल्यू० ९५५२)से।

१. बद्रीदत्त पाण्डेको दुहरा सदमा पहुँचा था। उनके पुत्रकी पानीमें डूब जानेसे मृत्यु हुई थी और भाईकी दुःखद मृत्युके उस आघातको सहन न कर पानेके कारण पुत्रीने भी अपने प्राण त्याग दिये थे।

२. देखिए खण्ड ४९, पृष्ठ २९७।

३३८. पत्र : ई० ई० डॉयलको

६ अक्टूबर, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

पिछले महीनेकी[1] २९ तारीखको मैंने मेजर भण्डारीके नाम एक पत्र लिखा था, और मुझे मालूम हुआ है कि उसे आपने सरकारके पास भेज दिया था। सरकारकी ओरसे उसका उत्तर अबतक नहीं मिला है और मैं आतुरतासे उसकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। इसी बीच दक्षिण भारतमें श्रीयुत केलप्पनके उपवासके सिलेसिलेमें मुझे कालिकटके जमोरिनके नाम एक लम्बा तार[2] भेजना पड़ा था। तार अवलोकनार्थ सरकार के पास भेजा गया था, और जहाँतक मैं जानता हूँ, वह जमोरिनके पास अबतक नहीं पहुँचा है। अब बात ऐसी है कि यह तो जीवन-मरणका प्रश्न है और यद्यपि मेरे कहनेपर श्रीयुत केलप्पनने उपवास स्थगित भी कर दिया है, फिर भी यह किसी प्रकार नहीं कहा जा सकता कि वे संकटसे निकल आये हैं। और चूंकि मैंने इसमें सफलतापूर्वक हस्तक्षेप किया, इसलिए अब तो अनिवार्यतः मेरा सम्बन्ध भी इस मामलेसे जुड़ गया है। विवादके इस प्रकरणमें कालिकटके जमोरिन मुख्य पात्र हैं। श्रीयुत केलप्पनने अपना उपवास केवल तीन महीनेके लिए स्थगित किया है। इसलिए समय गँवानेकी गुंजाइश नहीं है। सो मैं यह जानना चाहूँगा कि यह तार जमोरिनको कब भेजा जायेगा और मुझे अस्पृश्यताके सम्बन्धमें पत्र-व्यवहार करनेकी छूट है अथवा नहीं। देर करना खतरनाक है और परेशानीका कारण बना हुआ है।

इस सम्बन्धमें कुछ साथी-कार्यकर्त्ताओंसे मिलना भी मेरे लिए जरूरी है। इस सम्बन्धमें सरकारसे जल्दी निर्णय करवा सकें तो कृपा होगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्राँच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग ३, पृ० २५७। जी० एन० ३८६२ से भी।

१. यहाँ साधन-सूत्रमें गलतीसे ऐसा शब्द पड़ गया है, जिसका मतलब होगा "इसी महीनेकी"।

२. देखिए "तार: कालिकटके जमोरिनको", ३-१०-१९३२।

३३९. पत्र : श्रीमती लिंडसेको

६ अक्टूबर, १९३२

आपके मधुर पत्रके लिए धन्यवाद। हाँ, अगर भगवान् पण्डितोंको ही मिल सकता होता तब तो यह बड़े खेदकी बात होती। मेरी भावना आपकी धोबिनकी भावनाके साथ मिलती है। एक बार ईश्वरकी खोजके लिए एक वैज्ञानिक अभियान चलाया गया। ये वैज्ञानिक हिन्दुस्तान आये। यहाँ वह ब्राह्मणोंके घर या राजाओंके महलमें नहीं, बल्कि एक अछूतकी झोंपड़ीमें मिला। इसीलिए मैं ईश्वरसे कहता रहा हूँ कि मुझे अछूत बना दे। पचास बरसकी परीक्षाके बाद मैं अछूत बननेके योग्य पाया गया हूँ। इस बातसे मेरा मन आनन्दसे भर गया है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ११२

३४०. पत्र : पद्मजा नायडूको

६ अक्टूबर, १९३२

तेरी गैरमौजूदगी मुझे बहुत खटकती है। फूलदानियाँ हमेशा तेरी याद दिलाती हैं। मगर अपने प्रियजनोंकी जुदाई तो कैदीका भाग्य ही है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ११३

३४१. पत्र : पाटणकरको[1]

६ अक्टूबर, १९३२

पत्र और प्रसादके लिए धन्यवाद। अखण्ड सप्ताहके लिए सभी व्यापारियोंको मेरी ओरसे धन्यवाद दें। मेरा निश्चित विश्वास है कि उपवास-सप्ताहमें जो जागृति देखी गई, वह ऐसे आध्यात्मिक प्रयत्नोंके परिणामस्वरूप ही हुई।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ११२

१. साधन-सूत्रमें यह नहीं बताया गया है कि यह पत्र किसको लिखा गया था। लेकिन "दैनन्दिनी, १९३२" में उनका नाम बेलगाँव-निवासी पाटणकर दिया गया है।

३४२. पत्र : हरिभाऊ पाठकको

६ अक्टूबर, १९३२

आपके प्रश्नोंका संक्षेपमें उत्तर देते हुए बस इतना ही कहूँगा :

रोटी-बेटी-व्यवहार अस्पृश्यताको समूल नष्ट करनेके कार्यक्रमका कोई अभिन्न अंग नहीं हैं। ये दोनों तो एक अलग सुधारके विषय हैं और एक-न-एक दिन हिन्दू समाजकी सारी जातियोंको इन्हें स्वीकार करना ही होगा।

जबरदस्ती न कुछ किया जा सकता है और न किया जाना चाहिए। उपवास आदिका उद्देश्य लोगोंको अपनी इच्छाके विरुद्ध आचरण करनेको बाध्य करना नहीं, बल्कि उन्हें सोच-समझकर काम करनेको प्रेरित करना होता है। यदि अस्पृश्य अब अस्पृश्य नहीं रह गये हैं तो फिर हिन्दू समाजके अन्तर्गत वे हैं क्या? मेरा अपना विचार है कि आज तो वर्ण-व्यवस्था टूट गई है। आज न कोई सच्चा ब्राह्मण रह गया है, न सच्चा क्षत्रिय और न सच्चा वैश्य। हम सब शूद्र हैं, अर्थात् एक ही वर्णके हैं। यदि यह स्थिति स्वीकार कर ली जाये तो बात आसान हो जाती है। यदि इससे हमारे अहंकी तुष्टि नहीं होती तो यही मान लें कि हम सब ब्राह्मण हैं। निश्चय ही, अस्पृश्यता-निवारणका मतलब ऊँच-नीचके भावका समूल नष्ट कर दिया जाना है। जो यह कहता है, 'मैं तो दूसरे लोगोंसे बढ़कर हूँ' वह अपने-आपको गिराता है; जो यह कहता है कि 'मैं तो दूसरे मानव-बन्धुओंके बीच एक अदना-सा आदमी हूँ' वह अपनेको ऊपर उठाता है। मेरे उपवासका उद्देश्य इस समस्याको सतही तौरपर हल करना नहीं, बल्कि हम सबको सच्चा बनाना था।

काश, मैं कोई अवधि निश्चित कर पाता। मगर मैं कौन होता हूँ अवधि निश्चित करनेवाला? लेकिन अपने अतीतके अनुभवोंके आधारपर मैं इतना कह सकता हूँ कि यदि निश्चित गतिसे यह सुधार होता रहा और उसके पीछे कोई पाखण्ड या ढोंग नहीं रहा तो इस विषयको लेकर मुझे आगे कोई उपवास नहीं करना पड़ेगा। सच्ची प्रगति तो स्वतः दिखती है। सच्ची प्रगति हुई तो उसके प्रकाशका अनुभव हरिजन स्पष्ट रूपसे करेंगे। इसलिए आपसे निवेदन करूँगा कि इस सम्बन्धमें समयकी कोई मर्यादा निश्चित करनेके बारेमें चिन्ता न करें।

हम सभी किसी-न-किसी प्रकारकी मूर्तियोंमें विश्वास करते ही हैं। मैं भी करता हूँ। खुद मेरे लिए किसी साधारण मन्दिरमें कोई आकर्षण नहीं है। लेकिन, उसका एक जबरदस्त आध्यात्मिक महत्त्व है। इसलिए हरिजनोंके लिए उसके द्वार खुले होने चाहिए। आवश्यकता मन्दिरोंके विनाशकी नहीं, उनके सुधारकी है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १०९-१०

३४३. पत्र : वी० रामजीरावको

६ अक्टूबर, १९३२

प्रिय मित्र,

पत्रके लिए धन्यवाद। मुझे पूरी आशा है कि अस्पृश्यता-निवारणके मामलेमें आन्ध्रदेश इस देशके अन्य हिस्सोंसे पीछे नहीं रहेगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री वी० रामजीराव
'दीनबन्धु' कार्यालय
मसुलीपट्टम

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४५७८)से।

३४४. एक पत्र

६ अक्टूबर, १९३२

चोर ईश्वरके चाहनेसे तो चोरी नहीं करता, लेकिन उसका चोरी करना भी उसकी अनुमतिके बिना नहीं हो सकता।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ११३

३४५. एक पत्र

६ अक्टूबर, १९३२

गरीबोंकी संस्थासे मोची आदि भाइयोंको अलग रखना निश्चय ही अधर्म है। किन्तु इस दोषको दूर करनेके लिए तुम तत्काल उपवास शुरूकर दो, यह उचित नहीं माना जायेगा। तुम्हें बुजुर्गोंसे विनती-प्रार्थना करनी चाहिए। तुम्हें उनकी सेवाके द्वारा प्रतिष्ठा प्राप्त करनी चाहिए। इसके लिए किसीको मजबूर नहीं किया जा सकता।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ११३

३४६. तार: शौकत अलीको[1]

७ अक्टूबर, १९३२[2]

मौलाना शौकत अली
खिलाफत कार्यालय
बम्बई

खुशी है कि आपने अमेरिका जाना मुलतवी कर दिया। वह दिन बड़ा भव्य होगा जब पक्की हिन्दू-मुस्लिम-सिख एकता स्थापित हो जायेगी। शेष तो रातके बाद दिनकी भाँति अपने-आप हो जायेगा। आप ठीकसे देखेंगे तो अब भी मुझे अपनी जेबमें ही पायेंगे। सस्नेह।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ११५। भारत सरकार, होम डिपार्टमेंट, राजनैतिक फाइल नं० ३१/९५/३२ भी; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

३४७. एक पत्र[3]

७ अक्टूबर, १९३२

मेरे विचारसे तो निस्स्वार्थ सेवासे, उसका प्रकार जो भी हो, आत्मशुद्धि अवश्य होती है। आर्थिक और नैतिक विकास साथ-साथ होना चाहिए। आत्मा वह है जो शरीरको प्राणवान् बनाती है। आत्मज्ञान आत्मशुद्धिसे प्राप्त होता है। यदि भोजन सबके लिए जरूरी है तो प्रार्थना भी जरूरी है।

कोई पागल हो जाये, तो उसकी स्वतन्त्रता छीन ली जानी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ११४

१. इस तारको सरकारने रोक लिया था; देखिए "पत्र: भारत सरकारके गृह-सचिवको", ७-११-१९३२।

२. **महादेवभाईनी डायरी**के अनुसार।

३. साधन-सूत्रसे यह पता नहीं चलता कि यह पत्र किसको लिखा गया था। किसी सज्जनने धारवाड़से गांधीजी को एक लम्बा पत्र भेजा था।

३४८. एक पत्र

७ अक्टूबर, १९३२

प्रिय बहन,

मेरी अन्तरात्मा मुझसे कहती है कि आध्यात्मिक एकता अपने सम्पूर्ण मन और प्राणसे आजके कृत्रिम और झूठे जीवनका विरोध करनेमें ही सम्पन्न की जा सकती है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९६८४) से; सौजन्य: विश्वभारती म्यूजियम एण्ड लाइब्रेरी, शान्तिनिकेतन। **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-२, पृ० ११७ से भी

३४९. पत्र: कहान चकु गांधीको

७ अक्टूबर, १९३२

आपका कृपापूर्ण पत्र मिला। आपकी कृपाके साथ जो माँग जुड़ी हुई है, वह ऐसी है कि मुझे अपनी पचास वर्षकी मान्यता और कार्यका त्याग कर देना चाहिए। किसीकी कृपाके वशीभूत होकर भी ऐसा कैसे किया जा सकता है?

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ११४

३५०. पत्र : मणिशंकर गणपतरामको

७ अक्टूबर, १९३२

रोटी-बेटी-व्यवहार अस्पृश्यता-निवारणका अंग नहीं है। इसमें किसीके साथ जबरदस्ती करनेकी तो बात ही नहीं है; लेकिन कोई रोटी-बेटी-व्यवहार रखे तो जिस तरह प्रत्येक जातिके बीच ऐसा व्यवहार करनेवाले को रोका नहीं जाता उसी प्रकार उसे भी रोकना नहीं चाहिए। अस्पृश्यता-निवारण और यह व्यवहार अलग-अलग चीजें हैं।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ११४

३५१. पत्र : निर्मला बा० मशरूवालाको

७ अक्टूबर, १९३२

चि० निर्मला,

आशा है, मेरे लिखे कार्ड[1] मिले होंगे। यदि कोई नासिक जाये अथवा पत्र लिखे तो वह इतनी बात ध्यानमें रखे। थानेके लिए भी उसका उपयोग किया जा सकता है।

किशोरलालके दो तथा गोमतीका एक पत्र मिला।

उपवासके औचित्य-अनौचित्यके बारेमें अब लिखना अनावश्यक लगता है। उसमें दोष तो अवश्य था किन्तु उसके बिना काम चलनेवाला नहीं था। उसे अहिंसा का आखिरी कदम माना जा सकता है। मेरे शरीरमें ताकत आती जा रही है। वास्तवमें काफी ताकत आ भी चुकी है। वजन घटकर ९३।। पौ० रह गया था जो अब ९९ पौं० हो गया है। पहले १०१ पौं० था। मेरा विश्वास है कि उसके कारण कुल मिलाकर शरीरको लाभ ही पहुँचना चाहिए। मैं भोजनमें एक सेर दूध, नौ नारंगियाँ या मुसम्बियाँ, अनार या अंगूरका रस और एक बार लौकी या टमाटरका रस लेता हूँ। सुबह-साँझ दोनों समय मिलाकर डेढ़ घंटे घूमता हूँ। उससे मुझे कोई खास थकावट नहीं महसूस होती। काफी-सारे पत्र लिखता हूँ। कमसे-कम दो सौ तार सूत कातता हूँ और ४० नम्बरतक जाता हूँ। बा दिन-भर मेरे साथ रह सकती है। देवदासको मुझसे मुलाकात करनेकी अनुमति मिली हुई है।

हमारे लिए यथासम्भव महीन सूत कातना आवश्यक है। महीन वस्त्र पहननेके दोषको मैं भी स्वीकार करता हूँ किन्तु महीन कपड़ेका कुछ अन्य उपयोग भी है।

१. इनमें से एकके लिए देखिए "पत्र: निर्मला बा० मशरूवालाको", ३-१०-१९३२।

कलाकी दृष्टिसे उसकी बहुत आवश्यकता है। महीन सूत कातते हुए कई प्रकारकी खोज की जा सकती है तथा इससे हाथकी क्रियाओंको बढ़ावा मिलता है। गुजरे जमानेमें जबरदस्ती बारीक सूत कतवाया जाता था। इस जबरदस्तीके प्रायश्चित्त स्वरूप हमें भी कुछ बारीक सूत यज्ञार्थ कातना चाहिए ताकि जहाँ ऐसे वस्त्रकी आवश्यकता सिद्ध हो वहाँ यज्ञार्थ काता गया सूत मिल सके। यदि हमें महीन सूतकी पूरी मजूरी देनी पड़े तो उसकी कीमत बहुत अधिक बढ़ जायेगी।

किशोरलालने उपवास-सप्ताहके दौरान हजार तार कातनेका जो लोभ किया वह उचित नहीं था। इस सम्बन्धमें उन्हें अपनी सीमाको अवश्य स्वीकार कर लेना चाहिए। इससे सहज नम्रता आती है। कताईके बजाय हाथका कोई और आसान श्रम किया जा सकता है। किन्तु जो शारीरिक श्रम नहीं कर सकते, ऐसे लोग भी अपने विचारों और लेखोंसे सेवा तो करते ही हैं। हाथ होते हुए भी जो उनका उपयोग नहीं करता, वह चोर है।

"मैं तो चाहता हूँ, सर्वस्व मेरा सदा किसी प्राणीके दुःखनाशार्थ हो", यह संशोधन मुझे पसन्द आया है।[1]

किशोरलाल जानते हैं कि अनशनके धार्मिक औचित्यके बारेमें नाथको सन्देह था। मेरे आग्रहपर उपवासके दौरान मुझसे उन्होंने कुछ चर्चा की थी। आखिरकार समाधान हुआ या नहीं, यह मैं नहीं जानता।

रवीन्द्रनाथने इस बार हद कर दी। हम दोनों एक-दूसरेके बहुत नजदीक आ गये हैं। मुझे नहीं लगता कि मैंने कोई चीज छोड़ दी है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २८८८) से; सौजन्य : निर्मलाबहन सर्राफ

३५२. पत्र : लिलि ही० शाहको[2]

७ अक्टूबर, १९३२

मुझे पारण करानेका अर्थ समझती है? तेरे हाथसे पारण करनेके लिए क्या मुझे फिर उपवास करना चाहिए?

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ११४

१. मूल संस्कृत-पंक्ति इस प्रकार है: "काम ये दुःख तप्तानाम् प्राणिनामार्ति नाशनम्।"

२. हीरालाल शाहकी पुत्री, अब लिलि आनन्द पण्ड्या

३५३. पत्र : स्वरूपरानी नेहरूको[1]

७ अक्टूबर, १९३२

प्रिय भगिनी,

आपका खत मिला है।

स्वास्थ्यके लिये दाक्तरको बुलानेकी आवश्यकता रहे तो बुलानेमें संकोच नहिं रखना। फल तो काफी खाती है न? ईश्वर शीघ्र अच्छा कर देवे।

मैं आखरी जवाब न दुं तब तक यहीं रहनेका निश्चय किया यह मुझे बहोत अच्छा लगा है। लड़के-लडकीयोंको तो अच्छा लगेगा हि। उनको मेरे आशीर्वाद दीजीये।

आपकी प्रसादी मिल चुकी है। लेकिन हमारे बीचमें इस विनयकी कोई जरूरत है क्या? ऐसे तो बहोत फल प्रेमलीलाबहन और रामनारायणजी की पत्नी भेज रही हैं।

सरूप[2], कृष्णासे[3] लिखो कि बगैर तारके मैं उनका दिल पहचान सकता हुं।

यहां आप अछूतोंकी सेवा कर रही है सो तो मैं देख रहा हुं। बा मुझे सब बात सुनाती है।

आपका,
मोहनदास

मूलसे: गांधीजी-इन्दिरा गांधी पत्र-व्यवहार फाइल; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३५४. पत्र : चि० य० चिन्तामणिको

८ अक्टूबर, १९३२

इसमें माफी माँगनेकी क्या जरूरत है? पहले भी आपका पत्र आया था। आशा है, उसके जवाबमें लिखा हुआ मेरा पत्र आपको मिल गया होगा।

आपके बताये हुए मार्गको[4] अपनानेमें ऐसी कठिनाइयाँ हैं, जिन्हें पार नहीं किया जा सकता। कैदी होनेके कारण मैं उन सबकी चर्चा नहीं कर सकता। अगर कर सकता होता, तो मेरा विश्वास है कि अपनी दलीलोंके ठोस होनेका मैं आपको यकीन करा सकता हूँ। इतना आपसे कह दूं कि सरकार और लोगों या कांग्रेसके बीच अमन कायम हो जाये, इसके लिए मुझसे ज्यादा उत्सुक और कोई नहीं हो सकता।

१. मोतीलाल नेहरूकी पत्नी।

२ व ३. स्वरूपरानीकी कन्याएँ।

४. एक पत्रमें चिन्तामणिने सविनय अवज्ञा स्थगित करनेका सुझाव दिया था।

उम्मीद है, आपकी तबीयत अच्छी होगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत चि० य० चिन्तामणि
'लीडर' कार्यालय
इलाहाबाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग ३, पृ० २२३। **महादेवभाईनी डायरी,** भाग-२, पृ० ११७-८से भी।

३५५. पत्र : मोहनलालको

८ अक्टूबर, १९३२

भाईश्री मोहनलाल,

तुम्हारा यह दृष्टिकोण ठीक है कि रोटी-बेटी-व्यवहार अस्पृश्यता-निवारणका आवश्यक अंग नहीं है। अतः इस मामलेमें किसीपर जोर-जबरदस्ती की ही नहीं जा सकती। किन्तु जो लोग हरिजनोंके साथ स्वेच्छासे ऐसे सम्बन्ध स्थापित करनेको प्रेरित हों, उन्हें रोका भी नहीं जा सकता, वैसे ही जैसे कि स्पृश्य मानी जानेवाली जातियोंमें इस प्रकारके आपसी सम्बन्धको कोई रोकता नहीं। अस्पृश्यता-निवारणका अर्थ है कि हिन्दू-मात्र जिन स्वाभाविक मानवीय अधिकारोंका उपभोग करते हैं, वे सब अधिकार हरिजनोंको भी देना और दिलाना।

मोहनदास गांधी

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २३२)से।

३५६. पत्र : मोहनलाल एम० भट्टको

८ अक्टूबर, १९३२

मुहम्मद काजीके रोजेके निश्चयमें कुछ तत्त्व है। संकटके समय रोजेका फरमान इस्लाममें है। इसी तरह एक और मुसलमान भाईने इस दौरान रोजे रखे थे। रोजा उपवास नहीं है। इस मामलेमें मुसलमान भाइयोंका फर्ज यह है कि वे यह तीव्र इच्छा करें कि जैसे अछूतोंके प्रश्नका निपटारा हो गया है, वैसे ही हिन्दू-मुसलमान-सिख प्रश्नका भी निपटारा हो जाये, और उस दिशामें वे अपना कर्त्तव्य-पालन करें।

मेरे उपवासके पीछे इस प्रश्नके धार्मिक हलका उद्देश्य तो था ही, और हिन्दू जनता उसे आसानीसे समझ गई। उससे जो प्रचण्ड जागृति हुई है वह, तो धार्मिक ही है।

सरकारी निर्णयके फलस्वरूप धार्मिक दृष्टिसे तो अछूतोंका सर्वनाश ही हो रहा था। उसकी तुलनामें राजनैतिक प्रश्न तो नगण्य था। राजनीति धर्ममें समाई हुई है। राजनीति स्वतन्त्र चीज नहीं है। अछूतोंके प्रश्नके धार्मिक हलमें सभी देशोंकी तमाम कुचली हुई जातियोंका समावेश हो जाता है। यह बात ईसाई और मुस्लिम समाज भी समझ गये दीखते हैं।

शराब न पीनेवाला मजलिसमें शराबका प्याला आगे बढ़ाये, तो इसमें मुझे सिद्धान्त-दोष नहीं दीखता है। मेरा खयाल है कि ऐसी मजलिसमें जानेके बाद प्याला आगे बढ़ाना धर्म है। इसमें दंभ नहीं है। यह तो एक ऐसी रीति है जिससे शराब पीनेवाले का प्रेम चुपचाप प्राप्त किया जा सकता है। यह दलील पक्के मदिरानिषेधक पर ही लागू होती है। प्रश्न भी ऐसोंको ध्यानमें रखकर ही किया गया है। यह जवाब अच्छी तरह समझमें न आया हो, तो इसका अनर्थ हो सकता है। मगर तुम्हारे पास यह उत्तर भेजा जाये, तो इसमें मुझे कोई भय नहीं दीखता।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ११६-७

३५७. पत्र : छगनलाल जोशीको

८ अक्टूबर, १९३२

चि० छगनलाल (जोशी),

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हें जैसा योग्य लगे, करो। यहाँसे मैं तुम्हारा मार्गदर्शन कर ही नहीं सकता। जो प्रतिज्ञा ली है, उसपर विचार करना। उसका रंचमात्र भी भंग नहीं होना चाहिए। इसका मतलब यह नहीं कि इस विषयमें मैं कुछ जानता हूँ। अभी मुझे सब-कुछ याद भी नहीं है, और इसीसे इस बातपर मेरा आग्रह रहा है कि जो-जो प्रतिज्ञा ले, उसे उसको उसी समय लिख लेना चाहिए। ऐसा नहीं करनेसे आदमी बादमें ढीला पड़ जाता है और फिर अपनी प्रतिज्ञाके पालनमें भी ढिलाई करता है। मुझे खुद भी इस तरह पछताना पड़ा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५११) से।

३५८. पत्र : रमाबहन जोशीको

८ अक्टूबर, १९३२

चि० रमा (जोशी)[१],

मुझसे न लिखनेका अनुरोध करके क्या तुम खुद पत्र लिखनेसे बच निकलना चाहती हो? लेकिन, जब मैं [मजेमें] खाता-पीता, चलता-फिरता हूँ तो ऐसा कैसे हो सकता है कि समय मिलनेपर भी पत्र न लिखूं? विमु यहाँ घूमने चली आई, यह तो ठीक किया, लेकिन उसने अन्त्यज-लड़कीकी तरह काम शुरू किया या नहीं? धीरू सेठ कुछ समझदार हो गया लगता है।

उसका स्वास्थ्य ठीक हुआ या नहीं?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३३६)से।

३५९. पत्र : बबलभाई मेहताको

८ अक्टूबर, १९३२

चि० बबल,

तुम्हारा पत्र मिला। अब तो मुझमें काफी ताकत आ गई है। अपने समयके हर क्षणका उचित उपयोग करना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४४७)से।

१. छगनलाल जोशीकी पत्नी।

३६०. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

८ अक्टूबर, १९३२

चि० पण्डितजी,

तुम्हारा पत्र मिला।

प्रीतिभोज [जिनमें अस्पृश्य भी शामिल हों] अस्पृश्यता-निवारणका अंग तो नहीं है किन्तु वे उसका परिणाम हैं। और मुझे वे पसन्द भी हैं। उनका विरोध तो होता ही रहेगा किन्तु यदि यह प्रवृत्ति जनतामें फैल चुकी होगी तो उसे कोई रोक नहीं सकता। भोजन आदिमें छुआछूतके बारेमें कोई धार्मिक प्रमाण नहीं मिलता।

हम मूर्तिपूजाको प्रोत्साहन नहीं देते किन्तु उसका निषेध भी नहीं करते। जब तक हिन्दू धर्म है तबतक किसी-न-किसी रूपमें मन्दिर बने ही रहेंगे। हिन्दू धर्म जिन मन्दिरोंको मान्यता देगा, उनमें अन्त्यजोंको प्रवेश करनेका अधिकार होना ही चाहिए। यदि हम अस्पृश्यताको मिटाना ही चाहते हैं तो इसके अतिरिक्त और कुछ सम्भव ही नहीं है। इसलिए हमारा इससे कोई विरोध नहीं है कि आश्रमवासी मन्दिर-प्रवेशको प्रोत्साहन दें, इतना ही नहीं बल्कि उसे प्रोत्साहित करना उनका कर्त्तव्य है। धार्मिक दृष्टिसे यह प्रश्न अन्त्यजोंके लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है और इसमें हिन्दू जातिकी परीक्षा है।

अस्पृश्यता-निवारणके लिए आश्रमवासी बाहर निकल सकें या निकलें, इसे मैं आवश्यक मानता हूँ। आश्रमवासी भी आखिर बाहर निकलकर जनताके बीच फैल जानेके लिए ही तो तैयार हो रहे हैं। आश्रममें जो लोग गणेश-पूजादि करना चाहें उन्हें रोका ही नहीं जा सकता।[1] किन्तु मेरे विचारमें आश्रम [संस्था] के रूपमें हमें तटस्थ रहना चाहिए और इसलिए आश्रममें सार्वजनिक मूर्ति-मन्दिर न बनने दें। हमारा सार्वजनिक मन्दिर तो प्रार्थना-भूमि है, जिसकी दीवारें दिशाएँ हैं, जिसकी छत आकाश है और जिसमें मूर्ति निराकार भगवान् की है। यदि ऐसा न करें तो हमें मस्जिद, अगियारी, गिरजा, सिनेगोग आदिके लिए स्थान रखना चाहिए। यह ठीक है कि आज हिन्दू अधिक हैं किन्तु हम तो यह चाहते हैं कि अन्य धर्मावलम्बी भी आ जायें। सब धर्मोंके प्रति समभाव रखें तो आजसे हमें ऐसे देवालयोंके लिए अपने मनमें तो जगह रखनी ही चाहिए। किन्तु मनमें जगह रखनेसे समभावके बिसर जानेकी सम्भावना है, इसलिए अन्य मामलोंकी तरह इस मामलेमें भी संयम ही हमारे लिए सुनहरी मार्ग है। यह सब भली भाँति समझ लेना और जबतक समझमें न आये, मुझसे बराबर पूछते रहना। मैं थकूँगा नहीं और अब ऐसे कामोंको निपटाने लायक ताकत आ गई है।

१. साधन-सूत्रमें इस वाक्यके कुछ शब्द अस्पष्ट होनेके कारण पढ़े नहीं जा सके। अतः उन शब्दोंकी पूर्ति **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-२, पृ० १२७-८ से की गई है।

यह तो मैं भूल ही गया हूँ कि सुन्दरबाई और देशपाण्डेका सम्बन्ध कैसे हुआ। धार्मिक प्रश्न तो पहले जो विवाह हुआ माना गया है, उसके बारेमें था। मैंने तो यह आदर्श सुझाया था कि शिक्षक और शिष्या अथवा एक ही संस्थामें रहनेवाले शिक्षक और शिक्षिकामें विवाह-सम्बन्ध नहीं होना चाहिए। इसमें किसी तरहका धार्मिक प्रतिबन्ध नहीं है। यदि किन्हींकी आपसमें विवाह करनेकी इच्छा हो आये तो उन्हें प्रोत्साहित न करें किन्तु उन्हें हम रोक तो सकते ही नहीं। यह तो सामान्य रूपसे लिख रहा हूँ। इस मामलेमें क्या हुआ था, यह मैं भूल गया हूँ। मेरे आदर्शका पूरी तरह प्रचार भी नहीं हुआ। इस बारेमें विद्यापीठमें भरती होनेवालोंको चेताया भी नहीं जाता। तो फिर इस आदर्शको हम कैसे लागू कर सकते हैं? ऐसे मामलोंमें अपने आदर्शपर कायम रहते हुए भी हमें उदारवृत्ति अपनानी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २३६) से; सौजन्य : लक्ष्मीबहन ना० खरे

३६१. पत्र : मणिबहन पटेलको

८ अक्टूबर, १९३२

चि० मणि,

तेरा लम्बा पत्र मिल गया था। मेरे लिए तो यह लम्बा नहीं था। उपवास तो अब गई-बीती बात हो गई। वह ईश्वरकी प्रेरणासे हुआ था, इसलिए शोभापूर्वक निपट गया। अब शरीर फिर बड़ी तेजीसे बन रहा है। शक्ति लगभग आ गई है। दूध दो पौंड और ढेरों फल ले रहा हूँ। फलोंमें नारंगी, मोसम्बी, अनार अथवा अंगूर का रस और लौकी अथवा टमाटरका रस लेता हूँ। . . .[1] काफी घूम-फिर लेता हूँ। कमसे-कम २०० तार कातता हूँ — ४५ अंकके। पत्र तो काफी लिखता ही हूँ। इसलिए चिन्ताका कोई कारण रह ही नहीं गया है। बा को दिनमें मेरे पास रहनेकी छूट है। देवदासको मिल जानेकी छूट है। देवदासकी तबीयत अब ठीक है।

तुझे खानेके सपने आते हैं, उसका थोड़ा-बहुत कारण अपच हो सकता है। ऐसे सपने या तो बहुत भूखे पेट रहनेसे आते हैं या बदहजमीसे। इन कारणोंको ढूँढ़कर उचित उपाय कर और फिर निश्चिन्त रह। जीवन व्रतबद्ध हो तो ये कारण समय पाकर नष्ट हो ही जाते हैं। दीर्घकालके आवरण एकाएक क्षीण हो जायेंगे, ऐसा माननेका कारण नहीं है। वे अपना समय लेते ही हैं। इसलिए घबराना नहीं चाहिए। निराश भी नहीं होना चाहिए। प्रयत्नमें शिथिल भी नहीं होना चाहिए और परिणामके बारेमें निःशंक और निश्चिन्त रहना चाहिए। यही 'गीता' की अनासक्ति है।

१. जेलके अधिकारियोंने यहाँ कुछ शब्दोंको आपत्तिजनक मानकर निकाल दिया था।

उपवासका असर अलग-अलग होता है, इसमें आश्चर्य नहीं। उसका आधार शरीरकी बनावट और मानसिक तैयारीपर है। उपवासकी जिसे आदत ही न हो वह एक दिनके उपवाससे भी घबरा जायेगा और उसकी हिम्मत पस्त हो जायेगी। जिसे आदत है, उसके लिए वह खेल हो जाता है। इसी तरह जिसके शरीरमें चरबी वगैरह है ही नहीं वह बहुत लम्बा उपवास नहीं कर सकता। बहुत चरबीवाला आदमी धीरज रखे तो खूब लम्बा उपवास कर सकता है और शारीरिक दृष्टिसे उसका लाभ उठा सकता है।

बापू और महादेव मौज कर रहे हैं। इतने अधिक एकान्तवासका अनुभव तो हमने कभी प्राप्त किया ही नहीं था। इससे खूब लाभ हुआ है।

तेरा शरीर अच्छा होगा। लीलावती और कमलादेवी अच्छी रहती होंगी। और जो बहनें हों उन्हें आशीर्वाद। लीलावतीसे कहना कि मुझे मुंशीका लिखा एक सुन्दर पत्र मिला था। किसी समय मुझे लिखनेकी गुंजाइश हो और वैसी उमंग आये तो लिखे। नन्दूबहनका जो पत्र यहाँ आया है, वह इसके साथ भेज रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो-४ : मणिबहेन पटेलने, पृ० ८७-९

३६२. पत्र : प्रभावतीको

८ अक्टूबर, १९३२

चि० प्रभावती,

तेरा लम्बा पत्र मिला। बड़ी खुशी हुई। मेरे सारे पत्र तो तुझे नहीं मिले, लेकिन लगता है, दूसरोंकी मार्फत भेजे मेरे आशीर्वाद मिल गये। मेरा उपवास तो अब पुरानी बात हो गई। मुझमें शक्ति आ रही है। दो पौंड दूध, नारंगी, मोसम्बी, टमाटर, लौकी, अंगूर या अनारका रस लेता हूँ। घूम-फिर सकता हूँ। ४५ अंकका कमसे-कम २०० तार सूत भी कात लेता हूँ। और पत्र तो लिखता ही हूँ।

बा दिनमें मेरे पास रहती है, इसलिए चिन्ताकी कोई बात नहीं है। तेरी तबीयत ठीक रहती है, यह बहुत अच्छा है। स्वरूप और कृष्णासे कहना कि माताजी यहीं है। उपवासके दौरान मुझसे मिलती रहती थीं। चाँद,[1] तारा,[2] इन्दु वगैरह भी मिल गई थीं। इन्दुका विकास ठीक हो रहा है। कान्ताकी खबर तूने नहीं दी। रानी विद्यावती तेरे ही साथ हो तो उससे कहना कि उसे मैंने पत्र लिखा है। तेरा अध्ययनका उत्साह ठीक है। जितना वहाँ सीखा जा सकता है, सीख ले। जेलसे

१ व २. विजयलक्ष्मी पण्डितकी पुत्रियाँ, चन्द्रलेखा और नयनतारा।

निकलनेपर कुछ अच्छा बन्दोबस्त करूँगा। लेकिन, अधीर न होना। तेरी पवित्रता, धीरज और कर्त्तव्यपरायणता तेरी सच्ची शिक्षा है। इसमें सन्देह नहीं कि पुस्तकीय ज्ञान उसे और भी दीप्त करेगा। इसलिए, ईश्वरकी इच्छा होगी तो तेरी यह चाह भी पूरी होगी। ईश्वर तुझे स्वस्थ रखे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४३०)से।

३६३. पत्र : महालक्ष्मी माधवजी ठक्करको

८ अक्टूबर, १९३२

चि० महालक्ष्मी,

मेरा गत सप्ताहका पत्र मिला होगा।

फिलहाल तुमने अन्न छोड़कर ठीक किया। दूध-दही, किशमिश, नीबू-सोडा, नारंगी, मुसम्बी, ककड़ी, टमाटर, मूली और सलाद लेनेसे तुम्हारा वजन अवश्य घट जायेगा। बादाम आदि नहीं खाने चाहिए। यदि कुछ चबाना ही चाहो तो ढाई तोले नारियल चबाना चाहिए। इससे कम ही खाना चाहिए, अधिक नहीं। माफिक न आये तो छोड़ देना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६८२२)से।

३६४. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

[८ अक्टूबर, १९३२][1]

तेरे दोनों पत्र मिल गये हैं। सच पूछो तो अब कोई ऐसा जाना-माना आदमी नहीं रहा, जिसका आशीर्वाद अनशनको न मिला हो। इसमें शक नहीं कि अहिंसाका यह आखिरी शस्त्र है। उसका दुरुपयोग हो रहा है और यह भी सम्भव है कि अभी और ज्यादा दुरुपयोग हो। तथापि इसके दुरुपयोगमें भी कुछ विशेषता है। वह सिर्फ दुरुपयोग करनेवाले को ही नुकसान पहुँचा सकता है। और गहराईसे विचार करें, तो वह भी थोड़ा ही। हेतु शुभ हो, तो आत्मा कलुषित न होगी, देहकी ही हानि होगी। फिर, ऐसा दुरुपयोग बहुतों-से तो हो ही नहीं सकता। उपवासकी यातना भोगनेको कितने तैयार होंगे?

१. **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-२, पृ० ११६ से।

३६६. पत्र : फ्रेंड्स ऑफ इंडियाके मन्त्रियोंको

९ अक्टूबर, १९३२

संयुक्त अवैतनिक मंत्रिगण
फ्रेंड्स ऑफ इंडिया
४६, लंकास्टर गेट
लन्दन, डब्ल्यू० २

प्रिय मित्रो,

आपके सहानुभूतिपूर्ण पत्रोंके लिए धन्यवाद। रकमें श्रीयुत घनश्यामदास बिड़लाकी अध्यक्षतामें गठित अस्पृश्यता-विरोधी संघके कार्योंको आगे बढ़ानेके लिए उन्हींके पास भेजी जा सकती हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग ३, पृ० २२४

३६७. पत्र : डॉ० सैयद महमूदको

९ अक्टूबर, १९३२

प्रिय डॉ० महमूद,

आपके दो पत्र मिले — बस आपके यही दो पत्र मुझे प्राप्त हुए हैं। आशा है, कमलाकी मार्फत भेजा पत्र मिल गया होगा। उस चार वर्षीया बूढ़ीसे कहिए कि उपवास पूरा न कर सकनेके लिए उसे माफ कर दिया गया। बच्चोंके उपवाससे ज्यादा अच्छी तो उनकी प्रार्थनाएँ ही होती हैं। कौन कह सकता है कि जो सुपरिणाम निकला वह ऐसी ही प्रार्थनाओंका ईश्वर द्वारा दिया गया उत्तर नहीं था? हाँ, जबतक उपवास चलता रहा, मैं हिन्दू-मुस्लिम समस्याके बारेमें भी सोचता रहा और ईश्वरसे मार्ग दिखानेके लिए प्रार्थना करता रहा। क्या बताऊँ, कितना चाहता हूँ कि आपके, मौलाना अबुल कलाम और मालवीयजी के प्रयत्न सफल हों! जिस दिन एकताका कोई कागजी मसौदा प्राप्त होनेके बजाय हार्दिक एकता स्थापित हो जायेगी, वह दिन सचमुच बड़ा भव्य होगा।

यह जानकर खुशी हुई कि आपकी पत्नी और बहनें अब बेहतर हैं। आपको भी अब ठीक हो जाना है, या फिर अपना खोया स्वास्थ्य पुनः प्राप्त करनेके लिए आपको अनिवार्य तौरपर उपवास करना चाहिए।

दोनों मौलानाओंको मेरे सलाम।

हम सबका स्नेह-वन्दन।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग ३, पृ० २२३। जी० एन० ५०७६ से भी।

३६८. पत्र : विट्ठल आर० शिन्देको[1]

९ अक्टूबर, १९३२

अस्पृश्यताको — समस्त सत्य, धर्म और प्रगतिके इस शत्रुको — किसी भी तरहसे कोई भी स्थान दिये जानेकी योजनामें मैं शरीक नहीं हो सकता।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १२२

३६९. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

९ अक्टूबर, १९३२

प्रिय गुरुदेव,

आपका सुन्दर पत्र मिला। मैं प्रकाशके लिए नित्य प्रार्थना कर रहा हूँ। हिन्दू-मुस्लिम एकता भी मेरे जीवनका उद्देश्य है। रुकावटें बीचमें आती हैं, लेकिन मैं जानता हूँ कि जब मुझे प्रकाश मिलेगा, तब वह इन सब बाधाओंको भेदकर निकल जायेगा। फिलहाल मैं प्रार्थना कर रहा हूँ, यद्यपि उपवास नहीं कर रहा।

पूनामें आपको खूब मेहनत करनी पड़ी और यह लम्बा सफर भी उतना ही थकानेवाला था। फिर भी मैं आशा रखता हूँ कि आपकी तबीयत ठीक रही होगी।

१. शिन्देने गांधीजी से पूछा था कि अस्पृश्यता-उन्मूलनके सम्बन्धमें क्या वे कोई कामचलाऊ समझौता स्वीकार करेंगे।

पिछले महीनेकी २० तारीखको ग्रामवासियोंके समक्ष आपने जो सुन्दर प्रवचन दिया, उसका अनुवाद करके महादेवने हमें सुनाया था।

सस्नेह,

आपका,

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६३३)से।

३७०. पत्र : उर्मिलादेवीको

९ अक्टूबर, १९३२

प्रिय उर्मिला,

कैसा दुःखद था वह प्रसंग! उस दिन जब आप बाहर जा रही थीं, मैं पुकारने ही वाला था कि सरोजिनीने टोकते हुए कहा, आप सब जल्द ही वापस आयेंगी। सो मैं रुक गया। लेकिन जो हुआ, होना भी वही था। उसने मुझे झटकेके साथ याद दिलाया कि मैं तो कैदी हूँ और इसलिए सब-कुछ मेरी इच्छानुसार ही नहीं हो सकता। ऐसे धक्के लगते रहना अच्छा ही है। उनसे मैं विनम्र बना रहता हूँ।

इससे यह शिक्षा मिलती है कि जो आज कर सकते हो, उसे कलपर हरगिज न छोड़ो और जो अभी कर सकते हो उसे अगले क्षणके लिए मत टालो। मैं आपका और आपके बच्चोंका पूरा समाचार जानना चाहता था। अब आप अपने सुख-दुःख, अर्थात् कदाचित् सुखके कोई प्रसंग हों तो उनके बारेमें और दुःख तो आपको है ही, सो उनके विषयमें भी विस्तारपूर्वक लिखें। मगर ईश्वर-भक्तोंके दुःख भी तो उनके लिए सुख ही होते हैं। दुःखकी आँचमें ही ईश्वर उन्हें परखता और पवित्र बनाता है। यदि इस दुनियामें केवल सुख-ही-सुख मिले तो हमारे लिए साँस लेना दूभर हो जाये और दुःख-रूप प्राणवायुके मिश्रणके बिना हम जीवित ही न रह सकें। महादेवको लिखा आपका पत्र पढ़ा। आपके लड़केको कोई आसान काम मिले, इसके बजाय उसे भले ही कठिनाइयोंकी आँचमें से गुजरकर अपनेको निखारने दीजिए।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १२०

३७१. पत्र : वासन्तीदेवी दासको[1]

९ अक्टूबर, १९३२

आपसे फिर मिल नहीं सका, यह बहुत दुःखद था। आप जा रही थीं, तब मैं आपकी तरफ प्यासी नजरोंसे देख रहा था। पता नहीं यह आपने देखा या नहीं। मगर तभी सरोजिनीने मुझसे कहा कि आप अभी वापस आ रही हैं। मगर यह तो होना नहीं था।

अगर सब-कुछ स्वाभाविक क्रमसे हुआ करे, तो फिर मेरे कैदी होनेका मतलब ही क्या हुआ? इसलिए जितनी सुविधा मिली, उसके लिए हमें आभारी होना चाहिए। मुझे खुशी हुई कि मेरा उपवास आपको पूनातक खींच लाया। आप पत्र तो लिखती नहीं, इसलिए मुझे आपसे मिलनेकी बड़ी भूख थी।

और अब तो अस्पृश्यता-निवारणके इस भव्य कार्यमें आपको लग ही जाना है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ११९

३७२. पत्र : भाऊ पानसेको

९ अक्टूबर, १९३२

चि० भाऊ,

विनाबा जो कहते हैं वह ठीक है किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि शारीरिक उपचार नहीं करना चाहिए। आत्मशुद्धि तो हर हालतमें करनी ही है। किन्तु यह कब्ज सामान्य उपचारसे जाना ही चाहिए। मैं नारणदासको लिख रहा हूँ कि वे तुम्हें राजकोट या बीजापुर भेजें। अक़सर आबोहवा बदलनेसे फायदा होता है। इसके अतिरिक्त दोनों स्थानोंपर सत्संगका लाभ तो मिलेगा ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७३८) से। सी० डब्ल्यू० ४४८१ से भी; सौजन्य : भाऊ पानसे

१. चित्तरंजन दासकी पत्नी।

३७३. पत्र : नारणदास गांधीको

९ अक्टूबर, १९३२ की रात

चि० नारणदास,

तुम्हारी डाक नियमानुसार मिली। भाऊकी कोष्ठबद्धताका निवारण तो हमें चाहे जैसे हो करना ही है। मुझे लगता है कि अगर भाऊको राजकोट भेज दिया जाये तो वहाँकी आबोहवा शायद उसे रास आये। वहाँ भेजना हो ही न सके तो भले बीजापुर ही भेज दो। लेकिन, पुरुषोत्तमको राजकोटकी आबोहवा माफिक आई, इसलिए वहाँका लोभ मनमें जरूर है। फिर, वहाँ पुरुषोत्तम और जमनादासका साथ भी उसके लिए सत्संग-रूप होगा। जैसा ठीक लगे, करना।

कुसुमके बारेमें चिन्ता होती है। उसका स्वास्थ्य न सुधरे, यह असह्य लगता है। अब वह पूरा आराम करती है क्या? प्रेमाने लिखा था कि मेरे उपवासके दौरान तुमने बहुत-सी चीजें छोड़ रखी थीं। स्वास्थ्यका तो कोई नुकसान नहीं हुआ? मेरा काम तो खूब तेज रफ्तारसे चल रहा है। पत्र तो तुम देखते ही हो। आज कुल मिलाकर लगभग तीस पत्र लिखे होंगे। कातना कमसे-कम २०० तार होता है — ४५ अंकसे ऊपरका ही। कुहनी अभी तो बिलकुल ठीक है। दूधकी मात्रा दो पौंडतक पहुँच गई है। फल तो चलते ही हैं। वजन भी ९९ पौंडतक पहुँच गया है। घूमना पूरा होता है। सो मेरे विषयमें तो तनिक भी चिन्ताकी जरूरत नहीं है।

बड़ी कुसुम[1] किस जेलमें रखी जायेगी? अभी कहाँ है? त्रिवेदीके यहाँ मृत्यु होनेके बाद[2] मुझे तो यह लगा कि प्राइमस स्टोवकी या तो आश्रमसे छुट्टी कर दी जाये या बहनें स्टोव न जलानेकी कसम खा लें। आज बा के सम्बन्धमें तो मैंने इसपर अमल भी करवा दिया। यहाँ इन दिनों स्टोव है। बा उसे जलाने जा रही थी। मैंने रोक दिया और महादेव जलाने गया। हमारे यहाँकी स्त्रियोंकी पोशाक ही ऐसी है कि उसमें आग लगनेका पूरा खतरा रहता है। स्टोवका उपयोग करना जरूरी ही हो तो उसे किसी मर्दसे जलवाना चाहिए। वैसे सच तो यह है कि उसकी कोई जरूरत ही नहीं है।

आशा है, अब कुरैशीको बवासीरकी तकलीफ बिलकुल नहीं होती होगी। अमीना कैसी है? वह मुझे पत्र लिखे। और भी जिसे लिखना हो, लिखे। अब किसीको मुझपर दया करनेकी जरूरत नहीं रह गई है। बा को अभीतक तो सारे दिन मेरे

१. कुसुमबहन देसाई।

२. त्रिवेदीके भाईकी पत्नी, तारागौरीकी; देखिए "पत्र: जयशंकर पी० त्रिवेदीको", ४-१०-१९३२।

पास रहनेकी छूट है। लेकिन अब तो कभी भी यह छूट समाप्त की जा सकती है। देवदासको आने-जानेकी छूट है। पण्डितजी को पत्र[1] सुना देना।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२५९ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

३७४. पत्र : मूलचन्द पारेखको

९ अक्टूबर, १९३२

ठक्कर बापाको[2] हिसाब भेजकर थैलीका मुँह खोलनेकी तकलीफ करनेको कहना। मगर आज जब यह आत्मशुद्धिकी हवा बह रही है, यह प्रतिज्ञा करना कि तुम खुद बिक जाओ या तुम्हारे घरका छप्पर बिक जाये, लेकिन एक भी पाठशाला या आश्रम बन्द न होने दोगे। काठियावाड़ इतना थोड़ा पैसा भी इकट्ठा न कर सके, यह असह्य माना जाना चाहिए। तुमने इस कामको अपने हाथमें लिया है। इतनी जल्दी हार जाओगे, तो काम कैसे चलेगा?

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ११८

३७५. एक पत्र

९ अक्टूबर, १९३२

कोई पुत्र पिताका काजी नहीं बन सकता। तुम्हारा काम सुधारकका है। सुधारक-सिपाही अपराधीके मनपर असर डालता है, उसके दोष प्रकट नहीं करता, उसे अदालतमें नहीं घसीटता। तुम्हारा धर्म यह है कि प्रेमसे पिताका व्यवहार बदलो। उनके दोष प्रकट करनेमें पाप है। तुमने तो पिताके अन्य अनेक गुणोंका वर्णन किया है। पैसेका लोभ न हो तो ज्यादा अच्छा। मगर उसे तुम कालक्रममें अपने विनयसे मिटा सकते हो। जबतक न मिटे, उसे सहन करो। भाई-बहनोंको समझाओ। अपना जीवन अधिक शुद्ध और अधिक संयममय बनाओ। सब-कुछ करनेपर भी पिता न मानें, तो घरका त्याग कर दो, इसमें मुझे कुछ अनुचित नहीं दीखता। यह त्याग भी पूरा समय देकर ही किया जाये। हम सुधरे कि तुरन्त ही दुनियाको हमारे-जैसी हो जाना चाहिए, यह अभिमान नहीं रखना चाहिए। हममें एक सुधार हो जानेपर भी अनेक दूसरे

१. देखिए "पत्र: नारायण मोरेश्वर खरेको", ८-१०-१९३२।

२. अमृतलाल वी० ठक्कर, सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटीके सदस्य, जिन्होंने स्वयंको हरिजनों और आदिवासियोंकी सेवामें समर्पित कर दिया था।

दोष हो सकते हैं, जिन्हें शायद हम देखते भी नहीं। यह सोचकर नम्र और दूसरोंके दोषोंके प्रति उदारचित्त रहना आवश्यक है। इसमें तुम्हारे सब सवालोंका जवाब आ जाता है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० ११८-९

३७६. पत्र : डॉ० सुरेशचन्द्र बनर्जीको

१० अक्टूबर, १९३२

प्रिय सुरेश,

अपने स्वास्थ्यका समाचार न देकर आपने मुझे चिन्तामें क्यों डाल रखा है? जाति और अस्पृश्यताके बारेमें मैं आपके वे पुराने विचार जानता हूँ। मैं आपकी इस बातसे पूरी तरह सहमत हूँ कि जात-पाँतको मिटाना ही है। लेकिन यह मेरी जिन्दगी में होगा या नहीं, यह मैं नहीं जानता। हाँ, हम इतना खयाल जरूर रखें कि इन दोनों उद्देश्योंको एक-दूसरेसे मिलाकर दोनोंको विफल न कर दें। अस्पृश्यता आत्माका हनन करनेवाला पाप है। जात-पाँत सामाजिक बुराई है। खैर, आप बिलकुल अच्छे हो जाइये और अपने उसी स्वाभाविक उत्साहसे जात-पाँतसे भिड़ जाइये। इसमें आपको मेरा अच्छा सहयोग मिलेगा।

स्नेह और तमाम शुभकामनाओं-सहित,

बापू

[अंग्रेजीसे]
एडवांस, १५-१०-१९३२ तथा **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-२, पृ० १२४

३७७. पत्र : हरदयाल नागको

१० अक्टूबर, १९३२

ऐन मौकेपर ठीक सन्देश भेजनेमें आप हमेशा नियमित रहे हैं। इतनी उम्रमें इतना उत्साह दिखाकर आप देशके नौजवानोंको लज्जित कर रहे हैं। ईश्वर करे, आप आजके-से ओज-उत्साहके साथ ही सौ वर्ष पूरे करें।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १२५

३७८. पत्र : सोमसुन्दरम्‌को[1]

१० अक्टूबर, १९३२

लगता है, अखबारोंको दिये मेरे पहले ही वक्तव्यका अध्ययन आपने ठीकसे नहीं किया। उसको ध्यानसे पढ़नेपर आप पायेंगे कि प्रविधिकी दृष्टिसे तो अपने मन्तव्यको, जिस तरह मैंने व्यक्त किया है, उस तरह व्यक्त करके कोई गलती नहीं की, किन्तु वास्तवमें उपवास हिन्दुओं तथा मुझमें विश्वास रखनेवाले अन्य लोगोंको ध्यानमें रखकर किया गया था। आप यह भी देखेंगे कि हिन्दू-समुदायका बहुत बड़ा हिस्सा उपवासके उद्देश्यको सहज ही समझ गया। आशा है, यह बात बिलकुल स्पष्ट होगी। सरकारी स्वीकृति इस कारण आवश्यक थी कि उलटा निर्णय होनेपर तो यह समझौता निरर्थक ही था। समझौते और उपवासका यह स्वाभाविक परिणाम था।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १२३

३७९. पत्र : जमनालाल बजाजको

१० अक्टूबर, १९३२

चि० जमनालाल,

तुम्हारा पत्र मिल गया था। तुम्हें वह लम्बा लगता है, हमें नहीं। उसमें भी जब भिक्षुकके भिक्षाटन शुरू करनेकी बात हो, तब तो कहना ही क्या? भिक्षुकसे कहना कि उसका पत्र मिल गया है। यह कह सकते हैं कि उसने मुझे निर्भय कर दिया है। इसलिए इसमें उसका समावेश भी कर लेता हूँ। मेरा शरीर लगभग ठीक हो गया है। दूध, नारंगी, मोसम्बी, अंगूर अथवा अनार और लौकी तथा टमाटर आदिकी सब्जियाँ ले रहा हूँ। कभी-कभी एक-दो दिनोंके लिए दूध छोड़ देता हूँ। प्रतिदिन दो बार कुल डेढ़ घंटे घूमता हूँ। पत्र खूब लिखता हूँ। पहलेकी ही तरह रोज कमसे-कम २०० तार, ४५ नम्बरसे ज्यादाके कातता हूँ। इससे सबको आश्वस्त हो जाना चाहिए। उपवासके दिनोंमें शारीरिक व्यथा काफी थी, लेकिन मानसिक शान्ति बहुत थी। उपवास लम्बा चलता तो थकान या अरुचि हो जाती, ऐसा नहीं था। लेकिन उपवास लम्बा या छोटा करना तो उस परमात्माके ही हाथमें था,

१. सोमसुन्दरम्‌ने श्रीलंकासे पत्र लिखकर पूछा था कि गांधीजी केवल समझौतेसे ही सन्तुष्ट क्यों नहीं थे और सरकार द्वारा उसकी स्वीकृतिको उन्होंने उपवास तोड़नेकी अनिवार्य शर्त क्यों बना दिया था।

जिसने मुझे उपवास करनेको प्रेरित किया था। बा अभी मेरे पास सारे दिन रह सकती है, पर अब यह शायद बन्द हो जाये। देवदास कुछ समयके लिए मिलने आ सकता है। रोज यहाँ नहीं आता। सरदार और महादेव तो साथ हैं ही। तुम्हारी तबीयत तो ठीक ही मानता हूँ। वजन कुछ कम हो गया, सो ठीक ही हुआ है। अब और नहीं घटना चाहिए। विनोबाके संगसे परमात्मापर आस्था दृढ़ हुई है, इसे मैं बड़ा लाभ मानता हूँ। विनोबाका काम सुन्दर है ही। गुलजारीलालका साथ मिला, यह भी अच्छा हुआ। प्राकृतिक उपचार और सादे भोजनपर आस्था जमनेकी भी जरूरत थी। इन दो बातोंसे अनेक शारीरिक व्याधियोंसे बचा जा सकता है। तुम्हारी दिनचर्या अच्छी है। तुम 'क' (सी) वर्गमें रहे, यह अच्छा ही हुआ। मुझे तो शुरूसे ही 'अ' (ए) और 'ब' (बी) वर्ग अच्छे नहीं लगे। 'क' वर्गमें रहते हुए शरीरकी रक्षाके योग्य सुविधाएँ प्राप्त की जा सकती हैं। गुलजारीलालका शरीर अब ठीक हो गया, ऐसा मान सकते हैं न? माधवजी अच्छे हैं? सरदारका संस्कृतका अध्ययन तेज गतिसे चल रहा था, वह उपवासके कारण जरा मन्द हो गया है। अब वे फिर उसे जोर-शोरसे शुरू करनेकी तैयारीमें हैं। अभीतक तो हमारी दिनचर्या ठीक चल रही है। खाना, पीना, सोना, अखबार पढ़ना, चक्कर काटना, इच्छानुसार अध्ययन करना यही सब चलता है। पींजनेका ठेका तो महादेवका है। पर आजकल यह काम जरा बन्द है, क्योंकि पूनियोंका भण्डार भरा हुआ है, और छक्कड़दास सुन्दर पूनियाँ भेज दिया करते हैं। वर्धासे पत्र आते रहते हैं। सभीको हम लोगोंकी ओरसे यथायोग्य।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचमा पुत्रने बापुना आशीर्वाद, पृ० ७४-५

३८०. पत्र : दादाचानजीको

१० अक्टूबर, १९३२

भाई दादाचानजी,

यह आपके २३ तारीखके पत्रका उत्तर है। बाबाके[1] बारेमें अपनी स्थिति स्पष्ट करना चाहता हूँ। यह माननेमें मुझे बड़ा संकोच है कि कोई दूसरेको ईश्वर-दर्शन करा सकता है। हृदय इनकार करता है। मगर जब बाबा ऐसा दावा करते हैं, तब मैं यही कह सकता हूँ, 'आप मुझे ईश्वर-दर्शन करा दें, तो बहुत अच्छा।' जो कहता है कि मैंने ईश्वर-दर्शन किया है, उसने किया ही है, यह मानना जरूरी नहीं है। ईश्वर-दर्शन किया है, एसा कहनेवाले बहुत-से लोग तो भ्रममें पड़े हुए पाये

१. मेहर बाबा।

गये हैं। बहुतोंके लिए यह केवल अपने मनकी प्रतिध्वनि होती है। यह तो मैं मानता ही नहीं कि ईश्वर-दर्शनका अर्थ किसी बाहरी शक्तिका दर्शन है। क्योंकि मेरा यह खयाल है कि ईश्वर तो हम सबमें बसता ही है, परन्तु उसे हृदयसे बिरले ही पहचानते हैं। बुद्धिसे पहचानना काफी नहीं है। मुझे ऐसा लगा करता है कि यह दर्शन कोई किसीको नहीं करा सकता।

ईश्वरके दर्शनके लिए किसी दूसरेके कराये उपवास नहीं किये जा सकते। मुझे अन्तःप्रेरणा हो तभी कर सकता हूँ। ऐसी प्रेरणा होनेपर मैं किसीके रोके रुकनेवाला नहीं हूँ। यह मान लेनेका कोई कारण नहीं कि उपवास करनेसे ईश्वर-दर्शन हो जायेगा। यह बात मेरे दिलमें नहीं उतरती कि मेरे चालीस दिनके उपवास करनेके बदलेमें बाबा ईश्वर-दर्शन करा सकते हैं। यह सौदा तो सस्ता ही माना जायेगा। यदि ऐसा होता हो तो मेरी निगाहमें ईश्वर-दर्शनकी कोई कीमत नहीं है।

मैं तो आजतक यह मानता आया हूँ कि बाबा जीवनके विभाग नहीं करते। जिसका जीवन धर्मसे रँगा हुआ है, उसके खयालसे राजनीति और अर्थशास्त्र सब धर्मके अंग हैं, और वह उनमें से एकको भी छोड़ नहीं सकता। मेरी रायमें तो जो धर्मको बहुत-सी प्रवृत्तियोंमें से एक प्रवृत्ति मानता है, वह धर्मको जानता ही नहीं। इसलिए राजनीति या समाज-सुधार वगैरह मैं किसी दिन छोड़ दूँगा, यह मेरी कल्पनाके बाहर है। अपने धर्मके पालनके लिए ही मैं राजनीति, समाजसेवा इत्यादिमें पड़ा हुआ हूँ।

मैंने बाबाके लेखोंका गुजराती अनुवाद करनेका वचन नहीं दिया है। उलटे, मैंने तो बाबाको यह सुझाया है कि वे अंग्रेजीमें लिखने या दूसरोंसे लिखवानेका मोह छोड़ कर अपने विचार या तो अपनी मातृभाषा गुजरातीमें प्रगट करें या फारसीमें, जो खुद उन्हींके कथनानुसार वे बहुत बढ़िया जानते हैं। हाँ, उनके लेखोंमें से कोई मेरे दिलको पकड़ ले तो उसका गुजराती अनुवाद मैं अवश्य करूँगा।

थोड़ेमें, मैं बाबाके विचारोंका एक अध्येता हूँ। जमशेद मेहताको पवित्र व्यक्ति मानता हूँ। उन्हींके तार देनेपर मैं बाबासे मिला था। ईश्वरके भक्तोंको मैं खोजता रहता हूँ। मैं यह सोचकर बाबाके सम्पर्कमें आया कि वे ऐसे ही होंगे।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १२५-६

३८१. पत्र : झवेरचन्द मेघाणीको[1]

१० अक्टूबर, १९३२

विलायत जाते हुए जो भेंट आपने भेजी थी, वह बहुत अच्छी लगी थी। इसको[2] मैं उसकी कोटिमें नहीं रख सका। . . . मुझे कविताको ठीक परखना नहीं आता।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, पृ० १२४

३८२. पत्र : रमणलाल सोनीको[3]

१० अक्टूबर, १९३२

कविताएँ कुल मिलाकर अच्छी लगी हैं। मगर कुछकी भाषा जरूर कड़वी लगी। . . . मैं कविताका अच्छा पारखी नहीं हूँ।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १०५

३८३. पत्र : जयशंकर पी० त्रिवेदीको

१० अक्टूबर, १९३२

तारागौरीके खेदजनक अवसानके बाद क्या आप सब इतना श्राद्ध भी नहीं करेंगे ? या तो घरसे प्राइमस स्टोवका बहिष्कार कीजिए या यह सम्भव न हो तो स्त्रियाँ उसे न जलानेकी प्रतिज्ञा लें। पुरुषोंसे ही जलवायें। हमारी स्त्रियोंकी पोशाक स्टोव जैसे चूल्हे सुलगानेके लिए नहीं बनी है।[4]

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १२७

१. (१८९७-१९४७); गुजरातीके ख्यातनामा लेखक और कवि।
२. झवेरचन्द मेघाणीने गांधीजी को 'छेल्ली सलाम' शीर्षक एक कविता भेजी थी।
३. गुजरातीके लेखक और अनुवादक।
४. देखिए "पत्र: जयशंकर पी० त्रिवेदीको", १०-१०-१९३२ भी।

३८४. एक पत्र

१० अक्टूबर, १९३२

जातिके रीति-रिवाजोंमें सुधार आवश्यक है और जिससे यह काम हो सके, उसे यह करना चाहिए। अस्पृश्यता-निवारणका अप्रत्यक्ष असर उसपर भी होगा ही। बाल-विधवाओंकी शादी करानेका प्रयत्न मैं स्तुत्य मानता हूँ। ये काम संयमी और पवित्र व्यक्तियोंसे ही हो सकते हैं।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १२३

३८५. पत्र : रेहाना तैयबजीको

१० अक्टूबर, १९३२

प्यारी बेटी रेहाना,

बहुत चालाक लड़की है। अपने भजनके लिए मुझे फाका करवाना चाहती है। मैं नहीं करूँगा और भजनको गाकर सुनायेगी तब दिल लुभायेगा। अगर "उठ जाग मुसाफिर" मैं न सुनता तो मुझे ऐसा दिलचस्प न लगता। अगर जेलकी दिवारके बाहरसे भी तू गायेगी तो भी तेरी आवाज मुझे पहुँच जायेगी। तुम सबका नाच तो मैं सुन ही रहा हूँ। अब्बाजान, अम्माजानको हम सबकी तरफसे आदाब। तुम्हारे लिए थप्पड़। डाह्याभाईको आशीर्वाद। पशाभाई अच्छे हो गये? बा दीन-भर मेरे साथ रहती है। अब तो मुझे ठीक जोर आ रहा है। इसलिए शायद बा का आना बंद हो जायेगा।

बापूकी बहुत दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६६९) से।

३८६. पत्र : रेहाना तैयबजीको

१० अक्टूबर, १९३२

चि० रेहाना,

तेरा भजनवाला पत्र मिला। आशा है, मेरा पत्र आज मिल गया होगा। आज तो मैं हरिइच्छाके बारेमें लिख रहा हूँ। मैं पिछले पत्रमें लिखना भूल गया था। हरिइच्छा वालजीभाईकी भतीजी है। वह आश्रममें कुछ वर्ष रही है और अब वहाँके इंजीनियर कामदारसे उसका विवाह हो गया है। तुझसे मिलनेके लिए मैं उसे लिखता रहता था। किन्तु मैंने तुझे नहीं लिखा था इसलिए वह जब तुझसे मिलने आई तो तूने उसे नहीं पहचाना। इसमें तेरा नहीं बल्कि मेरा दोष है। हरिइच्छा लिखती है कि तूने यह जाहिर नहीं होने दिया और तूने तथा अम्माजी ने बहुत स्नेह दिखाया। दूसरी लड़की, शान्ता, तो आजकल आश्रममें ही है।

बापूके आशीर्वाद

श्री० रेहानाबहन
मार्फत – अब्बास साहब
कैम्प
बड़ौदा

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६६८)से।

३८७. पत्र : हरिइच्छा पी० कामदारको

१० अक्टूबर, १९३२

चि० हरिइच्छा,

तेरा पत्र मिला। यह सच है कि मैं रेहानाबहनको लिखना भूल ही गया था। यदि मैंने लिख दिया होता तो अच्छा होता। अब तो मैंने आज ही लिखा है।[1] सच तो यह है कि उसे जान-पहचानकी जरूरत ही नहीं होती। अब उससे मिलती रहना।

बापूके आशीर्वाद

श्री० हरिइच्छाबहन
मार्फत – श्री पी० वी० कामदार
शियाबाग, बड़ौदा

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी डब्ल्यू० ७४७२)से; सौजन्य: हरिइच्छा पी० कामदार

१. देखिए पिछला शीर्षक।

३८८. पत्र : बलदेवदास बिजोरियाको

१० अक्टूबर, १९३२

आपका कृपा-पत्र मिला। अस्पृश्यता-निवारण मेरे जैसोंके लिए केवल धार्मिक प्रश्न है। राजप्रकरणके लिए मैं प्राणत्यागकी चेष्टा कभी न करूँ। हाँ, इतना ठीक है कि धार्मिक कार्य क्या, और दूसरा भी, उसमें बलात्कार नहीं होना चाहिये। जहाँतक यहाँ बैठा हुआ मैं समझ सकता हूँ, आज जो कार्य हो रहा है उसमें बलात्कार नहीं है और ईश्वर ही करवा रहा है। छुआछूतमें धर्म कभी नहीं हो सकता, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है। और तो क्या लिखूं? कृपा रखियेगा।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १२४

३८९. पत्र : कृष्णचन्द्रको

१० अक्टूबर, १९३२

भाई कृष्णचन्द्र,

आपका पत्र आज हि मिला। प्रारब्ध अवश्य है। परंतु साथ-हि-साथ पुरुषार्थ भी है। प्रारब्धका इतना हि अर्थ है कि पुरुषार्थके अभावमें पूर्व कर्मका फल हि बाकी रहता है। पुरुषार्थ होते हुए प्रारब्ध बदल सकता है। इस कारण जो ब्रह्मदर्शन करना चाहते हैं उसे ब्रह्मचर्य आवश्यक है। देखे 'गीता' अ० १५।[1] ऐसे तो ब्रह्मचर्य 'गीता'का ध्वनि है। जो ब्रह्ममें लीन होना चाहता है, जो सदा सेवापरायण रहना चाहता है उसे विषयेंद्रिय सुखके लिए अवकाश हि नहिं हो सकता है। इतनेमें आपकी सब शंकाका उत्तर आता है।

आपका,
मोहनदास गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२६२) से।

१. **गीताके** जिस अध्यायका उल्लेख किया गया है, वह गलत है; देखिए "पत्र : कृष्णचन्द्रको", ३१-१०-१९३२।

३९०. पत्र : चौंडे महाराजको

१० अक्टूबर, १९३२

आपका पत्र मिला है। मेरा सन्देश यह है:

मेरा अभिप्राय दृढ़ होता जाता है कि जबतक हम गोरक्षाका अर्थशास्त्र भली भाँति नहीं पढ़ेंगे, जबतक अंत्यज भाइयोंको, जिनके हाथसे बहोत गोरक्षाका कार्य हो सकता है, नहीं अपनायेंगे और जबतक सब गोशाला शास्त्रीय पद्धतिसे नहीं चलेंगी और हम सब मृत जानवरके ही चामके उपयोगका व्रत नहीं लेंगे, गोरक्षा अशक्य है। इसलिए अब गोसेवकका कर्तव्य है कि इतनी मोटी बातोंको अच्छी तरह समझे और उसका यथासम्भव पालन करे और करावे।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १२३-४

३९१. एक पत्र[1]

११ अक्टूबर, १९३२

पत्रके लिए धन्यवाद। आपने जो कारण दिये हैं उनके अनुसार गाय-भैंसका दूध त्याज्य है, इस बातमें मैं आपसे पूरी तरह सहमत हूँ। मैं गाय-भैंसका दूध नहीं लेता, मगर बकरीका दूध लेता हूँ, हालाँकि ज्यादा आम ढंगके दूसरे कारणोंसे मैं इसे भी आपत्तिजनक मानता हूँ। मैं उसके विकल्पकी तलाशमें हूँ, मगर अभीतक असफल रहा हूँ। मैंने उपवास शहदसे नहीं, नारंगीके रससे तोड़ा था। लेकिन मैं शहद लेता हूँ और उसे आपत्तिजनक नहीं मानता। अगर शहद वैज्ञानिक ढंगसे निकाला जाये, तो एक भी मक्खीका नाश न करना पड़े और न उसे भूखों मारना पड़े। मगर मुझे स्वीकार करना चाहिए कि हमेशा ऐसा निर्दोष शहद मुझे नहीं मिलता।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १३०

१. यह पत्र गुजरातकी नगरपालिकाके एक मुसलमान सदस्यको लिखा गया था। सदस्यने गांधीजी को लिखा था कि उन्हें दूध और शहद नहीं लेना चाहिए।

३९२. पत्र : रुक्मिणी बजाजको

[११ अक्टूबर, १९३२][1]

चि० रुक्मिणी,

तेरे पहलेवाले पत्रको मैं अब समझ सका। तुझे गानेके लिए चाँदीका तमगा मिला और तूने भाषण भी दिया है — इसीके लिए बधाई माँगती है न? किन्तु तमगा पानेकी खुशीमें यदि बीमार हो जाये तो बधाई कैसे मिल सकती है? अच्छी हो जा और बधाई ले। तमगा किसके हाथों मिला था? सितार बजानेका अभ्यास भी करती है क्या?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

अब तो तुझे या बनारसीको लिखते रहना चाहिए।

श्री० रुक्मिणीदेवी
मार्फत — श्री बनारसीलाल बजाज
ठठेरी बाजार, बनारस सिटी

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१४१)से।

३९३. पत्र : सुशीलाबहन गांधीको

११ अक्टूबर, १९३२

चि० सुशीला,

तू भी कैसी है! बम्बई उतरते-न-उतरते ही बीमार पड़ गई। इसका मैं यह मतलब लगाऊँ न कि तुझे अविलम्ब दक्षिण आफ्रिका वापस रवाना कर दूँ? पहले मणिलाल घोड़ेपर सवार होकर आया और तुझे लेकर भागा। इस बार भी तुम दोनों वैसी ही कोई साजिश करके आये जान पड़ते हो। तो फिर सीता तुझे छोड़कर यहाँ क्यों आने लगी? कहीं रह जाये तो? आशा है, अब तेरी तबीयत सुधर रही होगी। बा तेरे पास पहुँच जायेगी। मुझसे मिलने आनेकी उतावली मत मचाना।

१. डाककी मुहरसे।

मुझे कुछ है ही नहीं। पूरी तरह आराम करना और अच्छी हो जाना। तारासे लिखनेको कहना।

बापूके आशीर्वाद

श्री० सुशीलाबहन
मारफत—श्री वालुभाई मशरूवाला
टोपीवालाका बँगला
सैंडहर्स्ट रोड
बम्बई

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४७९६)से।

३९४. पत्र : त्रिभुवनदास त्रिकमलालको

११ अक्टूबर, १९३२

भाई त्रिभुवनदास,

हरिकृष्ण महाराजकी पुस्तकें भेजनेके लिए मैं आपका आभारी हूँ। समय मिलने पर मैं उन्हें पढ़ जानेकी आशा करता हूँ। इसके बाद यदि बड़ी पुस्तक मँगानेकी आवश्यकता जान पड़ी तो अवश्य मँगाऊँगा।

मोहनदास गांधी

श्रीयुत त्रिभुवनदास त्रिकमलाल
अमृत भवन
रेलवेपुरा
मणिनगर
अहमदाबाद, बी० बी० ऐंड सी० आई० रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०५०१)से।

३९५. एक पत्र[1]

११ अक्टूबर, १९३२

अस्पृश्यता-निवारणका अर्थ यह है कि जो व्यवहार हम अन्य जातियोंके साथ रखते हैं, वही इनके साथ भी रखें। यानी उन्हें छूएँ, उनके हाथका पानी वगैरह पीयें, और वे घरों, मन्दिरों, पाठशालाओं आदिमें औरोंकी तरह ही जायें। यह तो अस्पृश्यता-निवारणका आवश्यक अंग है। उनके हाथका पकाया हुआ खायें या उनके साथ बैठकर खायें या बेटी-व्यवहार रखें, यह सबकी इच्छाकी बात है। धर्ममें न

१. साधन-सूत्रके अनुसार यह पत्र नागपुरके एक मारवाड़ी सज्जनको लिखा गया था।

उसका विधान है और न निषेध। अभी जो प्रीतिभोज हो रहे हैं, वे अस्पृश्यता-निवारणके आवश्यक अंग नहीं हैं। मगर इसमें मुझे शक नहीं कि वे स्तुत्य हैं।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १२९

३९६. एक पत्र[1]

११ अक्टूबर, १९३२

आपका पत्र मिला है। जिन कांग्रेसजनोंने अस्पृश्य भाइयोंके पानी लानेसे सभा छोड़ी उन्होंने बहुत अनुचित कार्य किया।

अस्पृश्यता-निवारणमें अछूत भाइयोंके हाथोंसे पानी पीना आवश्यक अंग है। जैसा बर्ताव हम अन्य जातियोंसे रखते हैं वैसा अछूतोंके साथ करना धर्म है। इसलिए जिन्होंने प्रायश्चित्त किया उन्होंने पाप किया है और कांग्रेसका विरोध किया है। आपका बहिष्कार नीति-विरुद्ध है, आप प्रायश्चित्त हरगिज न करें। मुझे दुःख है कि विलासपुरके कई भाइयोंने नीति-विरुद्ध व्यवहार करके अछूत भाइयोंमें बुद्धि-भ्रम पैदा किया है। मैं चाहता हूँ कि वे अपने दोषका जाहेर स्वीकार करें।

रोटी-बेटी व्यवहार मुझे तो इष्ट है। परन्तु उसको मैं अस्पृश्यता-निवारणका आवश्यक अंग नहीं मानता हूँ। जो ऐसा व्यवहार धर्म समझकर करें वे स्तुत्य कर्म करते हैं, ऐसा मेरा अभिप्राय है। इसलिए आजकल प्रीतिभोजन होता है वह मुझे पुण्यकार्य प्रतीत होता है। रोटी-बेटी व्यवहारका प्रतिबंध धर्ममें मैंने नहीं देखा है।

अब आपके सब प्रश्नोंका उत्तर आ गया है। मुझे लिखें उसमें क्या हुआ?

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १२९-३०

१. साधन-सूत्रसे पता नहीं चलता कि यह पत्र किसे लिखा गया था। पत्र-लेखकने गांधीजी के उपवासके सिलसिलेमें विलासपुरमें हुई एक सभाका दुःखद विवरण दिया था। वहाँ चमारोंके हाथसे पानी पीनेके कारण लोगोंको प्रायश्चित्त करनेको मजबूर किया गया था और जिन्होंने प्रायश्चित्त करनेसे इनकार कर दिया था उन्हें जातिसे बहिष्कृत कर देनेकी धमकी दी गई थी। प्रायश्चित्त न करनेवाले उक्त भाईने पूछा था कि क्या यह सब करना उचित है?

३९७. पत्र : अमतुस्सलामको

१२ अक्टूबर, १९३२

प्यारी बेटी अमतुस्सलाम,

आज मैं उर्दूमें नहीं लिखूंगा?[१]

बेशक अपनेको इतनी जल्दी ठीक कर लेनेके लिए तुम शाबाशीकी हकदार हो। मुझसे मिलनेकी फिक्र न करोगी तो और भी जल्दी बिलकुल ठीक हो जाओगी। जब खुदाकी मर्जी होगी, हम मिलेंगे। फिलहाल तो हम एक-दूसरेको खत लिख सकते हैं, इतनेके लिए ही हमें खुदाका शुक्रगुजार होना चाहिए।

हाँ, स्नानोंके बारेमें मैं दूसरी लड़कियोंको लिखूंगा।

उम्मीद रखनी चाहिए कि नारणदासके साथ घूमनेसे कुदसियाको चैन मिलेगा। अगर सेहत ठीक रखेगी तो मिलेगा ही।

तुम्हारे गर्भाशयमें अगर कोई बीमारी न हो गई हो तो उसे नहीं निकाला जाना चाहिए। उसके लिए तुम्हें श्रीमती लाजरसकी सलाह लेनी चाहिए और जैसा वे कहें वैसा ही करना चाहिए। इस ऑपरेशनके बारेमें कोई जल्दबाजी नहीं होनी चाहिए। यह जरूरी नहीं कि ऑपरेशनसे बीमारी ठीक हो ही जाये। इलाज लम्बे समयतक किया जाये तो कुदरती इलाज ही सबसे ज्यादा कारगर होता है और वह कभी नुकसानदेह भी नहीं होता। ऑपरेशन अकसर नुकसानदेह साबित हुए हैं और कभी-कभी तो जानलेवा भी।

प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २५९)से।

३९८. पत्र : मीराबहनको

१२ अक्टूबर, १९३२

चि० मीरा,

तुम्हारा साप्ताहिक पत्र आज मिला। प्रसन्नताकी बात है कि वहाँ मौसम बेहतर हो गया है और तुम्हारी तबीयत पहलेसे अच्छी है। तुमने मुझे यह नहीं लिखा कि तुमने लगनके साथ अध्ययन शुरू कर दिया है या नहीं। अगर तुम्हारी तन्दुरुस्ती इजाजत न देती हो, तो मैं तुम्हें इसके लिए कोंचना नहीं चाहता। इसलिए मैंने यह प्रश्न केवल उत्सुकतावश किया है। अपनी पढ़ाईकी प्रगतिके समाचार भेजते रहनेकी तुम्हारी आदत रही है।

१. यहाँतक पत्र उर्दूमें है।

मेरा वजन तो नहीं बढ़ रहा है, परन्तु कुल मिलाकर मेरा स्वास्थ्य निश्चय ही बेहतर है। मैं लाठीके सहारे चलता था। दो दिनसे उसे छोड़ दिया है। तबीयत हर तरहसे बेहतर है। हाँ, बा मेरे खाने-पीनेकी सँभाल रखती है। अभीतक ज्यादातर फल ही लेता हूँ। मगर इसमें बहुत ज्यादा समय और परिश्रम लगता है, यह तो स्वयं भुक्तभोगी होनेके कारण तुम जानती ही हो। अनुपात लगभग वही है। मणिलाल और सुशीला आ पहुँचे हैं। उपवासके समाचार सुनकर उनसे रहा नहीं गया। सुशीला बीमार होकर बम्बईमें पड़ी है। मणिलाल भी बहुत अच्छा नहीं है। मेरा खयाल है, तुम्हें यह तो बता ही चुका हूँ कि कुछ महीने पहले नेटालमें जिस भीषण ज्वरका दौर चला था, उसमें वह भी पड़ गया था। लेकिन, वह मुझसे मिल गया है। वह दक्षिण आफ्रिकासे बहुत अच्छे सेव और जंजीबारसे नारंगियाँ लाया है। काश, तुम हिस्सा बँटा सकतीं। वहाँ भेजनेकी कोशिश तो बेकार है।

मिलने-जुलनेके बारेमें तुमने जो कहा है, उसे समझता हूँ। प्रिंसेस अरिस्टार्शीकी तुम्हें याद होगी। वे नियमित पत्र-व्यवहार करती रही हैं और बहुत सुन्दर पोस्टकार्ड भेजा करती हैं, जिनपर पवित्र चित्र और उनकी अपनी ही पसन्दके अच्छे धर्मवाक्य होते हैं।

बा-सहित हम सबकी ओरसे तुम दोनोंको प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२४५) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७११ से भी।

३९९. पत्र : हे० सॉ० लि० पोलकको[1]

१२ अक्टूबर, १९३२

मिलीके जन्म-दिवसपर ही ईश्वरकी इच्छाको कार्य-रूप दूँ, इससे ज्यादा मांगलिक और क्या हो सकता था? मेरी कामना है कि उसका जन्म-दिवस बार-बार आये और उसे अधिकाधिक सेवाका अवसर मिले।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १३२

१. पोलकने एक पत्रमें गांधीजीका ध्यान इस बातकी ओर दिलाया था कि उन्होंने मिली पोलकके जन्म-दिवसपर ही उपवास आरम्भ किया था।

४००. पत्र : ए० टर्टनको[1]

१२ अक्टूबर, १९३२

ईश्वरको धन्यवाद कि यह उपवास मैंने नहीं किया था। [उसमें कर्तृत्व मेरा नहीं था।] उसमें कर्तृत्व तो उसीका था। और जब ईश्वर 'हाँ' कह रहा हो तो उसके मुकाबले सारी दुनियाके 'ना'की भी क्या बिसात है?

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १३२

४०१. पत्र : चमन कविको[2]

१२ अक्टूबर, १९३२

तुम जो चाहते हो सो लिखनेकी इजाजत अभी तो मिलनेकी आशा नहीं है। जिनके हृदयमें शंका भरी होगी, उनकी शंका तो भगवान् ही दूर करेगा। मेरे खयालसे तो मैंने सभी धर्मोंकी सेवा की है। बहुत-से मित्र तो यह समझ भी गये हैं। यह बात सच होगी, तो कोई छिपी रहनेवाली थोड़े ही है? जिस ईश्वरने उपवास कराया, वही उसका मर्म भी लोगोंको समझायेगा।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १३२

४०२. पत्र : नारायण म० देसाईको[3]

१२ अक्टूबर, १९३२

चि० नारायणराव उर्फ बाबलो,

हाँ, तेरी शिकायत आई तो है। यह ठीक है कि सब बच्चे खेलते हैं किन्तु उन्हें खेलनेके समय खेलना चाहिए और कामके समय काम करना चाहिए। उन्हें दूसरोंको परेशान तो नहीं करना चाहिए। ऐसा जान पड़ता है कि तू आजकल

१. टर्टनने गांधीजी के उपवासको आत्महत्याके प्रयत्नके समान बताते हुए उससे अपनी असहमति प्रकट की थी।

२. कच्छ-निवासी एक खोजा सज्जन।

३. महादेव देसाईका पुत्र।

खेलता ही रहता है और दूसरोंको परेशान करता है। यह ठीक है क्या? यदि यह बात ठीक हो तो तुझे ऐसा नहीं करना चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४८०) से।

४०३. पत्र : गुलाबको

१२ अक्टूबर, १९३२

चि० गुलाब,

तेरा पत्र मिला। अक्षर बहुत सुन्दर होने चाहिए। तुझे साधकर लिखना चाहिए। नींद आनेपर तू खड़ी हो जाती है, यह ठीक करती है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७२६)से।

४०४. पत्र : रेजिनाल्ड रेनॉल्ड्सको

१३ अक्टूबर, १९३२

प्रिय अंगद[1],

तुम्हारा पत्र मिला। बड़ा प्यारा लगा — ठंडी हवाके झोंकेकी तरह खुशगवार। मैं जानता था कि तुम और जिन दूसरे लोगोंकी बात मेरे मनमें है, वे सब मेरे उपवासके मर्मको जरूर समझेंगे। माँ जैसे बच्चेको सुलाती है, वैसे ही ईश्वरने मुझे धीरेसे उपवास-शय्यापर सुला दिया। और फिर सारे देशमें उसके प्रभावका जो भव्य दर्शन हुआ उसका मेरे लिए तो उससे भी अधिक अर्थ था। हॉरेस अलेक्जैंडरने मुझे बताया कि तुमने कोई काम स्वीकार कर लिया है। अपना हालचाल भी कुछ जरूर बताना। ऐसा मत समझना कि तुम्हारे व्यक्तिगत जीवन और कल्याणमें हमारी कोई रुचि ही नहीं है। बा को दिन-भर मेरे साथ रहनेकी अनुमति है। सो हम चारों तुमको प्यार भेजते हैं।

मैंने अपनी खोई हुई ताकत लगभग प्राप्त कर ली है।

बापू

मूल अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४५४३) से; सौजन्य : स्वार्थमोर कॉलेज, फिलाडेल्फिया

१. रेनॉल्ड्स् २ मार्च, १९३० को गांधीजी का पत्र वाइसरायके पास ले गये थे इसलिए गांधीजी ने उन्हें यह नाम दिया था; देखिए खण्ड ४३, पृ० ३-९।

४०५. पत्र : लीलावती आसरको

१३ अक्टूबर, १९३२

चि० लीलावती,

तेरा पत्र मिला। तेरा काम कठिन है। नारणदास जो-कुछ कहे सो हर्ष और श्रद्धापूर्वक कर अथवा स्वतन्त्र रह। और यदि उस तरह न रह सके तो फिर आश्रम चली आ। यदि मृदुलाबहनकी[1] देख-रेखमें रह सके तो यह भी अच्छा होगा। किन्तु यदि शहरमें ही काम करना है तो तुझे शहरमें ही रहना चाहिए। तेरा शरीर ऐसा नहीं है कि तू साइकिलपर शहर आ-जा सके। इसमें मुझे खतरा नजर आता है। एक साथ दो घोड़ोंपर सवार होनेका लोभ छोड़ देना। आश्रममें मजदूरोंसे कमसे-कम मदद लेनेका जो प्रयत्न किया जा रहा है उसमें तू बाधक मत बनना। तेरा पत्र लम्बा है, इस बातकी कोई चिन्ता नहीं बल्कि तू स्याहीसे लिखनेकी आदत डाल। तुझे अपनी आमदनीसे एक पाई भी अधिक खर्च नहीं करनी चाहिए। तू जहाँ भी रहे, वहाँसे मुझे लिखती रहना। जेलके बारेमें तूने जो लिखा है वह सही नहीं है। यहाँकी खुराक खाकर कोई आदमी जड़ हो गया हो, ऐसा तो मेरे सुननेमें नहीं आया।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३२३)से।

४०६. पत्र : रसिक एस० देसाईको

१३ अक्टूबर, १९३२

चि० रसिक[2],

तेरा पुरजा देखकर मुझे आश्चर्य हुआ। आशा करता हूँ कि जितना तेरा शरीर स्वस्थ हुआ है, तेरा मन भी उतना ही शान्त और स्वस्थ हुआ होगा। मेरा शरीर स्वस्थ हो गया है। तुम सबको आशीर्वाद। सरदार और महादेव प्रसन्न हैं।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६१९) से। सी० डब्ल्यू० ४३५१ से भी; सौजन्य: वा० गो० देसाई

१. मृदुलाबहन साराभाई।
२. वा० गो० देसाईका भतीजा।

४०७. पत्र : जयाको

१३ अक्टूबर, १९३२

चि० जया,

तेरा पुरजा देखकर मुझे आश्चर्य हुआ। कहा जा सकता है कि मेरा स्वास्थ्य फिर पहले-जैसा हो गया है। मुझे यह बात बहुत अच्छी लगती है कि तुम सब बहनें साथ-साथ हो। ऐसा अनुभव अलभ्य है। वेणीलालके समाचार मुझे मिलते रहते हैं। सभी बहनोंको आशीर्वाद। सरदार और महादेव आनन्दपूर्वक हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२३) से।

४०८. पत्र : अमृतलाल वी० ठक्करको

१३ अक्टूबर, १९३२

भाई ठक्कर बापा,

तुम्हारा अंग्रेजीमें लिखा पत्र और मुद्रित लेख भी मिला। किन्तु मुझे अस्पृश्यता के सम्बन्धमें भी लिखनेकी अनुमति अभीतक नहीं मिली है। मैं तो लिखनेके लिए बहुत आतुर हूँ। इस बारेमें मैंने [सरकारको] लिखा तो है। देखें, क्या होता है। हम सब यहाँ कुशलपूर्वक हैं। लगातार सफर करते हो — अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११०३)से।

४०९. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

१३ अक्टूबर, १९३२

चि० हेमप्रभा,

तुम्हारा इंग्रेजी खत मिला है। हरिजनोंके मार्फत सत्याग्रह कराना कहां तक योग्य है मुझे ठीक मालुम नहिं है। सतीष बाबुसे कहा आस्ते काम लेवे। मुझे लिखा करो। धीरजकी बड़ी आवश्यकता है। सतीष बाबुको बुखार क्यों आया? आरामकी आवश्यकता है तो आराम लेवे। तुमारे भी शरीर बिगाडकर कार्य नहिं करना है। खितिष बाबुको अबतक क्यों आराम नहिं है?

ईश्वर सब चीजमें हमें योग्य मति और शक्ति दे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मुझको शक्ति काफी आई है। दूध फलादि खा लेता हूँ।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १६९०)से।

४१०. एक पत्र

१३ अक्टूबर, १९३२

सभी वर्ण शूद्र हैं और प्रत्येक हिन्दूको वेद-मन्त्रोंके उच्चारणका अधिकार है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १३४

४११. पत्र : नरसिंहराव बी० दिवेटियाको[1]

[१४ अक्टूबर, १९३२के पूर्व][2]

आपकी लड़कीके अवसानका समाचार पढ़कर हम सबको दुःख हुआ। महादेवने बताया कि यही एक लड़की रह गई थी। मुझे आपके प्रति सम्वेदना प्रकट करनेकी आवश्यकता नहीं है। आप दोनों ज्ञानी हैं। ईश्वर आपको शान्ति प्रदान करे।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२ पृ० १४६

१. (१८५९-१९३७); गुजराती-कवि तथा साहित्यकार।

२. साधन-सूत्रमें हालाँकि यह पत्र १८ अक्टूबरके विवरणके अन्तर्गत दिया गया है लेकिन नरसिंहरावने अपनी पुस्तक **नरसिंहरावनी रोजनीशी**में इसे इसी तिथिको प्राप्त हुआ बताया है।

४१२. पत्र : कुमुदबान्धव चटर्जीको

१४ अक्टूबर, १९३२

यह जानकर मुझे प्रसन्नता हुई कि आपकी तरफ मन्दिरोंके द्वार हरिजनोंके लिए खोले जा रहे हैं। रोटी-व्यवहार अथवा बेटी-व्यवहार अस्पृश्यता-निवारणके कार्यक्रमका अनिवार्य अंग नहीं है, लेकिन कोई चाहे तो बखूबी हरिजनोंके साथ खा सकता है या विवाह-सम्बन्ध कर सकता है। दूसरे शब्दोंमें, सभी बातोंमें हरिजनोंका भी वही दर्जा होना चाहिए जो शेष हिन्दुओंका है। साथ खानेका मतलब एक ही थालीमें खाना नहीं है। इसलिए खानेमें किसीकी लार गिर जानेकी कोई बात ही नहीं हो सकती।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३-११-१९३२ तथा **महादेवभाईनी डायरी,** भाग-२, पृ० १३४

४१३. पत्र : केशवको[1]

१४ अक्टूबर, १९३२

हाँ, उपवास भगवान्की दी हुई भेंट थी। आप धर्म-परिवर्तन करानेका विचार मनमें रखे बिना अछूतोंकी जो भी सेवा कर सकें, उससे भला ही होगा।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १३५

४१४. एक पत्र

१४ अक्टूबर, १९३२

मेरा दृढ़ विश्वास है कि हरिजनोंमें पाई जानेवाली प्रत्येक बुरी आदतके लिए तथाकथित सवर्ण हिन्दू दोषी हैं। सहानुभूतिपूर्वक उपाय करनेसे ही वे आदतें दूर हो सकती हैं।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १३४

१. क्राइस्ट सेवा संघके सदस्य।

४१५. पत्र : वसुमती पण्डितको

१४ अक्टूबर, १९३२

चि० वसुमती,

मैं इतनी आसानीसे आलस्यके आरोपसे मुक्त नहीं करूँगा। खादी बेचनेके बावजूद पोस्टकार्ड लिखकर डालनेका समय तो मिलना ही चाहिए। किन्तु उसके लिए हर पलकी कीमत आँकना आना चाहिए। ऐसा करना धीरे-धीरे सीख पाओगी। अन्त्यजोंकी सेवा करना निश्चय ही उत्तम धर्म है, किन्तु यदि यह पूर्ववर्ती प्रतिज्ञाके पालनमें बाधक हो तो फिलहाल उसे स्वीकार नहीं किया जा सकता। "श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्"[१] यह श्लोक और इसका अर्थ याद है न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९३३४) से। सी० डब्ल्यू० ५८० से भी; सौजन्य : वसुमती पण्डित

४१६. पत्र : एस० के० जॉर्जको

१४ अक्टूबर, १९३२

प्रिय जॉर्ज,

अपने पत्रमें[२] तुमने जिस नम्रता-भरी साफगोईसे काम लिया है, वह मुझे बहुत अच्छा लगा। हाँ, इसका जैसा पूरा और विस्तृत उत्तर देना योग्य है, वैसा उत्तर मैं नहीं दे सकता। कैदीकी हैसियतसे मेरी स्थिति ऐसी नहीं है कि मैं तुम्हें विस्तृत उत्तर दे सकूँ। हाँ, एक बात जरूर कहूँगा। तुम राजनीतिको धर्मसे अलग मानते जान पड़ते हो, मगर मैं वैसा-कुछ नहीं मानता। सच्चा धर्म तो वही है जो जीवनका हर प्रवृत्तिमें समाया हुआ हो। और जो प्रवृत्ति धर्मकी बलि चढ़ाये बिना न चलाई जा सकती हो, वह अनैतिक प्रवृत्ति है और उससे हर हालतमें दूर ही रहना चाहिए। राजनीति ऐसी प्रवृत्ति नहीं है, इतना ही नहीं, बल्कि वह तो हमारे

१. **भगवद्गीता**, ३-३५।

२. तात्पर्य ५ अक्टूबरके पत्रसे है। अपने पत्रमें एस० के० जॉर्जने लिखा था कि जिन लोगोंके मानसचक्षुमें "प्रभुके साम्राज्य" का कोई चित्र ही कभी नहीं उभरा, उनके बलपर उस साम्राज्यकी रचना कैसे की जा सकती है। उन्होंने अस्पृश्यताके खिलाफ गांधीजी के उपवासकी भी आलोचना की थी, क्योंकि उनके विचारसे अस्पृश्यताका सम्बन्ध राजनीतिसे न होकर धर्मसे था और इसलिए स्वराज्यसे उसका कोई सरोकार नहीं था।

नागरिक जीवनका अभिन्न अंग है। शेष चर्चा तो किसी अधिक अच्छे अवसरपर ही हो सकेगी। बस इतना ध्यान रखना कि निराशा और घबराहटमें मुझे त्याग न देना। आशा है, मेरा पिछला पत्र[1] मिल गया होगा।

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]
गांधीज चैलेंज टु क्रिश्चियनिटी, पृ० ९३

४१७. पत्र : महालक्ष्मी माधवजी ठक्करको

१४ अक्टूबर, १९३२

चि० महालक्ष्मी,

चूड़ी, बिन्दी, रंगीन साड़ी शृंगार भी हो सकता और रूढ़िमात्र भी हो सकता है। जैसे खाना भोग हो सकता है और देहका भाड़ा भी। हमें भोगके लिए खाना छोड़ देना चाहिए किन्तु भाड़ेके रूपमें शरीरको जो-कुछ देना हो सो दें, फिर भले वह भोगकी वस्तु ही क्यों न हो। दूध, दही, खजूर खानेमें क्या कुछ कम भोग है? फिर भी तुम खाती तो हो न? क्योंकि तुम्हारे लिए ये भोगकी वस्तुएँ नहीं हैं। उसी प्रकार चूड़ी, बिन्दी या रंगके कारण तुम्हारे मनमें विकार उत्पन्न होता हो तो दुनिया-भरके विरोधके बावजूद उन्हें छोड़ देना चाहिए। किन्तु यदि केवल रूढ़िवश या बुजुर्गोंको खुश रखनेकी खातिर इनका उपयोग करती हो तो उसमें दोष नहीं है। तात्पर्य यह कि इनका उपयोग न करना वैसा परम धर्म नहीं है, जिस प्रकार झूठ न बोलना है। इसी वजहसे मैंने लिखा था कि चूड़ियाँ न पहननेका व्रत लेना दोषपूर्ण था।[2] जो परम धर्म नहीं है उसका एकाएक व्रत नहीं लिया जा सकता। उसमें कोई बड़ा त्याग नहीं है। हाँ, यदि चूड़ियोंके पीछे तुम जान दे रही होतीं, चूड़ियोंके लिए देश-परदेश भटकती होतीं, चोरी करती होतीं तो तुम्हारा व्रत लेना ठीक होता। ऐसी स्त्रियोंको मैं जानता हूँ जिन्हें नाना प्रकारकी चूड़ियाँ चाहिए और उनके लिए वे लड़ती हैं, चोरी करती हैं। ऐसी बहनें यदि व्रत लें तो अच्छा हो। किन्तु यदि ऐसी बात कहूँ तो वे मुझसे भी लड़ती हैं। जिनके लिए चोटीमें ही सारा शृंगार है उनसे चोटीका परित्याग करनेको कहते ही वे लाल-लाल आँखें दिखाती हैं। ऐसी स्त्रियाँ भले चोटी कटवा दें। किन्तु जो चोटी रखना नहीं चाहतीं, जिनके लिए चोटी भारस्वरूप है, ऐसी स्त्रियाँ यदि माता-पिताको खुश रखने या समाजको न छोड़नेके लिए चोटी रखें तो कोई बुराई नहीं है। उनके लिए चोटी रखना धर्म भी हो सकता है। क्या अब यह चूड़ियोंका शास्त्र तुम्हारी समझमें आ गया?

१. देखिए "पत्र: एस० के० जॉर्जको", ३-१०-१९३२।
२. देखिए "पत्र: महालक्ष्मी माधवजी ठक्करको", २-१०-१९३२।

अब बच्चोंके बारेमें। उनका मामला भी लगभग चूड़ियों-जैसा ही समझो। मान लो कि तुम्हारे बिना आश्रममें उनका मन न लगता हो और उन्हें अन्यत्र कहीं न रखा जा सकता हो तो आश्रममें कुछ समय बिताना तुम्हारा कर्त्तव्य हो जाता है। किन्तु इसे आश्रममें 'रहना' नहीं कहा जा सकता। जिस प्रकार बहुत अधिक बीमार हो जानेपर कुछ आराम लेनेमें कोई दोष नहीं होता, उसी प्रकार महीना-पन्द्रह दिन आश्रममें बितानेमें दोष नहीं है। बल्कि वैसा करना कर्त्तव्य है। ऐसे काम सोच-समझकर किये जाते हैं। इसीलिए 'गीतामाता'ने कहा है कि कर्म क्या है, विकर्म क्या है और अकर्म क्या है, उसे समझना आसान नहीं है। इसलिए यदि बच्चों को कलकत्तामें रखनेमें अड़चन हो और उन्हें आश्रममें रखना कर्त्तव्य समझती हो तो उनके लौट आनेपर मेरी जिम्मेदारीपर और सर्वोपरि बच्चोंकी खातिर एक महीना देना और उन्हें आश्रममें रहना सिखा देना। यदि इसी बीच किसी आवश्यक कार्यवश तुम्हें जाना पड़े तो चली जाना। नारणदास जैसे भी होगा बच्चोंको रखेगा। यदि तुम न रहो और कलकत्तामें भी कोई न हो तो क्या नारणदास जैसे बने वैसे उन्हें नहीं सँभालेगा? किन्तु यदि यह तुम्हें न भाये या बच्चे न आयें अथवा बुजुर्ग लोग दुःखी हों तो बच्चे जहाँ हैं उन्हें वहीं रहने देना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

यदि अब भी कोई शंका रह गई हो तो पूछना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६८२३) से।

४१८. पत्र : जेलवासिनी बहनोंको

१४ अक्टूबर, १९३२

दुर्गाबाई जोगसे कहना कि बहनोंको कामसे इधर-उधर आने-जानेमें जो डर लगता है, वह मनको दृढ़ करनेसे निकल जायेगा। मनमें यह निश्चय करके कि रक्षा करनेवाला राम है, सेवा या कामके लिए जहाँ जाना जरूरी हो, वहाँ चले जाना चाहिए। डर किसका? पुरुषोंका ही न? पुरुष-मात्र कोई बहनोंपर हमला करनेकी ताकमें थोड़े ही बैठे रहते हैं? उनका जन्म भी माताके पेटसे ही हुआ है। यह विश्वास रखना चाहिए कि वे मातृसदृश स्त्री-जातिपर इस तरह हमला करेंगे ही नहीं। स्त्री अपना मातृपद धारण कर ले तब तो वह पुरुषसे उसी हालतमें डर सकती है जब माता अपने बालकसे डरे। इतनेपर भी कोई कामान्ध निकल आये, तो बहनें समझ लें कि उनका पवित्रता-रूपी कवच उनकी रक्षा जरूर करेगा।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १३५-६

४१९. एक पत्र

१४ अक्टूबर, १९३२

मन्दिर-प्रवेश अस्पृश्यता-निवारणका आवश्यक अंग है। आम तौरपर जो व्यवहार दूसरी जातियोंके बीच है, अछूत भाई-बहनोंके साथ भी वही होना चाहिए। रोटी-व्यवहार लोगोंकी इच्छापर निर्भर है। वह अस्पृश्यता-निवारणका आवश्यक अंग नहीं है। मगर मेरा यह खयाल है कि हिन्दू धर्ममें किसीके साथ भी 'खाद्य पदार्थ' खानेका निषेध नहीं है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १३४

४२०. पत्र : ए० रंगस्वामी अय्यंगारको

१५ अक्टूबर, १९३२

प्रिय रंगस्वामी,

आशा है, आपको मेरा तार[1] दो-तीन दिन पहले ही मिल गया होगा। उसे मैंने इसी महीनेकी ३ तारीखको अधिकारियोंको दे दिया था, लेकिन उन्होंने उसको भारत सरकारका निर्देश मिलनेतकके लिए रोक रखा था। जमोरिनको भेजे तारकी[2] एक नकल साथमें लगा रहा हूँ। तो इस तरह आप देखेंगे कि अगर मन्दिरके द्वार अस्पृश्योंके लिए निर्धारित समयके भीतर खुलवाने हैं तो अब वक्त बरबाद करनेकी गुंजाइश नहीं है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि आप और जिन मित्रोंका आपने उल्लेख किया है, वे सब इस सम्बन्धमें जल्दी कदम उठायेंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री ए० रंगस्वामी अय्यंगार
'हिन्दू'
मद्रास

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग ३

१ व २. देखिए "तार : ए० रंगस्वामी अय्यंगारको", ३-१०-१९३२।

४२१. पत्र : के० केलप्पनको

१५ अक्टूबर, १९३२

मुझे पहले ही पत्र लिखना चाहिए था, लेकिन अधिकारी इस बातपर विचार कर रहे थे कि ऐसे पत्र-व्यवहार की इजाजत दी जाये या नहीं। जमोरिनके नाम तार मैंने अधिकारियोंको उसी दिन दे दिया था जिस दिन मैंने तुम्हें तार भेजा था, अर्थात् इस महीनेकी ३ तारीखको ही। लेकिन उस तारको उन्होंने रोक रखा। अब वह भेज दिया गया है। साथमें उसकी नकल भेज रहा हूँ। इससे तुम यह समझ जाओगे कि मैंने कार्रवाई तुरन्त शुरू कर दी थी।

वहाँ तुम जो भी करो, बहुत नरमी और शिष्टताके साथ करो। कोई धमकी नहीं दी जानी चाहिए और न बड़ी-बड़ी बातें ही करनी चाहिए। असली बात तो लोगोंका — कट्टरपंथी लोगोंका भी — हृदय-परिवर्तन करनेकी है। इस कार्यकी प्रगतिकी सूचना मुझे नियमित रूपसे देते रहो।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १३७

४२२. पत्र : कालिकटके जमोरिनको

१५ अक्टूबर, १९३२

प्रिय मित्र,

तार[1] तो मैंने इस महीनेकी ३ तारीखको अधिकारियोंको दे दिया था, लेकिन वे उसपर विचार करते रहे और केवल तीन दिन पहले उसको भेजनेकी अनुमति दी गई। आशा है, वह आपको यथासमय मिल गया होगा। मुझे विश्वास है कि आप इस सम्बन्धमें कार्रवाई करेंगे और जबतकके लिए अनशन स्थगित किया गया है, उसी अवधिके भीतर मन्दिरके द्वार अस्पृश्योंके लिए खुलवानेकी व्यवस्था करेंगे।

आपको किस तरह सम्बोधित किया जाये, यह मुझे मालूम नहीं है। इसलिए अगर सम्बोधनमें कोई दोष हो तो यह समझकर कि मैंने इरादतन वैसा नहीं किया, मुझे यथोचित जानकारी देनेकी कृपा कीजिए।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १३७

१. देखिए "तार : कालिकटके जमोरिनको", ३-१०-१९३२।

४२३. पत्र : आश्रमके बालक-बालिकाओंको

१५ अक्टूबर, १९३२

बालको और बालिकाओ,

तुम्हारा पत्र बहुत दिनों बाद मिला।

आशा है, अब सभी बीमार अच्छे हो गये होंगे।

नव वर्षके सिलसिलेमें मैं इतना ही कहना चाहता हूँ कि आश्रमके सभी व्रतोंको और भी गहराईसे समझो और सजग बनो। तुम लोग ज्यों-ज्यों उन व्रतोंका पालन मनोयोगपूर्वक करोगे त्यों-त्यों तुम्हारी शारीरिक और आत्मिक उन्नति होगी।

बालिकाओंने स्वयं एक बार खाना बनाया, यह तो बहुत अच्छा हुआ। और फिर पाँच ही चीजें बनाईं, इसलिए यदि मैं वहाँ होता तो उनके हाथका बना भोजन मुझे भी खानेको मिलता न? किन्तु मैं भूलता हूँ। अभी तो मैं वहाँ पहुँच ही नहीं सकता। यदि प्रभुकी इच्छा होगी तो किसी दिन बालिकाओंके पवित्र हाथोंसे बना हुआ भोजन पाऊँगा।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एस० एम० यू०/२) से।

४२४. पत्र : रुक्मिणीदेवी बजाजको

१५ अक्टूबर, [१९३२][1]

चि० रुखी,

तेरा पत्र मिला। किन्तु मैंने तुझे ठठेरी बाजारके पतेपर जो पत्र[2] लिखा था उसकी प्राप्तिकी सूचना उसमें नहीं है। यदि यह पता पूरा नहीं है तो तुझे अपने पत्रमें उसे नहीं लिखना चाहिए। तू पुनः ठीक हो गई उसके लिए बधाई। मेरे शरीरमें ताकत करीब-करीब आ गई है। वजन धीरे-धीरे बढ़े यही अच्छा होगा। बा कलतक प्रतिदिन मेरे पास आती रही थी। अब मुझे उसकी देखभालकी जरूरत नहीं है इसलिए हम दोनोंने निश्चय किया कि वह न आये। वह आज बम्बई चली गई होगी। राधाके[3] पत्र मिलते रहते हैं। उसके स्वास्थ्यमें बहुत अधिक सुधार तो नहीं

१. डाककी मुहरसे।

२. देखिए "पत्र: रुक्मिणीदेवी बजाजको", ११-१०-१९३२।

३. रुक्मिणीदेवीकी बहन।

हुआ है किन्तु देवलालीमें जितना सुधार हुआ था, वह अभी तो टिका हुआ जान पड़ता है।

बापूके आशीर्वाद

श्री० रुक्मिणीबहन
के० २३/९६, पंचगंगा
बनारस सिटी

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१८२)से।

४२५. पत्र : नारणदास गांधीको

१५/१६ अक्टूबर, १९३२
१५ अक्टूबर, १९३२ की रात

चि० नारणदास,

तुम्हारी डाक नियमानुसार मिली।

चम्पा खासी बीमार हो गई लगती है। चम्पाका अलगसे भेजा पत्र मिला था। उसमें उसने पूछा है कि बीमारी वगैरहको लेकर उसका खर्च बढ़ जाये तो वह क्या करे। मेरा उत्तर देखना। उसका समाधान करना। कभी कुछ ज्यादा खर्च करे तो करने देना। यह पैसा बम्बईसे मँगाते हो या रंगूनसे? तुम्हारे पत्रसे लगा है कि चम्पाकी बीमारीसे रतिलाल समझदार हो गया है। यह तो शुभ ही कहा जायेगा।

१६ अक्टूबर, १९३२
सुबहके ४-१५ बजे

पण्डितजी ने पूछा था कि आश्रमवासी अस्पृश्यता-निवारणमें कहाँ और कितना योगदान करें। उसका जवाब दे दिया था। फिर भी यहाँ जरा विस्तारसे लिख रहा हूँ। आश्रमका हेतु यह है कि उसमें तैयार हुए लोग अलग-अलग गाँवोंमें फैल जायें और वहीं सेवा-कार्यमें लग जायें। सेवा-कार्योंमें तो खादी, अस्पृश्यता-निवारण वगैरह ही आयेंगे। उनमें भी किसी समय यदि वातावरण किसी खास कामके लिए विशेष अनुकल हो तो उसका लाभ उठाकर उस समय वे उसी प्रवृत्तिको ज्यादा चलायें। इसलिए आसपासके गाँवोंमें यदि हमसे अस्पृश्यता-निवारणका कुछ काम हो सके तो अवश्य करना चाहिए। शहरमें भी हो सके तो करना चाहिए। हमारे ही बगलमें एक मन्दिर है। सामने भी है। यदि उनके द्वार अस्पृश्योंके लिए खुलवाये जा सकें तो खुलवाओ। अगर हम अपने यहाँ और भी अस्पृश्योंको बसा सकते हों तो बसायें। विनोबाकी कल्पना तो सुन्दर है ही। उसे कार्यान्वित करते बने तो करना चाहिए। ये तो कुछ फुटकर-से मार्गदर्शक सुझाव हैं। जरूरी यह है कि किसी भी दिशामें

जिसको जो सूझे वह काम वह करे। जिस तरह दूधमें शक्कर मिल जाती है, उसी तरह हमें भी [इस काममें] पूरी तरह घुल-मिल जाना चाहिए। मगर इसके बावजूद हमें अलिप्त रहना चाहिए। आश्रमने या किसी आश्रमवासीने अमुक काम किया, ऐसा खयालतक मनमें नहीं आना चाहिए। जो होता है, ईश्वरके कराये होता है, ऐसा जानकर और मानकर चलना चाहिए। इन सुझावोंसे आगे-पीछे ली गई प्रतिज्ञाओंमें कोई बाधा नहीं पड़ती, नहीं पड़नी चाहिए। वे प्रतिज्ञाएँ तो अविच्छिन्न हैं ही। सभी अपनी-अपनी प्रतिज्ञाओंका पालन करते हुए इस अस्पृश्यता-निवारणके वातावरणमें जिस हदतक घुल-मिल सकें, घुलें-मिलें। इस प्रकारकी प्रवृत्ति किसीकी प्रतिज्ञाके साथ मेल न खाये तो उसके लिए तो मार्ग निश्चित है ही। परधर्म भले ही उत्तम हो, लेकिन प्रत्येकका श्रेय स्वधर्मके पालनमें ही है। उसमें जीना-मरना समान है, अर्थात् श्रेयस्कर है। पुंजाभाईको ऐसी कुर्सीपर किसने बैठाया कि वह गिर जाये? जिसको दौरा पड़ता हो उसका आसन तो हमेशा सुस्थिर होना चाहिए। मगर यह तो घटना हो जानेके बाद सूझनेवाली होशियारी हुई। फिर भी, दूसरोंकी अथवा अपनी भूलोंसे शिक्षा लेकर भविष्यमें उन्हें फिर न होने देनेका प्रयत्न करनेसे तो आगे बढ़ा जा सकता है न? त्रिवेदीके भाईकी पत्नी तारागौरीकी मृत्युसे भयभीत होनेका तो कारण ही नहीं है। मृत्यु तो होनी ही थी। स्टोव निमित्त-मात्र था। उसपर भी तत्काल सहायता नहीं दी जा सकी। तारागौरी भी घबरा गई; लहँगेका नाड़ा न खोल पाई। खोलते हुए एक गाँठ और पड़ गई। यह सब होना था। हम सब मृत्युसे तो घिरे हुए ही हैं। किस दिशासे कब वह आ धमकेगी, कौन जानता है। ऐसी मृत्युसे हमें एक ही सीख लेनी चाहिए। जो आज हो सकता है वह कल नहीं, जो इस क्षण हो सकता है वह दूसरे क्षण नहीं। इसके अलावा हमें स्टोवका मोह छोड़ना सीखना चाहिए और फिर सबको यह भी जान लेना चाहिए कि आग लग जानेपर क्या करना चाहिए।

इस बार तलेके लिए जो चमड़ा आया है, अच्छा है। तुमने जो चप्पलें भेजीं, न भेजते तो भी चलता, क्योंकि मेरे पास तीन जोड़ियाँ तो हैं ही। वे सब ऊपरसे ठीक पहनने लायक हैं। तले सबके खराब हो गये हैं। अब ठीक करवा लूँगा। इस तरह तीनों नई जोड़ियाँ हो जायेंगी। नई भेजी हैं, वह चौथी। लेकिन कोई फिक्र नहीं; वहाँ सहेजकर रखनेके बजाय यहीं रखी रहेंगी।

कुसुमके विषयमें जरा और सोच लेना। उसे अलमोड़ा भेजा जा सकता है क्या? यह तो पूरा कुटुम्ब ही रोगग्रस्त जान पड़ता है। नवीनको स्पष्टतः क्षयके लक्षण हैं। धीरूकी भी यही हालत लगती है। और कुसुम ठीक हो ही नहीं रही है। मंजुलाका कान तो [उसकी रुग्णताका] लक्षण-मात्र है। रोग तो, लगता है, वही है। फिर भी शायद चारों ठीक हो जायें, बशर्ते कि रोगके प्रतिकारके लिए तुरन्त प्रबल उपाय किये जायें। उनमें जलवायु परिवर्तन कदाचित् मुख्य है। अभीतक तो नवीन और धीरू ऐसे हैं कि वे अपनेको खुद ही सँभाल सकते हैं। और सब तरहसे वे दोनों तैयार हो चुके हैं। यदि उनमें ऐसा सेवा-भाव हो कि वे कुसुमकी सेवा

कर सकें, कमरेमें जगह हो, उनमें जानेका उत्साह हो, प्रभुदास उन्हें रखनेको तैयार हो, और तुम्हें लगे कि वे जा सकते हैं, तभी तुम भेजनेका विचार करना, अन्यथा इस बातको भूल जाना।[1]

यह तो जीनेका बहुत उत्साह रखनेवालों के लिए है। राजमार्ग तो गंगादेवी बता गई हैं — आश्रममें ही रहकर जिया जा सकता हो तो जियें। अन्यथा मरणको अपना सहचर मानकर तो हम सब यहाँ बैठे ही हैं। वे सब संकल्पपूर्वक आश्रममें रहें; चौबीसों घंटे खुली हवामें रहकर किये जा सकनेवाले और बिना अधिक श्रमके हो सकनेवाले काम ही करें; सादीसे-सादी खुराक लें, कटिस्नान आदि करें और दिन गुजारें। यदि वे प्रसन्नचित्त होकर इस तरह रहें तो ठीक भी हो सकते हैं। इस सबपर पहले तो तुम खुद विचार करना; बादमें बात करनी हो तो उनके साथ भी बात कर लेना। अभी चर्चा करना ही ठीक न लगे तो इस बातको भूल जाना। मेरे पास उपवासके विषयमें मादनकी एक पुस्तक आई है। शायद वहाँ भी यह पुस्तक है। न हो तो जो यहाँ आई है, वही भेज दूंगा। तुम उसे देख जाना। भाऊके लिए तो वह विचार करने योग्य है ही। केशूके यन्त्रको पेटेंट करवानेकी कोई जरूरत नहीं। उससे होड़ करनेको कोई नहीं आयेगा। आये तो भी कोई चिन्ता नहीं। हम पेटेंट नहीं ले सकते। अभी तो मुझे ऐसा ही लगता है। गोडसेको[2] पत्र लिखा करता हूँ।

रोटी बनानेका तरीका बिलकुल समझ गया था। यहाँका तरीका उससे आसान है। बीचमें उपवास आ जानेके कारण यहाँका तरीका लिखकर तुम्हें नहीं भेज सका। अब भेजूंगा। यह तरीका वहाँ आजमाकर देखना।

बापू

[पुनश्च :]

मेरे और महादेवके सूतको ठीकसे जाँचकर उनकी बट, समानता, अंक वगैरह बताना। उससे कपड़ा कबतक बुनवाओगे? उसे बुनने लायक राछ-फन्नी वहाँ हैं क्या?

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२६० से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. इससे आगेका अंश **बापुना पत्रो-९ : श्री नारणदास गांधीने**, भाग-१, पृ० ४८७ से लिया गया है। सी० डब्ल्यू० ८२६०-ए से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

२. गणेश वासुदेव गोडसे; विद्यापीठके एक स्नातक जो १९३० के दांडी-कूचमें भी शामिल थे।

४२६. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१५ अक्टूबर, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। सबके समाचार दिये, यह ठीक किया। लीलावतीका काम कठिन है। तुझपर उसकी श्रद्धा है, इसलिए तू कुछ कर सके तो अच्छा हो। वह है भली, उसका हेतु शुभ है, लेकिन बहुत विह्वल और अव्यवस्थित चित्तवाली है। प्रेमसे जो किया जा सके, करना।

तेरा वजन घट रहा है, इसका कारण खोजकर तुझे दूर करना चाहिए। दूध वगैरह कम लेती हो तो ज्यादा लेना चाहिए। हठ करके अच्छे शरीरको कमजोर मत कर डालना। यदि तेरे लिए कोई यह कहे कि इसकी तो कमर टूट गई तो यह मुझसे सहन नहीं होगा।

. . . [1]ने माफी माँगी, यह ठीक किया। उसे अपना स्नेह-ममता दे सके तो देना। वह बहुत होशियार है, यह मैंने देख लिया है। अपनी होशियारीका वह ठीक उपयोग करे तो कितना अच्छा हो।

आश्रमके पैसेका उपयोग जिसके लिए होना चाहिए उसीके लिए होता है, चाहे वह कोई भी हो। लेकिन आलोचना तो चाहे जिस कामकी हो सकती है। भूलें होती होंगी, लेकिन आश्रमका हेतु हमेशा तटस्थतासे व्यवस्था करना रहा है।

लोगोंको आश्रमकी पाई-पाईका हिसाब देखनेका अधिकार है। आश्रम व्यक्तिगत संस्था नहीं है। खर्चकी मर्यादा उसकी आयसे सम्बन्ध रखती है। आश्रमके पास कौड़ी न हो तो भी उसका काम चलेगा; करोड़ोंकी राशि हो तो वह भी आश्रम खर्च करेगा। देनेवालों को विश्वास है, तबतक वे देंगे। संस्थाको ईश्वर चलाता है। देनेवालों को वही प्रेरणा देता है।

मेरी दृष्टिसे तो जो भी बाहर जाये, उसे मन्त्रीसे इजाजत लेनी चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३०६) से। सी० डब्ल्यू० ६७४५ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

१. नाम छोड़ दिया गया है।

४२७. पत्र : मीठीबहनको

१५ अक्टूबर, १९३२

अस्पृश्यता-निवारणमें रोटी-बेटी व्यवहार नहीं आता। लेकिन अस्पृश्य माने जानेवाले हरिजनोंके साथ जो भी रोटी-व्यवहार रखता है, वह अधर्म करता है, ऐसा मैं नहीं मानता। रोटी-बेटी व्यवहारका निषेध हिन्दू धर्मका अविभाज्य अंग नहीं है, ऐसी रूढ़ि हो गई है। हरिजनों और दूसरी जातियोंके बीच भेद नहीं रखा जा सकता। इसमें किसीको मजबूर करनेकी बात नहीं है, इसलिए किसीको दुःख न होना चाहिए।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १३८

४२८. पत्र : सुलोचनाको

१५ अक्टूबर, १९३२

चि० सुलोचना,

जो प्रश्न तूने मुझसे पूछे हैं वे प्रेमाबहनसे पूछना। यदि उसके उत्तरोंसे सन्तोष न हो तो पुनः मुझसे पूछना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७४०)से।

४२९. पत्र : बालकृष्ण भावेको

१६ अक्टूबर, १९३२

कहा जा सकता है कि उपवासके दिनोंमें नाम-स्मरण आदि ज्यादा हुआ, क्योंकि शारीरिक दुःखके बावजूद शान्ति बहुत थी। यह हो सकता है कि जिसे असाध्य रोग है, वह खास हालतोंमें अनशन करे, तो उसमें आत्महत्याका दोष न हो। मगर जिस असाध्य रोगवाले का मन साफ है, उसे अनशनका अधिकार नहीं है, क्योंकि वह मनसे भी सेवा कर सकता है। मेरी पिछली बीमारीसे तुम्हारा मतलब क्या कोल्हापुरमें[1] हुई बीमारीसे है? खैर, जिससे भी हो। मुझे याद है कि मेरे लिए हर बीमारी अनुग्रहरूप ही रही है। ईश्वरके भक्तके साथ ऐसा ही होना भी चाहिए, फिर भले ही बीमारी उसकी मूर्खतासे ही आई हो। रामनाम, जाने-अनजाने, रोज ही जपता

१. मार्च, १९२७में; देखिए खण्ड ३३, पृ० २०९-१०।

४३२. पत्र : नर्मदा भुस्कुटेको

१६ अक्टूबर, १९३२

वाङ्मय साध्य नहीं है, सेवा साध्य है। वाङ्मय सेवाका साधन है, इसलिये जबतक हमारे हाथमें कुछ भी सेवा आई हो तबतक शान्तिसे उसमें तन्मय रहना। 'गीतामाता' की प्रतिज्ञा है कि जो ईश्वरके भक्त हैं उनको भगवान् साधन दे देगा। हां, जब समय मिले तब अक्षर-ज्ञानमें वृद्धि अवश्य करना। उसमें भी समझो कि पढ़नेसे विचार ज्यादा चीज है। भले पढ़नेका थोड़ा हो। जितना पढ़ना उसे हजम करना।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १४१-२

४३३. पत्र : जोहरा बानू अन्सारीको

१६ अक्टूबर, १९३२

प्यारी बेटी जोहरा,

तुमने मेरी गलतियाँ बहोत अच्छी तरह बतलाई हैं। मुझे डर है कि मैं तुम्हारा बहोत वक्त लेता हूँ। जितना आसानीसे दे सके इतना ही देना। 'स्वाद', 'सीन' कहाँ कब आते हैं मुझे बता सकती है? इसी तरह 'तोय' और 'ते' का भी है। अगर तुम्हारा खत ज्यादा खूबसूरत नहीं है तो खूबसूरत खत किसको कहा जाय? कम-से-कम मैंने तो इससे ज्यादा अच्छे खत नहीं देखे हैं।

अब्बाजानका आजकल कोई खत मुझे नहीं मिला है। इसलिए अच्छा हुआ तुमने मुझे खबर दी है। अम्माजानको हम सबकी तरफसे आदाब। बा अब बम्बई चली गई है। हम दोनोंने सोचा कि जब मुझे काफी ताकत आ गई है तो बा को कामपर चढ़ जाना चाहिए। मैं जान-बूझकर पोस्टकार्ड ही लिखता हूँ क्योंके इतना लिखनेमें ठीक वक्त जाता है।

बापूकी बहोत दुआ

महात्मा, भाग-३, पृ० ३०४-५ के बीच प्रकाशित उर्दू पत्रकी प्रतिकृतिसे।

४३४. पत्र : हे० सॉ० लि० पोलकको

मौनवार, १७ अक्टूबर, १९३२

प्रातःकालकी प्रार्थना हो चुकी है और अभी ठीक ४-२० बजे हैं। इसी माह की ७ तारीखका आपका पत्र कल मिला। आपके पत्रका मेरे लिए क्या मूल्य है, यह आप इसीसे जान लेंगे कि मैं अपना सबसे मूल्यवान समय उसका उत्तर देनेमें लगा रहा हूँ। उसका मूल्य इस बातमें है कि वह आपके प्रेम और निश्छलताकी अभिव्यक्ति है। एक ऐसे साधनके रूपमें जिसके द्वारा आप मुझे अपनी बातके सत्य होनेकी प्रतीति करा सकें, उसका मूल्य बहुत थोड़ा है, या कुछ भी नहीं है। यदि मैंने भूल की है तो भूल हो जानेकी प्रतीति मुझे घटनाके घटित होनेके बाद भी अच्छी लगेगी। क्योंकि वह मुझे उस भूलको दोहरानेसे बचायेगी। पर मुझे ऐसा लग ही नहीं रहा है।

मैं देख रहा हूँ कि यद्यपि हमारा पारस्परिक प्रेम वैसा ही है, पर हमारे दृष्टि-बिन्दु एक-दूसरेसे भिन्न हो गये हैं, चीजोंको देखने-समझने, उन्हें सुलझाने-सँभालनेके हमारे तरीके अलग-अलग हो गये हैं। अतः हमें इसपर सहमत होना है कि हममें मतभेद है।

इस मामलेमें मैंने यह सोचा था कि यदि दूसरा कोई मेरे कार्यको न भी समझे, आप और मिली तो उसे अपनी सहज-बुद्धिसे अनायास ही समझ लेंगे, और मेरी ढाल बन जायेंगे। पर वह सुख मेरे नसीबमें नहीं है। फिर भी, उससे अधिक सुख मुझे इस बातसे मिल रहा है कि राजनीतिक और आध्यात्मिक मतभेदोंके बावजूद हमारा प्रेम कायम रह सकता है। अलबत्ता, आध्यात्मिक मतभेदोंके लिए मैं तैयार नहीं था। पर मैं देखता हूँ कि व्यक्तिके राजनीतिक, सामाजिक और इसी तरहके अन्य विचार उसके आध्यात्मिक दृष्टिकोणके साथ गुँथे होते हैं और उसी से पैदा होते हैं। इसलिए जब हममें तीव्र राजनीतिक मतभेद हों तो अकसर उनका मूल आध्यात्मिक मतभेदमें मिलता है।

ऐसा लगता है कि उपवासका मर्म ही आपने नहीं समझा। आपको अल्पसंख्यक समितिमें दिये मेरे भाषणको[1] देखना चाहिए। वह भाषण पहलेसे तैयार किया हुआ नहीं था। उसके अन्तमें मैंने जो-कुछ कहा, उसे रोका नहीं जा सकता था। उपवास उसी गम्भीर घोषणाका अनिवार्य परिणाम था। वह घोषणा कैसे कार्यान्वित होगी, इसका तो तब मुझे पता ही न था। मैं कहता हूँ कि वह घोषणा ईश्वरकी कराई हुई थी और उसे कार्यान्वित भी उसीने कराया। यदि ऐसा था तो सारी दलीलें

१. देखिए खण्ड ४८, पृ० ११३-६।

बेकार हैं और यदि वह एक भ्रम था तो जो मित्र ऐसा मानते हैं, उनका यह कर्त्तव्य है कि वे अपने पूरे प्रेम और आग्रहके साथ मुझे यह सत्य समझानेकी कोशिश करें।

तबसे घटी हर घटना मेरे इस विचारकी पुष्टि करती है कि उपवास ईश्वर का सौंपा हुआ कार्य था।

उपवासकी खबर प्रधान मन्त्रीके जरिये नहीं, बल्कि सर सैम्युअलके माध्यमसे ही जानी चाहिए थी। परन्तु यदि आपने मेरे सभी वक्तव्य और प्रधान मन्त्रीको मेरा पत्र भी देखा होता तो आपको यह मालूम हो जाता कि उपवास उन करोड़ों लोगोंको लक्ष्य करके किया गया था जिनकी मुझमें श्रद्धा है और जिन्होंने, जब-कभी मैं उनके बीचमें गया हूँ, मुझपर अपने अक्षय प्रेमकी वर्षा की है। वे बिना किसी दलीलके ही उपवास और उसके सारे गूढ़ार्थोंको समझ गये। इसका राजनीतिक अंश उनके लिए गौण था, उनके लिए तो आन्तरिक शुद्धि सब-कुछ थी। यह दूसरी चीज अब भी चल रही है। और याद रखिए कि उपवास केवल स्थगित हुआ है, यदि लोग सो जाते हैं तो यह फिर शुरू करना होगा। यदि प्रेमी अपने प्रियतमको गलत रास्तेपर जानेसे रोकनेके लिए उपवास करे, तो वह दबाव डालकर अपना काम बनाना नहीं है, वह तो व्यथित हृदयकी ईश्वरतक पहुँचनेवाली पुकार है। आपकी भाषामें कहूँ तो "ग्रह-नक्षत्रोंका दिव्य संगीत" इसी तरहकी पुकारोंसे बना है। मेरा उपवास निद्रालस प्रेमके लिए चाबुककी तरह था।

आप पूछते हैं कि यह दस वर्ष पहले क्यों नहीं किया। इसका जवाब यह है कि ईश्वरने तब मुझे इसका आदेश नहीं दिया था। वह हमें उस समय जगाने आता है जब हमें उसकी कमसे-कम आशा होती है। उसके तरीके हमारे तरीकों-जैसे नहीं हैं। यदि मैं कहूँ कि बलिदानकी क्षमता मुझमें तब भी वैसी ही थी जैसी आज दीखती है तो आप, निस्सन्देह, मुझपर यकीन तो करेंगे ही।

अन्तमें, आपको मेरा यह निष्कर्ष, जो आपके निष्कर्षकी अपेक्षा कहीं अधिक तथ्योंपर आधारित है, मान लेना चाहिए कि इस तरहका समझौता लन्दनमें नहीं हो सकता था और यह कि प्रधान मन्त्रीसे हिन्दू-मुस्लिम-सिख समस्याके सिवा किसी और प्रश्नपर फैसला करनेके लिए किसी तरहका आग्रह भी नहीं किया गया था।

आप सबको प्यार।

भाई

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १४८-९

४३५. पत्र : हैंडरसनको[1]

१७ अक्टूबर, १९३२

आप जब अपने और मेरे ईश्वरकी बात करते हैं तो आपके साथ चर्चा करना फिजूल है। अभीतक मेरा यही विचार रहा है कि बुद्धिमानों और मूर्खों, धर्मात्माओं और पापियोंका एक ही ईश्वर है। मेरी सलाह यह है कि मुझसे बहस करनेकी बजाय आप मेरे लिए प्रार्थना करें ताकि 'आपका' ईश्वर मेरे ज्ञानचक्षु खोल दे और आपके विचारमें जो मेरी त्रुटि है उसे मैं देख सकूँ।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १४३। जी० एन० ४७९७ से भी

४३६. एक पत्र

१७ अक्टूबर, १९३२

मैं केवल यही कह सकता हूँ कि जब कोई मनुष्य अन्तर्नादकी प्रेरणाकी बात कहता हो, तो उसे ईश्वरकी दयापर ही छोड़ देना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १४३

४३७. पत्र : नरसिंहराव बी० दिवेटियाको

१८ अक्टूबर, १९३२

सुज्ञ भाईश्री,

सुबह चार बजेकी प्रार्थना हम कर चुके हैं और अब यह लिखने बैठा हूँ। आपके दोनों पत्र मिल गये। हम तीनों आज ८-३० बजे आपके साथ दसवें दिनका श्राद्ध मनायेंगे। मूक प्रार्थनाके बजाय "लीड काइण्डली लाइट" का आपका किया हुआ अनुवाद गायेंगे। आप दोनोंको जितनी शान्ति चाहिए, क्या उसमें उतनी शान्ति नहीं भरी हुई है? आपके बच्चे तो चिरशान्ति भोग रहे हैं। लेकिन इस संसारमें जितने बच्चे हैं, वे सब क्या आपके नहीं हैं? आपने तो इस तरहका ज्ञान बहुत दिया है। वह इस समय आपकी सहायता करे।

१. एक ईसाई मिशनरी।

"प्रेमल ज्योति" की[1] एक बात आपको अच्छी लगेगी। जाते-जाते फादर एलविनने सोचा कि ईसाई मित्रगण हर सप्ताह एक बार मेरे साथ मानसिक सम्बन्ध जोड़ें तो अच्छा हो। ऐसा करनेके लिए उन्होंने मुझसे कोई ऐसा भजन बतानेको कहा जिसे सभी निश्चित समयपर हर सप्ताह गायें। मैंने न्यूमैनका भजन पसन्द किया। उसे आज यूरोप, अमेरिका, यहाँ और दूसरे देशोंमें मित्रगण हर शुक्रवारको शामके ७-३० बजे गाते हैं। हम यहाँ और आश्रमवासी साबरमती वगैरहमें "प्रेमल ज्योति" हर शुक्रवारको शामकी प्रार्थनामें गाते हैं। इस भजनमें आपने जो प्राण भरा है, उसमें वृद्धि होती जा रही है। आपकी यह भेंट आपको भी फल दे।

आपका,
मोहनदास

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १४७

४३८. पत्र : बेगम मुहम्मद आलमको[2]

१८ अक्टूबर, १९३२

प्रिय बहन,

तुम्हारे पत्र और तारके लिए मैं बहुत ही आभारी हूँ। डॉक्टर साहबकी सख्त बीमारीकी बात पढ़कर दिलको धक्का लगा। ईश्वर उनपर दया करे। डॉक्टर साहबकी तबीयतका हाल कृपया मुझे हर सप्ताह बताती रहना। क्या ये शिकायतें उन्हें जब वे आजाद थे तब भी थीं? मुझे यकीन है कि अस्पतालमें उनका ठीक ढंगसे इलाज हो रहा होगा। डॉक्टर साहबको और तुम्हें मेरे सलाम। ईश्वरसे यही प्रार्थना है कि हिन्दू, सिख और मुस्लिम सम्प्रदायोंमें एकता कायम हो जाये।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २५-१०-१९३२ तथा **अमृतबाजार पत्रिका**, २५-१०-१९३२

१. "लीड काइण्डली लाइट" का नरसिंहराव दिवेटिया द्वारा किया गया गुजराती अनुवाद।
२. साधन-सूत्रके अनुसार; पत्र उर्दूमें था।

४३९. पत्र : एच० एफ० हडसनको

१८ अक्टूबर, १९३२

प्रिय श्री हडसन[१],

आशा है, आप धृष्टताके लिए क्षमा करेंगे।

आपने डॉ० अम्बेडकरको और मुझे उनकी मुलाकातके सम्बन्धमें जिस प्रतिबन्ध की सूचना दी, सरकारी दृष्टिकोणको[२] ध्यानमें रखते हुए उसे समझनेमें मुझे कोई कठिनाई नहीं हुई। उसका ईमानदारीके साथ पालन किया गया है। और जहाँतक मेरा सवाल है, मैं उसके बारेमें लोगोंको एक शब्द भी नहीं बताऊँगा। परन्तु आपकी टिप्पणीके अन्तमें जो धमकी दी गई थी, मेरे खयालमें, वह बुरी लगनेवाली थी और वैसा-कुछ कहनेके लिए कोई उचित कारण भी नहीं था। आपने कहा कि यदि हममें से किसीने भी इस प्रतिबन्धका पालन नहीं किया तो भविष्यमें इस तरहकी सभी मुलाकातें बन्द कर दी जायेंगी। जहाँतक मेरा सवाल है, आप इस बातकी आसानीसे जाँच कर सकते हैं कि जेलके नियमोंका मैंने बहुत ही सावधानीसे पालन किया है। इस धमकीमें यह ध्वनि है कि इस तरहकी मुलाकातें एक रियायत हैं, जब कि मेरे विचारमें वे यरवडा-समझौतेका आवश्यक परिणाम हैं। अस्पृश्यता-सम्बन्धी सुधार यदि सरकार और लोगोंका समान ध्येय नहीं है तो निश्चय ही होना चाहिए। और फिर जेल तो निश्चय ही कोई ऐसी जगह नहीं थी जहाँ डॉ० अम्बेडकरपर, जो कोई कैदी नहीं बल्कि एक स्वतन्त्र व्यक्ति हैं, धमकीके साथ ऐसा प्रतिबन्ध थोपा जाये जिसकी जानकारी उन्हें उस तारमें नहीं दी गई थी जिसमें श्रीमती सरोजिनी नायडू और मुझसे उनकी मुलाकातके अनुरोधकी स्वीकृतिकी सूचना उन्हें दी गई थी।

इस व्यक्तिगत पत्रमें क्या मैं अब अपने उस पत्रके[३] एक सुनिश्चित उत्तरकी माँग कर सकता हूँ जो पिछले महीनेकी २९ तारीखको मेजर भण्डारीको लिखा गया था और आगे गृह विभागको भेज दिया गया था? आपके उक्त ज्ञापन-पत्रको देखते हुए, सरकारी नीतिकी स्पष्ट व्याख्या और भी आवश्यक हो गई है। केवल अस्पृश्यताके बारेमें मुझे बिना किसी पाबन्दी या अड़चनके लोगोंसे मिलने और पत्र-व्यवहार करनेकी अनुमति होनी चाहिए, यह मैं आवश्यक समझता हूँ। आपको यह मालूम होना चाहिए कि मेरा उपवास केवल स्थगित हुआ है। यदि हिन्दू जनता हरिजनोंके

१. वाइसरायकी कार्यकारिणी समितिमें गृह-सदस्य।

२. अपनी टिप्पणीमें श्री हडसनने कहा था कि गांधीजी और डॉ० अम्बेडकरको सूचित किया जाता है कि उनकी बातचीतकी कोई भी रिपोर्ट "या श्री गांधी द्वारा जारी किया गया कोई भी घोषणा-पत्र" प्रेसमें भेजा जाये, इसकी अनुमति सरकार द्वारा नहीं दी जायेगी।

३. देखिए "पत्र : एम० जी० भण्डारीको", २९-९-१९३२।

साथ न्यायोचित व्यवहार नहीं करती तो वह फिर शुरू करना होगा। अतः यदि सुधार पूरी तरह क्रियान्वित किया जाना है तो जनताके साथ मेरा सम्पर्क अनिवार्य है। नव-स्थापित संघके मन्त्री श्रीयुत अ० वि० ठक्कर निर्देशके लिए मुझे लिख चुके हैं। मैंने उन्हें सूचित किया है कि कोई भी निर्देश देनेसे पहले मैं सरकारी नीतिकी स्पष्ट व्याख्याकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। इसलिए यदि तुरन्त उत्तर दे सकें तो बड़ी कृपा होगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८६३) से। बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८००(४०)(३), भाग १, पृ० २१५ से भी

४४०. पत्र : मणिलाल गांधीको

सोमवार [१८ अक्टूबर, १९३२][1]

चि० मणिलाल,

तेरा पत्र मिला। अब जब तेरी इच्छा हो तब आना। साथमें सुशीला आ सके तो ठीक है, किन्तु यदि कमजोर हो तो न आये। यदि सीता आना चाहे तो लेते आना। ऐसी कोशिश करना जिससे रोज पेट साफ होता रहे। खुराक हलकी ही लेना। अधिक दूध ले सके तो अच्छा हो। स्वास्थ्य बिगड़ने मत देना। बा से कहना कि मेजर अडवानीसे मैंने दवाईका पर्चा मँगवाया है। वह वहाँ भी डॉक्टरको दिखा ले तो अच्छा हो। आशा है, प्यारेलालको मेरा पत्र मिल गया होगा। मणिभाई[2] और गुलाबको मेरे आशीर्वाद। मुझे आज देवा[3] [के आने] की आशा थी।

बापूके आशीर्वाद

श्री मणिलाल गांधी
मणिभुवन
लैबर्नम रोड
गामदेवी, बम्बई

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४७९७) से।

१. डाकखानेकी मुहरसे।
२. मणिभाई रेवाशंकर झवेरी।
३. देवदास गांधी।

४४१. पत्र : मीराबहनको

१९ अक्टूबर, १९३२

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र आज मिला।

मेरा स्वास्थ्य बराबर सुधर रहा है। आहारमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। वजन ९९½ पौंडतक पहुँच गया है। मुझमें लगभग पहले जितनी शक्ति आ गई है।

किसनका एक लम्बा पत्र मिला था, जिसमें तुम्हारी गतिविधियोंका सजीव वर्णन था। जैसा कि स्वाभाविक है, तुम्हें उसकी और उसे तुम्हारी याद आती है। वह कहती है कि तुम्हारी संगतिसे उसे बहुत लाभ हुआ है।

तुमने लिखा है कि अपराधी औरतें इस समय तुम्हारी साथिनें हैं। अपराधी शब्दका हमारे कोषमें स्थान नहीं होना चाहिए। या फिर हम सभी अपराधी हैं। 'तुममें से जो निष्पाप हो वह पहला पत्थर मारे।' और किसीकी भी पापी वेश्या पर पत्थर फेंकनेकी हिम्मत नहीं हुई। जैसा कि एक जेल-अधिकारीने एक बार कहा था, प्रच्छन्न रूपसे हम सब अपराधी हैं। कुछ-कुछ मजाकमें कही गई इस बातमें गहरा सत्य भरा है। इसलिए उन्हें अच्छी साथिनें मानो। मैं जानता हूँ कि यह कहना जितना आसान है, करना उतना आसान नहीं है। किन्तु 'गीता' और वस्तुत: सभी धर्म हमसे यही करनेको कहते हैं।

क्या मैंने तुम्हें बताया नहीं कि उपवासके दिनोंमें हमें एक अन्य अहातेमें, जहाँ अधिक एकान्त रह सकता था, भेज दिया गया था। इससे हमारे साथकी बिल्लियाँ वहीं रह गई थीं। अब हमें वापस पुराने अहातेमें लाया गया है, जिससे ये जिन्दादिल चतुष्पद साथिनें बड़ी खुश हैं। ये सब हमारे चारों तरफ म्याऊँ-म्याऊँ करती रहती हैं।

अपनी पढ़ाईके बारेमें तुमने जो लिखा है, उसे मैं समझता हूँ। जितना समय लगे, लगने दो और जैसा अच्छा लगे, करो। तुम्हारे शरीर या मनपर कोई दबाव नहीं पड़ना चाहिए।

मणिलालकी पत्नी सुशीलाका एक मामूली-सा ऑपरेशन हुआ है। बा उसके साथ है। मणिलाल अब पहलेसे अच्छा है।

हम सबका प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२४६) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७१२ से भी

४४२. पत्र : दूधीबहन वा० देसाईको

१९ अक्टूबर, १९३२

चि० दूधीवहन,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारा स्वास्थ्य कैसा है यह तो तुमने लिखा ही नहीं। और मनु आश्रमसे बाहर रहता है इसलिए क्या उसने मुझसे मित्रता छोड़ दी है? उसके द्वारा भेजे जानेवाले वर्णन तो बाकी ही हैं और अभी तो उसे सुन्दर लिखावट की परीक्षा भी पास करनी है। वह पत्र लिखना बन्द कर दे, यह कैसे पुसायेगा?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४४०)से; सौजन्य : वा० गो० देसाई

४४३. पत्र : वालजी गो० देसाईको

१९ अक्टूबर, १९३२

भाईश्री वालजी,

तुम्हारी चिट्ठी और पुस्तक मिली। इस पत्रको रजिस्ट्रीसे नहीं भेज रहा हूँ। मिल तो जायेगा ही, ऐसा मानकर रजिस्ट्रीका खर्च बचा रहा हूँ। मिलनेपर पहुँचकी सूचना तो दोगे ही।

लगभग यों कहा जा सकता है कि तुम्हारी पुस्तक मिलते ही मैं उसे पढ़ गया। तुम्हारी भाषा मुझे मीठी लगती है, इसलिए उसकी तरफ मैंने ध्यान नहीं दिया। ध्यान दूँ, तो कुछ सलाह दे सकता हूँ। मगर यह तो मामूली बात लगती है।

मुझे पुस्तक पसन्द नहीं आई। तुमने नाम 'ईशुचरित' दिया है। भीतर ऐसा नहीं देखता।

मुझे याद है कि तुमने एक बार कहा था, या तुमने कहा है यह मानकर किसी-से मैंने कहा था कि तुम मानते हो, "मैं मौलिक वस्तु देनेवाला कौन? हम तो पूर्वजोंने जो उत्तम चीजें दी हैं, उनका अनुवाद कर देनेमें ही सन्तोष मानें।" यह दलील मैं मान लूँ, तब तो शायद तुम्हारी पुस्तक पास कर दूँ। मगर मुझे यह दलील मंजूर नहीं। अगर वह तुमपर लागू होती है तो दूसरोंपर भी हो सकती है। सब इसी तरह करें, तो हमारे लिए पूर्वजोंके कूएँमें डूब मरना ही रह जायेगा। मैं मानता हूँ कि हमारा धर्म पूर्वजोंकी विरासतमें वृद्धि करना है, उसे आजकी मुद्रामें वदलना, वर्तमान युगके अनुकूल बनाना है। यह काम सिर्फ अनुवादोंसे नहीं होगा। तुमने

जो-कुछ लिखा है, वैसा तो गुजराती भाषामें मिल सकता है। खुद ईसाइयोंने ही अथक मेहनत करके जो अनुवाद प्रकाशित किये हैं, वे फेंक देने लायक नहीं हैं। उन्हींका प्रचार क्यों न किया जाये? अपनी मीठी वाणीका ही प्रचार करनेके लिए तो तुम ऐसी पुस्तकें नहीं लिखते न? और ऐसा करो भी तो इतने से ही उस वाणीका प्रचार नहीं होगा।

इस कृतिमें मैं एक तरहका आलस्य पाता हूँ। जो बहुत पढ़ता है और बहुत लिखता है, वह उद्यमी ही है, सो तो तुम नहीं कहोगे। तुम्हारे बारेमें मैं यह मानता हूँ कि तुम्हें बहुत पढ़ने और अनुवाद करनेका रोग है। यह छूटना चाहिए। मैं तुमसे जो माँगता हूँ वह यह है: तुम भले ही ईसाका चरित्र ही लिखो, नया करार जितनी बार पढ़ना हो पढ़ो, मगर उसके बाद सब पुस्तकें अलमारीमें रख दो और फिर जो पढ़ा है उसमें से ईसाका जीवन तैयार करो।

यह पुस्तक छपवा ली, इसलिए जनताको देनी ही चाहिए, ऐसा निर्णय न करना। अगर मेरी लिखी बातें ठीक मालूम हों, तो — भले ही इतना रुपया चला जाये — छपी हुई चीज भी रद्द कर देना और जैसा मैं कहता हूँ वैसा मौलिक लिखना शुरू करना। अगर यह मेहनत ज्यादा मालूम हो, तो शान्त रहना। पढ़ना छोड़कर किसी-न-किसी शारीरिक प्रवृत्तिमें लगकर शरीरको सुधारना। पढ़नेकी बीमारीवाले मैंने यहाँ और दूसरी जगह बहुत देखे हैं। यह रोग तुम्हें भी सता रहा है। इस रोगसे मुक्त होनेके लिए भ्रमण करो, ईश्वरकी लीला देखो, कुदरतकी किताब पढ़ो, पेड़ोंकी भाषा समझो, आकाशमें होनेवाला गान सुनो, वहाँ रोज रातको होनेवाला नाटक देखो। दिनमें कातो, थकावट लगे तब सोओ, बढ़ईका काम हो सके तो करो, मोचीका काम करो। मैं जानता हूँ कि तुम्हारे हाथोंमें पीड़ा होती है। वह अभ्याससे मिट जायेगी।

अंग्रेजीमें ईसाके चरित्रपर बहुतेरी सुन्दर पुस्तकें लिखी गई हैं। उनमें से कुछको चुना जा सकता है। मगर यह बोझ मैं तुमपर नहीं डालूँगा।

तुम्हारी पुस्तकमें देवदूत वगैरहके आगमनका भाग निकाल देने लायक है। ऐसा तो हमारे यहाँ बहुत-कुछ है। उसमें वृद्धि क्या की जाये? देवदूत और ज्ञानी न आये हों, तो भी ईसाकी कीर्तिको कोई हानि पहुँचनेवाली नहीं है। मेरी शिकायत यह है कि तुमने पढ़नेवाले के सामने ईसाकी तसवीर खड़ी नहीं की। तुमने ईसा-नीति दे दी है, और वह भी अवतरण-चिह्नोंमें। तुम अपनी ही भाषामें दो, तो कौन अविश्वास करनेवाला है?

मैं नहीं जानता कि तुमने यह पुस्तक किन लोगोंको ध्यानमें रखकर लिखी है। अगर जन-समाजको ध्यानमें रखकर लिखी हो, तो उसपर विदेशी नामोंका बोझ नहीं डाला जा सकता। 'बाइबिल' के नामोंको तुमने अपने जामे या किसीसे उधार लिये हुए जामे पहनाये हैं, यह मेरे-जैसे बहुत कम पढ़नेवाले को मालूम नहीं हो सकता। मुझे ऐसी आशंका है कि इससे बहुत फायदा नहीं होगा। अगर तुम्हें ऐसे नाम देने थे जो गुजराती भाषामें घुल-मिल जायें, तो 'बाइबिल' के हर नामका जो अर्थ होता है, वह अर्थ लेकर चुने हुए गुजराती नाम गढ़ लेने चाहिए थे।

यह सब लिखनेपर भी तुम्हारा पुस्तक छपवानेका आग्रह हो, तो उसे सिर्फ डाकखर्च लेकर किसीको देनेकी जरूरत नहीं। लागत कीमतपर भी लोग न लें, तो भले ही न लें, तुम्हारा नाम होगा, इसलिए पुस्तक खपेगी तो जरूर ही। (किन्तु इसे पुस्तक परीक्षाके रूपमें न समझना।) तुम्हारा काम लेखकका है। लागतके दाम न दे सकें, ऐसे लोगोंको पुस्तक देनी होगी, तो ऐसा तो इस तरहके काम करनेवाली कोई परोपकारी संस्था करेगी। यही ठीक है कि एक आदमी दो घोड़ोंपर न चढ़े। वे १५० रुपये भले ही व्याज खाकर बढ़ते रहें।

मैंने जितना सोचा था, उससे बहुत ज्यादा लिखा गया। और तिसपर मैंने अपना गुबार भी अच्छी तरह निकाल लिया है। यानी, मैं मोहमें पड़ा हूँ और इसलिए इसकी रजिस्ट्री करानेमें पैसे फेंकूंगा।

तुम्हें तकली इसलिए पसन्द आई न कि उसे चलते-चलते चलाया जा सकता है। तकली आरामसे भी चलाई जा सकती है। ज्यादा लोभ पापका मूल है। तुम्हारी साधना शरीरको वज्रके समान बना लेनेमें है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४४१) से; सौजन्य : वालजी गोविन्दजी देसाई

४४४. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

१९ अक्टूबर, १९३२

भाईश्री खम्भाता,

भाई महादेवको लिखा तुम्हारा पत्र मैंने पढ़ा। 'ब्लू ब्रेन' क्या होता है यह तो मैं भी नहीं जानता। जब डॉ० गिल्डर मुझे देखकर गये उस समय मेरा रक्तचाप सामान्य था। मेरा स्वास्थ्य बिलकुल ठीक है और मेरे शरीरमें लगभग पहले जितनी ताकत आ गई है। मैं रोज घूमता हूँ, पहलेके बराबर ही कातता हूँ और काफी पत्र लिखता हूँ। मैं चौबीसों घंटे खुलेमें ही रहता हूँ। 'ब्लू ब्रेन' क्या होता है? किसने कहा कि मेरा रक्तचाप अधिक है और मुझे 'ब्लू ब्रेन' होनेका डर है।

भाई मेहतापर मैं क्यों सन्देह करूँगा? क्या मैंने ही विद्याको उनके यहाँ नहीं भेजा था? किन्तु उपवासके दौरान उन्हें रोज बुलानेकी आवश्यकता नहीं थी और जेलमें ऐसा किया भी नहीं जा सकता। इतने डॉक्टरोंके आनेके बावजूद यदि उन्हें बुलाता तो अनुचित माना जाता। फिर मेरे-जैसोंकी वे बहुत मदद भी नहीं कर सकते। बहुत बार उपवास करनेके कारण मुझे अपनी शारीरिक प्रकृतिका ज्ञान है। ऐसी स्थितिमें मेहता-जैसा व्यक्ति कोई लटका ही बता सकता था। और वैसा-कुछ हो तो मैंने वह बतानेको कहा था। यदि उनके पास वैसा-कुछ हो तो वे अब भी

भेज सकते हैं। मुझे उनका पता लिख भेजना। उनके सन्तोषके लिए मैं उन्हें दो शब्द अवश्य लिखूँगा। तुम तो उन्हें लिखना ही कि वे जो सुझाव देना चाहें सो दें और मुझे खुलकर लिखें।

और तुम्हें स्वयं भी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। यदि कुछ होगा तो मैं तुम्हें लिखूँगा। मालिश-सम्बन्धी पुस्तकें मैं आज लौटा रहा हूँ।

इस भयसे कि कहीं हाथका दर्द फिर न उभर आये मैंने बायें हाथसे कातना छोड़ दिया है और पैरका चरखा चलाता हूँ।

तुम दोनोंको,

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

आशा है, तुम स्वयं ठीक होगे।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५५३) से। सी० डब्ल्यू० ५०२८ से भी; सौजन्य : तहमीना खम्भाता

४४५. पत्र : निर्मला बा० मशरूवालाको

१९ अक्टूबर, १९३२

चि० निर्मला,

मणिलालके हाथ भेजा हुआ तेरा पत्र मिला। मुझे बीमारोंकी खबर देती रहना। सुरेन्द्रका पत्र (कार्ड) मुझे नहीं मिला। अब पता तो लगाऊँगा।

मैं ठीक हूँ। मणिलाल पूरे समाचार देगा ही अतः अधिक नहीं लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २८८६) से; सौजन्य : निर्मलाबहन सर्राफ

४४६. पत्र : मेहर बाबाके सचिवको

१९ अक्टूबर, १९३२

आपका ८ तारीखका पत्र और उसके साथ भेजी टिप्पणी मिली। टिप्पणीको मैंने पढ़ लिया है। मेरे खयालसे, वह प्रकाशित नहीं होनी चाहिए। उसमें बहुत-कुछ छोड़ दिया गया है और जो-कुछ दिया है, वह इस रूपमें रखा गया है कि आसानी से गलतफहमी पैदा कर सकता है। इसलिए मेरी राय यह है कि उसका कोई भी अंश प्रकाशित नहीं होना चाहिए। केवल इतना ही कहना आवश्यक है कि बाबाका और मेरा सम्बन्ध गुरु और शिष्यका नहीं, बल्कि दो साधारण मित्रोंका है और अधिकतर बातचीत आध्यात्मिक विषयोंसे सम्बद्ध थी। अतः यहाँके या पश्चिमके लोगोंको हमारी मुलाकात या बातचीतको कोई महत्त्व देनेकी आवश्यकता नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १५३

४४७. पत्र : शम्भुशंकरको

१९ अक्टूबर, १९३२

जहाँ लोकमत विरुद्ध हो, वहाँ हरिजनोंको दवाखानों या मन्दिरोंमें जबरदस्ती ले जानेका आग्रह नहीं रखना चाहिए। लेकिन जो उनकी सेवा करना चाहते हों, उन्हें उनके लिए उन्हींके मुहल्लोंमें या उनके नजदीक ही वैसी सहूलियत मुहैया कर देनी चाहिए और वहाँ हरिजनोंके सिवा दूसरे हिन्दुओंको आना हो, तो उन्हें आनेका न्योता देना चाहिए। इस बीच लोगोंको विनयपूर्वक समझाया जाये। लोगोंपर रोष करने या उनकी कटु आलोचना करनेसे काम बननेवाला नहीं है। पूरे प्रेमसे लोगोंका अज्ञान मिटाया जा सकेगा। उन्हें जिन सहूलियतोंका अभाव है वे सहूलियतें उनके लिए मुहैया करनेका भगीरथ प्रयत्न होना चाहिए। राज्य तो बहुत-कुछ कर सकता है। उन्हें जमीनकी मिल्कियत दे सकता है, उनके मुहल्लोंको बेहतर बना सकता है, उनके घरोंको अच्छा बना सकता है, उनके वेतन बढ़ा सकता है।

भंगीको जूठन न दी जाये। उनमें सफाई वगैरहका प्रचार किया जाना चाहिए। थोड़ेमें, जिन उपायोंसे उनकी हालत सुधारी जा सके, वे सब उपाय संघर्ष पैदा किये बिना किये जायें।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १५४-५

४४८. पत्र : वालवाके हरिजनोंको

१९ अक्टूबर, १९३२

आप भाइयोंका सुंदर अक्षरोंमें, सुंदर भाषामें लिखा हुआ खत मुझे मिला है। आप लोगोंका दु:ख मैं समझ सकता हूँ।[१] बाबासाहेब आबेंडकरसे मेरी बहुत बातें हुई हैं। यहाँसे मैं थोड़ी ही सेवा कर सकता हूँ। मेरी सलाह है कि आप लोग आपके दु:खकी कथा नया मंडल[२] जो स्थापित हुआ है उसे लिखें। मुझको तो अवश्य लिखा करें।

आप लोग हिंदू हैं, यह किसीपर उपकार करनेके लिए नहीं है। इसलिये मैं कैसे कहूँ आप दु:खके मारे धर्म छोड़ें? धर्मकी परीक्षा ही दु:खमें होती है। हाँ, मैं आप भाइयोंको इतना आश्वासन दे सकता हूँ कि मैंने इस दु:खके निवारणके कारण प्राणार्पण किया है। और यदि इतर हिंदू आपसे न्यायपूर्वक व्यवहार नहीं करेंगे तो प्रायश्चित्त रूपमें मैं मुलतवी रखा हुआ अनशनका आरम्भ कर दूँगा। ऐसा करनेकी शक्ति मुझे ईश्वर देवे।

हरिजनोंका सेवक,
मोहनदास गांधी

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १५४

४४९. पत्र : जात-पाँत तोड़क मण्डलके मन्त्रीको

१९ अक्टूबर, १९३२

यदि जातपाँत तोड़नेका अर्थ वर्णका उच्छेद है तो यह बात मुझे अयोग्य-सी प्रतीत होती है। यदि उसका अर्थ असंख्य जातियोंका तोड़ना है तो मैं उसमें सम्मत हूँ। तदपि जातपाँत तोड़ना और अस्पृश्यता-निवारण दोनों भिन्न प्रवृत्ति हैं। अस्पृश्यता-निवारणका अर्थ जिसको अस्पृश्य मानते हैं उनके साथ व्यवहार करना, जैसे इतर हिन्दुके साथ किया जाता है। दोनोंको साथ मिलानेसे दोनों कार्य बिगड़नेका डर है। फलतः रोटी-बेटी व्यवहार अस्पृश्यता-निवारणका अनिवार्य अंग नहीं है। किन्तु हरिजनोंके साथ रोटी-बेटी व्यवहार अधर्म्य भी नहीं है।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १५३

१. जैसे कि हरिजनोंकी झोंपड़ियाँ हर साल बह जाती थीं किन्तु स्पृश्योंके विरोधके कारण उन्हें ऊँची जगहपर झोंपड़ियाँ बनानेकी अनुमति नहीं मिल रही थी।

२. हरिजनोंकी सेवाके लिए; पहले इसका नाम ऑल-इंडिया ऐंटी-अनटचेबिलिटी लीग था और बादमें हरिजन-सेवक-संघ रखा गया।

४५०. पत्र : कृष्णचन्द्रको

१९ अक्टूबर, १९३२

भाई कृष्णचन्द्र,

एक लड़का बीमार पैदा हुआ है। उसने कुदरती उपचार करके बीमारी हटाई। दूसरा मूर्ख है, उसने परिश्रम करके ज्ञान पाया। दोनोंने पुरुषार्थसे प्रारब्धपर विजय पाया।

उपवास करनेसे शरीरमें स्थायी क्षीणता प्रायः नहिं आती है परन्तु बहोतेरे उपवाससे शरीर अन्तमें अच्छा होता है। प्रत्येक मनुष्य अपने शरीरका अनुभव करके उपवासकी मर्यादा अंकित कर सकता है।

घर हि में चर्खा-करघा दाखल करके यही उद्योग किया जाय तो सब काम ठीक हो सकता है।

हिंदी अनुवाद मैंने देखे नहिं हैं। लेकिन मैंने और अनुभव करके देखा है कि आलिव आइलका स्थान तिलीका तैल भी नहिं ले सकता है। कोई करते हैं अलसीका तैल। मुझे ज्ञान नहिं है।

त्रिफलाकी स्तुति मैंने सुनी है। मेरा विश्वास औषधीयोंपर बहोत कम है। नैसर्गिक उपायोंपर मेरा विश्वास है।

देवदासका इस समय लग्न करनेका कोई इरादा नहिं है। ब्रह्मदर्शनके लिये किसीने विवाह किया, मेरे ज्ञानके बाहर है। देवदास विषयेच्छासे रहित नहिं है। इसमें मुझे कोई आश्चर्य या दुःख नहिं है। विवाह विषयेच्छाको मर्यादित करनेका एक साधन है। उसमें पारमार्थिक इच्छा भी है। आगे तो भगवान हि मनुष्य-हृदयको जानता है।

मोहनदास गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (एस० जी० ३९) से।

४५१. तार: अबुल कलाम आजादको[1]

[२० अक्टूबर, १९३२][2]

मौलाना अबुलकलाम आजाद
कलकत्ता

तारके लिए धन्यवाद। यहाँ सबसे अलग-थलग रहते हुए इतना ही कह सकता हूँ कि मेरी यह हार्दिक कामना है कि मैं, आप और अन्य सहयोगी इतने वर्षोंसे भारतकी जिस एकताके लिए आकांक्षा और प्रार्थना करते रहे हैं उसके प्रतीकके रूपमें हम हिन्दुओं, मुसलमानों और सिखोंके बीच एकता स्थापित करनेमें सफल हों। पूरे तथ्यों और परिस्थितिकी जानकारीके अभावमें मैं केवल गुण-दोषोंके आधारपर इस सम्बन्धमें कुछ नहीं कह सकता। लेकिन जो भी समाधान सभी सम्बन्धित पक्षोंके लिए स्वीकार्य हो वह खुद मुझे तो स्वीकार ही होगा। इसलिए जो शान्ति कबकी स्थापित हो चुकनी चाहिए थी, उसे हमारे इस दिग्भ्रमित देशमें स्थापित करनेके आपके तथा अन्य मित्रोंके प्रयत्नोंकी सफलताकी कामना करता हूँ। सरदार वल्लभभाई भी इस तारके मजमूनपर हामी भरते हैं।

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० ९

१. इस तारको जेलके अधिकारियोंने रोक लिया था। यह मौलाना आजादके १९-१०-१९३२ के इस तारके उत्तरमें भेजा गया था: "मुसलमानोंके नेताओंके सम्मेलनमें सर्वसम्मत निर्णय कि अन्य माँगें स्वीकृत हो जानेपर पृथक् निर्वाचक-मण्डलपर आग्रह नहीं करेंगे। वर्तमान परिस्थितियोंमें कोई बेहतर समाधान सम्भव नहीं। आपकी अनुपस्थितिसे सफलताके मार्गमें बाधा। अपना सन्देश भेजकर हमें आशीर्वाद दें। कमसे-कम इतना विश्वास कि सरकार कोई आपत्ति नहीं करेगी।"

२. देखिए अगला शीर्षक।

४५२. पत्र : एम० जी० भण्डारीको

२० अक्टूबर, १९३२

प्रिय मेजर भण्डारी,

मौलाना अबुल कलाम आजादके तारके सम्बन्धमें मैं साथमें मूल और उसका उत्तर[1] भेज रहा हूँ। इस उत्तरसे कोई मतलब तभी सधेगा जब इसे जल्दी भेज दिया जाये। वैसा न हो सके तो भेजा ही न जाय।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी०, फाइल नं० ९

४५३. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

२० अक्टूबर, १९३२

परम प्रिय चार्ली,

तुम्हारा पत्र मिला। ईश्वरकी दया अद्भुत रही। उन दिनों मैं उसकी उपस्थितिकी सुखद धूपका सेवन कर रहा था। एक भी कदम ऐसा नहीं था जो मैंने अपनी इच्छासे उठाया हो। प्रार्थनाका इस तरह तुरन्त उत्तर मिलनेका अनुभव मुझे पहले कभी नहीं हुआ था।

हाँ, तुम्हारा वहाँ रहना अच्छा ही रहा। वहाँ रहनेका तुम्हारे लिए क्या मतलब है, मैं जानता था। फिर भी तुम्हारे तारके जवाबमें मुझे क्या कहना चाहिए, यह तय करनेमें मुझे एक क्षण भी नहीं लगा। वल्लभभाई और महादेवको भी उस निर्णयके सही होनेमें कोई शंका नहीं थी। उन भयानक दिनोंमें जो महत्त्वपूर्ण निर्णय लिये गये, उनका औचित्य वे किस प्रकार अपनी सहज बुद्धिसे ही समझ गये, यह सचमुच आश्चर्यजनक बात है।

लेकिन काम तो अभी शुरू ही हुआ है। मेरे लिए यह जिन्दगी और मौतका संघर्ष है। या तो इस उपवासको मेरी आखिरी साँसतक चलना है या फिर अस्पृश्यताको अब मिट जाना है। यह एक जबरदस्त काम है। उन सभाओंमें जो लाखों लोग एकत्रित हुए, मुझे उनके प्रेमकी परीक्षा करनी है, मुझे खुद ईश्वरसे जूझना है। पर वह दयालु और कठोर दोनों है। उसे पूर्ण समर्पणसे कम कुछ नहीं चाहिए। पिछला उपवास, जो-कुछ

१. देखिए पिछला शीर्षक।

अभी होना है, उसकी शायद केवल भूमिका थी। लेकिन ये बेकारकी तर्कनाएँ और ज्यादा नहीं करनी हैं। मेरी नहीं, जो उसकी मर्जी हो वह हो। मैं तो केवल यही कोशिश कर सकता हूँ कि यदि बलिदानका मौका आये तो उसके योग्य सिद्ध होऊँ।

और तुम्हें तो अभी वहीं रहना है। जिस अस्पृश्यताकी तुम बात करते हो, वह अधिक सूक्ष्म है और प्रतिष्ठाके आवरणमें ढँकी है। भारतकी अस्पृश्यता जैसी है वैसी ही दिखती है। इसलिए इससे लड़ना एक तरहसे उतना कठिन नहीं है।

अपनी खोई शक्ति मैंने लगभग फिर प्राप्त कर ली है। तुम्हें और हमारे नित्य बढ़ते परिवारके सभी सदस्योंको प्यार।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९७५) से। **महादेवभाईनी डायरी,** भाग-२, पृ० १५८-९ से भी

४५४. पत्र : अरुण दासगुप्तको[1]

२० अक्टूबर, १९३२

तुझे हताश नहीं होना चाहिए।[2] शरीर-यन्त्रके दोष भी ठीक होते या कमसे-कम काबूमें आते देखे गये हैं। ठीक ढंगसे श्वास लेना, ठीक आहार, ताजी हवा और उसके साथ अच्छे होनेका संकल्प करनेसे वांछित स्वास्थ्य-लाभ होता है। ईश्वरपर तेरी सजीव श्रद्धा होनी चाहिए और यह समझ लेना चाहिए कि ईश्वर तेरे शरीरको, जबतक उसको काम लेना है, कायम रखेगा।

और तू यह क्यों सोचता है कि हम केवल शरीरसे ही सेवा कर सकते हैं? मन सेवाका उससे कहीं अधिक शक्तिशाली साधन है। जो हृदयसे पूरी तरह पवित्र हैं, वे सबसे अच्छी सेवा करते हैं। वस्तुतः, हम पूरी तरह पवित्र होनेके लिए ही सेवा करते हैं। हृदयसे पवित्र व्यक्तिके विचार वह काम कर सकते हैं जो अपवित्र हृदयवालों के शरीर कदापि नहीं कर सकते। इसलिए किसी भी हालतमें तुझे जरा भी निराश होनेकी जरूरत नहीं है। विचार किस तरह काम करते हैं, इसे सिद्ध करनेकी कोशिशमें मत पड़ना। तेरे लिए यह विश्वास करना ही काफी है कि वे काम करते हैं और उनके जबरदस्त परिणाम निकलते हैं। इसलिए हृदयको पवित्र रखनेका सदा प्रयत्न करते हुए, तुझे पूर्णतया शान्त रहना चाहिए — शरीर चाहे अच्छा रहे या न रहे। यह तू करेगा ना?

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १५७-८

१. सतीशचन्द्र दासगुप्तका पुत्र।
२. वह उन दिनों बीमार था।

४५५. पत्र : डोरोथीको[1]

२० अक्टूबर, १९३२

प्रिय डोरोथी,

तुम्हारा स्नेह-भरा पत्र मेरे लिए बहुत मूल्यवान है। तुम्हारे प्रश्नके उत्तरमें म्यूरिअलका तुमसे यह कहना कि "प्रार्थना करो", सही था। हृदयसे निकली सच्ची प्रार्थनाके पीछे ही सच्चा कर्त्तव्य छिपा होता है। क्योंकि अन्तमें कर्त्तव्य खुद प्रार्थना बन जाता है। तुम्हारा यह सरल कथन कि "मैं अब स्वच्छ हूँ", मुझे अच्छा लगा। ईश्वर तुम्हें स्वच्छ रखेगा। अतीतको मत देखो। उससे तुमने शिक्षा ले ली है। आशा और विश्वासके साथ भविष्यकी ओर देखो।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १६१-२

४५६. पत्र : जे० एस० हॉयलैंडको

२० अक्टूबर, १९३२

प्रिय हॉयलैंड,

आपका पत्र उपवास करनेपर मिली निधियोंमें से है। मेरे लिए यह बहुत ही आनन्दकी बात है कि यदि कुछ लोगोंने उपवासको गलत समझा है तो आप-जैसे मित्रोंको उसे समझनेमें कोई कठिनाई नहीं हुई। कार्यको यदि हम उसके परिणामोंसे आँक सकते हैं, तो उसने यह सिद्ध कर दिया कि वह ईश्वर-प्रेरित था।

आप सबको हम सबका प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४५०७) से; सौजन्य: वुडब्रुक कॉलेज, बर्मिंघम तथा श्रीमती जेसी हॉयलैंड

१. इस अंग्रेज लड़कीने गांधीजी को लिखा था: "...२१ मास पूर्व भारतमें मेरी दिलचस्पी पैदा हुई। उससे पहले मैं एक घातक दुर्व्यसनमें फँसी हुई थी, जिससे मेरी काया और शायद बुद्धि भी लगभग चौपट हो गई।...तब मैंने ब्रह्मचर्यके बारेमें पढ़ा और तभीसे मैं आपकी शिक्षापर चलनेका विनम्रतापूर्वक प्रयास कर रही हूँ।..."

४५७. पत्र : शंकरको

२० अक्टूबर, १९३२

हरिजन नामपर आपत्तिके[1] बारेमें जानकर अफसोस हुआ। जो आपके मित्रोंको पसन्द हो, ऐसे किसी भी नामका इस्तेमाल आप कर सकते हैं। परन्तु कृपया उन्हें यह समझा दें कि मेरे मनमें विष्णु या शिवका जरा भी विचार नहीं था। मेरे लिए तो इस नामका अर्थ है 'ईश्वरके जन'। विष्णु, शिव या ब्रह्मामें मैं कोई भेद नहीं मानता। ये सब ईश्वरके नाम हैं। पर वे जो निर्णय लेना चाहें, लेने दीजिए और फिर उन्हींका तय किया हुआ नाम चलने दीजिए।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १६३

४५८. एक पत्र

२० अक्टूबर, १९३२

अस्पृश्यता-निवारणमें रोटी-बेटी-व्यवहार शामिल नहीं है। परन्तु मेरे विचारमें हिन्दू धर्म केवल जन्मके आधारपर किसीके साथ भोजन या विवाहके सम्बन्धका निषेध नहीं करता है। मूल धर्मका इस तरहके सामाजिक सम्बन्धोंके नियमनसे कोई वास्ता नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १६३

४५९. पत्र : आश्रमके बालक-बालिकाओंको

२० अक्टूबर, १९३२

बालको और बालिकाओ,

तुम्हारा पत्र मिला। इतने अधिक बच्चे बीमार पड़े,यह कितनी शर्मकी बात है और इसके लिए शर्म किसे आनी चाहिए? आशा है, मोहन अब स्वस्थ हो गया होगा तथा अन्य लोग भी भयमुक्त हो गये होंगे।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से।

१. शंकरने कहा था कि मद्रासमें लोग अस्पृश्योंके हरिजन नामपर आपत्ति करते हैं, क्योंकि वे शैव हैं, वैष्णव नहीं। इसलिए उनका नाम 'हरजन' या 'आदि-हिन्दू' होना चाहिए।

४६०. पत्र : वालजी गो० देसाईको

२० अक्टूबर, १९३२

भाई वालजी,

आश्रमकी डाकके साथ भेजा गया तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारा वजन बहुत कम हो गया है। अब ठीक-ठीक खुराक लेकर और मनको विश्राम देकर अपना वजन पूरा कर लेना। तुम्हारी पुस्तकके सम्बन्धमें मैंने कल एक रजिस्टर्ड पत्र[1] भेजा है, वह तो तुम्हें मिल ही गया होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४४२) से; सौजन्य : वालजी गोविन्दजी देसाई

४६१. पत्र : गुलाबको

२० अक्टूबर, १९३२

चि० गुलाब,

तेरा पत्र मिला। पृथ्वी कैसे बनी, यह तो तुझे प्रेमाबहनसे पूछना चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७२७) से।

४६२. पत्र : सुलोचनाको

२० अक्टूबर, १९३२

चि० सुलोचना,

तेरी लिखावट सुधरती जा रही है। उसे खूब सुधारना और सभी कामोंमें सुघड़ बनना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७४१) से।

१. देखिए "पत्र : वालजी गो० देसाईको", १९-१०-१९३२।

४६३. पत्र : नारायण कुलकर्णीको

२० अक्टूबर, १९३२

भाई नारायण कुलकर्णी,

आपका पत्र मुझे मिला है। मुझे दु:ख है मैं मराठीमें नहि लिख सकता। मेरी हिंदी समजनेमें कष्ट नहि होगा ऐसी आशा है।

उष्णोदकमें मध[1] न पीना चाहिये ऐसा वैद्य-मित्रोंने तीन-चार वर्ष पूर्व मुझे लिखा था। पश्चिम उपाधिवाले दाक्तर मित्रोंने इस बारेमें कुछ विरोध नहि किया है। उनकी सम्मतिका मुझपर प्रभाव नहि पड़ सकता है क्योंकि खाद्य पदार्थोंकी असर का उन्होंने सूक्ष्म अभ्यास नहि किया है। उनके यहां पथ्यापथ्यको [बहुत][2] भेद नहि है। परंतु मैं निजी अनुभवकी बात लिखता [हूँ]। मुझको उष्णोदकमें मध लेनेसे [कुछ] हानि नहि हुई है किंतु लाभ हुआ है। एक दाक्तरके कहनेसे मैंने मधका आरंभ किया। उनके कहनेका कारण यह था। मेरे शरीरमें करबोहाइड्रेट कम है इसलिए शर्कराकी आवश्यकता थी। सबसे अच्छी शर्करा उनकी दृष्टिसे मधकी थी। तबसे मैं मध लेता आया हुं। उष्णोदकमें लेनेका उन्होंने प्रतिबंध नहि किया।

हमारे वैद्योंके सामने मेरी फरीयाद यह है कि वे प्राचीन पुस्तकोंको संपूर्ण समजकर उसमें जो लिखा है वह अनुभवसे विरुद्ध हो तो भी मानते रहते हैं। मेरा अभिप्राय है कि वैद्यकीय शास्त्र बहोत अपूर्ण है। उसमें अनुभवसे सुधारणा करनी चाहिए। [उष्णोदकमें मध डालनेसे क्या विकृति होती है? मधका आपने पृथक्करण किया है?] स्थूलता-कृशता [सापेक्ष गुणदर्शक] शब्द हैं। किस प्रकारके कृशताके लिये उष्ण मध अपेय है? और क्यों अपेय है? अंतमें आप जो कहते हैं वह अनुभवसे सिद्ध किया है? इस तरह वैद्य लोक नहि करते हैं परंतु प्राचीन ग्रंथोंमें से श्लोक बताकर संतुष्ट रहते हैं। आपसे मेरा विनय है आप इस अनुचित स्थितिमें से निकल जाय और जो-कुछ प्राचीन ग्रंथोंमें लिखा है उसकी अनुभवसे परीक्षा करें।

मोहनदास गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ८०३) से।

१. शहद।

२. मूल पत्र अनेक स्थानोंपर फटा हुआ है।

४६४. सन्देश : 'डेली हेराल्ड'को

[२१ अक्टूबर, १९३२ या उसके पूर्व][1]

स्वास्थ्य बहुत ही अच्छा चल रहा है। रक्त-चाप सामान्य है। मेरा वजन पौन पौंड बढ़ा है, और इस तरह अब ९९¾ पौंड हो गया है। पक्षाघातका मुझपर कोई आक्रमण नहीं हुआ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २१-१०-१९३२

४६५. पत्र : एफ० मेरी बारको

२१ अक्टूबर, १९३२

प्रिय मेरी,

तुम्हारा पत्र मिला। देवदास अपनी शक्तिसे अधिक काम करता रहा है। इसी-लिए उसे थोड़ा बुखार हो गया था। मालूम हुआ है, अब वह ठीक है।

यह सच है कि मूर्तिपूजाका आम तौरपर जो अर्थ लगाया जाता है, उस अर्थमें उसमें मेरा विश्वास नहीं है। पर दूसरे लोग जो मूर्तिके माध्यमसे ईश्वरकी पूजा करते हैं, उसमें मैं अविश्वास नहीं करता। एक तरहसे हम सब मूर्तिपूजक हैं। हम सब अपनी-अपनी कल्पनाके ईश्वरकी पूजा करते हैं। उसका रूप मूर्त ही हो, यह आवश्यक नहीं है। हरएककी ईश्वरकी अपनी अलग कल्पना होती है, प्रत्येक व्यक्ति उसमें अपनी समझके मुताबिक अलग-अलग गुण देखता है। परन्तु ईश्वर वस्तुतः गुणातीत है, कल्पनासे परे है। अतः जब हम अपनी कल्पनामें ईश्वरका कोई चित्र बनाते हैं तो हम मूर्तिपूजक हो जाते हैं। इसलिए जो लोग पत्थर या धातुकी प्रतिमामें ईश्वरके वासकी कल्पना करते हैं, मेरा मन उनकी निन्दा नहीं करता। वे गलत नहीं हैं, क्योंकि ईश्वर तो हर कहीं और हर चीजमें है। जब हम ईश्वरको सर्वत्र व्याप्त मानकर उसकी पूजा करना चाहते हैं तो सभी वस्तुओंमें पवित्रताका आधान करते हैं। परन्तु यदि कोई आदमी अपने भाइयोंको सामूहिक पूजामें भाग लेनेसे रोकता है, तो हमें यह कहनेका अधिकार है कि ईश्वर उस पूजामें से हट जाता है। और जब पश्चात्ताप किया जाता है और अपने भाइयोंपर से रोक हटा ली जाती है तो उसमें उसकी प्रतिष्ठा हो जाती है। मैं समझता हूँ कि यह स्पष्टीकरण यदि सराहा न जा सके तो भी समझमें तो आ ही सकता है। मेरी रायमें इसमें एक

१. समाचार-पत्रमें रिपोर्टपर २१ अक्टूबरकी तारीख है।

गहरा सत्य आ जाता है। इसका सत्य यदि भासित नहीं होता तो इसमें दोष, जो-कुछ मैं कहना चाहता हूँ, उसे स्पष्ट व्यक्त करनेकी मेरी अक्षमताका है। अपनी बात यदि मैं स्पष्ट न कर पाया हूँ तो तुम मुझसे फिर पूछना।

महादेवका और मेरा प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९८५) से। सी० डब्ल्यू० ३३१४ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

४६६. पत्र : दुनीचन्दको[1]

२१ अक्टूबर, १९३२

बेशक, और सबकी तरह मैं भी अनुशासनके अधीन हूँ। परन्तु ईश्वर जब अपना अनुशासन लाद दे तो मनुष्यके अनुशासनकी क्या चलेगी?

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १६५

४६७. पत्र : जमशेद मेहताको[2]

२१ अक्टूबर, १९३२

भाई जमशेद,

इस पत्रका क्या मतलब है? लेखकको मैंने जवाब नहीं दिया है। इसके बारेमें क्या मैं आपसे पूछ सकता हूँ? यदि आप मुझे लिखें तो मैं लेखकको जवाब भेज दूँगा।

आशा है, कीकीबहन अच्छी हो रही होंगी।

हृदयसे आपका,

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग ३, पृ० ३०९

१. दुनीचन्दने कहा था कि गांधीजी को भविष्यमें कोई कदम उठानेसे पहले देशको अपना इरादा बता देना चाहिए और अपने-आपको देशके अनुशासनके अधीन रखना चाहिए।

२. साधन-सूत्रमें ऐसा कोई संकेत नहीं है कि यह पत्र जमशेद मेहताको, जो कराचीके भूतपूर्व मेयर थे, लिखा गया था। परन्तु जे० बी० कृपलानीकी बहन कीकीबहनके उल्लेखसे लगता है कि यह पत्र जमशेद मेहताको ही लिखा गया था।

४६८. एक पत्र[1]

२१ अक्टूबर, १९३२

आप-जैसी महिलाओंने अपनी सहज प्रेरणासे ही देख लिया कि उपवास सही है और वे परिणामके बारेमें आशंकित नहीं हुईं। अपनी आस्थाका प्रभाव अपने पति पर भी डालिए।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १६५

४६९. पत्र : केशव गांधीको

२१ अक्टूबर, १९३२

चि० केशू,

तुझे हाथ साधकर और बड़े-बड़े अक्षर लिखने चाहिए। इससे लिखावट सुधर जायेगी। अभी तो उन्हें पढ़नेमें दिक्कत होती है। आशा है, तू अब स्वस्थ हो गया होगा। तुझे पाखाना तो साफ होता है न?

बर्रे मर गई यह तो निश्चय ही बुरा हुआ। इस प्रकार जान-बूझकर किये गये दोषकी ईश्वर क्या सजा देता होगा यह तो पता नहीं किन्तु हम दुबारा ऐसा न करें यही काफी होगा। यदि हम किसीकी प्रेमपूर्वक, बदलेकी आशा किये बिना, सेवा करते हैं तो वह सच्ची सेवा मानी जायेगी। आश्रमका हर काम सेवा है क्योंकि आश्रमकी स्थापना उसीके लिए हुई है। हम अपनी आँखें इधर-उधर चलानेके बजाय यदि नीचे धरतीमाता को प्रणाम करते हुए चलें और जब बैठे हों और जो कामकर रहे हों, उसीमें अपने मनको लगाये रखें; इससे दृष्टि शुद्ध हो जाती है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२८२) से।

१. साधन-सूत्रसे यह पता नहीं चलता कि यह पत्र किसको लिखा गया था, लेकिन पत्र-लेखिकाने गांधीजी को सूचित किया था कि उसके पति गांधीजी के उपवाससे खुश नहीं, जबकि स्वयं उस महिलाको भरोसा था कि उपवासका परिणाम निश्चय ही शुभ होगा।

४७०. पत्र : मणिलाल गांधीको

२१ अक्टूबर, १९३२

चि० मणिलाल,

तेरा पत्र मिला। तुम भाइयोंमें से जो आना चाहे वह आ सकता है। आशा है, अब देवदास बिलकुल स्वस्थ हो गया होगा। उससे और प्यारेलालसे पत्र लिखनेको कहना। सुशीलाको उतावलीमें अस्पतालसे तुरन्त न हटाकर तूने बुद्धिमानी की है। उसे बिलकुल स्वस्थ हो जाने देना चाहिए। क्योंकि तुझे लिख रहा हूँ अतः बा को अलगसे पत्र नहीं लिखता। उससे कहना कि जिस प्रकार वह वल्लभभाई और महादेवको याद करती है उसी प्रकार वे भी याद करते हैं। तू मुझे नियमित रूपसे लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४७९८) से।

४७१. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

२१ अक्टूबर, १९३२

चि० परसराम,

बहुत दिनों बाद तुम्हारा पत्र मिला। पिताजी लखनऊमें किसके साथ रहते हैं?

तुम्हारी अनुपस्थितिमें विमल किसके साथ रहा था?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५०९) से। सी० डब्ल्यू० ४९८६ से भी; सौजन्य : परशुराम मेहरोत्रा

४७२. पत्र : ख्वाजाको[1]

२२ अक्टूबर, १९३२

आतंकवाद मेरे अन्तरको जरूर हिलाता है और ईश्वरने जैसे अस्पृश्यताके मामले में रास्ता दिखाया था, यदि वैसे ही इस विषयमें भी दिखाया तो मैं बिना झिझक उसपर चलूँगा।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १६९

४७३. पत्र : उर्मिलादेवीको

२२ अक्टूबर, १९३२

'गीता' के सतत अध्ययनसे आपको सभी तरहकी चिन्ताका त्याग सीखना चाहिए। हम सबकी फिक्र करनेवाला जब ईश्वर है, तो हमें यह बोझ ढोनेकी क्या जरूरत है? हमारा कर्त्तव्य तो बस अपने हिस्सेका काम करना है।

इसलिए मेरा अनुरोध यह है कि आप निवृत्तिकी बात न सोचें। सच्ची निवृत्ति कोई शारीरिक स्थिति नहीं है, वह तो भीतरसे आती है। सतत प्रवृत्तिके बीच ही हमें निवृत्ति ढूँढ़नी चाहिए। और जो लोग कन्दराओंमें रह रहे हैं, उनके मन भी क्या प्रायः अनवरत प्रवृत्तिमय ही नहीं रहते हैं?

हमें अपनी कठिनाइयोंपर चिन्तित नहीं होना चाहिए। सेवाकार्य करनेवालों के भाग्यमें यदि सदा नहीं तो प्रायः कठिनाइयाँ होती ही हैं।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १६८

१. श्री ख्वाजाने गांधीजी से पूछा था कि जिस तरह उन्होंने अस्पृश्यताके विरुद्ध सत्याग्रह किया उसी तरह वे आतंकवादियोंके विरुद्ध क्यों नहीं करते।

४७४. पत्र : शारदा चि० शाहको

२२ अक्टूबर, १९३२

चि० शारदा,

बुखारके बावजूद कटिस्नान अवश्य लिया जा सकता है। खों-खों करते हुए ७५ वर्षके एक बूढ़ेको मैंने कटिस्नान दिया और उसका दमा चला गया। कटिस्नान लेते हुए ऊपरके अंग ढँकने पड़ते हैं, इसी प्रकार यदि पैरोंमें सर्दी लगे तो उन्हें भी ढँकना चाहिए। केवल पेड़ूसे रानोंतक का भाग पानीमें होना चाहिए और उस समय पेड़ूको छोटे तौलियेसे धीरे-धीरे रगड़ना चाहिए। वह स्नान रोगीको अच्छा लगता है। टबमें बैठते समय उसे कँपकँपी महसूस होती है लेकिन बैठते ही तुरन्त अच्छा लगने लगता है। सादा भोजन लेना चाहिए और रोज दस्त अवश्य आना चाहिए। यदि तू पहले तेल मलती हो तो तेल मलना चाहिए, लेकिन तुझे थकान बिलकुल नहीं होनी चाहिए। फिर देख, तेरा शरीर कितना सुन्दर हो जाता है। जिसे मूर्तिकी आवश्यकता हो वह मूर्तिपूजन करे, इसमें मुझे कोई आपत्ति नहीं है। मुझे इसकी आवश्यकता नहीं जान पड़ती। इसके बिना करोड़ों लोगोंका काम चल जाता है। फिर एक तरहसे तो हम सभी मूर्तिपूजक ही हैं। जो ईश्वरको गुणवान मानकर पूजते हैं वे मूर्तिपूजक हैं। यह मैंने बहुत संक्षेपमें लिखा है। यदि यह बात समझमें न आई हो तो फिर पूछना। फिर मैं विस्तारसे समझाऊँगा। लेकिन इससे पूर्व नारणदाससे समझनेकी कोशिश करना। चिमनलालसे भी पूछना।

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९५८) से; सौजन्य : शारदाबहन जी० चोखावाला

४७५. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

२२ अक्टूबर, १९३२

चि० हेमप्रभा,

तुमारा खत और रिपोर्ट मिला। रिपोर्ट अच्छा है। पूजाके दिनोंमें खादीकी बिक्री न हुई वह दुःखकी बात है। इस बारेमें घनश्यामदासजी से बात करो। देखो वे कुछ कर सकते हैं। अरुणको मेरा खत[1] मिला होगा। तुम इतना घूम रही हो तो शरीर बिगड़ना नहिं चाहिये। सतीशबाबु कैसे है। खितिबाबु कैसे हैं?

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १६९१) से।

१. देखिए "पत्र : अरुण दासगुप्तको", २०-१०-१९३२।

४७६. पत्र : अमतुस्सलामको

२२ अक्टूबर, १९३२

प्यारी बेटी अमतुस्सलाम,

तुम्हारा खत मिला। हिप-बाथ छोड़ सकती है। सिट्ज-बाथ नहीं छोड़ना। दोपहरको दो-तीन बजे ले सकती है। बहुत ठंडी लगे तो पानी धूपमें रखा जाये और बाथ दो-तीन मिनटतक ही लिया जाये। तलाशे-हक[1] फिर पढ़ती है सो अच्छा है। हदसे ज्यादा काम न किया जाये। शुद्धि आहिस्ता-आहिस्ता आती जायेगी। तुम्हारे धीरज रखना। कुदसिया शान्त हो गई है सो अच्छा हुआ। मैंने जो-कुछ लिखा है अच्छी तरह समझ सकती है? अगर समझनेमें मुश्किल मालूम हो तो मुझे लिखो। मेरी गलतियां दुरुस्त करके भेजो।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २६०) से।

४७७. पत्र : डेविडको

२३ अक्टूबर, १९३२

आपके विस्तृत पत्रके[2] लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। आपने मुझे लगभग अपनी बातका कायल कर दिया है। जंगली शहद लेना (मेरे लिए) पाप है, यह मैं जानता था। परन्तु मूर्खता और आलस्यवश उसे लेता रहा। जंगली शहद जिस ढंगसे निकाला जाता है, उसका आपके द्वारा किया गया सजीव वर्णन पढ़कर मैं जंगली शहद छोड़ने को लगभग तैयार हो गया हूँ। इसलिए जो चीज आप मुझसे यरवडासे बाहर आने पर, यदि मैं कभी बाहर आया तो, करवाना चाहते हैं, वह मैं लगभग तुरन्त ही करनेवाला हूँ। पर निश्चय ही भारतमें ऐसे स्थान जरूर होंगे, जहाँ शहद निर्दोष ढंगसे निकाला जाता होगा। बाजारमें हम जो हिमालयका शहद देखते हैं, उसके बारेमें सचाई क्या है?

आपने शहदकी विभिन्न किस्में भेजकर बहुत ही कृपा की।[3] पार्सल अभी मिला नहीं है। मैं जानता हूँ कि हम सब उसे अपराधकी भावनाके बिना स्वाद ले-लेकर

१. गांधीजी की आत्मकथा का उर्दू अनुवाद।

२. श्री डेविडने अपने लम्बे पत्रमें बताया था कि जंगली शहद किस तरह निकाला जाता है, वह कितना अशुद्ध होता है और उसके लिए मधुमक्खियों को किस तरह नष्ट किया जाता है।

३. श्री डेविडने गांधीजी को फिलस्तीन, अमरीका, न्यूजीलैंड और फ्रांसका शहद भेजा था।

खायेंगे। आप इन शहदोंका स्टाक रखते हैं या आपने ये नमूने खास तौरपर खरीद कर भेजे हैं?

हम सबका नमस्कार।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च :]

आपके पत्रसे क्या मैं यह समझूं कि जंगली शहदके छत्तोंसे, छत्ते और मधुमक्खियोंको क्षति पहुँचाये बिना, वैज्ञानिक तरीकोंसे शहद निकालना सम्भव है? यदि नहीं है तो क्या मनुष्य छत्ते और मधुमक्खियोंको नष्ट करनेके लिए तैयार हुए बिना जंगली शहद प्राप्त ही नहीं कर सकता?

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १७२-३

४७८. पत्र : भाऊ पानसेको

२३ अक्टूबर, १९३२

चि० भाऊ,

तुम्हें तनिक भी निराश नहीं होना चाहिए। कब्ज-जैसी शिकायतको दूर करनेकी शक्ति हममें होनी ही चाहिए। दृढ़ प्रयत्न किया जाये तो वह दूर होगा ही। इस बारेमें उपेक्षा नहीं करनी चाहिए, किन्तु चिन्ता भी नहीं करनी चाहिए, डॉ० तलवलकरसे तुम्हारी जो बहस हुई वह खेदजनक है। मैं उन्हें लिख रहा हूँ। उस पत्रको[1] अच्छी तरह समझना। नारणदास यदि उचित समझेगा तो वह तुम्हें दिखायेगा।

भाजीका प्रयोग ठीक है। पिछली बार नारणदासके पत्रमें मैंने जो सुझाव दिये थे उन्हें आजमाना। तीन या अधिक दिन उपवास करना। इस बीच थोड़ा घूमना-फिरना और जो कर सको ऐसा सामान्य काम-काज करना। जितना पी सको उतना पानी पीना। यदि उसमें नीबूकी कुछ बूंदें डालनेकी जरूरत महसूस हो तो डाल लेना। दिन-भरमें पानीके साथ यदि दो-तीन नीबुओंका रस पी डालो तो भी कोई हर्ज नहीं है। और कुछ नहीं लेना चाहिए। रोज सुबह एनीमा लेना चाहिए। दो पाइंट (२॥ पौंड) पानी धीरे-धीरे पेटमें चढ़ाना चाहिए। उसमें ४० ग्रेन सोडा और २० ग्रेन नमक मिला लेना चाहिए। पानी सुहाता हुआ कुनकुना होना चाहिए। सम्भव हो तो पानीको बीस मिनट पेटमें रहने देना चाहिए। एनीमा लेटे-लेटे लेना चाहिए। यदि इतनेपर भी पाखाना न हो तो साँझको फिर एनीमा लेना चाहिए। फिर भी पाखाना न हो तो कोई चिन्ता नहीं। अगले दिन भी इसी प्रकार एनीमा लेना चाहिए। दोपहरको कटिस्नान (कूने बाथ) लेना चाहिए। बहुत कमजोरी महसूस न हो और जीभ मैली हो तो उपवास चालू रखना चाहिए। यदि कमजोरी महसूस हो तो फलके

१. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

रससे उपवास तोड़ना चाहिए। फलके रसमें नारंगीका रस, खट्टे नीबूका रस और शहद लिया जा सकता है। रातको भिगोये हुए काले मुनक्कोंको अच्छी तरह मथकर उनका रस लिया जा सकता है। उसे गरम कर लेना ज्यादा अच्छा होगा। पहले दिन जितना रस पीया जाये उतना पीना चाहिए। यदि अंगूर खानेकी इच्छा हो तो खाने चाहिए। और दूसरी भाजी, लौकी या ऐसी ही कोई हरी सब्जी ली जा सकती है। इस प्रकार दो दिन करना चाहिए। इससे अपने-आप पाखाना होना सम्भव है। यदि न आये तो एनीमा अवश्य लेना चाहिए। इसके बाद दूध लेना शुरू करना चाहिए। दूध हरी सब्जियोंके साथ लिया जा सकता है। मुझे दूध लेना होता है तो मैं उसे लौकी, कुम्हड़ेमें मिला लेता हूँ और खा जाता हूँ। जब नियमसे पाखाना होने लग जाये तब डबल रोटी या रोटी लेनी चाहिए। उपवाससे पाखाना होनेकी पूरी सम्भावना है। इससे नुकसान कभी नहीं होगा। यदि इससे भी कब्ज नहीं गया तो कुछ और सोचूँगा। तुमने डॉ० तलवलकरकी दवा न लेनेका निर्णय करके ठीक किया है। आश्रम — वर्धा या साबरमती (दोनों वास्तवमें एक ही हैं) छोड़नेकी बात तो तुम्हें सोचनी भी नहीं चाहिए। जिसमें सेवाकी भावना है, जिसके विचार निर्मल हैं और जो यथाशक्ति काम करता है, उसे यह मानना ही नहीं चाहिए कि वह किसीके लिए भारस्वरूप है। मुझे नियमित रूपसे लिखते रहना। तुम्हारे पत्रोंसे मुझे परेशानी नहीं होगी। मैं जो भी उपचार बताता जाऊँ उसे विश्वासपूर्वक करते जाना

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७३९) से। सी० डब्ल्यू० ४४८२ से भी; सौजन्य : भाऊ पानसे

४७९. पत्र : नारणदास गांधीको

अपराह्न ३ बजे, २३ अक्टूबर, १९३२

चि० नारणदास,

पुंजाभाईके गुजर जानेका समाचार देनेवाला घेलाभाईका तार मुझे कल नौ बजे रातमें मिला। ये घेलाभाई कौन हैं? उनके सम्बन्धमें विस्तृत जानकारीकी आशा रखूँगा। आश्रमके लोग तो दाह-संस्कारमें गये ही होंगे। पुंजाभाईके स्मरणकी टिप्पणी[1] मैं अलगसे लिखूँगा।

चम्पाको लिखा पत्र पढ़ना। उसकी क्या समस्या है? भाई कोटवाल[2] आयें और उसके साथ रहें तो यह अच्छा ही है। उनके लिए पत्र साथ ही भेज रहा हूँ। चम्पाने पत्रमें रंगून जानेकी इच्छा व्यक्त की है। इसपर सोचना।

१. देखिए अगला शीर्षक।

२. उन्होंने दक्षिण आफ्रिकामें दो सालतक गांधीजी के साथ जनसेवा का कार्य किया था।

लगता है, जमनाका आश्रमके साथ कुछ लेना-देना भाग्यको मंजूर नहीं है। जान पड़ता है, राजकोटमें वह अच्छी रहती है। तो फिर वह वहीं क्यों न रहे? जो बाहर रहकर भी आश्रमका जीवन बिताता है, समझना चाहिए कि वह आश्रममें ही रहता है। जो आश्रममें रहकर भी बेमनसे और ऊपरसे आश्रमके नियमोंका पालन करता है, लेकिन जिसका मन आश्रमके बाहर बसता है, समझना चाहिए कि वह आश्रममें नहीं रहता। जमना आश्रममें बीमार ही रहे, इससे तो ज्यादा अच्छा यह है कि वह बाहर रहकर स्वस्थ रहे और जितनी बने, उतनी सेवा करे। आज उसे अलगसे पत्र नहीं लिख रहा हूँ। लेकिन इस विषयपर तुम दोनों विचार करके, जो ठीक लगे, करना।

मोहनके बारेमें तुम्हारे दोनों पोस्टकार्ड ठीक समयपर मिल गये। आनन्दीका जल्दी मिलना चाहिए था; मगर वह तुम्हारे दूसरे कार्डके साथ मिला। यहाँ ऐसा होता है, इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं। मोहन [बीमारीसे] जल्दी निकल गया, यह ठीक हुआ। दुबारा न जा फँसे तो ईश्वरकी कृपा। कुसुम, नवीन, धीरू और मंजु चारों रुग्ण हैं। यह बड़ी भयानक बात है। अपना विचार मैं बता ही चुका हूँ। जो ठीक लगे, करना।

भाऊको लिखा पत्र[1] पढ़ जाना। उस पत्रसे तलवलकरको भी लिखनेकी जरूरत उत्पन्न हुई। उसको जो पत्र लिखा है, उसे भी देख जाना और अगर तुम्हें ठीक लगे और उचित जान पड़े तो उसे दे देना। जानकारी ठीक दी गई है या नहीं, सो भाऊ देख ले। तुम्हें पत्र ठीक न लगे तो फाड़ डालना।

जोशी कहाँ पकड़ा गया? अब कहाँ है? उससे कोई मिल सकता है या नहीं?

आनन्दी भले सुई लगवाये। देखता हूँ, जैन मुनिका पत्र तुम्हारी सूचीमें है। उनके पत्रका उत्तर तो मैंने सीधा भेज दिया है। तुम्हारे पास पता हो तो एक कार्ड लिख भेजो कि मैंने उन्हें सीधे पत्र लिखा है। मुनिका वेष न छोड़नेकी सलाह दी है।

रमणीकलालका पत्र मैंने नहीं देखा है। वहीं रह गया होगा। वह फिर लिखे।

मीराबहनके पत्र मुझे हर हफ्ते मिलते हैं। इस तरह पत्र लिखते रहनेके लिए ही उसने मुलाकातकी अनुमति लेना छोड़ रखा है। अब तो वह मजेमें है। मगर उसके पत्रसे लगता है कि मेरे उपवासके दौरान वह बेसुध अवस्थामें रहती होगी। कामकाज तो करती थी, लेकिन मन किसी बातमें नहीं लगा पाती थी।

तुम्हारी सूचीमें छगनलाल जोशीके पत्रका भी उल्लेख देखता हूँ, मगर मुझे तो वह भी नहीं मिला।

तुम्हारी प्राइमस स्टोवकी फेहरिस्त देखी। वह तो चौंकानेवाली है। हमारा यह वैभव कुछ कम नहीं माना जायेगा। अब तो यदि बहनें यह स्वीकार कर लें कि पुरुष ही इस चूल्हेको जलायेंगे तो मैं इसे ही काफी मानूँगा। अन्यथा इस राक्षस

१. देखिए पिछला शीर्षक।

देवताको एक बलिदान देनेकी तैयारी कर रखें। ऐसी दुर्घटनाओंसे मुक्त रहनेकी आश्रमके पास इजारेदारी नहीं है। इस स्वतन्त्रताके युगमें तो मुझे इतनी ही चेतावनी देकर सन्तोष करना पड़ेगा।

लीलावतीको लिखा पत्र पढ़ना।

वर्धासे तो यहाँ कोई पोस्टकार्ड आया नहीं लगता।

प्रभुदासको लिखा मेरा पत्र पढ़ना। तुम्हें अवश्य ही सख्त होना चाहिए। उसे अपने बजटके अन्दर-अन्दर ही गुजारा करना चाहिए। अगर ऊपरसे खर्च करना जरूरी ही हो तो पहले तुम्हारी मंजूरी अवश्य लेनी चाहिए। अगर उसके बजटमें मालीका समावेश न हो तो मुझे लगता है, वैसा कर देना चाहिए।

मणिलाल और देवदासको मुझसे मिलनेकी जो अनुमति थी, वह वापस नहीं ली गई है। जब चाहें, आ सकते हैं।

कहा जा सकता है कि मेरी खुराक ज्योंकी-त्यों है। दो दिन रोटी ली और फिर बन्द कर दी। वजन पौन पौंड बढ़ा है। इस तरह अब ९९¾ हुआ। कुसुमको देखते रहना।

उपवासके दौरान प्रतिदिन ठीक प्रमाणमें 'गीता'-पाठ करते रहना।

साथमें ४५ पत्र हैं।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२६१ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

४८०. चिरंजीव पुंजाभाई !

[२३ अक्टूबर, १९३२][1]

जब मैंने पुंजाभाईके लिए चिरंजीव विशेषणका प्रयोग किया तो किसी बालकने आश्चर्यपूर्वक मुझसे सवाल किया था कि पुंजाभाई तो आयुमें आपसे बड़े हैं, फिर आप उन्हें चिरंजीव कैसे कह सकते हैं। मैंने उसे कुछ इस प्रकारका उत्तर दिया था: "पुंजाभाई उम्रमें तो बड़े हैं, किन्तु वे एक निर्दोष बालककी तरह मुझपर विश्वास करते हैं। और उस भावसे मेरे प्रति श्रद्धा-भक्ति रखते हैं।" मेरा ऐसा लिखना अक्षरशः सत्य था। मैं इस श्रद्धा-भक्तिके उपयुक्त हूँ या नहीं, इस बारेमें मुझे सन्देह है। किन्तु पुंजाभाईके विश्वास और उनकी श्रद्धा-भक्तिके बारेमें मुझे लेश-मात्र शंका नहीं है। चाहे कैसी भी मुसीबत क्यों न आ जाये किन्तु पुंजाभाईके लिए मेरी राय वेद-वाक्यके समान थी। पुंजाभाईने सोच-विचारकर मुझपर विश्वास करनेका निश्चय किया था।

१. "दैनन्दिनी, १९३२" से; पुंजाभाई शाहका स्वर्गवास २२ अक्टूबरको हुआ था।

पुंजाभाईको जिस अर्थमें मैंने चिरंजीव कहकर सम्बोधित किया था, उस अर्थमें भले ही वे आज यहाँ न हों, किन्तु उससे कहीं विस्तृत अर्थमें वे चिरंजीवी हैं।

यह ठीक है कि मैं उन्हें चिरंजीव कहकर सम्बोधित करता था किन्तु उन्हें मुझसे कुछ सीखना नहीं था। मैं तो उनके गुणोंका पुजारी था। मेरे विचारसे पुंजाभाईकी नम्रता, पुंजाभाईकी धर्मपरायणता, पुंजाभाईकी सत्यपरायणता, पुंजाभाईकी उदारता तो ऐसी थी कि कोई उन्हें हरा नहीं सकता था। पुंजाभाईमें सर्वस्वार्पणकी सामर्थ्य थी।

पुंजाभाई रायचन्द कविको अपना सर्वस्व मानते थे। मैं भी रायचन्दभाईका पुजारी था इसलिए पुंजाभाई मेरी ओर आकृष्ट हुए थे। पुंजाभाईकी तरह रायचन्द-भाईको मैं गुरुका पद तो नहीं दे सका था किन्तु उन्हें इसका कोई दुःख नहीं था। पुंजाभाई जानते थे कि गुरुका पद किसीको दिया नहीं जाता। जिस प्रकार चुम्बक लोहेको अपनी ओर खींच लेता है उसी प्रकार गुरु शिष्यको आकर्षित कर लेता है।

किन्तु रायचन्दभाईके बारेमें मैं जो-कुछ कहा करता था, वह पुंजाभाईको बहुत अच्छा लगता और उससे भी अच्छा उन्हें यह लगता कि मैं जिस चीजकी प्रशंसा करता उसे अपने जीवनमें उतारनेका प्रयत्न करता था। इससे हमारा आपसी बन्धन दिन-प्रतिदिन दृढ़ होता गया।

पुंजाभाईका आश्रमके आरम्भसे ही उससे निकट-सम्बन्ध बन गया था और हालाँकि वे कभी आश्रमवासी नहीं बने फिर भी वे आश्रमवासीकी तरह ही रहते थे। आश्रमपर जो मुसीबतें आईं उनमें पुंजाभाईने भाग लिया था। अहमदाबादके बाजारकी पेचीदगियाँ पुंजाभाई ही बनाते-सुलझाते थे। जो चाहिए सो पुंजाभाई ला देते। पुंजाभाईके आदमियोंको जब चाहे तब आश्रमके काममें लगा दिया जाता। शहरमें पुंजाभाईकी दूकान और घर आश्रमवासियोंका आश्रय-स्थल था। झाड़ूसे लेकर अनाज आदितक कौन-सी चीज किस प्रकार और कहाँ ठीक मिल सकती है, यह बतानेवाले पुंजाभाई थे। पुंजाभाईकी देखरेख और उनकी सलाहसे आश्रमको काफी पैसोंकी बचत हुई है। जिस जमीनपर आजकल आश्रम बना हुआ है उस जमीनको खोजनेवाले भी पुंजाभाई और उसका सौदा करनेवाले भी पुंजाभाई ही थे। ऐसी नाना प्रकारकी सेवा करनेके बावजूद पुंजाभाईने किसी दिन आभारके दो शब्दोंकी अपेक्षातक नहीं की। आश्रमको अपना मानकर पुंजाभाईने आखिरी घड़ीतक काम किया। मैं पुंजाभाईके निकट सम्पर्कमें आया था किन्तु मुझे उनमें न तो अधीरता नजर आई और न अतिशयोक्ति। बिना कामके पुंजाभाई बोलते नहीं थे और गपशप में पुंजाभाई भाग क्यों लेने लगे? वे सदा धर्मकी ही बात करते थे और सज्जनोंका स्मरण उन्हें प्रिय था। पुंजाभाईके मनमें किसीके प्रति द्वेष मुझे कभी अनुभव नहीं हुआ। उन्हें मैंने किसीके प्रति कटु वचन बोलते कभी नहीं सुना।

वे व्यापार-कुशल थे। दो पैसे कमाते भी थे। यदि चाहते तो और अधिक कमा सकते थे। किन्तु मुझपर ऐसी छाप पड़ी है कि रायचन्दभाईके सम्पर्कमें आकर उन्होंने अपना व्यापार समेट लिया था। पुंजाभाईकी साख बहुत बढ़ी-चढ़ी थी। उनके

यहाँ रखा गया पैसा और उज्ज्वल होकर वापस मिल सकता था। आश्रमके रुपये-पैसोंकी व्यवस्था भी पुंजाभाई ही करते थे। वे लम्बे अर्सेतक गुजरात प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके कोषाध्यक्ष भी रहे थे।

पुंजाभाई पुण्यात्मा थे, मुमुक्षु थे। आश्रममें उन-जैसे निःस्पृह इतने लोग मिलने भी मुश्किल हैं जितने अँगुलियोंपर गिने जा सकें।

पुंजाभाईका स्पर्श आश्रमको पवित्र करनेवाला था। उनका धर्म संकुचित नहीं था। उनके धर्ममें सभी धर्मोंके लिए स्थान था।

ऐसे पुंजाभाई चिरंजीवी ही हैं। हमें उनके गुणोंका स्मरण करना चाहिए। उनका हमसे जो सम्बन्ध था उसे सुशोभित करनेका प्रयत्न करना चाहिए।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

४८१. पत्र : रमाबहन जोशीको

२३ अक्टूबर, १९३२

चि० रमा,

छगनलालके जेल जानेसे तुझे घबराहट तो नहीं हुई न? उसके पत्र तुझे मिलते हैं या नहीं? उससे मुलाकात होती है? वह कहाँ है? मुझे पत्र लिखनेमें तूने आलस्य किया सो इतने दिन तो निभ गया, लेकिन आगे नहीं निभेगा। मुझे नियमित रूपसे लिखा कर। अब शक्ति आ गई है न? धीरू और विमुके क्या हाल-चाल हैं?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३३७)से।

४८२. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२३ अक्टूबर, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला है।

जमनादास्की बात दुखद है। क्या किया जाये? आखिर भाग्य तो दो कदम आगे रहता ही है।

किसनने मुझे एक लम्बा पत्र भेजा था। उसने अपनी दिनचर्याका अच्छा वर्णन किया है। वह ऐसी कर्मठ है कि सुबह तीन बजे उठकर पत्र लिखने बैठी। मैं तो अपनेको ही ऐसा कर्मठ मानता था। किसन-जैसी लड़कियाँ भी मेरा गर्व अच्छी तरह उतारती मालूम होती हैं। तू नहीं उतार सकती, क्योंकि आश्रममें तो जल्दी उठनेकी

आदत होती है। इसलिए वहाँ तुम्हारे जल्दी उठनेमें कोई विशेषता नहीं लगती। लेकिन बम्बईमें जो सुबह ६ बजे उठे, वह मेहरबानी करेगा। इसमें बेचारे गरीब मजदूर नहीं आते। लेकिन किसन कोई मजदूरिन तो है नहीं।

कुछ समय निकाल सके तो निकालकर आश्रमसे बीमारीको निकालनेकी कला तुझे हस्तगत कर लेनी चाहिए। लेकिन तेरा पहला काम अपना शरीर कसनेकी कला हस्तगत करना है।

मक्का अपने खेतमें नहीं होता तो क्या मँगाया नहीं जा सकता? उसीसे वजन बढ़ता हो तो यह तो सरल बात हो गई। जेलमें ऐसा कहा जरूर जाता है कि मक्केके आटेकी काँजीसे दस्त साफ होता है और वजन भी बढ़ता है। कैदियोंको हमेशा सवेरे मक्केकी काँजी ही दी जाती है। उसमें नमक डाला जाता है। मक्केके आटेसे चोकर निकालनेकी जरूरत नहीं होती। कैदियोंका साथ देनेके लिए और आजमाइशके तौरपर कुछ दिनतक यह प्रयोग करने लायक जरूर है। आजकल सुबह क्या दिया जाता है? अगर पहलेकी तरह गेहूँके आटेकी काँजी दी जाती हो, तो ज्वारकी देकर देखना बिलकुल सरल है। बहनोंको, विट्ठल, कान्ति वगैरहको तो व्यक्तिगत अनुभव है। वे जो कहें वह ठीक होगा। मैं तो दूसरोंका कहा हुआ कहता हूँ।

शान्ताने जो लिखा है, उसे मैं कुछ समझा नहीं। मुझे तो उसने कुछ लिखा नहीं। तुझे विश्वास दे[1] तो ठीक हो। अब याद आया। "विश्वास देना" तो अंग्रेजी प्रयोग है। गुजराती मुहावरा तो -"पेटकी बात बताना"[2] है। शान्ता जो बात खानगी रखना चाहे उसे जरूर खानगी रखना।

तूने जो प्रश्न पूछे हैं, उनका जवाब नहीं दे सकूँगा। इसलिए अभी धीरज रखना।

तेरी शक्ति और योग्यताका पार ही नहीं है। लेकिन उनका मैं उपयोग करूँ तभी न? अभी तो ग्रे की कविताके[3] फूलोंकी तरह वे जंगलमें बिखर जाती हैं।

अपनी बिल्लीबहनसे जब हम मिले तब वह सचमुच ही खुशीसे पागल हो गई। हमें छोड़ती ही नहीं थी। निश्चय ही उसे हमारा वियोग बहुत खटका होगा। अब शान्त है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३०७) से। सी० डब्ल्यू० ६७४६ से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कंटक

१. गुजराती शब्द हैं — "विश्वास आपे"।

२. गुजराती शब्द हैं — "पेट आपवुं"।

३. **एलिजि रिटन इन ए कन्ट्रीयार्ड।**

४८३. पत्र : मणिबहन न० परीखको

२३ अक्टूबर, १९३२

चि० मणिबहन[1],

आशा है, तुम मोहनकी चिन्ता नहीं कर रही होगी। मुझे उसके बारेमें यहाँ खबर मिलती रहती थी। बच्चोंकी बीमारी आँधीके वेगसे आती है और आँधीके वेगसे जाती है। बात यह है कि उनका कोठा हमारे जितना बिगड़ा हुआ नहीं होता। हम उसे ऐसी अनेक चीजें ठूँसकर विगाड़ देते हैं जो उसमें नहीं ठूँसी जानी चाहिए। बालकोंको अपना कोठा बिगाड़नेका इतना समय नहीं मिलता। नरहरिकी भी चिन्ता मत करना। उसके रक्षक हम नहीं हैं। रक्षक तो भगवान् है। और जिसे वह बचानेवाला है उसे कौन दुःख दे सकता है?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९७३) से। सी० डब्ल्यू० ३२९० से भी; सौजन्य : वनमाला एम० देसाई

४८४. पत्र : पद्माको

२३ अक्टूबर, १९३२

चि० पद्मा,

तेरा पत्र मिला। इस बार तेरी लिखावट खराब है। यदि अन्य प्रकारसे तेरा स्वास्थ्य सुधर गया होगा तो वजन अपने-आप बढ़ जायेगा। जितना हो सके उतना ही काम करना। किसी प्रकारकी चिन्ता मत करना। मुझसे तेरे खिलाफ शिकायत की गई है, यह मैं नहीं जानता। वह जो हिसाबकी बात थी उसे तो तू शिकायत नहीं मानती न?

शीलाको तो अब खूब अच्छा लगना चाहिए क्योंकि वह शैलाश्रममें आ गई है। सरोजिनीदेवीसे[2] कहना कि कभी तो पत्र लिखनेकी कृपा करें।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१३९) से। सी० डब्ल्यू० ३४९१ से भी; सौजन्य : प्रभुदास गांधी

१. नरहरी परीखकी पत्नी।

२. पद्माकी माँ।

४८६. तार : साबरमती आश्रमको

२४ अक्टूवर, १९३२

सत्याग्रह आश्रम,
साबरमती

पुंजाभाईकी चिरनिद्रापर हमें आनन्द मनाना चाहिए। अन्तिम क्षणोंका पूरा विवरण भेजें। आशा है अन्तिम संस्कारमें आश्रमका पूरा प्रतिनिधित्व रहा होगा।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १७५

४८७. पत्र : अबुल कलाम आजादको

२४ अक्टूबर, १९३२

प्रिय मौलाना साहब,

आपका तार मिला और मैंने तुरन्त जवाब भेज दिया।[1] वह अनुमतिके लिए सरकारके पास भेजा गया है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

मौलाना अबुल कलाम आजाद
मार्फत – म्युनिसिपल कॉर्पोरेशन
कलकत्ता

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८००(४०)(३), भाग ३

१. देखिए "तार : अबुल कलाम आजादको", २०-१०-१९३२।

४८८. पत्र : ई० ई० डॉयलको

अत्यावश्यक

२४ अक्टूबर, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

अस्पृश्यताके सिलसिलेमें मित्रोंसे मुलाकात और पत्र-व्यवहारके बारेमें तथा एक अन्य मामलेके बारेमें सरकारी नीति स्पष्ट करनेकी प्रार्थना करते हुए मैंने जो पत्र[1] भेजा था, उसके उत्तरमें लिखा आपका पत्र आज प्रातः मेजर भण्डारीने मुझे पढ़कर सुनाया। मुझे उसकी नकल भी कर लेने दी गई थी।

आपके पत्रके अनुसार "सरकार मुझे एक समुचित संख्यामें (उसके द्वारा स्वीकृत व्यक्तियोंसे) मुलाकातोंकी" और पत्र-व्यवहारकी "अनुमति देनेको तैयार है", "पर शर्त यह है कि यह चीज साफ समझ ली जाये कि वह समाचार-पत्रोंमें प्रकाशित नहीं होगा।

मैं समझता हूँ, सरकार इस बातको नहीं समझ पाई कि मेरा उपवास केवल स्थगित हुआ है और यदि अस्पृश्यता-निवारणका कार्य पूरी तरह नहीं किया गया तो वह फिर शुरू करना पड़ सकता है। इसके अतिरिक्त दक्षिणके एक मन्दिरके बारेमें मेरा कहना यह है कि यदि अगली २ जनवरीतक या उससे पहले उस मन्दिरके द्वार तथाकथित अस्पृश्योंके लिए नहीं खोले गये, तो श्री केलप्पनके साथ मुझे भी उपवास करनेको मजबूर होना पड़ सकता है। सरकार यह जानती है। तीन सप्ताह गुजर चुके हैं और अबतक इस सिलसिलेमें मैं कोई खास काम नहीं कर सका हूँ। इस बीच मुझे केवल दो तार भेजनेकी अनुमति दी गई है, और सो भी लम्बे विलम्ब के बाद। सुधारके कार्यको समयसे पूरा करनेके लिए कामको जल्दी निपटाना और अपेक्षित प्रचार-कार्य करना आवश्यक है। हर दिन कीमती है। इसलिए मेरी प्रार्थना है कि मुलाकातियोंके चुनाव और पत्र-व्यवहारके प्रकाशनपर से सभी प्रतिबन्ध हट जाने चाहिए। मुलाकातके समय यदि एक या अनेक अधिकारी उपस्थित रहें और पत्र-व्यवहारकी वहीं और उसी वक्त जाँच की जाये तो मुझे उसपर कोई आपत्ति नहीं होगी। मुझे यदि सहायक दिये जायें तो सरकार सारे पत्र-व्यवहारकी नकलें और शीघ्रलिपिमें मुलाकातोंके नोट भी ले सकती है। स्वभावतः इन मुलाकातों और पत्र-व्यवहारका सविनय अवज्ञासे कोई सम्बन्ध नहीं होगा और वे पूरी तरहसे अस्पृश्यता-निवारणतक ही सीमित होंगे।

इसलिए यदि ये प्रतिबन्ध, जैसी कि ऊपर प्रार्थना की गई है, अगले १ नवम्बरसे पहले नहीं हटाये गये, तो जो सहयोग देना मेरे लिए सम्भव है, वह मुझे

१. देखिए "पत्र : ई० ई० डॉयलको", ६-१०-१९३२।

मजबूर होकर उस हदतक वापस ले लेना पड़ेगा जिस हदतक मैं सत्याग्रहकी मर्यादाओंका पालन करते हुए उसे वापस ले सकता हूँ। उसकी शुरुआतके तौरपर मैं, आहारके सम्बन्धमें मुझे जो सुविधाएँ दी गई हैं, उन सबको अस्वीकार करूँगा और अपनेको 'सी' वर्गके केवल उस तरहके आहारतक ही सीमित रखूँगा जिसे मैं अपने व्रतका पालन करते हुए ले सकता हूँ और वह तबतक लूँगा जबतक कि मेरा शरीर उससे अपना सामंजस्य रख सकेगा। आशा है, सरकार इसे धमकी नहीं समझेगी। जो कदम सोचा गया है, वह सरकारी रवैयेका स्वाभाविक परिणाम है। जिस कार्यके लिए उपवास रखा गया और स्थगित किया गया था, उसे यदि मैं बिना किसी पाबन्दी और अड़चनके न कर सकूँ, तो जीनेमें मेरी कोई रुचि नहीं हो सकती। इस नैतिक और धार्मिक सुधारका सविनय अवज्ञासे यदि कुछ भी सम्बन्ध होता तो मैं कुछ न कहता।

माननीय श्री हडसनको लिखे गये मेरे व्यक्तिगत पत्रके[1] सम्बन्धमें जो उत्तर आया है, वह मेरे लिए दुखद और आश्चर्यजनक है। डॉ० अम्बेडकरके साथ मुलाकातके समय जो चेतावनी मुझे पढ़कर सुनाई गई, वह यदि मौलाना शौकत अलीको दिये गये तारके सिलसिलेमें मेरी कथित कार्यवाहीकी सजा थी, तो कैदीतक पर लागू होनेवाले इन्साफका यह तकाजा था कि चेतावनीके समय सजाकी वजह मुझे बताई जाती और सजा सुनानेसे पहले मुझसे सफाई माँगी जाती। कैदीको बिना उसकी बात सुने सजा दी जा सकती है, यह तो मैंने कभी सुना ही नहीं। और यह बात भी मेरे दिमागमें कतई नहीं आई थी कि मेरे लड़केके नाम भेजा पत्र, जिसे मैंने देखा था, मुझे चेतावनी देनेके लिए था। मैं यह बता दूँ कि मेरे लड़केने अधिकारियोंकी उपस्थितिमें मुझे साफ-साफ यह बताया था कि श्री हडसनने उदारताके साथ न केवल उसे जितनी बार भी इच्छा हो, उतनी बार मुझसे मिलनेकी, बल्कि मुझसे किसी भी विषयपर बातचीत करने और मेरा कोई भी सन्देश ले जानेकी भी तुरन्त अनुमति दे दी थी; शर्त यही थी कि ऐसी किसी बातके सम्बन्धमें वह पत्र-प्रतिनिधियोंको कुछ न बताये और उसे प्रकाशित न कराये। इस बातचीतके कारण मुझे अपने लड़केसे यह कहनेमें कोई दोष नजर नहीं आया कि वह श्री शौकत अलीको यह बता दे कि उनका तार मैंने देख लिया था और उसका जवाब दे दिया था और वह जवाब उन्हें सम्भवतः एक-दो दिनोंमें मिल जायेगा; देरीका कारण यह है कि वह सरकारके पास अनुमतिके लिए गया है। मैंने यह बात तब कतई नहीं सोची थी कि उस सर्वथा निर्दोष तारको भेजनेकी अनुमति नहीं मिलेगी। इसलिए अपने लड़केको मैंने उस जवाबका आशय भी बतला दिया था। परन्तु आपके पत्रके इस विषयसे सम्बन्धित अनुच्छेदमें दो बातें गलत कही गई हैं और वह भूल मुझे सुधार देनी चाहिए। अपने लड़केसे बात करते समय मुझे यह मालूम नहीं था कि उस तारको 'भेजनेकी अनुमति' नहीं दी गई है। और यह कहना भी सही नहीं है कि जवाबका मजमून

१. देखिए "पत्र : एच० एफ० हडसनको", १८-१०-१९३२।

समाचार-पत्रोंमें छप गया है। मैंने जो देखा है, वह केवल सार है। अपने लड़केको मैंने जवाबकी कोई नकल नहीं दी थी। मैं यह भी बता दूँ कि मेरे लड़केने अपने स्वभावकी विनम्रताके कारण श्री हडसनको एक सौजन्यपूर्ण पत्र लिखकर इस बात पर खेद प्रकट किया था कि मौलाना शौकत अलीने उसके आगाह कर देनेपर भी उनके साथ हुई उसकी बातचीत पत्रोंमें छपवा दी है। अपनी इस स्पष्टवादिताके लिए उसे उत्तरमें धन्यवादके एक पत्रकी आशा थी। परन्तु दुर्भाग्यसे उसे फटकार ही मिली, और वह उसपर भी शान्त रहा। यदि इस बहुत ही पूर्ण स्पष्टीकरणके बाद भी श्री हडसनने अपनी राय नहीं बदली और यह नहीं सोचा कि मनुष्यके नाते उन्होंने मेरे साथ गम्भीर अन्याय किया है, तो मुझे अफसोस होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च :]

जिन परिचित और अपरिचित व्यक्तियोंको मैं पत्र लिखता हूँ, वे उन्हें प्रकाशित नहीं करेंगे, इस बातकी कोई गारंटी देना मेरे लिए स्पष्ट ही असम्भव है; इसलिए जबतक पूर्वोक्त प्रतिबन्ध कायम है तबतक मुझे अस्पृश्यताके सम्बन्धमें, जितना-कुछ पत्र-व्यवहार मैं करता रहा हूँ, उसे भी बन्द रखना पड़ेगा। अतः मुझे यह माँग करनेका अधिकार है कि इस बातका उत्तर इस महीनेकी ३१ तारीखसे पहले ही जितनी जल्दी सम्भव हो, दे दिया जाये।[१]

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८००(४०)(४), भाग १, पृ० २२७ से। जी० एन० ३८६४ भी

१. इस पत्रको पाकर होम डिपार्टमेंटने १ नवम्बरको बम्बई सरकारको यह तार दिया था: "गांधीके १८ और २४ अक्टूबरके महत्त्वपूर्ण पत्रोंको भेजते हुए आपने २८ अक्टूबरको जो पत्र लिखा था वह हमें कल ही मिला है। पूरी तरह विचार करनेके बाद हम सम्राटकी सरकारसे यह सिफारिश कर रहे हैं कि गांधीको केवल अस्पृश्यता-निवारणसे सम्बन्धित मामलोंपर मुलाकातों और पत्र-व्यवहारकी पूर्ण स्वतन्त्रता देनी चाहिए और प्रचारपर कोई प्रतिबन्ध नहीं होना चाहिए। गांधीने स्वयं मुलाकातोंमें अधिकारीकी उपस्थिति और पत्र-व्यवहारकी जाँचके अधिकारके बारेमें जो शर्तें सुझाई हैं, वे स्वीकार कर ली जायेंगी, यद्यपि उन्हें लागू करना शायद आवश्यक न हो।

"इस बीच हम यह बहुत ही आवश्यक समझते हैं कि गांधीको इन हालतोंमें अपने आहारपर प्रतिबन्ध लगाना शुरू नहीं करना चाहिए। इसलिए कृपया उन्हें तुरन्त सूचित कीजिए कि उनके पत्र भारत सरकारको कल ही मिले हैं। इस मामलेपर बहुत ही गम्भीरतासे विचार किया जा रहा है और आशा है कि हम उन्हें दो-तीन दिनोंमें ही निर्णयसे अवगत कर देंगे। इस बीच उन्हें यह समझाइए कि हमें उनकी प्रार्थनाओंपर पूरी तरह विचार करनेका मौका देनेसे पहले ही यदि उन्होंने आहारपर प्रतिबन्ध शुरू कर दिया तो इससे परिस्थिति जटिल हो सकती है।" भारत सरकार, होम डिपार्टमेंट, पॉलिटिकल, फाइल नं० ३१/९५/३२।

४८९. पत्र : रुक्मिणीदेवी बजाजको

२४ अक्टूबर, १९३२

चि० रुक्मिणी,

मैं अपनी कुहनीको आराम देनेके खयालसे पत्र बोलकर लिखवाता हूँ। तब तो यही कहना पड़ेगा न कि तेरा विवाह बहुत प्रसिद्ध व्यक्तिसे हुआ है? बनारसमें एक ही बजाज-परिवार है किन्तु वह इतना प्रसिद्ध है कि केवल 'बजाज' लिखनेसे ही पत्र उन्हें मिल जाते हैं। लेकिन उससे तेरा उत्तरदायित्व कितना बढ़ गया? ऐसे परिवारमें जाकर तुझे स्वयंको अपने चरित्र-बलसे सुशोभित करना है, और कुटुम्बको भी सुशोभित करना है। ईश्वर तुझे ऐसा करनेकी शक्ति दे।

मालवीयजी के पवित्र हाथोंसे तुझे तमगा मिला, यह तेरे लिए कितने सौभाग्यकी बात है! यदि सितार बिगड़ गया है तो उसे ठीक करा। तेरा यह अभ्यास छूटना नहीं चाहिए। आशा है, यह पत्र मिलनेतक तेरी खाँसी चली गई होगी। खाँसीको तो बड़ी आसानीसे मिटाया जा सकता है। सुहाते हुए कुनकुने पानीमें एक छोटी चम्मच-भर नीबूका रस और साफ किया हुआ अधिकसे-अधिक जितना नमक मिला सके, मिलाकर एक-एक या दो-दो घंटे बाद एक या दो दिन पी। यदि खाँसी पुरानी न हो गई हो तो एक ही दिनमें शान्त हो सकती है। किन्तु इन एक-दो दिनोंमें और कुछ नहीं खाना चाहिए। यदि दस्त साफ न हुआ हो तो एनीमा लेना। अगले दिन दूध और मीठे अंगूर या मोसम्बी ली जा सकती है। मुझे समय-समयपर लिखती रहना।

तुम दोनोंको,

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१४३)से।

४९०. पत्र : विनोबा भावेको

२४ अक्टूबर, १९३२

बाणभट्ट और वाल्मीकिसे तुलना करना ठीक नहीं है।[1] बालकाण्ड और किष्किन्धाकाण्डसे की जा सकती है। शायद किष्किन्धा और उत्तरकाण्डसे करना और भी अच्छा होगा। २०० अंक और उससे भी ऊपरका बारीक सूत उत्तरकाण्ड है। उसके बिना किष्किन्धाकाण्डका उपयोग नहीं हो सकता। पूर्वजोंने गरीबोंसे बेगार कराकर ढाकेकी शबनम[2] तैयार कराई और विलासियोंके विलासका पोषण किया। हम उसका प्रायश्चित्त करके यज्ञके रूपमें बारीकसे-बारीक सूत कातें और भगवान्को अर्पित करें। कला दोनोंकी समान है। वह स्वार्थपोषक थी, यह परमार्थपोषक हो। खादीको व्यापक बनानेके लिए पहलेकी शक्तिका पुनरुद्धार जरूरी है। जो उस समय गुलामीकी हालतमें हो सकता था, वह हमें स्वतन्त्रताके युगमें करके दिखा देना चाहिए। विषयी जो वेश्याके लिए करे, क्या भक्त भगवान्के लिए उतना भी न करे? इसमें कोई कठिनाई नहीं है, खर्च नहीं है। क्योंकि धीरे-धीरे हमें आत्मार्पण करके बारीक कातना है। खादीको काफी सस्ता और अच्छा बनानेकी युक्तियाँ भी बारीक कातनेसे जल्दी मालूम हो सकती हैं, यह मैंने अनुभव किया है। "यावानर्थ उदपाने"[3] यहाँ लागू होता है।

ऊपरकी विचार-सरणी तुम्हें अच्छी लगे, तो यह समझानेकी जरूरत भी नहीं रह जाती कि याज्ञिकके लिए मैं बीस अंक क्यों कमसे-कम मानता हूँ। मगर यह कोई वेदवाक्य नहीं है, इसे सिद्धान्तके रूपमें नहीं रखा गया है। इसमें याज्ञिकके भावकी परीक्षा है। एक संस्थाको ऐसा-कुछ करना ही चाहिए। चाहे जैसा धागा निकालना यज्ञमें शामिल नहीं हो सकता, कुछ-न-कुछ नियम होना चाहिए, कोई-न-कोई निश्चित स्तर होना चाहिए। और अगर ऐसा होना चाहिए, तो बीस अंकका किसी भी तरहसे ज्यादा नहीं माना जा सकता। याज्ञिकको बेगार नहीं टालनी चाहिए। याज्ञिकको अपने यज्ञमें भाव भरना चाहिए, कला पूरनी चाहिए, रंग भरना चाहिए और तद्रूप हो जाना चाहिए। यज्ञका हव्य शुद्धतम होना चाहिए न?

अब भी न समझा सका होऊँ, तो फिर पूछना। मुझे अपनी रायके बारेमें शंका नहीं है। मगर जबतक तुम्हें न समझा सकूँगा, तबतक मुझे चैन नहीं मिलेगा।

१. विनोबा भावेने बारीक सूत कातनेपर आपत्ति की थी। उन्होंने मोटे सूतकी तुलना वाल्मीकीय **रामायण**से और बारीककी तुलना बाणभट्टकी **कादम्बरी**से की थी। उन्होंने गाँवोंमें काम करनेवाले कार्यकर्ताओंकी कठिनाइयोंकी भी चर्चा की थी।

२. एक प्रकारकी मलमल।

३. देखिए खण्ड ३२, पृ० १२६।

गाँवोंका काम बहुत कठिन है। प्याजके बारेमें 'स्मृति' क्या कहती है, इसकी चिन्ता नहीं। हमारा अनुभव कहे सो सच। औषधके रूपमें प्याज लेना योग्य है। मैंने तो उसका बहुत प्रयोग किया है। उसकी बदबू मुझे भी पसन्द नहीं है। मैं उसका उपयोग नहीं करता, परन्तु आवश्यक लगनेपर जरूर करूँगा। आखिरी भोजनके समय उसका उपयोग करनेसे किसीके सम्पर्कमें कम ही आना पड़ता है। दवा-जितनी मात्रामें लेनेसे उसकी बदबू कम होनेकी संभावना है। गायका दूध कहीं भी न मिले, यह तो हमारा दिवालियापन ही हुआ न? साथमें गायके दूधका मावा रखें, तो घी और प्रोटीन दोनों मिल जायें; और उसका चूरा करके गरम पानीमें मिला दें, तो लगभग दूधका गुण आ जाये। इसमें मैंने गुड़-शक्कर नहीं बताया, क्योंकि उसकी जरूरत नहीं रहती और उसे लिया जाये तो शायद अस्वाद-व्रतका भंग हो जाये। इसलिए रोटी, पेड़ें, प्याज और इमली या नीबू — इतनी चीजोंमें गुजर हो सकती है। सेवकोंको रातमें देरसे न खाना चाहिए। गाँववालों से सिर्फ रोटी और प्याजकी भिक्षा स्वीकार करें या खुद बनाकर खायें। सम्भव हो तो हर जगह पानी उबाल लें और वही पीयें। इसमें किसीपर भार नहीं बनना पड़ेगा, किसीको कष्ट न होगा; अपने लिए कुछ भी विशेष करनेकी जरूरत न रहेगी। खुलेमें सोया जाये। साँप वगैरहसे बचनेके लिए खाट मिले, तो ले ली जाये। यह सब अनुभवके बिना ही बकता जा रहा हूँ। मैं यह जानता हूँ कि गाँवोंमें जानेपर जो सहूलियतें मुझे मिली हैं, वे औरोंको नहीं मिलेंगी। इसमें से जो शक्य और वांछनीय हो, वह किया जाये और बाकीको छोड़ दिया जाये। यह तो इसलिए लिख दिया है कि तुम्हें अधिक विचार करनेकी प्रेरणा मिले। मैं अच्छी तरह समझता हूँ कि ग्राम-प्रवेश बहुत ही कठिन है। इतनेपर भी हमें यह करना ही होगा। इसलिए तुम्हारा आरम्भ मुझे बहुत पसन्द आया है। हरएक सेवकको साधारण वैद्यकका ज्ञान होना चाहिए। उसे प्राप्त करना आसान है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १७४-५

४९१. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

२४ अक्टूबर, १९३२

भाईश्री खम्भाता,

तुम्हारा पत्र मिला। कुहनीका दर्द फिर शुरू हो गया है इसलिए हाथको आराम देनेके खयालसे मैंने यथासम्भव बोलकर पत्र लिखवाना शुरू कर दिया है। तुम्हारे "ब्लू ब्रेन" वाले पत्रसे हममें से कोई घबराया नहीं था। "ब्लू ब्रेन" क्या होता है, यह तो पता ही नहीं था। किन्तु जब तुम्हारा पत्र मिला तब मैं पेड़के नीचे पड़ा हुआ था, इसलिए मैंने कहा कि कौन जाने "ब्लू ब्रेन" क्या होता है, किन्तु पेड़के नीचे रहनेसे "ग्रीन ब्रेन" हो सकता है और यदि ऐसा हो तो अच्छा ही है।

इस प्रकार हम सब परिहास करते रहे क्योंकि जिसका तुम्हें भय था वैसा कोई लक्षण मुझमें था ही नहीं। तुम्हें ऐसा क्यों लगा, अब तो यह भी अनायास समझमें आ गया इसलिए हमें परिहासका और अधिक कारण मिल गया है।

भाई मेहताको मैं अपने शरीरकी जाँच न करने दूँ ऐसी तो कोई बात ही नहीं है। मुझे यह अच्छा लगेगा कि वे मुझे देखें और कुछ सुझाव दें। मैं तो किसीसे भी अच्छी बात सीखनेको सदा तत्पर रहता हूँ तो फिर मेहतासे क्यों नहीं सीखूँगा? किन्तु बात यह है कि वे मुझे देखें, इसके लिए विशेष रूपसे अनुमति लेनी होगी और मुझे इस बातका पूरा डर है कि अनुमति नहीं मिलेगी। माँगनेपर अनुमति न मिलनेसे मनको चोट पहुँचेगी इस कारण मैं अनुमति नहीं माँगता। किन्तु जो कारण उन्हें सूझें उनके आधारपर यदि वे कुछ लिख सकें तो मैं उनपर अवश्य विचार करूँगा। वे जो मानते हैं वही मैं भी मानता हूँ कि मैं चाहे कितने भी संयमसे रहता होऊँ किन्तु फिर भी मेरे शरीरमें कहीं-न-कहीं रोग छिपा हुआ है जो हाथके दर्दके रूपमें या अन्य प्रकारसे प्रकट होता रहता है। मेरी आँतें तो कमजोर हैं ही। मुझे जन्मसे तो संयमी माना ही नहीं जा सकता। बहुत वर्षोंतक स्वच्छन्द जीवन बितानेके बाद मैंने सोच-समझकर संयमका पालन करना आरम्भ किया, किन्तु इस संयममें भी कितना असंयम मिला हुआ है इसका हिसाब कौन लगा सकता है?

तुम दोनों यदि किसी शान्त स्थानपर जा सको तो बहुत अच्छा हो। प्रकृतिके विरुद्ध मत लड़ना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५५४) से। सी० डब्ल्यू० ५०२९ से भी; सौजन्य: तहमीना खम्भाता

४९२. पत्र: ई० ई० डॉयलको

२५ अक्टूबर, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

इसी २४ तारीखके आपके पत्रके लिए धन्यवाद। मेरे अनेक मित्रोंके स्वास्थ्यके बारेमें आपने जो आश्वासन दिया है, उसकी मैं कद्र करता हूँ। लेकिन आप शायद मेरी इस बातको स्वीकार करेंगे कि जो सन्तोष खुदसे सम्बन्धित व्यक्ति द्वारा भेजे पत्रसे मिल सकता है, वह इससे नहीं मिलता। जहाँतक श्रीयुत न० द्वा० परीखका सम्बन्ध है, मेरा पत्र उपवासके दिनोंमें भेजा गया था और आप वादा कर चुके हैं कि आप ऐसी व्यवस्था करेंगे जिससे मुझे उत्तरमें उनका एक पत्र मिल जायेगा। आपके सौजन्यसे ऐसे कई मित्रोंके पत्र मुझे पहले भी मिले हैं। जहाँतक श्रीमती मणिबहन पटेलका सम्बन्ध है, उनका भी पत्र बहुत दिनोंसे नहीं आया है। वे मुझको या सरदार वल्लभभाईको नियमपूर्वक लिखती हैं, लेकिन इधर हममें से किसीको उनका

कोई पत्र नहीं मिला है। स्वामी आनन्दके पत्रका उत्तर देनेके लिए तो मैं आपके सौजन्यपर ही निर्भर हूँ। उनके यहाँसे अपेक्षानुसार कोई पत्र न आया हो, ऐसा नहीं है। इसलिए यदि आप अन्यथा न मानें तो मैं यह जानना चाहूँगा कि क्या श्रीयुत परीखका उत्तर, जो दिलानेका आपने वादा किया था, श्रीमती मणिबहन द्वारा हर महीने लिखा जानेवाला सामान्य पत्र और आपके सौजन्यसे स्वामी आनन्दका एक पत्र मुझे मिल सकता है? [१]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल नं० ९

४९३. पत्र : तेजबहादुर सप्रूको

२५ अक्टूबर, १९३२

प्रिय डॉ० सप्रू,

क्योंकि अपने दायें हाथको आराम देना मेरे लिए जरूरी है, इसलिए मैं यह पत्र बोलकर लिखवा रहा हूँ।

आपके पत्रके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। अपना सामान्य स्वास्थ्य मैंने लगभग पुनः प्राप्त कर लिया है। रोजमर्राका अपना काम मैं बिना किसी खास कठिनाईके कर लेता हूँ।

हम सबको इस बातकी खुशी है कि आपका लड़का लगभग अच्छा हो गया है और उसकी चोटें, समाचार-पत्रोंमें जैसी रिपोर्ट थी, उतनी गम्भीर नहीं थीं।

आशा है, इस पत्रके पहुँचनेतक आप इन्फ्लुएंजाके प्रभावसे बिलकुल मुक्त हो गये होंगे। दूसरी बातोंके बारेमें मैं अभी कुछ नहीं लिख सकूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

गांधी-सप्रू पत्र-व्यवहार; सौजन्य : राष्ट्रीय पुस्तकालय, कलकत्ता

१. इसके उत्तरमें कर्नल डॉयलने अगले ही दिन लिखा कि कैदी न० द्वा० परीखने जेलमें काम न करनेकी हड़तालमें भाग लिया था, जिससे उनकी पत्र-व्यवहारकी सुविधा छीन ली गई है और कुमारी पटेल तथा स्वामी आनन्दने इस बीच कोई पत्र नहीं लिखा है।

४९४. पत्र : मणिलाल गांधीको

२५ अक्टूबर, १९३२

चि० मणिलाल,

तेरा पत्र मिला। तू जब भी आये, १२ बजे आना। सुशीला और तारा भी आ सकती हैं। सुरेन्द्र भी आ सकता है। वह आश्रममें भी रहा है न? फिर समधी मेरे सगे ही माने जायेंगे। एक साथ मिलनेवालों की संख्या पाँचसे अधिक नहीं होनी चाहिए।

तेरी मद्रास आदिकी यात्रा तुरन्त होनी चाहिए। तुझसे मुलाकातका जो विवरण अखबारोंमें प्रकाशित हुआ है, वह मुझे सही नहीं लगता। यदि तूने यह विवरण न देखा हो तो देखना। 'हिन्दू' में प्रकाशित हुआ है।

आशा है, अब तू पूर्णतः स्वस्थ हो गया होगा।

मुझे नियमित रूपसे लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

देवदास आज आकर मिल गया, अतः सुशीला अब अगले मंगलवारको ही मिल सकेगी। बाकी समाचार देवदास देगा। मैंने कागजात भेज दिये हैं।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४७९९)से।

४९५. पत्र : शीतलासहायको

२५ अक्टूबर, १९३२

हमें लड़के-लड़कियोंकी ओर शंकित नजरसे नहीं देखना चाहिए। जान-बूझकर उन लोगोंको लालचमें न डालें। यहाँ कोई ऐसी चीज नहीं है। . . .[१] सावधान है। अब वह छोटा लड़का नहीं। उसकी उमर करीब ३२ सालकी है। . . .[२] भी समझदार लड़की है और . . .[३] में एक अच्छी आदत है। मेरेसे वह कुछ छिपाता नहीं है। विकारवश हो जाये तो वह मुझे कह देता है। इसलिए मैं इन दोनोंके सम्बन्धके बारेमें बिलकुल निश्चित हूँ। रोमन कैथलिक नियमोंसे मैं थोड़ा-बहुत परिचित हूँ। हमारा प्रयोग अनोखा है, उसमें काफी भय है। हिन्दुस्तानके वायुमंडलसे प्रतिकूल भी है। लेकिन स्त्री-जातिकी जो सेवा हम करना चाहते हैं, उनके लिये

१, २ व ३. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिये गये हैं।

जो स्वतंत्रता इष्ट है वह खतरा उठानेके सिवा कभी हासिल नहीं हो सकती है। सावधानीसे ईश्वरपर विश्वास रखकर हम नीडरतासे आगे बढ़ते हैं। और इसी कारण आश्रमके मंत्रीकी पसंदगीमें हमें बहुत सावधान रहना पड़ता है। जहाँतक मुझे ज्ञान है, नारणदाससे बढ़कर पवित्र, धैर्यवान, संयमी और व्यवस्थित-चित्त व्यक्ति हमें नहीं मिल सकता। उनके होनेसे मैं बिलकुल निर्भय रहता हूँ, तथापि तुम्हारे दिलमें यदि कुछ शंका हो, कोई बात तुम्हारे कानोंपर आई हो, तो मुझे लिखो।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १७७-८

४९६. पत्र : कृष्णदासको

२६ अक्टूबर, १९३२

मानवताके नाते कहना चाहिए कि यह तुम्हारा दुर्भाग्य ही था जो तुम्हें सिंनहरगाँव ले गया। तुम वहाँ स्वास्थ्य-लाभके लिए गये थे, पर इन्फ्लुऐंजाके शिकार हो गये। किन्तु कौन जानता है कि तुम्हें बिलकुल लेटे रहनेको बाध्य कर देनेवाली यह बीमारी तुम्हारे भलेके लिए ही नहीं है! सत्य क्या है, इस सम्बन्धमें चूँकि हम बहुत ज्यादा अज्ञानमें हैं, मेरा खयाल है कि इसीलिए 'गीता' हमें यह शिक्षा देती है कि चाहे हम कैसी भी हालतमें हों, हमें समबुद्धि रहना चाहिए। अतः एक ओर तो हमें समबुद्धि होना सीखना चाहिए और दूसरी ओर जब हम बीमार पड़ें तो हमें अच्छा होनेके लिए वे प्राकृतिक उपचार काममें लाने चाहिए जो हमें उपलब्ध हैं। इसलिए मेरी कोशिश यह होगी कि मैं तुम्हारे स्वास्थ्यके बारेमें चिन्तित न होकर यह प्रार्थना करूँ कि जो भी तुम्हारे लिए शुभ हो, वही हो।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १७८-९

४९७. पत्र : मीराबहनको

२६ अक्टूबर, १९३२

चि० मीरा,

तुम्हारे पत्र बिलकुल नियमित रूपसे आते हैं।

'कुरान' में तुम्हें और भी बहुतसे रत्न मिलेंगे। उनमें से कुछ तो मनमें गहरे उतर जाते हैं। ईसाई धर्मके बारेमें जो उद्धरण है, वह और तरहका है। उसमें ईसाई मतके साथ न्याय नहीं हुआ है। 'पुत्रत्व' का अर्थ शाब्दिक नहीं है। और 'त्रयी' का अर्थ भी तीन देवता नहीं है। यहाँ 'शब्द मारता' है, यह उक्ति लागू होती है। तुम किसका अनुवाद पढ़ रही हो?

मेरे वजन और स्वास्थ्यमें कोई उतार-चढ़ाव नहीं है। दो दिन मैंने रोटी लेकर देखी, और फिर फल, दूध और एक सब्जीपर आ गया। अपना दूध मैं सब्जीपर

डाल लेता हूँ। सब्जीमें अभी एक दिन लौकी और एक दिन कद्दू होता है। जेलके बगीचेमें अभी यही दो सब्जियाँ होती हैं, और मैं यहाँ होनेवाली सब्जियोंसे ही अपना काम चलानेका प्रयत्न करता हूँ। ये शरीरको अच्छी तरह अनुकूल पड़ती लगती हैं। एकरसताकी मुझे चिन्ता नहीं है।

मैं देख रहा हूँ कि मौसम अपेक्षाकृत ठंडा हो जानेसे तुम्हारा स्वास्थ्य सुधर रहा है। आशा है, यह सुधार जारी रहेगा।

सात साल एक स्वप्न-से लगते हैं। जब मैं उन जबरदस्त झिड़कियोंकी याद करता हूँ तो कांप उठता हूँ, और मैं इस तथ्यसे यथासम्भव सन्तोष प्राप्त करता हूँ कि वह प्रेम ही था जो झिड़कियाँ देता था। लेकिन मैं यह भी जानता हूँ कि उससे बेहतर तरीका भी था। अतीतपर जब मैं दृष्टि डालता हूँ तो मुझे यह अनुभव होता है कि मेरा प्रेम अधीर था। उस हदतक वह अज्ञानमय था। ज्ञानमय प्रेम सदा धैर्यवान होता है। अज्ञानमय प्रेम संस्कृतके 'मोह' शब्दका भोंडा अनुवाद है। मैं धैर्यवान बनना सीखूँगा। छोटी-छोटी बातोंके सम्बन्धमें जब मैं अपने व्यवहारपर विचार करता हूँ तो मुझे पता चलता है कि मुझमें अभी उतना धैर्य नहीं आया है जितना कि सच्चे प्रेमके लिए आवश्यक है। वह धैर्य आयेगा।

उस चीनी युवक शान्तिकी तुम्हें याद है न? उपवासके दिनोंमें मुझे उसका तार मिला था और अब उसका एक पश्चात्ताप-भरा पत्र आया है। वह बेचारा अपने व्रतोंका पालन नहीं कर सका, इसलिए चुप रहा। अब वह कई बच्चोंका बाप है। उसने चीनकी बरबादीका चित्र खींचा है और पिछली बातोंके प्रायश्चित्तके लिए भारत वापस आनेको अधीर है। उसकी अंग्रेजीमें आश्चर्यजनक सुधार हो गया है।

देवदास कल यहाँ आया था। वह अब पहलेसे बहुत अच्छा है। प्यारेलालने दूध और मक्खन न लेनेका हठ पकड़ रखा है और वह केवल तेल ही लेता है। वह फल भी नहीं लेता। परिणाम यह निकला कि उसका गला खराब हो गया है। मैंने उससे कहा है कि वह इतना हठ न करे।

शिवप्रसाद पहलेसे अच्छा है। सुशीला भी अच्छी है। बा आश्रम जानेवाली है। वह तुमसे मिलनेको उत्सुक थी। पर मैंने ही उसे रोक दिया।

किसन वहाँ हो तो तुम दोनोंको प्यार।

बापू

[पुनश्च:]

यह पत्र एक अलग लिफाफेमें भेजा जा रहा है। आशा है, तुम्हें मिल जायेगा।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२४७) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७१३ से भी

४९८. पत्र : रामदास गांधीको

२६ अक्टूबर, १९३२

मननसे तेरे निश्चयको जरूर बल मिलता रहेगा। 'गीता'को छान डालें और उसके मूल शब्दोंका विचार करते रहें, तो उससे भी बहुत और आवश्यक बल मिलता है। मेरे साथ तो ऐसा ही होता है। तू 'गीता'को संस्कृतमें समझ लेता है क्या? संस्कृतका अभ्यास करता है? और पढ़नेके लिए टॉल्स्टॉयके निबन्ध हैं। 'इमिटेशन ऑफ क्राइस्ट' पढ़ने लायक है। बुद्धदेवका चरित्र जरूर पढ़ना चाहिए। 'लाइट ऑफ एशिया'[1] समझमें आये तो वही पढ़। 'रामायण' पढ़ डाले तो अच्छा ही है। हिन्दीमें 'ब्रह्मचर्य' नामक छोटी-सी पुस्तक बहुत अच्छी है। उसे पढ़नेकी इच्छा हो, तो आश्रमसे मँगा दूँ। 'नीतिनाशने मार्गे'[2] शीर्षकसे मेरे जो लेख हैं, वे भी पढ़ने लायक हैं। अभी तो इतना पढ़ना काफी होगा। निश्चय कैसे पूरा होगा, इस तरहकी व्यर्थ चिन्ता करनेके बजाय यह विचार करना कि निश्चय जरूर पूरा होगा और भगवान् जरूर मदद करेंगे। मनमें उसे पक्का करके अपने काममें लीन रहना। पढ़नेमें भी अधीर न होना। न समझमें आये, तो दुबारा पढ़ना, भले ही उसमें ज्यादा समय लगे। याद न रहे, तो भी घबराना मत और प्रफुल्लित रहना। तेरी गति कितनी ही धीमी हो, उसकी फिक्र मत करना। किसी दिन सब-कुछ अपने-आप आसान हो जायेगा। शरीरको बिगाड़कर कुछ मत करना। दिमाग जितना बोझ उठा सके, उतना ही उसपर डालना।

बच्चोंके बारेमें तेरा लोभ ठीक है। मगर आजसे ही उनकी चिन्ता करनेका कोई कारण नहीं। अभी तो उनके शरीर अच्छे बनें, यही जरूरी है। इसमें नीमूकी मदद चाहिए। नीमूको मैं लिख रहा हूँ। अभी तो पत्र ठीक आ रहे हैं। तू लिखता रहना। उनके शरीर अच्छी तरह बनेंगे और शुद्ध वातावरणमें पलेंगे, तो जैसे तू चाहता है, वैसे अपने-आप बन जायेंगे। तेरा यह लिखना ठीक ही है कि उनके लिए भी तुम दोनोंको संयम रखना है। शुद्ध शिक्षा किसे कहते हैं, वह कैसे दी जाये, इस जमानेके लायक शिक्षा कौन-सी है — ये सब सोचने लायक बातें हैं, उनके बारेमें सोचनेके लिए बहुत समय है। इस बारेमें जो प्रश्न उठें, पूछ लेना। तू चाहेगा तो थोड़ेमें ऐसा-कुछ लिख भेजूँगा जिससे तुझे मदद मिले।

आशा है, सुरेन्द्रका मोचीका काम धड़ल्लेसे चल रहा होगा। उससे कहना कि भगवान् जूतोंमें, मृत पशुओंके चमड़ेमें भी रहता है। मेरे लिए अभी तलोंका जो चमड़ा आया, वह अच्छा है। उसमें भगवान् बहुत खूबसूरत लगते हैं। भगवान् कोई

१. सर एडविन अर्नाल्ड-कृत।

२. देखिए खण्ड ३१।

ग्रन्थोंमें ही बसते हों, सो बात नहीं। तुलाधारका किस्सा सुरेन्द्रसे समझ लेना और वह भी उसपर दोबारा विचार कर ले। भगवान्को ढूंढ़नेके लिए अभिमन्युके चक्र-व्यूहमें नहीं भटकना पड़ता। वह तो बगलमें है। अपनी विस्मृतिके कारण हम उसे गाँव-भरमें छान डालते हैं और फिर जब याद आता है कि वह तो बगलमें ही छिपकर बैठा है, तब अपनी मूर्खतापर रोते और हँसते हैं।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १७९-८०

४९९. पत्र : डाह्याभाई पटेलको

२६ अक्टूबर, १९३२

चि० डाह्याभाई[1],

अब तो तुम्हें मणिबहनके पत्र भी नियमित रूपसे मिलना सम्भव है। इस तरह तुम्हारे पढ़ने या सुननेके साहित्यमें वृद्धि हो गई। परन्तु साहित्य पढ़नेके साथ अब तुम्हारे बिस्तर छोड़नेका समय भी नजदीक आता जा रहा है न? फिर भी बिस्तर छोड़नेकी अधीरता न होनी चाहिए। यह तो जानते हो न कि बिस्तरमें पड़े-पड़े भी सेवा हो सकती है?

बापूके आशीर्वाद

श्री डाह्याभाई पटेल
राम निवास
पारेख स्ट्रीट, बम्बई-४

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–४ : मणिबहेन पटेलने, पृ० १४९

५००. पत्र : मथुरादास पुरुषोत्तमको

२६ अक्टूबर, १९३२

चि० मथुरादास,

मैं तुम्हारे पत्रका इन्तजार ही कर रहा था और सोच रहा था कि तुम्हारा पत्र क्यों नहीं आया। उक्त पत्र अब मिला। कस की बात तुम ठीक समझ गये। ऐसी व्यावहारिक बातोंको समझ लेनेसे हमारा बहुत-सारा समय बच जाता है। मिलों में प्रचलित कुछ प्रणालियोंके पीछे तो व्यापारिक हेतु है और कुछका उद्देश्य वस्तुओं का उत्पादन विशाल पैमानेपर करना है। ऐसी प्रणालियाँ हमारे ग्रामोद्योगोंके लिए बिलकुल अनुपयोगी हैं। हाँ, कुछ अनुकरणके योग्य हैं। हमें अपनी विवेक-दृष्टिका

१. वल्लभभाई पटेलका पुत्र।

उपयोग करके इन प्रणालियोंमें से उन्हें चुन लेना चाहिए जो हमारे लिए सहायक हो सकती हैं। यदि ऐसा लगता हो कि महादेवका बारीक सूत कमजोर है और इसलिए नहीं बुना जा सकता तो मेरी सलाह है कि उसे दुबटा कर लिया जाये। लेकिन यदि ऐसा लगे कि हमारे पास इतने बारीक सूतके लायक राछ-फन्नी नहीं हैं और इसलिए वह नहीं बुना जा सकता तो हमें उपयुक्त राछ-फन्नी प्राप्त करनी चाहिए। रामजी का अनुभव शायद इस मामलेमें हमारी ज्यादा मदद नहीं कर सकता। कारण, मुमकिन है कि उसमें इतने बारीक सूतसे निपटने-जितनी बुद्धि-शक्ति ही न हो। अहमदाबादमें बहुत बारीक सूत बुननेवाले अनेक कुशल बुनकर हैं, इसके लिए तुम्हें उन्हींके पास जाना चाहिए। यह भी सम्भव है कि अत्यन्त बारीक सूतका कस निकालनेकी कोई अन्य रीति हो और इसके लिए तथा सूतको [बुननेके पहले] ठोकनेके लिए ऐसे विशेष नाजुक साधन हों जिनसे सूतपर कमसे-कम तनाव पड़े। इसे काँजी देनेकी क्रिया भी भिन्न प्रकारकी होती होगी। ऐसा भी हो सकता है कि अहमदाबादके कुशल बुनकर केवल महीन रेशम ही बुनते हों। ऐसी हालतमें तो उन्हें भी महीन सूत बुननेसे सम्बन्धित जानकारी नहीं होगी। ऐसा ही हो तो हमें आन्ध्रदेशमें और बंगालमें जहाँ बहुत महीन सूत बुना जाता है, वहाँसे आवश्यक साधन जुटाने चाहिए। या, हम वहाँ अपने सूतका नमूना भेजें और उनसे उसे बुननेकी रीति पूछें। तुमने आन्ध्रके बुनकरोंको काम करते देखा है? वे हमारी प्रदर्शनियोंमें सूतको काँजी देने आदिकी क्रियाएँ करते थे — क्या तुमने यह देखा है? लेकिन मैंने ऊपर जो-कुछ लिखा है उसे पढ़नेके बाद तुम्हें स्वयं इस सवालको हल करनेकी ठीक दिशा सूझेगी। हमें आश्रममें ही महीनसे-महीन सूत स्वयं बुन सकनेकी शक्ति विकसित करनी चाहिए। इससे शायद तुम यह भी समझ जाओगे कि सूत बुननेकी इस कलाको पूरी तरह तो याज्ञिक ही हस्तगत कर सकते हैं और यह भी कि जब इस कलापर हमारा पूर्ण अधिकार हो जायेगा तब सामान्य खादीको भी बढ़ियासे-बढ़िया स्तरतक पहुँचाना तो हमारे लिए बिलकुल आसान हो जायेगा। दूसरे उद्योगों और उनसे सम्बन्धित कलाओंपर दृष्टि डालो तो तुम देखोगे कि जहाँ जिन-जिन उद्योगोंकी कलापर लोगोंने पूरा अधिकार प्राप्त नहीं किया वहाँ वे उद्योग अविकसित रह गये हैं। और कला-कोविद तो हमेशा वे ही लोग हुए हैं जो उस कामको यज्ञार्थ करते हैं। हमने इस कलाकी उपेक्षा की इसीलिए हम करोड़ों लोगोंका यह घरेलू धन्धा खो बैठे। अब हम इस धन्धेका पुनरुद्धार तभी कर सकते हैं जब हम उसके लिए कड़ी तपस्या करें और उसका विकास यज्ञकी भावनासे करें। इस दृष्टिसे विचार करते हुए मुझे यह बात बहुत अच्छी लगी कि तुमने इस कार्यमें जुटे रहनेका दृढ़ निश्चय कर लिया है और तुम्हारा मन शान्त हो गया है।

केशूके पींजनका उपयोग है। अलबत्ता, वह गाँवके घरोंमें नहीं चल सकता। इसलिए जिस तरह पुराना चरखा चल रहा है उसी तरह पुराना पींजन भी चलता रहेगा। उसमें जो सुधार किये जा सकें वे जरूर किये जाने चाहिए और मैं मानता हूँ कि वे किये जा सकते हैं। मीराबहन इस दिशामें साधनापूर्वक अच्छा प्रयत्न कर

रही है। वह जेलमें भी धुनाईका काम कर रही है और उसने उसमें कुछ सुधार भी किये हैं। तुम इस चीजके पीछे पड़े हुए हो, यह ठीक ही है।

तुमने हम दोनोंके सूतकी परीक्षाका जो विवरण भेजा है वह बहुत सहायक सिद्ध होगा। तुम्हारी अधिकांश टीका मुझे सही मालूम हुई है। मैं अपने उन दोषोंको स्वयं भी देख सका हूँ। किन्तु थकावटके कारण उनकी उपेक्षा कर देता हूँ। अक्सर देखता हूँ कि बीचमें कोई खराब पूनी आ जानेके कारण अथवा दबावके कम-बढ़ होनेके कारण मोटा सूत निकल रहा है। किन्तु मैं उसे तोड़ता नहीं, वैसा ही चला लेता हूँ। यह तो बहुत अच्छी तरह समझता हूँ कि इसके कारण बुनकर हैरान होगा और इसलिए इसमें अहिंसा-भंग होती है, किन्तु काम करते समय प्रमादवश, और कुछ अंशमें लोभके कारण, आलस्यके कारण या थकावटके परिणामस्वरूप इस दोषकी उपेक्षा कर जाता हूँ। किन्तु अब तुम्हारी इस टीकाके बाद मुझे आशा है कि मेरा सूत अपने-आप सुधरेगा। इसलिए यह सूत जब बुना जाये उस समय यदि तुम उसके दोषोंकी टीका और भेजो तो वह मेरे लिए और इसी तरह महादेवके लिए उपयोगी ही होगी। कारण, हम दोनोंकी इच्छा तो यही है कि हम दोनों यथाशक्ति महीनसे-महीन और अच्छेसे-अच्छा सूत कातें। यहाँ दूसरोंके सूतसे अपने सूतकी तुलना करनेकी सुविधा तो है नहीं इसलिए कुछ खामियाँ तो रह ही जायेंगी किन्तु हम लोग सूतको सुधारनेकी दिशामें जितनी दूरतक जाना सम्भव होगा उतनी दूरतक जानेकी अपनी कोशिश बराबर करते रहेंगे।

आशा है, तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा होगा। मेघजी के बारेमें कुछ नहीं लिख रहा हूँ।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३७५७) से।

५०१. पत्र : वसन्तलाल मोरारकाको

२६ अक्टूबर, १९३२

प्रार्थनामें मनकी स्थिरता अभ्याससे ही आ सकती है। प्रार्थना करनेके समय ऐसा चिन्तन करना कि जैसे शरीरके लिए अन्न आवश्यक है, उससे भी अधिक प्रार्थना आत्माके लिए आवश्यक है। ऐसा चिन्तन करके प्रार्थनामें बैठनेसे थोड़े ही दिनोंमें आनन्द आ जायेगा। रामनामका विस्मरण ही सबसे बड़ा दुख है ऐसा विश्वास रखनेसे नामस्मरण स्थायी हो जायेगा। असत्य सबसे बड़ा पातक है, ऐसा विश्वास रखनेसे और असत्यसे कुछ क्षणिक लाभ मिल जाये तो उसका त्याग करनेसे सत्य सहज प्रिय हो जायेगा।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १७८

५०२. पत्र : श्रीपाद दामोदर सातवलेकरको

२६ अक्टूबर, १९३२

भाईश्री सातवलेकर,

मैं प्रतीक्षा कर ही रहा था। इतनेमें आपका खत मिल गया। कुछ आपत्तिका ही डर मैंने प्रकट किया था। और वही कारण आपके पत्रसे खुल जाता है।[1] हम सब आशा करते हैं कि आपके पुत्रको शीघ्रतासे सम्पूर्ण शक्ति आ जायेगी और वैसे ही आपको। दाँतके बारेमें मैंने बहुत देखा है कि दाँतके वैद्य लोग काफी गलतियाँ कर लेते हैं और दर्दीओंको कष्ट भोगना पड़ता है। आपकी अशक्त अवस्थामें भी पं० महेन्द्र मिश्रके लेखका[2] विस्तृत उत्तर दिया है इसलिए आपको धन्यवाद। पत्रको मैं संग्रहमें रखुँगा और उसका ध्यानपूर्वक मनन करूंगा। सरदारजीका संस्कृत-अभ्यास भली भांति आगे चल रहा है। और जो दूसरी 'सेट'[3] आ गई उसका बहुत विद्यार्थी लाभ उठा रहे हैं।

आपका,
मोहनदास

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४७६७) से; सौजन्य : श्री० दा० सातवलेकर

५०३. पत्र : रामनाथ 'सुमन' को

२६ अक्टूबर, १९३२

सामुदायिक प्रार्थनाकी जड़ वैयक्तिक प्रार्थना ही हो सकती है। सामुदायिक प्रार्थनापर मैंने वजन दिया है उसका यह अर्थ कभी नहीं है कि वह वैयक्तिक प्रार्थनासे अधिक महत्व रखती है। परन्तु क्योंकि हमें सामुदायिक प्रार्थनाकी आदत ही नहीं है, इसलिए मैंने उस प्रार्थनाकी आवश्यकता बतानेकी चेष्टा की है। जो-कुछ अनुभव एकांतमें बैठकर तुम्हें होता है, वह समूहमें होना अशक्य नहीं तो कठिन तो है ही; और मैंने ऐसा भी देखा है कि कई लोग एकान्तमें बैठकर प्रार्थना कर

१. सातवलेकरजी ने अपने २० अक्टूबरके पत्रमें गांधीजी को सूचित किया था कि उनके पुत्रको टाइफाइड हो गया था और उसके दाँतमें दर्द था जो दन्त-चिकित्सकके इलाजसे और भी बढ़ गया था।

२. महेन्द्र मिश्रने अपने लेखमें इस बातका दावा किया था कि वैदिक युगमें आम तौरपर माँस खाया जाता था। किन्तु सातवलेकरजी ने बहुत-से उद्धरण देते हुए उक्त दावेका खण्डन किया था।

३. पुस्तकोंका।

ही नहीं सकते, समुदायमें ही कर सकते हैं। उनके लिए वैयक्तिक प्रार्थना आवश्यक हो जाती है। मैं यह भी कबूल करूँगा कि सामुदायिक प्रार्थनाके बिना मनुष्य रह सकता है, वैयक्तिकके बिना कभी नहीं रह सकता।

अस्पृश्यताके बारेमें आज कुछ भी नहीं लिख सकता। थोड़े दिनोंके बाद दुबारा पूछीये।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १७८

५०४. पत्र : हरिसिंह गौरको

२७ अक्टूबर, १९३२

मैं यह स्वीकार करता हूँ कि आपको जैसी अन्तःप्रेरणा होती है, वैसी मुझे नहीं होती, क्योंकि ब्राह्मणोंके प्रभावके बारेमें मैं आपके विचारसे सहमत नहीं हूँ।[1] ब्राह्मण जहाँ निस्सन्देह बहुत-सी बातोंके लिए उत्तरदायी हैं, वहाँ मेरा यह भी विश्वास है कि जितना अन्याय उन्होंने किया है, उससे बहुत अधिक अन्याय उनके साथ किया गया है। हर धर्मने अपने-अपने ब्राह्मण पैदा किये हैं। वे इस नामसे पुकारे नहीं गये हैं, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। मेरे खयालसे, हमारे ब्राह्मण अन्य धर्मोंके ब्राह्मणोंकी तुलनामें अच्छे ही हैं। साथ ही, अज्ञान-भरे नाना प्रतिबन्धोंवाली इस जाति-प्रथासे मुझे कोई लगाव नहीं है। वर्णाश्रममें मेरा जरूर विश्वास है। पर अन्तर्जातीय भोज और विवाहके बारेमें उसपर जो प्रतिबन्ध थोप दिये गये हैं, उनमें और ऊँच-नीचके विचारमें मेरा विश्वास नहीं है। विवेकानन्दकी तरह मेरा भी यह विश्वास है कि शंकराचार्यने बौद्ध धर्मको भारतसे नहीं खदेड़ा, क्योंकि वे स्वयं प्रच्छन्न बौद्ध थे। उन्होंने केवल उन बुराइयोंसे उसे मुक्त किया जो उसमें घुसती जा रही थीं और हिन्दू धर्मसे उसका अलगाव रोका। मेरे विचारमें, बुद्धके उपदेशका प्रभाव कहीं भी भारतसे अधिक स्थायी नहीं रहा है। फिर भी, मैं आपके इस कथनसे पूरी तरह सहमत हूँ कि हमें फिरसे पूरी तरह स्वच्छ होनेकी जरूरत है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १८१

१. श्री गौरने कहा था कि शंकराचार्यने ब्राह्मणोंके प्रभुत्वको हिन्दू धर्मका आधार बना दिया जिससे उसे बहुत-से आक्षेप सहने पड़े, और बौद्ध धर्म हिन्दू-धर्मका विशुद्ध रूप था। उन्होंने बौद्ध धर्मपर अपनी एक पुस्तक भी साथ भेजी थी।

५०५. पत्र : तारा र० मोदीको

२७ अक्टूबर, १९३२

चि० तारा,

मुझे तेरा पत्र मिले और मैं उत्तर न दूँ, ऐसा नहीं हो सकता। यदि तूने सीधे मुझे पत्र लिखा होगा तो वह इधर-उधर हो गया होगा। यदि आश्रमकी मार्फत लिखा होगा तो उसकी जानकारी मुझे अवश्य होती। यदि तूने मुझसे कोई विशेष प्रश्न पूछे हों तो फिर पूछ लेना। बाकी बहुत-कुछ तो मेरे लिखे अनेक पत्रों और लेखोंसे मिल ही रहा होगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१७४) से। सी० डब्ल्यू० १६७३ से भी; सौजन्य : रमणीकलाल मोदी

५०६. पत्र : वसुमती पण्डितको

२७ अक्टूबर, १९३२

चि० वसुमती,

तेरा पत्र मिला।

जो अपने प्रत्येक क्षणका हिसाब दे वह तो महात्मा हुआ, ऐसा मानना मानसिक आलस्यका चिह्न है। पश्चिममें ऐसे अनेक उद्यमी स्त्री-पुरुष हैं जो अपने प्रत्येक क्षणका हिसाब दे सकते हैं किन्तु इसलिए वे बेचारे महात्मा नहीं हो जाते। अतः ऐसा तो महात्मा ही कर सकते हैं, इस बातकी आड़ लेकर तू प्रत्येक क्षणका हिसाब देनेके अपने कर्त्तव्यसे मुक्त नहीं हो सकती। यह तो एक ऐसी आदत है जो सामान्यतः हम सबको पड़नी ही चाहिए। और इसके लिए किसीको बहुत श्रेय भी नहीं दिया जा सकता।

'सदोष स्वधर्म' में 'सदोष' का अर्थ नीतिरहित या अनीतिमय नहीं है। यहाँ उसका अर्थ 'जो घटिया मालूम हो' इतना ही है। 'गीता' की दृष्टिमें तो सभी धर्म समान हैं। कारण, 'गीतामाता' तो मनुष्यके हृदयको परखती है इसलिए वह तो बिलकुल शुद्ध न्याय करती है। अनाजके व्यापारीको अपना धन्धा – धर्म – 'गीता' की भाषामें लिपिकके धन्धेकी तुलनामें घटिया — सदोष — मालूम हो और इसलिए यदि वह अपना धन्धा छोड़कर लिपिक बनना चाहेगा तो वह कहींका नहीं रहेगा न? इसी तरह यदि टाइटस जो अभी गोशाला की देखरेख करता है, यह देखकर कि आजकल

तो अन्त्यज-सेवाकी हवा चल रही है, गोसेवा का काम छोड़कर अन्त्यज-सेवाके पीछे भागे तो उसके विषयमें यही कहना होगा कि उसने स्वधर्म छोड़कर 'गीता' का अनादर किया है। इसी तरह तुम सब जो अभी प्रतिज्ञा-विशेषसे बँधी हुई हो, उस प्रतिज्ञाके पालनसे भागकर यदि किसी अन्य सेवा-कार्यको अपनाओ तो तुम्हें भी स्वधर्म छोड़नेका दोष लगेगा। बात स्पष्ट हो गई न?

कोई आश्रमवासी अपना स्वास्थ्य सुधारनेके लिए आश्रमसे बाहर जाये और उसके सुधरनेपर फिर आश्रममें आ जाये, इसमें मैंने दोष नहीं माना है। ऐसी सलाह तो मैंने स्वयं कई लोगोंको दी है न? किन्तु जो लोग आश्रममें ही जीने और मरनेको, आश्रम छोड़कर बाहर न जानेकी प्रतिज्ञा करें, जैसी कि गंगादेवीने की थी, वे निश्चय ही स्तुत्य हैं। लेकिन ऐसा तो कोई बिरला ही कर सकता है और यह विचार उसके हृदयमें पैठ गया हो तभी कर सकता है। वह भले आश्रममें सेवा लेता हो तो भी वह भारी सेवा करता हैं क्योंकि वह अत्यन्त उच्च कोटिके धैर्यका और जीनेके प्रति उदासीनताके भावका उदाहरण पेश करता है। इसके सिवा, हमारी आकांक्षा गरीबीका जीवन अपनानेकी है। गरीब लोग बीमार होनेपर उस बीमारीके कारण बहुत तकलीफ भोगते हुए भी न तो अपना घर छोड़ते हैं, न गाँव। वे ऐसा कर ही नहीं सकते। उनके आत्मीय उनकी जितनी सेवा कर सकें उतनी सेवासे वे सन्तुष्ट रहते हैं। किसी-किसीको तो यह सन्तोष भी नहीं मिलता। ऐसा धैर्य जो ज्ञानपूर्वक स्वेच्छासे दिखायें वे नमस्य हैं। वे हमें ऐसे धीरजका पाठ पढ़ाकर समाज-सेवा ही करते हैं। इसीलिए मैंने पुंजाभाईको यह सलाह दी थी कि "तुम आश्रममें ही, आश्रमवासियोंकी सेवा लेते हुए, अपना जीवन समाप्त करो, इसमें तुम्हारा श्रेय है और आश्रमका भी।" इसीलिए मैंने किशोरलालसे कहा था, "तुम आश्रमसे चाहे-जैसी सेवा लेते रहो; तुम्हारे-जैसोंका आश्रममें होना ही आश्रम की सेवा है।" नारणदासको लिखे अपने पत्रमें मैंने एक सिद्धान्त[1] बताया है। उसके बारेमें ज्यादा सोच-विचार न करना। इस परम धर्मका पालन करनेकी प्रेरणा जिसे होगी वह उसे प्रकट करेगा। हम तो नम्रतापूर्वक उतना ही करें जितना हम कर सकते हों।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९३३५) से। सी० डब्ल्यू० ५८१ से भी; सौजन्य : वसुमती पण्डित

१. देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", १५-१०-१९३२।

५०७. पत्र : शंकरराव घाटगेको

२७ अक्टूबर, १९३२

इस शरीरके नाशके साथ आत्माका नाश नहीं है, ऐसी प्रतीति सबको है। ऐसे ही इस शरीरके पहले भी आत्माका अस्तित्व था। यदि यह सच है तो आत्माको दुबारा देह धारण करना नहीं होगा, या इस देहके पहले देह धारण नहीं किया था ऐसा माननेका कोई कारण नहीं है। परन्तु आज आत्मा देहधारी है इसलिए भविष्यमें भी देहधारी होगा ऐसा मानना प्रवाह-पतित है।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १८२

५०८. पत्र : अमतुस्सलामको

२७ अक्टूबर, १९३२

प्यारी बेटी अमतुस्सलाम,

हिन्दी सीख रही है सो अच्छी बात है। इसपर लगी रहेगी तो ठीक होगा। जो काम हाथ धरा उसको अंजाम पहुंचाना। हर हफ्तामें एक दिनका फाका करनेकी मैं कोई जरूर[1] नहीं देखता हूँ। हां, अगर तन्दुरुस्तीके लिए फाका रखनेकी कोई जरूर[2] हो तो दूसरी बात है। मैंने कहा है वह बिलकुल ठीक समझो। नारणदास जो कहें वही दिलसे करनेमें ही तुम्हारा भला है। कुदसियाका भी खयाल छोड़ो। नारणदासको करना है वह करने दो। तुमको पूछें तो जो-कुछ कहना है सो कहो। डा० शर्माके हाल लिखो। उनके आश्रममें आनेका क्या हुआ? यह खत पढ़नेमें कुछ दिक्कत तो नहीं थी?

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २६१) से।

१ व २. जरूरत।

५०९. तार: मणिबहन पटेलको[1]

२८ अक्टूबर, १९३२

मणिबहन पटेल,
कैदी, बेलगाँव जेल

आशा करता हूँ कि दादीमाँ की मृत्युसे तू विह्वल नहीं हुई होगी। ऐसी मृत्युकी सब इच्छा करते हैं। बहुत समयसे तेरा पत्र क्यों नहीं आया? प्यार।

बापू

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–४: मणिबहेन पटेलने, पृ० ८९

५१०. पत्र: राजकुमारी एफी एरिस्टार्शीको

२८ अक्टूबर, १९३२

मेरा स्वास्थ्य फिरसे लगभग सामान्य स्थितिपर आ गया है और मैं बिना खास थकान महसूस किये अपने रोजमर्राके सब काम कर लेता हूँ। इसलिए कृपया मेरे बारेमें कोई चिन्ता न करें। भविष्यके गर्भमें क्या है, यह कोई नहीं जानता और उसमें झाँकनेका हमें अधिकार नहीं है। वर्तमानकी चिन्ता यदि हम करें तो भविष्यकी ईश्वर आप करेगा।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १८४

१. मूल अंग्रेजी तार उपलब्ध नहीं है

५११. पत्र : स्कॉटलैंडके बाल-संघके मन्त्रीको

२८ अक्टूबर, १९३२

बच्चोंकी शुभकामनाओंको मैं सदासे मूल्यवान मानता आया हूँ, क्योंकि वे आम तौरपर बहुत ही मासूम होते हैं। क्या आप यह नहीं जानते कि आत्मबल नामकी ऐसी कोई चीज नहीं होती जिसके पीछे ईश्वर न हो? इसलिए आपने जो भेद किया है, वह गलत है। कुछ भी हो, मैं तो किसी ऐसे आदमीको नहीं जानता जो आत्माके अस्तित्वको तो मानता हो पर ईश्वरको न मानता हो।

आपका न केवल अपने देशकी, बल्कि समस्त संसारकी शान्ति और समृद्धिके लिए प्रार्थना करनेका विचार मुझे बहुत पसन्द है। व्यक्तिगत रूपसे मेरा ऐसी देश-भक्तिमें विश्वास नहीं है जिसमें अपने देशके सिवा अन्य देशोंका कल्याण शामिल न हो। अतः मैं आपके लिए पूरी सफलताकी कामना करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १८३

५१२. पत्र : हेनरी एस० सॉल्टको[1]

२८ अक्टूबर, १९३२

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। क्या अत्यन्त विनम्रतापूर्वक मैं यह कह सकता हूँ कि भारतसे बाहर ऐसे लोग विरले ही मिलते हैं जो मानवेतर प्राणियोंको बन्धु-प्राणी मानते हों। मानव-जाति जब इस महान् सत्यको आम तौरपर स्वीकार कर लेगी और उसका पालन करने लगेगी तो स्वर्णयुग आ जायेगा।

धन्यवाद।

आप और श्रीमती सॉल्ट मेरा अभिवादन स्वीकार करें।

हृदयसे आपका,

मो० क० गां०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८५७९) से।

१. अस्सी वर्षीय श्री सॉल्ट गांधीजी से नवम्बर, १९३१ में लन्दनमें मिले थे। ८ अक्टूबर, १९३२ को उन्होंने लिखा था : "लन्दनमें जब मैं आपसे मिला था तो जिस विषयपर विशेष रूपसे विचार-विमर्श हुआ वह शाकाहारवाद था। मेरा सदा यह दृढ़ विश्वास रहा है कि समाजवादकी तरह आहार-सुधारको भी मानव-जातिकी मुक्तिमें आवश्यक भूमिका अदा करनी है। यह बात मेरी समझमें नहीं आती कि मनुष्य जबतक अपने बन्धु-प्राणियोंको ठगते या खाते रहेंगे तबतक बन्धुत्वका वास्तविक और पूर्ण बोध कैसे हो सकता है!"

५१३. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

२८ अक्टूबर, १९३२

चि० परसराम,

आचार्य गिडवानीके साथ जो बातचीत हुई थी, उसमें और [हरिजनोंके साथ] सहभोजमें बिलकुल कोई समानता नहीं है। जो लोग सहभोज आदिका आयोजन करते हैं वे शुभ भावनावश ही वैसा करते हैं। इसलिए जो विद्यार्थी केवल मजेकी खातिर सहभोजोंमें भाग लेते हैं उनकी तुलना उन लोगोंसे नहीं हो सकती। हरिजनों की तुलना तो मजेके लालची विद्यार्थियोंके साथ किसी तरह भी नहीं की जा सकती। क्योंकि हरिजनोंके लिए हम जो-कुछ करते हैं वह उन्हें ललचानेके लिए किया गया नहीं माना जा सकता। जो प्रायश्चित्त करता है वह लालच नहीं देता, वह तो आत्म-शुद्धि करता है। क्या यह दिनके उजालेकी भाँति स्पष्ट नहीं है? सहभोज उचित है या नहीं यह एक अलग प्रश्न है। परिस्थिति विशेषमें यह उचित और अन्य परिस्थितिमें अनुचित भी हो सकता है। अतः यह तो सर्वथा उस परिस्थितिपर आधारित बात हुई।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५१०) से। सी० डब्ल्यू० ४९८७ से भी; सौजन्य : परशुराम मेहरोत्रा

५१४. संदेश : आर्यसमाजको

[२९ अक्टूबर, १९३२ के पूर्व][1]

स्वामी दयानन्दजी महाराजके प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करनेका इससे अधिक कारगर उपाय मैं नहीं सोच सकता कि प्रत्येक आर्यसमाजी सुधारकी इस लहरमें अपनी पूरी शक्ति हरिजनों (तथाकथित दलित वर्गों) की सेवामें लगा दे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३१-१०-१९३२

१. साधन-सूत्रमें रिपोर्टपर २९ अक्टूबरकी तारीख दी गई है।

५१५. एक पत्र[1]

२९ अक्टूबर, १९३२

यदि 'हरिजन' शब्द 'अनटचेबल' (अस्पृश्य) भाइयोंके लिए सदैव प्रयुक्त करना होता तो आपकी आपत्ति ठीक होती। लेकिन, जहाँ अभी उन्हें शेष हिन्दुओंसे अलग दिखाना आवश्यक है, वहाँ मुझे यह भी लगा कि उनके लिए 'अनटचेबल' या इसके देशी भाषाके पर्यायका प्रयोग करना अब उचित नहीं रह गया है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १८५

५१६. पत्र : आश्रमके बालक-बालिकाओंको

२९ अक्टूबर, १९३२

बालको और बालिकाओ,

तुम्हारा २० तारीखका कार्यक्रम मुझे तो बहुत सुन्दर लगा है। बालक-बालिकाओं, दोनोंका बना हुआ भोजन चखनेका तो मेरा भी बहुत मन होता है किन्तु तुम क्या सचमुच चखने दोगे? यह पत्र तुम्हें नववर्षके बाद मिलेगा। नववर्षमें तुम सब अपना स्वास्थ्य बहुत अच्छा रखो, तुम लोग सच्चे सेवक-सेविका बनो और तुम्हारा व्यवहार दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक शुद्ध होता जाये, यही मेरी कामना और आशीर्वाद है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१. यह पत्र किन्हीं बंगाली सज्जनको लिखा गया था, जिनका नाम साधन-सूत्रमें नहीं बताया गया है। उन्होंने कहा था कि लगता है, गांधीजी अस्पृश्योंके लिए 'हरिजन' नामको स्थायी बना रहे हैं।

५१७. पत्र : गजानन वी० खरेको

२९ अक्टूबर, १९३२

चि० गजानन,

तेरे द्वारा भेजे हुए चित्र मिले। हम लोगोंमें से कोई चित्रकलाका पारखी नहीं है। किन्तु हम तीनोंको दोनों चित्र पसन्द आये। राम-हनुमानका चित्र सबसे अधिक पसन्द आया है। सरदार सबसे अधिक खुश हुए हैं। एक चित्रपर तेरा नाम है और दूसरेपर "भाऊ" नाम दिया हुआ है। इसलिए यदि यह चित्र तेरा नहीं है तो फिर यह भाऊ कौन है? मैं तो यही मानता हूँ कि दोनों चित्र तेरे ही हैं। क्या ये दोनों किन्हीं चित्रोंकी नकल हैं या मौलिक हैं? यदि और कोई बात लिखने लायक हो तो लिखना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ३०९) से; सौजन्य : लक्ष्मीबहन ना० खरे

५१८. एक पत्र[1]

२९ अक्टूबर, १९३२

अगर आपका यह विश्वास हो कि शादी कभी करनी ही नहीं है, तो आप शादी न करें। लेकिन भीतर-ही-भीतर इच्छा हो, तो माताकी इच्छाको मान लें। वरोंकी कमी है तो कन्याओंको दूसरी जातियोंमें ब्याहना चाहिए। जात-पाँतकी पाबन्दियोंका धर्मके साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। यह सही है कि यह हिन्दू धर्ममें बहुत समयसे चली आ रही एक रूढ़ि बन गई है, मगर रूढ़ियाँ तो समय-समयपर बदलती ही रहती हैं। आपका पत्र बहुत स्वच्छ है, इसीलिए आपको इतना समझाकर जवाब लिखा है। नये सालमें आपकी धर्मवृत्ति बढ़े।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १८६

१. यह पत्र सुनार-जातिके किसी आदमीको लिखा गया था।

५१९. पत्र : नारणदास गांधीको

प्रतिपदा [३० अक्टूबर][1], १९३२

चि० नारणदास,

इस वार तुम्हारा पैकेट मंगलवारको मिला। यह पत्र मिलनेतक तो मोहनको बिलकुल दुरुस्त हो चुकना चाहिए। बलभद्रका[2] लम्बा पत्र तुमने तो नहीं पढ़ा होगा। मैंने उसे जो पत्र लिखा है उसे पढ़े बिना उसको दे देना, क्योंकि वह ऐसा ही चाहता है। बालकोंकी इच्छाका हम इस तरह खयाल रखें, यह अच्छा है। इसलिए उसे बुलाकर कहना कि मैंने पत्रको पढ़े बिना देनेको कहा है और इसलिए तुम उसी तरह उसे दे रहे हो। इससे वह खुश होगा। उसके पत्रमें दो मुद्दे थे। एक तो यह कि वह अपने बापसे बहुत डरता है और दूसरा यह कि जब उससे कोई गलती हो जाती है तो तुम और प्रेमा उसे धमकाते हुए कहते हो, "जा अपने बापके यहाँ।" यह शिकायत मुझे अतिरंजित लगती है। लेकिन वह जिद्दी लड़का है, और परेशान कर देनेवाला भी। इसलिए अगर उसे ऐसी धमकी दी गई हो तो इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं। वह निरवलम्ब तो है ही, और चूंकि मूर्ख भी है, इसलिए सभी उसका मजाक उड़ाते हैं। अपनी मूर्खताका उसे भान नहीं है, इसलिए वह मजाक करनेसे चिढ़ जाता है। ऐसे लड़के बहुत ही दयाके पात्र हैं। तुम उसे हँसाते हुए उससे यह सब पूछना और जो आश्वासन दिया जा सके, देना। उसके मनमें हमारी ओरसे जो सच्चा या झूठा डर हो, अगर वह चला जायेगा तो बापका डर भी ज्यादा नहीं रहेगा। अभी तो उसे यह डर है कि अगर आश्रमसे उसकी छुट्टी कर दी गई तो बापके पास जाना पड़ेगा। उसकी एक और शिकायत यह है कि पहले विद्यार्थियोंको जो छूट थी, वह अब नहीं है। इसमें कोई सचाई होगी, ऐसा मुझे नहीं लगा और उसको भी मैंने वैसा ही लिख दिया है। फिर भी, अगर कुछ विचार करने लायक हो तो करना।

रतिलालका क्रोधसे भरा पत्र आया है। उसने लिखा है कि तुम उसपर बहुत नाराज हुए, उसे दुतकारा, आदि। चम्पा भी इस शिकायतमें शामिल है। चम्पाका रोष तुमपर क्यों है, यह समझ नहीं पाया। पैसेके बारेमें तुमने जो लिखा है, वह समझता हूँ। महावीरका पत्र आया है। उसमें उसने लिखा है कि कुछ दिनोंमें वह आश्रम लौटेगा। लौटते हुए रास्तेमें मुझसे मिलते जानेकी अनुमति तुमसे माँगी है, यह भी लिखा है। मैंने तो उसे इधर आनेसे मना किया है। मेरा मुलाकात करना अभी

१. साधन-सूत्रमें २९ अक्टूबर है, लेकिन कार्तिक सुदी प्रतिपदा, ३० अक्टूबर को थी।

२. आश्रम-शालाका एक विद्यार्थी।

तो अनिश्चित ही है। यहाँ आनेका मतलब बेकार ही तीसेक रुपये खर्च करना होगा। यह कैसे खर्च किया जा सकता है?

मुझे लगता है कि नवीन जैसे हो वैसे जल्दी अलमोड़ा जा सके, यह वांछनीय है। बारीक सूतके बारेमें मथुरादासके पत्रमें[1] अपनी बात मैंने पूरी तरह लिखी है; उसे पढ़ना। तिलकम् जब वहाँ आया, उस समय क्या उसका स्वास्थ्य बहुत अच्छा हो गया था? इन दिनों उसकी खुराक क्या है? मुझे लगता है कि मीराबहनकी खुराक उसे पचेगी। उसका शरीर तो मांसाहारसे ही गढ़ा हुआ है। मैंने अकसर देखा है कि मांसाहारी लोग दालके बलपर अपना शरीर सुदृढ़ नहीं रख सकते; लेकिन दूध, रोटी, सब्जियाँ और नीबू मिलें तो ये निभा सकते है। कारण यह है कि मांसाहारियोंको ज्यादा स्टार्च नहीं लेना पड़ता। मगर मांस छोड़नेपर भूख शान्त करनेके लिए वे बहुत स्टार्च लेते हैं और स्नायुओंको दृढ़ रखनेके लिए ज्यादा दाल खाते हैं। यह पचता नहीं, और फलतः वे रुग्ण हो जाते हैं। मांस छोड़ते समय अगर दूध काफी लें तो मांसकी जरूरत पूरी हो जाये, और गेहूँके चोकरदार आटेकी रोटी लें तो उससे भूख भी शान्त हो। रोटीमें रहनेवाले चोकर या भूसी और सब्जियोंमें रहनेवाले रसोंसे वे अपनी अँतड़ियोंको साफ रख सकते हैं। यह तो एक विचार है। मीराबहनको निरामिष आहार तुरन्त रास आ गया, उसका कारण ही यह है कि उसे दाल छूने ही नहीं दी। उसका दृढ़ निश्चय तो बड़ा कारण है ही। उसने तो मेरे सम्पर्कमें आते ही यह निश्चय कर लिया था कि भले ही शरीर न रहे, पर मांस तो कदापि नहीं खाऊँगी। लेकिन, उसका निश्चय और उसकी श्रद्धा तो असाधारण है।

स्टोवके बारेमें जमनाको तो मैंने पूरा पुराण ही लिखकर भेजा है। इसे दूसरी बहनें भी पढ़ जायें और फिर अपनी-अपनी इच्छानुसार बरतें। बहनें खुशी-खुशी स्टोवको छोड़ें तभी उन्हें लाभ मिलेगा।

जेठालालको लिखा पत्र पढ़ना। इसलिए उस विषयपर यहाँ ज्यादा लिखनेकी जरूरत नहीं रह जाती। तुम्हारे प्रश्नका उत्तर उस पत्रमें आ जाता है। वहाँ आने पर पुरुषोत्तमकी तबीयत बिगड़ी तो नहीं न?

तुम देखोगे कि इस बार मैंने बहुत-से पत्र बोलकर लिखवाये हैं। जो हालत बायें हाथकी कुहनीकी थी, वही दायें हाथकी कुहनीकी भी हो गई है। कहा जा सकता है कि इस बार मैंने पत्र लिखनेमें बहुत छूट ले ली। आश्रमके पत्रोंके अतिरिक्त और भी बहुत-से पत्र लिखे और रोज ही लिखता रहा। फिर प्रतिदिन ढाई घंटेतक कातता भी रहा। यह परिश्रम ज्यादा सिद्ध हुआ। इसलिए दाहिने हाथको लिखनेसे जहाँतक बने आराम देनेका निश्चय किया। इससे अब वह कुछ ठीक है। यह जानकर चिन्ता करनेका तो कोई कारण ही नहीं है। इस उम्रमें खोई हुई चरबी और स्नायु जल्दी तो वापस आ ही नहीं सकते। [उपवासके] छः दिनोंमें ही शरीर काफी क्षीण हो गया, ऐसा कहा जा सकता है। जैसा यह था, वैसा महीने-

१. देखिए "पत्र: मथुरादास पुरुषोत्तमको", २६-१०-१९३२।

भरमें भी नहीं हो सकता। यह कोई चिन्ताकी बात नहीं है। सामान्य काम-काज तो सब नियमित रूपसे हो ही सकते हैं; और जिन्दगी-भर तो मैं लिखता ही रहा हूँ, सो अब अगर हाथको लम्बे अरसेतक आराम दिया जाये तो इसमें बुरा क्या है? और इसमें आश्चर्य और चिन्ताकी तो कोई बात ही नहीं हो सकती। हाथमें किसी तरहका रोग तो हुआ ही नहीं है। उससे काम नहीं लेता हूँ तब तो उसमें कोई तकलीफ नहीं होती। काम लेते समय भी तकलीफ महसूस नहीं होती, लेकिन बादमें पता चलता है कि यहाँ दर्द हो रहा है, जो यह प्रकट करता है कि यह हिस्सा थक गया है। इसलिए एहतियातके तौरपर इस हाथको आराम दे रहा हूँ।

नये वर्षके लिए पूरे आश्रमको मेरा आशीर्वाद तो है ही। और आश्रमसे मैं क्या आशा रखता हूँ, यह तो अब कोई ऐसा बालक भी समझता और जानता है जिसमें समझनेकी थोड़ी शक्ति आ गई है। छोटे-बड़े सभीमें ऐसा चरित्र-बल और सेवापरायणता आये जिससे यह आशा फलीभूत हो, यही मेरी आकांक्षा है, और ईश्वर तुम सबको ऐसी शक्ति दे, यही उससे मेरी प्रार्थना है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८२६२ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

५२०. पत्र : प्रेमलीला ठाकरसीको

प्रतिपदा, १९८९ [३० अक्टूबर, १९३२]

प्रिय बहन,

मैंने तुम्हें जो पत्र लिखा था, वह मिला होगा। फिर भी तुमसे दिवालीके दिन तो रहा ही नहीं गया। तुम्हारी भेजी प्रेमकी भेंट मिल गयी है। बर्तन वापस भिजवा दिये हैं। आशा है, अब तो तुम शान्त रहोगी। मुझे किसी चीजकी आवश्यकता होगी तो तुम्हें कष्ट देना नहीं भूलूंगा।

हम सबकी यह कामना और ईश्वरसे प्रार्थना है कि नववर्षमें तुम फूलो-फलो, तुम्हारी शुभ इच्छाएँ पूरी हों और तुम्हारी सेवापरायणता बढ़े।

मोहनदासके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४८२६) से; सौजन्य : प्रेमलीला ठाकरसी

५२१. पत्र : शंकरको[1]

३० अक्टूबर, १९३२

आशा है, नव वर्ष[2] आपको त्यागकी और भी अधिक भावना, ध्येयके प्रति और अधिक दृढ़ता तथा आत्मसंयमका और भी स्पष्ट बोध प्रदान करेगा।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १८६

५२२. एक पत्र[3]

३० अक्टूबर, १९३२

आपने गुह्य विद्याओंके बारेमें मेरी राय पूछी है। मुझे उससे कोई लगाव नहीं है। जीवनकी पुस्तक साधारणसे-साधारण बुद्धिवालोंके लिए भी खुली हुई है, और ऐसा ही होना भी चाहिए। ईश्वरीय योजनामें गुह्य कुछ नहीं है। कुछ भी हो, रहस्य और गुह्यकी ओर मेरा कभी आकर्षण नहीं रहा। सत्यमें कुछ भी गोपनीय नहीं है और सत्य ही ईश्वर है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १८८

५२३. पत्र : मोहनलाल एम० भट्टको

३० अक्टूबर, १९३२

तुम्हें सन्तोष हो, इस ढंगसे मैं अनशनके नियम तैयार कर सकूँ, ऐसा नहीं दीखता। इतना कहा जा सकता है कि इसमें पूर्ण सत्य और पूर्ण अहिंसा होनी चाहिए। अनशन अन्तःप्रेरणासे ही किया जाये, देखादेखी बिलकुल नहीं। अपने स्वार्थके लिए कभी न किया जाये, उसका उद्देश्य केवल पारमार्थिक होना चाहिए। जिस काममें किसीके प्रति द्वेषका भाव हो, उसमें अनशन हो ही नहीं सकता। मगर अन्तरात्माका

१. शायद हरिजन सेवा संघ, मद्रासके संयुक्त मन्त्री, एस० शंकर।

२. गुजराती नव वर्ष।

३. पत्र स्विट्जरलैंडकी एक अंग्रेज महिलाको लिखा गया था, जिसने गांधीजी से गुह्य विद्याओंके बारेमें उनके विचार पूछे थे।

आदेश किसे कहा जाये? क्या वह सबको हो सकता है? ये दो बड़े प्रश्न हैं। वह आदेश तो सभीको होता ही है। मगर जैसे बहरा आदमी मधुरसे-मधुर संगीत भी नहीं सुन सकता, वैसे ही जिसके कान इस आदेशको सुननेको खुले न हों, वह इसे नहीं सुन सकता। और जो संयमी नहीं है, उसके कान इस आदेशको सुननेको खुलते ही नहीं। जिसमें 'गीता' के दूसरे अध्यायमें बताये हुए स्थित-प्रज्ञके या बारहवें अध्यायमें कहे गये भक्तके या चौदहवें अध्यायमें वर्णित गुणातीतके लक्षण हों या जिसमें इन तीनोंका सम्मिश्रण हो, उसीमें अन्तरात्माका आदेश सुननेकी योग्यता हो सकती है। भाई सुन्दरम् जो पूछते हैं,[1] वह सवाल पूछने लायक नहीं है। मगर जब वे पूछते ही हैं, तो मुझे कहना चाहिए कि मेरी दृष्टिसे कुल मिलाकर 'सत्यके सबसे ज्यादा नजदीक' हिन्दू धर्म है। मगर साथ ही यह कबूल करनेमें मुझे जरा भी संकोच नहीं होता कि हो सकता है, इसमें मैं मोहवश भूल भी कर रहा होऊँ। मगर यदि यह भूल हो, तो भी क्षम्य है और आवश्यक भी है; क्योंकि इतना मोह न हो, तो मनुष्य किसी धर्मपर टिक नहीं सकता, और अगर उसे किसी दूसरे धर्ममें अधिक सत्य दिखाई दे, तो वह उसे स्वीकार किये बिना रह नहीं सकता और न रहना चाहिए। इसे ईश्वरकी माया कहिए या जिस किसी भी नामसे पुकारना हो, पुकारिए; मगर दुनियामें है ऐसा ही। लेकिन तब भी सब धर्मोंके प्रति समभाव रखना चाहिए। यानी ईसाई ईसाई-धर्मको सत्यके अधिक नजदीक माने, मुसलमान इस्लामको माने, यह बात मुझे हिन्दूकी हैसियतसे स्वीकार कर लेनी चाहिए और यह भी मान लेना चाहिए कि अपने-अपने धर्मपर दृढ़ रहनेके लिए यह उनके लिए जरूरी है। इस मान्यताके लिए उनके प्रति मुझे द्वेष भी न होना चाहिए। मुझे यह भी न मानना चाहिए कि उनका यह खयाल गलत है। मैं आशा रखता हूँ कि भाई सुन्दरम्को और तुम सबको यह बात स्पष्ट हो गई होगी। हो सकता है कि सभी धर्मोंके प्रति समभावका मेरा यह विचार मौलिक हो। औरोंने भी इस ढंगसे सोचा हो, तो वह मुझे मालूम नहीं। मेरे लिए तो यह मौलिक ही है और ऐसा विचार रखते हुए मैंने आनन्द-रसका पान किया है। इस विचारके कारण मैं हिन्दू धर्मपर दृढ़ रहकर भी दूसरे धर्मोंको पूज सकता हूँ और उनमें जो-कुछ अच्छा हो वह निस्संकोच ले सकता हूँ। इस शोधकी उत्पत्ति अहिंसासे हुई है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १८६-७

१. सुन्दरम्ने पूछा था कि कौन-सा धर्म सत्यके सबसे अधिक निकट है। उसका जवाब गांधीजी ने इसी पत्रमें दे दिया था।

५२४. पत्र : गुलाबको

३० अक्टूबर, १९३२

चि० गुलाब,

तुझे अपनी लिखावट सुधारनी चाहिए। तू लिखता है कि तेरा वजन १६९ पौंड है किन्तु यह तो गलत है। फिरसे सही वजन लिख। यदि मेहनत करेगा तो पींजना आ जायेगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७२८) से।

५२५. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

३० अक्टूबर, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। कृष्ण नायरके बारेमें तूने जो-कुछ लिखा है, वह ठीक है। रम्भाके साथ उसके जानेसे पहले क्या उससे तेरी कोई बात हुई? वह उसकी होशियारीका दुरुपयोग करता है। इससे उसे बचा लिया जाये तो अच्छा हो।

तेरे पास लड़कियोंका अच्छा जमघट हो गया दीखता है। ईश्वर तुझे उन सबको सँभालने, अर्थात् उन्हें प्रेमसे शुद्ध करने और शुद्ध रखनेकी शक्ति दे।

लीलावतीकी सँभाल रखना। वह दु:खी लड़की है।

गोंदका पाक तुझे खाना हो तो खाकर देख लेना। मुझे तो डर है कि उसे तू पचा भी नहीं सकती। तुझे जरूरत तेल-मालिश और कटिस्नानकी है। साथ ही पीठकी भी मालिश करवानी चाहिए।

पुराने वर्षके साथ ही तूने अपना क्रोध भी दफना दिया हो तो कितना अच्छा हो।

आश्रमके रुपयेके बारेमें समाधान न हो तो उसकी चिन्तामें न पड़। कभी अपने-आप समाधान हो जायेगा। अन्तमें किसी दिन आश्रमका प्रबन्ध हाथमें लेगी तब तो होगा ही।

फूलोंके पौधोंके साथ मेरी तरफसे बात करना, आश्वासन देना। उनसे कहना कि अपने-जैसा सौन्दर्य, अपनी-जैसी सुगन्ध, अपनी-जैसी एकनिष्ठता, अपनी-जैसी दृढ़ता,

अपनी-जैसी नम्रता, अपनी-जैसी समता और सरलता हमें प्रदान करो और अपनी मित्रता सिद्ध करो।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३०८) से। सी० डब्ल्यू० ६७४७ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

५२६. पत्र : कुलकर्णीको[1]

३० अक्टूबर, १९३२

विद्याका अर्थ ज्ञान और अविद्याका अर्थ कर्म है। संभूति और असंभूतिका अर्थ भी इससे मिलता-जुलता ही है। इसलिए असंभूतिका अर्थ हुआ शरीर और संभूतिका अर्थ हुआ आत्मा। यह सिर्फ मेरे सन्तोषके लिए है और 'ईशोपनिषद्' का ऐसा अर्थ मुझे सरल और सन्तोषजनक प्रतीत हुआ है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १८८

५२७. पत्र : नर्मदाबहन राणाको

३० अक्टूबर, १९३२

चि० नर्मदा,

तुझे एक भी पत्रका उत्तर नहीं मिला, ऐसा नहीं हो सकता। पत्र इधर-उधर तो हो ही नहीं सकता। तेरी लिखावट कुछ सुधरी है। अक्षर जरा बड़े और धीरे-धीरे लिख। धीरे-धीरे तू बहुत-कुछ सीख जायेगी। तूने सप्ताहमें क्या-क्या किया यह तुझे अपने पत्रमें लिखना चाहिए। संयुक्ताक्षरोंको ध्यानसे देख लेना चाहिए।

क्या तुझे शम्भुभाईके पत्र मिलते हैं? घरसे कोई पत्र लिखता है?

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २७६५) से; सौजन्य : रामनारायण एन० पाठक

१. कुलकर्णीने गांधीजी से 'विद्या' और 'अविद्या', 'संभूति' और 'असंभूति' का अर्थ पूछा था। ये चारों शब्द **ईशोपनिषद**के ११ वें और १२ वें मन्त्रोंमें आये हैं। मन्त्र इस प्रकार हैं:

विद्यान्चाविद्यान्च यस्तद्वेदोभयं सह। अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते।

अन्धं तमः प्रविशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते। ततो भूय इव ते तमो य उ सम्भूत्यां रताः॥

५२८. पत्र : सुलोचनाको

३० अक्टूबर, १९३२

चि० सुलोचना,

तेरी लिखावट तो अच्छी होती है, किन्तु पत्रमें तू कुछ लिखती ही नहीं। हफ्ते-भरमें तूने क्या किया यह तो लिख ही सकती है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७४२) से।

५२९. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

३० अक्टूबर, १९३२

तेरे सामने अभी तो सारा जीवन पड़ा हुआ है। तेरी सभी शुभेच्छाएँ पूरी हों और सेवा करनेकी तेरी सभी आकांक्षाएँ सफल हों। सत्य और अहिंसाका तू सच्चा प्रतिनिधि बन।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १८८

५३०. एक पत्र

३० अक्टूबर, १९३२

संस्थाओंमें एकसूत्रता नहीं होती, उसका कारण अनुदारता है और यह भी कि संचालकमें शून्यता — सम्पूर्ण नम्रता नहीं होती। जहाँ संचालक संयमी होगा सामान्यतः वहाँ अड़चनें नहीं आयेंगी। लेकिन, इससे हम इतना तो देख ही सकते हैं कि संस्थामें जितना अधिक संयम होगा, उसमें उतना ही अधिक ऐक्य होना सम्भव है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १८८

५३१. तार : मणिबहन पटेलको

३१ अक्टूबर, १९३२

मणिबहन पटेल
कैदी, बेलगाँव जेल

दादीमाँ ने बुधवारकी दोपहरको करमसदमें चार घंटेकी बीमारीके बाद शान्तिपूर्वक शरीर छोड़ा। आशा करता हूँ कि शुक्रवारको उसका विवरण देते हुए जो पत्र लिखा हैं वह तुझे दिया गया होगा। हम सब सानन्द हैं। प्यार।[1]

बापू

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–४: मणिबहेन पटेलने, पृ० ८९

५३२. पत्र : एम० जी० भण्डारीको

३१ अक्टूबर, १९३२

प्रिय मेजर भण्डारी,

कर्नल डॉयलको लिखे गये इसी २४ तारीखके अपने पत्रमें मैंने जो राहत माँगी थी, वह सरकारने अभीतक नहीं दी है और यदि वह आज नहीं दी गई तो उस पत्रमें मैंने जिस उत्तरोत्तर बढ़नेवाले असहयोगका संकेत दिया था, वह कलसे शुरू हो जायेगा।

जैसा कि उस पत्रमें कह दिया गया है, मैं उसका आरम्भ जो विशेष भोजन मुझे दिया जाता है, उसे अस्वीकार करके करूँगा। इसलिए क्या आप कलसे बकरीका दूध बन्द करवानेकी कृपा करेंगे? इसके अलावा, मैं अभी केवल नीबू और सब्जियाँ सरदार वल्लभभाई पटेलके राशनमें से लेता हूँ और कभी-कभी चोकर-मिले आटेकी थोड़ी रोटी श्रीयुत महादेव देसाईके राशनमें से लेता हूँ। सरदार वल्लभभाई नीबू और सब्जियाँ मँगाते हैं और मैंने उनसे मेरा हिस्सा न मँगानेको कह दिया है। इसके बदलेमें मैं फिलहाल, यदि मुझे दी गई तो 'सी' वर्गके राशनमें से सुबह काँजी[2] और दोपहरको व तीसरे पहर भाखरी[3] लूँगा। 'सी' वर्गके राशनमें से मैं और कोई

१. मूल अंग्रेजी तार उपलब्ध नहीं है।
२. एक प्रकारका पतला दलिया।
३. पानी लगाकर हाथसे बनाई जानेवाली रोटी।

चीज नहीं ले सकता। नमक, सोडा और पानीके अलावा, मैं चौबीस घंटेमें केवल पाँच चीजें ही ले सकता हूँ। 'सी' वर्गके कैदियोंको आम तौरपर जो सब्जियाँ और दाल दी जाती हैं, उनमें तीन-चारसे अधिक चीजें होती हैं। इसलिए मैं उन्हें नहीं ले सकता। 'सी' वर्गके विशिष्ट कैदियोंके लिए विशेष रूपसे तैयार की गई कोई भी चीज लेनेका मेरा इरादा नहीं है।[1]

अस्पृश्यताके बारेमें बहुत-सारे पत्र इकट्ठे हो गये हैं, जिनमें से कुछ बहुत महत्त्वपूर्ण हैं, और उनका प्रकाशनके खयालसे जवाब देना जरूरी है। इसलिए मेरे विचारसे सरकारका यह कर्त्तव्य है कि वह या तो इस विषयपर सरकारके साथ मेरा पत्र-व्यवहार प्रकाशित कर दे या किसी भी दूसरे तरीकेसे, जो सरकारको पसन्द हो, लोगोंको मेरी प्रार्थना और उसे स्वीकार न करनेके अपने निश्चयसे अवगत कर दे।

यह बतानेकी जरूरत नहीं कि मैंने इस पत्र-व्यवहारकी कोई भी बात प्रत्यक्ष या परोक्ष रूपसे बाहर न जाने देनेकी पूरी-पूरी सावधानी बरती है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८५५) से। बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (४), भाग १ पृ० २४५ से भी

५३३. पत्र : एम० जी० भण्डारीको

३१ अक्टूबर, १९३२

मैं नहीं चाहता कि मुझे पेचिश हो, पर यदि होती है तो वह मुझे भोगनी चाहिए। लेकिन उसका जरा-सा भी लक्षण दिखते ही मैं भोजन बिलकुल बन्द कर दूँगा। असहयोगको उत्तरोत्तर बढ़ना है। मैंने यह मार्ग इसलिए अपनाया है कि सरकारको यथासम्भव कमसे-कम असुविधा हो। यह नहीं हो सकता कि मैं जीवित रहूँ और अस्पृश्यता-निवारणके लिए काम न करूँ। लेकिन अगर सरकार यह चाहती है कि अस्पृश्यता-निवारणके लिए काम करनेके लिए जीनेकी अपेक्षा मैं मर जाऊँ, तो मैं क्या कर सकता हूँ!

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १८९। बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (४), भाग १, पृ० २४९ भी

१. महादेव देसाईका कहना है कि यह पत्र मिलनेपर मेजर भण्डारी गांधीजी से मिले थे और उन्होंने गांधीजी को उनके निश्चयसे रोकनेकी कोशिश की थी और कहा था कि जिस भोजनके वे अभ्यस्त हैं, वह यदि उन्होंने नहीं लिया तो वे दुर्बल हो जायेंगे और उन्हें पेचिश भी हो सकती है। गांधीजी के उत्तरके लिए देखिए अगला शीर्षक।

५३४. पत्र : सी० के० नम्बियारको[1]

३१ अक्टूबर, १९३२

प्रिय नम्बियार,

आपका पत्र आद्योपान्त पढ़ गया। मेरा खयाल है, आपके मनमें नाहक ही इतनी शंका है और इसीलिए आपका निर्णय ऐसा कठोर है। अखबारी प्रचारका महत्त्व तो है, लेकिन ठोस परिणाम तो चुपचाप लगातार ठोस कार्य करते जानेसे ही प्राप्त किये जा सकते हैं। जो लोग इस चीजको महसूस करते हैं, उन्हें अखबारोंमें अपने कार्यका उल्लेख न होनेपर दुःख नहीं होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४८) से।

५३५. एक पत्र[2]

३१ अक्टूबर, १९३२

आशा है, तुम फिर कभी झूठ न बोलने और चोरी न करनेका अपना वादा पूरा करोगी। दूसरे यदि तुम्हें धोखा दें या तुम्हारी चीजें चुरायें तो यह तो तुम्हें अच्छा नहीं लगेगा। इसलिए तुम यह आशा मत रखो कि तुम्हारा दूसरोंको धोखा देना या उनकी चीजें चुराना उन्हें अच्छा लगेगा।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ १९१

१. प्रापकका नाम जी० एन० रजिस्टरसे दिया गया है।

२. यह पत्र एक छोटी लड़कीको लिखा गया था, जिसका नाम साधन-सूत्रमें नहीं दिया गया है।

५३८. एक पत्र

३१ अक्टूबर, १९३२

दरदी[1] अपने दर्दके कारण मौन लेते हैं। कोई वक्ता अपने कण्ठको आराम देनेके कारण मौन लेते हैं। कोई अन्तर्मुख होनेके कारण मौन लेते हैं। तीनोंको अपने हेतुके अनुकूल लाभ मिल सकता है, जो अन्तर्मुख होनेके कारण मौन लेंगे वे सामान्यतया उस रोज एकान्तमें रहेंगे, उपवास करेंगे या अल्पाहार करेंगे। आवश्यक होनेपर अन्तर्मुखता बढ़ानेवाले ग्रन्थोंका मनन करेंगे। येन केन प्रकारेण मौन लेनेका कम ही लाभ हो सकता है, और हानि होनेका सम्भव रहता है। सत्यार्थीकी प्रत्येक प्रवृत्तिका स्पष्ट हेतु रहता है।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १९१

५३९. एक पत्र

३१ अक्टूबर, १९३२

'गीता'का मध्यबिन्दु क्या है उसका निश्चय कर लेना। पीछे प्रत्येक श्लोकका अर्थ जो अपने जीवनमें उपयोगी है उसको आचारमें रखना। यह सबसे बड़ी टीका है। और यही 'गीता'का सच्चा अभ्यास है। 'गीता'का मध्यबिन्दु अनासक्ति ही है, उसमें थोड़ा-सा भी शक नहीं होना चाहिए। दूसरे किसी कारणसे 'गीता' नहीं लिखी गई, उसमें मुझे कुछ भी शंका नहीं है। और मैं तो यह अनुभवसे जानता हूँ कि बगैर अनासक्तिके न मनुष्य सत्यका पालन कर सकता है, न अहिंसाका। अनासक्त होना कठिन है, इसमें सन्देह नहीं है। लेकिन उसमें आश्चर्य क्या है? सत्यनारायणकादर्शन करनेमें परिश्रम तो होना ही चाहिए और बगैर अनासक्तिके यह दर्शन अशक्य है।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १९१-२

१. बीमार।

५४०. सन्देश : बेगम अली इमामको

[१ नवम्बर, १९३२ या उसके पूर्व][1]

अपनी इस क्षतिपर, जो मेरी भी क्षति है, आप मेरी हार्दिक संवेदना स्वीकार करें। आपके पति[2] मेरे सबसे पुराने मित्रोंमें से थे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २-११-१९३२

५४१. पत्र : पद्मजा नायडूको

१ नवम्बर, १९३२

मेरी प्यारी खेलकी साथिन और अनिच्छुक गुलाम,

गुलामोंका हाकिम होते हुए भी, मैं चाहता हूँ कि तू खुशीसे गुलाम बने। इसी-लिए तेरी यह इच्छा कि मैं उदारता दिखाते हुए तुझे बायें हाथसे पत्र लिखूँ, गुलाम की तरह पूरी कर रहा हूँ। तुझ-जैसी साथिनोंने अपने निजी अनुभवसे जबतक यह खोज नहीं कर ली कि मैं गुलामोंका हाकिम हूँ तबतक यह बात मेरे खयालमें कभी आई ही नहीं थी। मैं तो यही सोचता था कि वे अपनी खुशीसे ही जुएमें जुते हैं। पर मैं देख रहा हूँ कि तेरा अभिमान इस बातको साफ-साफ स्वीकार करनेमें बाधा बना हुआ है। मैं नहीं चाहता कि तेरे अभिमानको तोड़नेवाली घटनाएँ और हों। . . .[3]

मुझे जो पुस्तकें तूने भेजी हैं, उनको पढ़नेमें मैं तेरे बताये हुए क्रमपर ही चलूँगा। अपने गुरुओंकी संख्या मैं तेजीसे बढ़ाता जा रहा हूँ। पहली थी रेहाना, फिर जोहराकी नियुक्ति हुई, और अब इस सम्मानकी उम्मीदवार तू है। तो इस पत्रको तू नियुक्ति-पत्र ही समझ। पर इस सम्मानकी रक्षाके लिए तुझे बीमार और बिस्तरपर पड़ी न रहकर अच्छा होना होगा।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १९४

१. रिपोर्टपर १ नवम्बर, १९३२ की तारीख दी गई है।

२. अक्टूबरके अन्तिम दिनोंमें सर अली इमामका निधन हो गया था। एक समय वे कलकत्ता उच्च न्यायालयके न्यायाधीश और मुस्लिम लीगके प्रमुख नेता थे।

३. साधन-सूत्रमें कुछ अंश छोड़ दिया गया है।

५४२. पत्र : शान्तिकुमार मोरारजीको

१ नवम्बर, १९३२

चि० शान्तिकुमार,

आज तुम्हारी बहुत याद आ रही है। बहुत दिनोंसे तुम्हारा कोई पत्र नहीं मिला।

सितम्बरके अन्तिम सप्ताहमें भी कोई पत्र नहीं मिला।

तुम सब कैसे हो? माँजी कैसी है? गोकीबहन[1] कैसी हैं? तुम निश्चिन्त तो हो गये न?

नववर्षकी मंगलकामनाएँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४७९८)से; सौजन्य : शान्तिकुमार मोरारजी

५४३. पत्र : होमी पेस्तनजीको

१ नवम्बर, १९३२

आपकी भेजी हुई पुस्तकें मिल गई। उपासनी महाराजसे मैं मिला हूँ। मुझपर उनका बहुत खराब असर पड़ा है और मैंने उनके लेखोंमें गंदगी पाई है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १९३

५४४. एक पत्र

१ नवम्बर, १९३२

उपवास करना या न करना मेरे हाथमें नहीं है। ईश्वरने जो तय कर रखा होगा, वही होगा।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १९४

१. शान्तिकुमार मोरारजीकी बूआ।

५४५. तार : भारत सरकारके गृह-सचिवको

सुबहके ७ बजे, २ नवम्बर, १९३२

सेवामें
गृह-सचिव
भारत सरकार
नई दिल्ली

आपका सन्देश मुझे कल रात दस बजे दिया गया। पिछली चौबीस तारीखका मेरा पत्र सरकारके पास इकत्तीस तारीखको पहुँचा, इससे मुझे दु:ख और आश्चर्य हुआ — सो उतना इसलिए नहीं कि मेरे पत्रमें जिस भावी उपवासका संकेत था उससे एक कैदीके जीवनका सम्बन्ध था, जितना इसलिए कि वह उपवास ऐसे विषयसे सम्बन्धित था जिसपर तुरन्त कार्रवाई करना आवश्यक है और जो सरकार द्वारा स्वीकृत यरवडा समझौतेका सीधा परिणाम है। फिर भी इस दुर्भाग्यपूर्ण विलम्ब को ध्यानमें रखते हुए और आपके सन्देशमें निहित आश्वासन और सुझावका खयाल करते हुए मैंने अपने आहार-सम्बन्धी प्रतिबन्धको जो कल से शुरू किया था[1], स्थगित कर दिया है। मुझे विश्वास है कि यरवडा सदर जेलके अधीक्षक को गत मास इकत्तीस तारीखको लिखा मेरा पत्र आपके पास भेज दिया गया होगा। जब वे उस पत्रके फलितार्थोंको समझनेके लिए मेरे पास आये तब मैंने उनसे कहा कि अगर इस महीनेकी एक तारीखसे लेकर चार दिनके अन्दर मेरी शिकायतें दूर नहीं की गईं तो मुझे जो कदम उठाने पड़ सकते हैं उनमें से एक यह भी हो सकता है कि मैं भोजन करना बिलकुल त्याग दूँ। इस बातका उल्लेख मैं सरकारको, इस विषयमें मेरी भावना कितनी तीव्र है, इसका कुछ आभास देनके लिए कर रहा हूँ। अस्पृश्यताके सम्बन्धमें प्राय: रोज ही मुझे सुधारकों और प्रतिक्रियावादियोंके पत्र मिल रहे हैं। उनपर तुरन्त ध्यान देना और प्रकाशनके उद्देश्यसे उनके उत्तर देना आवश्यक है। यह ऐसा विषय है जिसमें करोड़ों लोगोंके मानसको शिक्षित करनेका सवाल है, इसलिए इससे ऐसे खानगी पत्र-व्यवहार द्वारा नहीं निबटा जा सकता जिसके प्रकाशनपर प्रतिबन्ध लगा हुआ हो। मेरे पास हालमें ही स्थापित अखिल भार-

१. १ नवम्बरसे गांधीजी ने 'सी' श्रेणीके कैदियोंको दिया जानेवाला खाना खाना शुरू कर दिया था; देखिए अगला शीर्षक।

तीय अस्पृश्यता-विरोधी संघके पत्र और तार आये हैं, जिनमें कामके तरीकेके बारेमें तुरन्त मार्गदर्शन करने और सलाह देनेकी माँग की गई है। कालिकटसे मुझे एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण पत्र मिला है जिसका उत्तर तुरन्त भेजना आवश्यक है। अस्पृश्य मित्रोंने जल्दी ही मुलाकात का समय देनेका अनुरोध किया है। सरकार इस सबसे अवगत है और यह भी जानती है कि अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनमें मेरा जीवन दाँवपर लगा हुआ है। इसलिए यदि इस मामलेमें मुझे वे पूरी और प्रतिबंधरहित सुविधाएँ जिनकी प्रार्थना मैंने अपने पत्रमें की है, नहीं दी जातीं तो अपना जीवन उत्सर्ग कर देनेकी मेरी तैयारी और इच्छा के औचित्यको सरकार समझेगी। एक असह्य और आत्माका हनन करनेवाली स्थितिसे सम्मानपूर्वक निस्तार पानेका किसी कैदीके पास कोई और रास्ता नहीं है।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रेक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८००(४०)(४), भाग १, पृ० २७७। जी० एन० ३८६६ से भी

५४६. पत्र : एम० जी० भण्डारीको

२ नवम्बर १९३२

अत्यावश्यक

प्रिय मेजर भण्डारी,

गत रात मुझे आपके द्वारा भारत सरकारका जो सन्देश मिला था उसका उत्तर[1] साथमें नत्थी कर रहा हूँ। आपसे अनुरोध है कि यह एक्सप्रेस तारसे भेजा जाये। इस तारसे आप देखेंगे कि मैंने अपने भोजनपर प्रतिबन्ध स्थगित कर दिया है और जो भोजन बराबर करता था, वही किया है। यदि सम्भव हो तो भारत सरकारको भेजे जानेवाले इस तारके लिए जेलके महानिरीक्षकके कार्यालयके खुलनेकी प्रतीक्षा न की जाये।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रेक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०)(४), भाग १, पृ० २६७। जी० एन० ३८६५ भी

१. देखिए पिछला शीर्षक।

५४७. पत्र : सनफील्ड स्कूलकी प्रबन्ध समितिको

२ नवम्बर १९३२

आधिभौतिक और आध्यात्मिक विषयोंके बारेमें आप जो कहते हैं, उसमें अधिकांशसे मैं सहमत हो सकता हूँ। जड़तत्त्व आत्मतत्त्व के बिना मृत है और आत्मतत्त्व जड़तत्त्वके बिना गतिशील नहीं हो सकता। जबतक हम उस 'तत्' को नहीं, बल्कि इस 'नानात्व' को ही देखते हैं, तबतक तो दोनोंको एक-दूसरेकी मददकी जरूरत है ही। लेकिन इस अत्यन्त सुन्दर विषयके सम्बन्धमें मुझे ज्यादा चर्चा करनेका लोभ संवरण करना चाहिए।[1]

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० १९७

५४८. पत्र : जमनालाल बजाजको

२ नवम्बर १९३२

चि० जमनालाल

तुम्हारे कानके बारेमें डरानेवाली खबर पाकर आज तार किया है। आशा है, वह मिला होगा। जवाबकी राह हम देख रहे हैं। तुम्हारा विस्तृत पत्र भी आना चाहिए। डॉ० मोदीसे खबर तो मँगाई है। तुम्हारी खुराकमें थोड़ा-बहुत हेरफेर सुझाता हूँ। केलेकी कोई जरूरत नहीं। पपीतेकी भी अभी कोई जरूरत नहीं देखता। अभी तुम्हें अपनी खुराकमें से दाल निकाल देनी चाहिए और अंगूर, सन्तरा अथवा मोसम्बी बढ़ा देनी चाहिए। दूध अधिक लिया जा सके तो अच्छा होगा। बहुत दिनोंसे तुम्हारा पत्र नहीं आया। तबीयतका ठीक विवरण लिखना।

मणिलाल कैसे हैं? दूसरे साथियोंके बारेमें भी लिखना। हमारी गाड़ी चल रही है। मणिलाल, सुशीला, तारा[2], सुरेन्द्र[3] और सीता कल आये थे। सुशीला अब ठीक हो गई है। उसे कुछ दिन डोसीबाईके अस्पतालमें रहना पड़ा था, यह तो मालूम ही होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९०२) से।

१. साधन-सूत्रके अनुसार इस पत्रमें "मेरी मित्र और बेटी एस्थर मेनन" का भी जिक्र था।
२. सुशीलाकी बहन।
३. सुशीलाका भाई।

५४९. पत्र : भीखीबहनको

२ नवम्बर, १९३२

चि० भीखीबहन,

तुमने पत्र लिखकर अच्छा किया। और यदि लिखना-पढ़ना आश्रममें ही सीखा हो तो यह माना जायेगा कि तुमने अच्छी प्रगति की और ऐसा ही होना भी चाहिए। यदि और थोड़ी सावधानी रखो तो तुम्हारी लिखावट और अच्छी हो जायेगी तथा गुजराती और भी सुधर जायेगी।

अब जब मुझे पत्र लिखो तो अपने बारेमें कुछ अधिक जानकारी देना। तुम किस गाँवकी हो? तुम्हारे माता-पिता जीवित हैं क्या? पति क्या करते हैं?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७४३) से।

५५०. पत्र : केशव गांधीको

२ नवम्बर, १९३२

चि० केशू,

तेरा पत्र मिला। लकीरें खींची, सो तो ठीक किया। किन्तु ये लकीरें रूलकी मददसे खींचनी चाहिए और यदि तू धीरे-धीरे लिखे तो लकीरें खींचे बिना भी सीधा लिखा जा सकता है। ईश्वर अपने भक्तोंका पथ-प्रदर्शन करता है। जो व्यक्ति ईश्वरका नामतक नहीं लेता और उसका स्मरण नहीं करता, उसके बारेमें यह कैसे कहा जा सकता है कि वह उसका भी पथ-प्रदर्शन करता है? हम सब कुछ विशेष संस्कार लेकर जन्म लेते हैं और उन संस्कारोंके अनुसार अपनी बुद्धिका प्रयोग करते हैं। इन संस्कारोंको धो डालनेकी शक्ति ईश्वरने सबको दी है। जो उस शक्तिका उपयोग करता है वह उन्हें मिटा सकता है। तेरी गुजराती बहुत कच्ची है। उसे धीरे-धीरे सुधारना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२८३) से।

५५१. पत्र : नारणदास गांधीको

२ नवम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

भाऊका उपवास अब तो पूरा हो गया होगा। इसके पहुँचनेपर तुम या भाऊ मुझे एक पोस्टकार्ड हर रोज लिख दिया करो, यह जरूरी है। उपवासके दौरान वह एनीमा तो लेता ही रहा होगा। उस बीच जो भी हुआ, उसका सारा हाल विस्तार-पूर्वक लिखे। मुझे याद है कि उपवास पूरा हो जानेपर वह क्या करे, यह मैं उसे लिख चुका हूँ।

तुम्हारी डाक कल मिली। मणिलाल, सुशीला, तारा, सुरेन्द्र और सीता मुझसे मिल गये हैं।

बापू

[पुनश्च :]

कुसुमके बारेमें जल्दी विचार कर लेना। उसकी खबर भी मुझे लौटती डाकसे देना। नीचेका नुस्खा बा के लिए है। वह साबरमती जेलमें यह दवा लेती थी। तुम देखोगे कि इसमें दो चीजें हैं — एक खानेके लिए और दूसरी लगानेके लिए।

एटोफेन — एक टिकियाका चूर्ण बनाकर उसे तीन हिस्सोंमें बाँट ले। एक-एक हिस्सा दिनमें तीन बार ले। जहाँ दर्द हो वहाँ बेलाडोना प्लास्टर लगाये।[1]

जुगतरामका इलाज चल रहा हो तो उसे अभी इस नुस्खेके मुताबिक दवा लेनेकी जरूरत नहीं है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२६३ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. यह अंश अंग्रेजीमें है।

५५२. पत्र : गुलाबको

२ नवम्बर, १९३२

चि० गुलाब,

तेरा पत्र मिला। तूने अबतक मुझे यह नहीं लिखा कि तेरी कताईमें क्या गति है। अब यादसे लिखना।

तुझे पत्र लिखनेका ढंग सीख लेना चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७२९) से।

५५३. पत्र : शान्तिकुमार मोरारजीको

२ नवम्बर, १९३२

चि० शान्तिकुमार,

तुम्हारा पत्र और मेरा पोस्टकार्ड रास्तेमें टकराये लगते हैं। तुम्हारी अच्छी कसौटी हो रही है। और मैं तो मानता हूँ कि तुम इस कसौटीपर खरे उतरोगे।

माँजी से मेरे प्रणाम कहना। उन्हें शान्ति है न?

सुमतिको मेरा आशीर्वाद।

हम तीनों जन अच्छी तरह हैं और तुम्हें याद कर लेते हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४७९९) से; सौजन्य : शान्तिकुमार मोरारजी

५५४. पत्र : भाऊ पानसेको

२ नवम्बर, १९३२

चि० भाऊ

तुम्हारा लम्बा पत्र मिला। फिलहाल तो मैं इतना ही लिख रहा हूँ कि उपवास छोड़नेके बाद क्या करना चाहिए। मुझे कुछ ऐसा खयाल है कि इस बारेमें मैंने लिखा है।[1] दो-तीन दिन फल या साग-सब्जी लेनी चाहिए। उसके बाद रोटी और फिर दूध। मुझे नियमित रूपसे प्रतिदिन लिखते रहना। यह प्रयोग सफल होना ही चाहिए।

शेष फिर।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७४०) से। सी० डब्ल्यू० ४४८३ से भी; सौजन्य : भाऊ पानसे

५५५. पत्र : प्रबोधकुमार तथा अन्य लोगोंको

२ नवम्बर, १९३२

चि० प्रबोधकुमार, भूपेन्द्रकुमार और नरेन्द्रकुमार,

तुम सबके नाम बहुत छोटे लगते हैं अतः इन्हें बड़ा बनानेका कोई उपाय खोज निकालो। कुम्हार कभी खराब हाँड़ियाँ नहीं बनाता। अच्छी हाँड़ियाँ उतरनेतक वह उस मिट्टीको मिट्टीमें मिलाता रहता है। इसी प्रकार जबतक प्रबोधकी लिखावट न सुधर जाये तबतक पत्र लिखना ही नहीं चाहिए। पहले तो उसे सीधी रेखाएँ, त्रिकोण, वृत्त आदि बनाना सीखना चाहिए। सरदार, महादेवभाई और मैं, तीनों आनन्दपूर्वक हैं। तुम सब बड़े होओ और अच्छे बनो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० १२१५२)से।

१. देखिए "पत्र: भाऊ पानसेको", २३-१०-१९३२।

५५६. पत्र : पद्माको

२ नवम्बर, १९३२

चि० पद्मा,

मैंने तो तुझे रंगीन कागजके टुकड़ेपर ही पत्र लिखा था, इसमें कोई सन्देह नहीं है। किन्तु तू चश्मा लगाती है, इसलिए रंग न पहचान सके तो मैं क्या करूँ? इस बार तू रंग पहचान पाती है या नहीं, लिखना। फिलहाल तुझे न तो तकली छूनी चाहिए और न मगनचरखा या सामान्य चरखा छूना चाहिए। अभी तो तुझे अपना वजन बढ़ाना और अपने स्वास्थ्यको सुन्दर बनाना है। हिसाब-किताब रखना भली-भाँति सीख लेना। गाँठ मिटनी ही चाहिए। तू लिखती है कि माँ 'गीता' पढ़ाती हैं। क्या वे अन्वय करना भी बताती हैं? क्या सरोजिनीदेवीका 'गीता' का ज्ञान इतना गहरा है? क्या वे संस्कृत जानती हैं? वे कभी पत्र क्यों नहीं लिखतीं?

सात्विक प्रेम और विश्वप्रेममें कोई बहुत अन्तर नहीं है। और विश्वप्रेमका तूने जो अनासक्ति अर्थ समझा है, वह बिलकुल ठीक है।

मुझे पत्र लिखती रहना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१४०) से। सी० डब्ल्यू० ३४९२ से भी; सौजन्य : प्रभुदास गांधी

५५७. पत्र : सुलोचनाको

२ नवम्बर, १९३२

चि० सुलोचना,

तेरा पत्र मिला। यदि तेरी पूनियाँ अच्छी हों तो तू और भी बारीक सूत कात सकती है। प्रेमाबहनसे प्रश्न पूछनेमें संकोच होना ही नहीं चाहिए। यदि तू शिक्षिकासे नहीं पूछेगी तो फिर किससे पूछेगी? अतः अवश्य पूछना और वह जो उत्तर दे वह मुझे लिखना। यदि अब भी पूछनेमें संकोच हो तो अपने प्रश्न प्रेमाबहनको लिखकर दे देना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७४४) से।

५५८. पत्र : मदनमोहन चतुर्वेदीको

२ नवम्बर, १९३२

भाई मदनमोहन,

नारणदास पर तुम्हारा खत था। मैंने यह पढ़ लिया है। डाक्टर मोदी क्या कहते हैं वह मुझको तारसे लिख भेजो।[1] और उन्हींको कहो मुझको पूरे हाल लिखे। मुझको हाल लिखते रहो। सुना है कि बालकोबाकी[2] तबीयत अच्छी नहीं हुई है। बोलते हुए भी परिश्रम लगता है। बालकोबासे कहो मुझे लिखे, जानकीबहनसे भी यही कहो। हम सब अच्छे हैं।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०९०) से।

५५९. पत्र : तुलसी मेहरको

२ नवम्बर, १९३२

चि० तुलसी महेर,

बहुत महिनोंके बाद तुम्हारा खत मिला। देखकर हम सब खुश हुए। इस वक्त तुम्हारे कामका कुछ वर्णन नहीं दिया है। ऐसा क्यों? अब लिखो। सुरेन्द्र, रामदास इत्यादि यहीं है। कोई-कोई वख्त उनको मिलनेका होता है। सब अच्छे हैं।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६५४०) से।

१. उन दिनों जमनालाल बजाज डॉ० मोदीसे अपने कानका इलाज करवा रहे थे; देखिए "पत्र : जमनालाल बजाजको", २-११-१९३२।

२. बालकृष्ण, विनोबा भावेके छोटे भाई।

५६०. पत्र : मीराबहनको

३ नवम्बर, १९३२

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मुझे कल ही तीसरे पहर मिला। अभी सुबहके सवा पाँच बजे हैं। हम प्रार्थना कर चुके हैं, और मैंने शहद, गर्म पानी और चुटकी-भर सोडा लिया है। उसके बाद हम तीन जनोंने मेरे लिए फल तैयार किये; यानी, दो मोसम्बियाँ महादेवने छीलीं, दो सन्तरे मैंने छीले, और एक अनारका रस सरदारने निकाला। मैंने रसमें एक चुटकी नमक छोड़ दिया और मोसम्बियों और सन्तरोंका गूदा रसमें डाल दिया। वे दोनों तब सैरके लिए चले गये और मैंने वह सलाद खाया। तबतक सवा पाँच बज गये और मैंने यह पत्र लिखना शुरू किया। परिवर्तनके लिए और दायें हाथको आराम देनेके लिए मैं बायें हाथसे लिख रहा हूँ।

फलोंके सलादके बारेमें मैंने तुम्हें अपनी खोजके सम्बन्धमें बतानेके लिए लिखा है। मैंने देखा है कि फलोंसे अधिकसे-अधिक लाभ उठाना हो तो उन्हें किसी चीजके साथ नहीं, बल्कि अकेले और खाली पेट खाना चाहिए। एक तरहसे यह भी कहा जा सकता है कि जो नियम प्रारम्भिक दवाओंपर लागू होता है, वही रसदार फलोंपर भी लागू होता है। वस्तुतः जो-कुछ भी खाना चाहिए, दवाकी तरह खाना चाहिए। संस्कृतमें भोजन और दवाके लिए समान शब्द औषध है। किसन तुम्हें यह बात और भी विस्तारसे समझा सकेगी। दवा स्वादमें खराब हो, यह जरूरी नहीं है; और न ही वह जबानके स्वादके लिए खाई जाती है। भोजनके प्रति भी बिलकुल यही रुख होना चाहिए, अर्थात् उपयुक्त भोजन, उपयुक्त अनुपातमें, उपयुक्त ढंगसे और उपयुक्त समयपर किया जाये। यहाँ मैंने सुबहकी सैर के लिए लिखना बन्द कर दिया था और अब पौने सात बजे फिर शुरू कर रहा हूँ।

पैगम्बर मुहम्मदके जीवनपर बहुत-सी पुस्तकें हैं। उनमें पहला स्थान अमीर अलीकी 'स्पिरिट ऑफ इस्लाम' को देना चाहिए। फिर वाशिंग्टन इर्विंगकी 'मुहम्मद ऐण्ड हिज सक्सेसर्स' बड़ी अच्छी रचना है। कार्लाइलकी 'मुहम्मद ऐज हीरो' भी पठनीय है।

मुझे खुशी है कि किसन तुम्हारे साथ है। उसे तुमसे और तुम्हें उससे अधिक-से-अधिक लाभ मिलना चाहिए। उसके पत्रके उत्तरमें मैंने जो पत्र लिखा था, पता नहीं, वह उसे मिला भी है या नहीं। मैंने वह उसीके दिये पतेपर भेजा था। वह उसे मिला हो या नहीं, पर उससे कह देना कि जल्दी हो या न हो, पर कभी भी बुरी लिखावटमें न लिखे। इस मामलेमें मेरा जो दुर्भाग्य रहा है, उससे हर एकको

सीख लेनी चाहिए। बुरी लिखावट और हर बुरी चीज असलमें हिंसा है। जेल-जीवनमें हमें धैर्यका गुण सीखनेका दुर्लभ अवसर मिल रहा है।

ईसा और मुहम्मदकी तुम्हारी तुलना मेरे खयालसे आकर्षक है और आंशिक रूपसे सही भी है। तुमने यह कहावत सुनी होगी कि तुलनाएँ अप्रिय होती हैं। मेरी रायमें सभी क्रान्तिकारी सुधारक होते हैं और सभी सुधारक क्रान्तिकारी। वे दोनों महान् शिक्षक थे और प्रत्येक अपने युग और उसकी आवश्यकताओंका उत्तर था। दोनोंने मानव-जातिकी प्रगतिमें अनुपम योग दिया। दोनोंका विश्व-देवताओंमें समान स्थान है। तुमने जो अपनेको आश्रमवासिनी बताया है, वह बिलकुल दुरुस्त है। इस तरह तुम ईसाको अस्वीकार नहीं करतीं। मात्र यह घोषित करती हो कि तुम आश्रमवासिनी हो और आश्रमवासी किसी भी धर्म-गुरुको अस्वीकार नहीं करता। विभिन्न धर्म-गुरुओंकी व्याख्याओंसे हमें कोई ज्यादा वास्ता नहीं है। प्रत्येकने अपने ढंगसे व्याख्या की है।

अमीर अलीकी पुस्तक मैं रजिस्ट्रीसे भेज रहा हूँ। जब तुम इसे समाप्त कर लो तो डाकसे रेहानाको भेज देना। यह पुस्तक तैयबजी-परिवारकी है।

तुम्हें और किसनको हम सबका प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२४८) से; सौजन्य : मीराबहन

५६१. तार : भारत सरकारके गृह-सचिवको

३ नवम्बर, १९३२

भारत सरकारके गृह-सचिव
नई दिल्ली

यरवडा सदर जेलके अधीक्षकने मेरे पत्रों और उनमें अस्पृश्यताकी समस्याके सम्बन्धमें की गई [मेरी] प्रार्थनापर भारत सरकारका निर्णय[1] मेरे पास अभी-अभी पहुँचाया है। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि जितनी सुविधाओंकी मैंने आशा की थी और जितनी कि अपेक्षा की जा

१. यह निर्णय बम्बई सरकारके नाम भेजे २ नवम्बरके उस तारमें सूचित किया गया था जिसमें अन्य बातोंके साथ-साथ यह कहा गया था : "श्री गांधीके १८ और २४ अक्टूबरके पत्रोंमें व्यक्त किये गये विचारोंको दृष्टिमें रखते हुए भारत सरकार यह स्वीकार करती है कि अस्पृश्यता-निवारणके सिलसिलेमें उन्होंने अपने लिए जो कार्यक्रम बनाया है और जिसका महत्त्व उसने पहले पूरी तरह नहीं समझा था, उसे वे पूरा कर सकें, इसके लिए यह आवश्यक है कि उन्हें ऐसे मामलोंपर, जो केवल अस्पृश्यता-निवारणतक ही सीमित हों, लोगोंसे मिलने और पत्र-व्यवहार करनेकी स्वतन्त्रता होनी चाहिए। वह यह भी स्वीकार करती है कि इस मामलेमें गांधीकी प्रवृत्तियाँ पूरी तरह कारगर हो सकें, इसके लिए यह आवश्यक है कि प्रचारपर कोई प्रतिबन्ध न हो। अस्पृश्यताकी समस्यासे सम्बन्धित श्री गांधीकी कोशिशोंमें क्योंकि सरकार कोई बाधा नहीं डालना चाहती है, इसलिए वह ऐसे मामलोंके बारेमें जिनका

सकती थी, वे सब यह निर्णय मुझे दे देता है। मैंने यह वचन दिया है कि इन मुलाकातों और इस पत्र-व्यवहारका सविनय अवज्ञा और अस्पृश्यता-निवारणसे बाहरके विषयोंसे कोई सम्बन्ध नहीं होगा। मैं यह मानता हूँ कि सरकारने बहुत ही शोभनीय ढंगसे मुझपर यह विश्वास किया है कि मैं इस वचनके शब्दों और भावका पूर्णतया पालन करूँगा। इस विश्वासका कभी भी दुरुपयोग नहीं किया जायेगा।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (४), भाग १, पृ० २८९। जी० एन० ३८६७ भी

५६२. पत्र : यू० गोपाल मेननको

३ नवम्बर, १९३२

प्रिय गोपाल मेनन,

आपका पत्र मिलनेकी सूचना मैं अबतक नहीं दे सका। जैसे ही मेरे लिए यह सम्भव हुआ पहला काम मैंने आपको तार भेजनेका किया। आशा है, वह आपको यथासमय मिल गया होगा। आपने विस्तारसे सब बातें लिखीं, इसकी मुझे खुशी है। इससे, हमारे सामने कैसी कठिनाइयाँ हैं, मैं इसका कुछ अन्दाजा कर सका हूँ। पर यह आन्दोलन ईश्वरके नामपर शुरू किया गया है। वही हमारा मार्ग-दर्शक है और मुझे यकीन है कि यदि हम उसमें आस्था न छोड़ेंगे तो वह हमारे मार्गकी सभी कठिनाइयाँ दूर कर देगा और यदि हम सेवाकी भावनासे काम करना चाहते हैं तो हम उन लोगोंके प्रति भी, जो सुधारोंका विरोध करते हैं, अनुदार नहीं होंगे और न हमें जमोरिनके प्रति ही अनुदार होना चाहिए। आखिर उनकी जो कठिनाइयाँ हैं वे हमें मालूम नहीं हैं। इसलिए हमें अपने-आपको उनकी स्थितिमें रखकर परिस्थितिको उनके दृष्टिकोणसे भी देखना चाहिए। मैंने सदा यही पाया है कि यह तरीका ऐसा है जिससे हम अपने लक्ष्यतक जल्दीसे-जल्दी पहुँच सकते हैं। एक क्षणके लिए भी हमें अपने लक्ष्यसे अपना ध्यान नहीं हटाना है, पर

श्री गांधीके अपने ही शब्दोंमें 'सविनय अवज्ञासे कोई सम्बन्ध नहीं है और जो केवल अस्पृश्यता-निवारण-तक ही सीमित हैं', मुलाकातियों, पत्र-व्यवहार और प्रचार परसे सभी प्रतिबन्ध हटा रही है। श्री गांधीने यह विचार रखा है कि यदि सरकार किसी समय वांछनीय समझे तो, मुलाकातोंके समय अधिकारी उपस्थित रह सकते हैं और पत्र-व्यवहारकी तत्काल वहीं जाँच की जा सकती है। सरकारने उनके इस विचारपर गौर किया है।" भारत सरकार, होम डिपार्टमेंट, पॉलिटिकल, फाइल नं० ३१/९५/३२

उसकी ओर बढ़ते हुए हमें उन लोगोंके बारेमें, जो हमसे सहमत नहीं हैं, फतवा भी नहीं देना चाहिए। जैसा कि आप बिलकुल ठीक कहते हैं, अपने दलित बन्धुओंको जुएसे मुक्त करानेकी कोशिशमें आखिर हमें अपना बलिदान ही तो देना है। इसलिए, चाहे कुछ भी हो, जो सुधारके पक्षमें हैं, उन्हें अहिंसक शब्दके पूरे अर्थोंमें बिलकुल अहिंसक बने रहना चाहिए। आप पंडित मालवीयजी को अपने यहाँ बुलानेके लिए उत्सुक हैं। यदि वे वहाँ जा सकें तो निस्सन्देह शक्तिका स्रोत सिद्ध होंगे। परन्तु उनका जीवन तो समर्पित जीवन है। इसलिए उनकी बहुत माँग है। वे वृद्ध हो गये हैं, शरीर उनका दुर्बल है, यद्यपि मन सदाकी तरह ओजस्वी है। मैं जानता हूँ कि यदि वे समय निकाल सके तो अवश्य जायेंगे। परन्तु यदि उन्हें दक्षिणकी लम्बी यात्रासे बचाया जा सके, तो यह केरलके कार्यकर्त्ताओंके लिए गौरवकी बात होगी। फिर भी, यदि आप उनकी उपस्थिति अनिवार्य समझते हों, तो अपनी प्रार्थना पर जोर दें, मैं भी निश्चय ही उन्हें लिखूँगा।

आपका यह विचार मुझे पसन्द आया कि उत्तरसे एक बहनको भेजना चाहिए, ताकि २ जनवरीके निर्णायक दिनसे पहले ये जो कुछ-एक मूल्यवान सप्ताह हमारे पास हैं, उनके दौरान वह वहाँ काम कर सके। इस सिलसिलेमें मैंने प्रयत्न शुरू कर दिया है और आशा है, मैं आपको यह बता सकूँगा कि किसीका जाना सम्भव है या नहीं।

केलप्पनका क्या हाल है, कृपया मुझे बतायें। उन्होंने मुझे कोई पत्र क्यों नहीं लिखा है?[1]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८६०२) से।

५६३. पत्र : मगनभाई देसाईको

३ नवम्बर, १९३२

मेरा यह अनुभव उत्तरोत्तर दृढ़ होता जा रहा है कि जैसे-जैसे ईश्वरपर आस्था बढ़ती है, वैसे-वैसे कर्त्तव्य-कर्ममें रस बढ़ता जाता है, कार्य-कुशलता बढ़ती जाती है, सावधानी बढ़ती जाती है और उसीके साथ निश्चिन्तता और धीरज बढ़ता जाता है।

मेरी श्रद्धा असीम है, इसलिए मैं यह मानता हूँ कि छोटा-बड़ा सब-कुछ ईश्वर ही कराता है। वह यह किस तरह कराता होगा, यह मैं नहीं जानता। मगर जिसने अपना तन, मन और धन यानी सर्वस्व उसे सौंप दिया है, वह यदि ऐसा मानता हो कि वह खुद कुछ कर रहा है, तो कहा जायेगा कि वह चोर हो गया है। मैं तो कभी बेहोशीमें ऐसा मानकर पाप नहीं कमाना चाहूँगा कि एक भी काम मैं स्वयं

१. साधन-सूत्रमें इस पत्रपर हस्ताक्षर नहीं हैं।

करता हूँ, अगर मैं बेहोशीमें ऐसा मान लेता होऊँ कि यह काम तो मैंने किया अथवा यदि साधारण वार्तालापमें विनोदके लिए या दूसरोंसे अलग न दिखनेके खयालसे ऐसा कहता होऊँ तो यह मेरी मूर्खता है। सच तो यह है कि दिन-दिन शून्यता बढ़ती जाती है इसीलिए जब यह गर्व मनमें आ जाता है कि मैं कुछ कर रहा हूँ, तब दुःख होता है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २०१

५६४. पत्र : परमानन्द देसाईको

[३] नवम्बर, [१९३२][१]

चि० परमानन्द,[२]

तेरा पत्र मिला। तू और माँ वहाँ अच्छे पहुँचे। अब यदि स्थिर होकर आश्रममें ही रहो तो कितना अच्छा हो। तू क्या पढ़ता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती की फोटो-नकल (एस० एन० ९४८३) से।

५६५. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

३ नवम्बर, १९३२

चि० हेमप्रभा,

तुम्हारा खत मिला है। हरिजन भाइओंके हाल देखकर तुम्हारे हृदय उपर जो चोट हुई है उसे मैं समज सकता हुं। गभराहटकी कोई आवश्यकता नहीं है। जितने सेवक-सेविका मिलें उतनेसे ही बस्तीओंकी सुधारणा करनेका प्रयत्न करो। हरिजन भाइयोंको मिलो। अंतमें हम यथाशक्ति प्रयत्न ही कर सकते हैं। फल देनेवाले तो ईश्वर ही है। चिता-मात्र छोड़ो। चिता करनेकी 'गीता' माताकी मनाई है। अरुणके प्रत्युत्तरकी प्रतीक्षा करता हूं।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १६९२) से।

१. एस० एन० रजिस्टरसे।
२. महादेव देसाईका सौतेला भाई।

५६६. पत्र : अली हसनको[1]

[४ नवम्बर, १९३२ के पूर्व][2]

पत्रके लिए धन्यवाद। आपने मेरा वह वक्तव्य अवश्य देखा होगा, जिसमें मैंने हिन्दू-मुस्लिम-सिख एकताके लिए अपील की है। यहाँसे मैं इससे ज्यादा नहीं कर सकता। काम तो उन्हींको करना है, जो जेलसे बाहर हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ७-११-१९३२

५६७. पत्र : सोहनलाल शर्माको

[४ नवम्बर, १९३२ या उसके पश्चात्][3]

भाई सोहनलाल शर्मा,

तुम्हारा खत मिला। सिर्फ बोर्ड हटानेसे क्या फायदा होगा। हम चाहते हैं हरिजन भाइओंका मंदिर-प्रवेश। मगनीरामजी यदि इसमें संमत न होंगे तो ठहर जाओ। जब लोकमत बहुत जागृत हो जायेगा तो यह मंदिर भी खुल जायगा। दरम्यान विनय करते रहो। मंदिर-दर्शनके लिये जानेवालोंका अभिप्राय क्या है, इसकी खोज करो। यह काम शांतिसे हि हो सकता है। घनश्यामदासजी से मिलो।

मोहनदास गांधी

सोहनलाल शर्मा
प्रधान, हिन्दू सभा
पुष्कर वाया अजमेर
(बी० बी० ऐण्ड सी० आई० रेलवे)

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २८२७) से।

१. बिहार और उड़ीसाके मुस्लिम संघके मन्त्री।
२. साधन-सूत्रमें रिपोर्टपर ४ नवम्बरकी तिथि दी गई है।
३. डाककी मुहर ४ नवम्बरकी है।

५६८. वक्तव्य : अस्पृश्यतापर[1]–१

४ नवम्बर, १९३२

उपवास तोड़नेके बाद अस्पृश्यताके प्रश्नपर चर्चा करनेका मेरा पूरा इरादा था। पर कुछ ऐसे कारणोंसे, जिनपर मेरा वश नहीं था, मैं वैसा नहीं कर सका। सरकारने अब मुझे इस कार्यके सिलसिलेमें खुला प्रचार करनेकी इजाजत दे दी है। इसलिए, मैं उन बहुत-सारे पत्र-लेखकोंको उत्तर दे सकता हूँ जो यरवडा-समझौतेकी आलोचना करते रहे हैं, या मुझसे पथ-प्रदर्शन चाहते रहे हैं, या अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनके दौरान उठनेवाले विभिन्न प्रश्नोंपर मेरे विचार जानना चाहते रहे हैं। इस प्रारम्भिक वक्तव्यमें मैं केवल मुख्य प्रश्नोंके ही उत्तर देना चाहता हूँ, और अन्य प्रश्नोंको, जिनका समाधान तत्काल आवश्यक नहीं है, अभी छोड़ना चाहता हूँ।

पहले मैं पुनः उपवास करनेकी सम्भावनाके प्रश्नको लेता हूँ। कुछ पत्र-लेखकों का कहना है कि उपवाससे दबाव डालनेके तरीकेकी गन्ध आती है, और इसलिए मुझे उपवास नहीं करना चाहिए था और अब दोबारा तो किसी भी हालतमें नहीं करना चाहिए। कुछ दूसरे लोगोंने यह दलील दी है कि हिन्दू धर्ममें, या किसी भी धर्ममें, मेरे उपवासकी तरहके उपवासका कोई औचित्य नहीं माना गया है। यहाँ मैं इसके धार्मिक पक्षकी चर्चा नहीं करना चाहता हूँ। केवल इतना कहना ही काफी है कि पिछला उपवास मैंने ईश्वरकी प्रेरणासे आरम्भ किया था, और वह यदि कभी फिर आरम्भ किया गया तो ईश्वरकी प्रेरणासे ही आरम्भ किया जायेगा। लेकिन पहले-पहल जब उसका संकल्प लिया गया तो उसका उद्देश्य, निस्सन्देह, अस्पृश्यताको जड़-मूलसे मिटाना था। जो रूप उसने ले लिया, उसमें मेरा कोई हाथ नहीं था। मन्त्रिमण्डलके फैसलेके कारण मेरे जीवनका वह नाजुक प्रसंग एकाएक ही सामने आ गया। पर मैं यह जानता था कि ब्रिटिश मन्त्रिमण्डलके फैसलेका रद्द किया जाना ध्येयकी पूर्ति नहीं, बल्कि उसका आरम्भ-मात्र होगा। ऐसी जबरदस्त शक्तिको केवल एक राजनीतिक निर्णयको बदलवानेके लिए गतिशील करना वांछनीय नहीं हो सकता था। उसके प्रयोगका औचित्य तो तभी था जब उसके पीछे कोई अधिक गहरा अर्थ, जिसका बोध भले ही उस शक्तिके प्रवर्त्तकको भी नहीं हो, छिपा हुआ हो। जिन लोगोंका उससे सम्बन्ध था, उन्होंने सहज ही वह अर्थ समझ लिया और अनुकूल प्रतिक्रिया दिखाई।

जीवित लोगोंकी स्मृतिमें मेरी तरह शायद किसीने भी इतनी बार भारतके एक छोरसे दूसरे छोरतक की यात्रा नहीं की होगी, न कोई इतने-सारे गाँवोंमें गया

१. सरकारने जब अस्पृश्यता-विरोधी कार्यके सिलसिलेमें गांधीजी परसे मुलाकातों और प्रचार-कार्य-सम्बन्धी प्रतिबन्ध हटा लिये, तो गांधीजी ने समाचार-पत्रोंको कुछ वक्तव्य दिये। यह उनमें से पहला है।

होगा, और न लाखों-करोड़ों लोगोंके सम्पर्कमें आया होगा। वे सब मेरे जीवनसे परिचित हैं। वे यह जान गये हैं कि मैंने 'अस्पृश्य' और 'स्पृश्य' के बीच या सवर्ण और अवर्णके बीच कोई भेद नहीं माना है। उन्होंने प्रायः मुझे खुद उन्हींकी भाषामें तीव्रतम शब्दोंमें अस्पृश्यताकी निन्दा करते, उसे हिन्दू धर्मका अभिशाप और कलंक बताते सुना है। भारतके सभी भागोंमें हुई उन सैकड़ों सार्वजनिक सभाओं या व्यक्तिगत मुलाकातों और गोष्ठियोंमें दो-चार अपवादोंको छोड़कर और कहीं भी अस्पृश्यताके विरुद्ध दी गई मेरी दलीलोंका विरोध नहीं किया गया। जन-समुदायोंने अस्पृश्यताकी निन्दा करते हुए और उसे अपने बीचसे मिटानेकी प्रतिज्ञा करते हुए प्रस्ताव पास किये हैं। असंख्य अवसरोंपर उन्होंने ईश्वरको साक्षी मानकर प्रतिज्ञा की है और उससे यह प्रार्थना की है कि वह उन्हें अपनी प्रतिज्ञा पूरी करनेकी शक्ति दे। मेरा उपवास इन्हीं करोड़ों लोगोंके विरुद्ध आरम्भ किया गया था और उनके स्वतःस्फूर्त प्रेमने ही पाँच दिनके अन्दर-अन्दर परिवर्तन कर दिखाया और यरवडा-समझौता सम्पन्न करा दिया। वह समझौता यदि उन लोगों द्वारा पूरी तरह अमलमें नहीं लाया गया तो उपवास उन्हींके विरुद्ध फिर आरम्भ किया जायेगा। सरकार तो अब इस झगड़ेसे लगभग बाहर निकल चुकी है। जो-कुछ उसको करना चाहिए था, उसे तो उसने तुरन्त पूरा कर दिया। यरवडा-समझौतेके प्रस्तावोंका मुख्य भाग उन करोड़ों लोगों, पूर्वोक्त सभाओंमें जमा होनेवाले तथाकथित सवर्ण हिन्दुओंको पूरा करना है। उन्हीं लोगोंको दलित भाइयों और बहनोंको अपने सगे भाई-बहनोंकी तरह गले लगाना है, उन्हें अपने मन्दिरों, अपने घरों, अपने स्कूलोंमें बुलाना है। गाँवोंमें 'अस्पृश्यों' में यह एहसास पैदा करना है कि उनकी बेड़ियाँ कट गई हैं, वे अपने बन्धु-ग्रामवासियोंसे किसी भी तरह कम नहीं हैं। जिस ईश्वरको अन्य ग्रामवासी पूजते हैं वे भी उसीके उपासक हैं और जिन अधिकारों तथा सुविधाओंका उपभोग अन्य ग्रामवासी करते हैं, वे भी उनके अधिकारी हैं।

लेकिन समझौतेकी इन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण शर्तोंको यदि सवर्ण हिन्दुओंने पूरा नहीं किया, तो क्या मैं ईश्वरको और मनुष्यको मुँह दिखानेके लिए जिन्दा रह सकूँगा? मैंने तो डॉ० अम्बेडकर, रावबहादुर राजा और दलित वर्गके अन्य मित्रोंसे यहाँतक कहनेकी हिम्मत की थी कि सवर्ण हिन्दुओं द्वारा समझौतेकी शर्तोंके पालनके लिए वे मेरी जिन्दगीको जमानत मान सकते हैं। उपवास यदि हुआ तो उन लोगोंपर दबाव डालनेके लिए नहीं होगा जो सुधारके विरोधी हैं, बल्कि उन लोगोंको सचेत और सक्रिय करनेके लिए होगा जो मेरे साथी रहे हैं या जो अस्पृश्यता-निवारणकी प्रतिज्ञा ले चुके हैं। यदि वे अपनी प्रतिज्ञाओंका पालन नहीं करते हैं, या यदि उनका कभी उनके पालनका इरादा ही नहीं था, और उनका हिन्दू धर्म केवल एक छद्मावरण था, तो जिन्दा रहनेमें मेरी कोई रुचि नहीं रहेगी। इसलिए सुधारके विरोधियोंपर मेरे उपवासका कोई असर नहीं पड़ना चाहिए। और यदि मेरे साथी कार्यकर्त्ता और वे करोड़ों लोग भी, जिन्होंने मुझमें यह विश्वास पैदा किया था कि अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनमें वे मेरे और कांग्रेसके साथ हैं, पुनः सोच-विचारके बाद इस निष्कर्षपर

पहुँचे हैं कि अस्पृश्यता ईश्वर और मानव-जातिके विरुद्ध कोई अपराध नहीं है, तो मेरे उपवासका उनपर भी कोई असर नहीं पड़ना चाहिए।

मेरे विचारसे, अपनी और औरोंकी शुचिताके लिए उपवास युगों पुरानी एक रीति है और जबतक मनुष्यकी ईश्वरमें आस्था है, यह कायम रहेगी। यह आर्त्त हृदयकी सर्वशक्तिमान् प्रभुके प्रति प्रार्थना है। लेकिन मेरा तर्क समझदारीका हो या मूर्खताका, जबतक मुझे अपनी स्थिति मूर्खतापूर्ण या गलत नहीं लगती, मुझे उससे डिगाया नहीं जा सकता। अगर फिर उपवास आरम्भ करना पड़ा तो वह तभी करूँगा जब अन्तरात्माका आदेश होगा और यरवडा-समझौतेकी शर्तोंके पालनमें सवर्ण हिन्दुओंकी अक्षम्य उपेक्षाके कारण वह समझौता साफ-साफ टूटता हुआ नजर आयेगा। इस तरहकी उपेक्षाका अर्थ हिन्दू धर्मके साथ विश्वासघात होगा। उसका साक्षी बननेके लिए जिन्दा रहनेकी मेरी इच्छा नहीं है।

एक और उपवासकी बहुत-कुछ सम्भावना है और वह केरलके गुरुवायूर मन्दिर को खुलवानेके सिलसिलेमें होगा। मेरी साग्रह प्रार्थनापर ही श्री केलप्पनने अपना उपवास, जिसने उन्हें लगभग मृत्युके मुँहतक पहुँचा दिया था, तीन महीनेके लिए स्थगित किया था। यदि वह मन्दिर अगली एक जनवरीको या उससे पहले 'अस्पृश्यों' के लिए बिलकुल उसी तरह नहीं खोला गया जिस तरह वह 'स्पृश्यों' के लिए खुला हुआ है और यदि श्री केलप्पनके लिए अपना उपवास फिर शुरू करना जरूरी हो गया, तो मैं उनके साथ उपवास करनेको वचनबद्ध हूँ। इन सम्भावित उपवासोंकी मुझे कुछ विस्तारसे चर्चा इसलिए करनी पड़ी कि दो-तीन स्थानोंसे मुझे बड़े उत्तेजना-भरे पत्र मिले हैं। परन्तु साथी कार्यकर्त्ताओंको इस सम्भावनासे आकुल नहीं होना चाहिए। जिस सम्भावनाका मनुष्य सामना न करना चाहता हो, उसके बारेमें घबरा जानेका परिणाम अकसर उसका सचमुच घटित हो जाना होता है। उसे टालनेका सबसे अच्छा तरीका यह है कि सभी सम्बन्धित व्यक्ति अपनी पूरी शक्ति उस कार्यमें लगा दें, जिससे वह घटना असम्भव हो जाये।

पत्र-लेखकोंने पूछा है कि अन्तर्जातीय भोज और अन्तर्जातीय विवाह क्या अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनके अंग हैं। मेरी रायमें नहीं हैं। उनका सम्बन्ध जितना अवर्णोंसे है, उतना ही सवर्णोंसे भी है। इसलिए अस्पृश्यता-विरोधी पुरुष या महिला-कार्यकर्त्ता अन्तर्जातीय भोज और अन्तर्जातीय विवाह-सम्बन्धी सुधारमें लगनेको बाध्य नहीं हैं। व्यक्तिगत रूपसे मेरा यह खयाल है कि यह सुधार, हमें इसके जब आनेकी आशा है, उससे भी पहले ही आनेवाला है। अन्तर्जातीय भोज और अन्तर्जातीय विवाह पर जो प्रतिबन्ध हैं, वे हिन्दू धर्मका अंग नहीं हैं। वे एक सामाजिक प्रथा हैं, जो हिन्दू धर्ममें शायद उसके पतन-कालमें घुस गई थीं, और तब उनका उद्देश्य शायद हिन्दू समाजको विघटनसे अस्थायी सुरक्षा देना था। परन्तु उनपर जोर रहनेसे जन-मानसका ध्यान उन मूल तत्त्वोंसे हट गया जो जीवनके विकासके लिए अत्यावश्यक हैं। इसलिए, जहाँ-कहीं लोग ऐसे समारोहोंमें, जिनमें 'स्पृश्य' और 'अस्पृश्य', हिन्दू और गैरहिन्दू सहभोजके लिए आमन्त्रित किये गये हों, स्वेच्छासे भाग लेते हैं,

वहाँ मैं उन्हें एक शुभ लक्षण मानकर उनका स्वागत करता हूँ। परन्तु मैं स्वप्नमें भी यह नहीं चाहूँगा कि यह सुधार, अपने-आपमें वह चाहे जितना वांछनीय हो, दीर्घ कालसे आवश्यक इस अखिल भारतीय सुधारका अंग बनाया जाये।

अस्पृश्यता, जिस रूपमें हम सब उसे जानते हैं, एक जहरीला कीड़ा है, जो हिन्दू धर्मकी जड़ोंको खा रहा है। भोजन और विवाह-सम्बन्धी प्रतिबन्ध हिन्दू समाजके विकासमें बाधक हैं। मेरे खयालसे यह भेद मौलिक है। इस तूफानी आन्दोलनमें मुख्य सवालपर हदसे ज्यादा बोझ डालकर उसे जोखिममें डालना समझदारी नहीं होगी। जन-साधारणको अस्पृश्यता-निवारणका एक रूप-विशेष समझाया गया है। अब अचानक यदि उससे उसे भिन्न रूपमें देखनेको कहा जाता है, तो यह उसके साथ विश्वास-घात-जैसी बात भी हो सकती है। इसलिए जहाँ लोग खुद अन्तर्जातीय भोजके लिए तैयार हों वहाँ तो उसे चलाया जा सकता है, पर उसे भारतव्यापी आन्दोलनका अंग नहीं बनाया जाना चाहिए।

अपनेको सनातनी कहनेवाले लोगोंने भी मुझे कुछ पत्र भेजे हैं। इनमें से कुछ पत्र तो काफी रोष-भरे हैं। उनके विचारसे अस्पृश्यता हिन्दू धर्मका सार है। उनमें से कुछ ऐसा मानते हैं कि मैंने अपने धर्मका त्याग कर दिया है, और कुछ यह समझते हैं कि अस्पृश्यता-विरोधी और इसी तरहकी अन्य धारणाएँ मैंने ईसाई धर्म और इस्लामसे ली हैं। कुछने अस्पृश्यताके समर्थनमें शास्त्रोंके उद्धरण भी दिये हैं। उन्हें मैंने इस वक्तव्यके द्वारा उत्तर देनेका वचन दिया है। अतः मैं उन पत्र-लेखकोंको यह बताना चाहूँगा कि मैं खुद भी सनातनी होनेका दावा करता हूँ। जाहिर है कि सनातनीकी उनकी व्याख्या मेरी व्याख्यासे भिन्न है। मेरे विचारसे सनातन धर्म वह जीवन्त धर्म है जो हमें पीढ़ी-दर-पीढ़ी, बल्कि प्रागैतिहासिक कालसे ही विरासतमें मिला है और जो वेदों और उनके बादके धर्म-ग्रन्थोंपर आधारित है। मेरे विचारसे वेद ईश्वर और हिन्दू धर्मकी तरह ही अव्याख्येय हैं। छपे हुए चार ग्रन्थोंको ही वेद कहना अर्धसत्य होगा। ये ग्रन्थ अज्ञात ऋषियोंके प्रवचनोंके केवल अवशेष हैं। बादके ऋषियोंने इन मूल निधियोंमें अपने ज्ञानके अनसार वृद्धि की। फिर एक महान् मनीषी हुआ, जिसने 'गीता' रची। उसने हिन्दू जगत्को हिन्दू धर्मका एक ऐसा सार-संकलन दिया, जिसमें गहरा दर्शन भरा है, पर जो फिर भी सीधे-सादे जिज्ञासुओंकी समझमें आसानीसे आ जाता है। यही एक ऐसा ग्रन्थ है जिसका अध्ययन चाहे तो हरएक हिन्दू आसानीसे कर सकता है। यदि अन्य सभी धर्मग्रन्थ जलकर भस्म हो जायें, तो भी इस अमर गुटकेके सात सौ श्लोक यह बतानेके लिए काफी हैं कि हिन्दू धर्म क्या है और उसे जीवनमें कैसे उतारा जा सकता है। मैं अपनेको सनातनी इसलिए मानता हूँ कि पिछले चालीस वर्षोंसे मैं, शब्दशः, इस ग्रन्थकी शिक्षाओंके अनुसार अपना जीवन व्यतीत करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। जो-कुछ भी इसके मुख्य विषयके विरुद्ध है, उसे मैं हिन्दू धर्मके विरुद्ध समझकर अस्वीकार कर देता हूँ। किसी भी धर्म या धर्मगुरुका इसमें बहिष्कार नहीं है। मुझे यह कहते हुए अत्यन्त आनन्दका अनुभव हो रहा है कि मैंने 'बाइबिल', 'कुरान', 'जेन्द अवेस्ता' और संसारके

अन्य धर्मग्रन्थोंका उसी श्रद्धासे अध्ययन किया है जिससे कि 'गीता' का किया है। इस श्रद्धायुक्त अध्ययनसे 'गीता' में मेरी आस्था और भी दृढ़ हो गई है। इससे मेरा दृष्टिकोण और इसलिए मेरा हिन्दू धर्म भी उदार हो गया है। जरथुस्त्र, ईसा और मुहम्मदके जीवन-चरितोंसे, जैसा मैंने उन्हें समझा है, 'गीता' के बहुत-से अंशोंपर और प्रकाश पड़ा है। इसलिए, इन सनातनी मित्रोंने तानेके रूपमें मुझपर जो आक्षेप किया है, वह मुझे सान्त्वना प्रदान करता है। अपने-आपको हिन्दू कहनेमें मुझे गर्वका अनुभव इसलिए होता है कि यह शब्द मुझे इतना व्यापक लगता है कि यह न केवल पृथ्वीके चारों कोनोंके पैगम्बरोंकी शिक्षाओंके प्रति सहिष्णु है, बल्कि उन्हें आत्मसात् भी करता है। इस जीवन-संहितामें मुझे अस्पृश्यताका कोई समर्थन नहीं मिलता। इसके विपरीत, यह चुम्बककी-सी शक्तिशाली वाणीसे मेरी बुद्धिको और उससे भी गहरे मेरे हृदयको छूकर मुझे यह माननेको बाध्य करती है कि जितना भी जीवन है, वह सब एक है और वह ईश्वरसे उत्पन्न हुआ है और उसे उसीमें विलीन हो जाना है।

वन्दनीय [गीता] माता द्वारा उपदिष्ट सनातन धर्मके अनुसार, जीवनका लक्ष्य बाह्य आचार और कर्मकाण्ड नहीं, बल्कि मनकी अधिकसे-अधिक शुद्धि और तन, मन और आत्मासे अपनेको दिव्य तत्त्वमें विलीन कर देना है। 'गीता' के इसी सन्देशको अपने जीवनमें उतारकर मैं लाखों-करोड़ों लोगोंके पास गया हूँ। और मुझे पूर्ण विश्वास है कि उन्होंने मेरी बात मेरी राजनीतिक बुद्धिमत्ता या वक्तृत्व-कलाके कारण नहीं, बल्कि इसलिए सुनी है कि उन्होंने मुझे सहज ही अपना और अपने धर्मका आदमी मान लिया है। समयके बीतनेके साथ-साथ मेरा यह विश्वास उत्तरोत्तर दृढ़ होता गया है कि सनातन धर्मसे अपनेको सम्बद्ध माननेका मेरा दावा गलत नहीं है और यदि ईश्वरकी इच्छा हुई तो वह मुझे इस दावेपर अपनी मृत्युकी मुहर लगानेका अवसर देगा।

[अंग्रेजीसे]
एपिक फास्ट, पृ० ३११-७

५६९. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रचूजको

४ नवम्बर, १९३२

प्रिय चार्ली,

मुझे दो पत्रोंका उत्तर देना है। तुम्हारा निश्चय, निस्सन्देह, ठीक है। तुम्हारी अस्पृश्यताकी समस्या एक तरहसे मेरी यहाँकी समस्यासे जटिल है। अस्पृश्यता मरती हुई रूढ़ि है और उसपर घातक प्रहार करनेके लिए सुधारकोंकी सेना बराबर बढ़ रही है। तुम्हारी अस्पृश्यताके मरनेके कोई आसार दिखाई नहीं देते और विज्ञानके नामपर उसे बहुत-से समर्थक मिल जाते हैं। फिर, तुम्हारे पास कार्यकर्त्ता भी थोड़े हैं। पर, जैसा कि तुमने और मैंने बार-बार देखा है, जो काम मनुष्यके लिए कठिन

है, वह ईश्वरके लिए सरल है। हर हालतमें हमें बस अपने हिस्सेका काम करना है। मैं यह प्रार्थना करूँगा कि तुम्हें अपने काममें सफलता मिले।

मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि मेरी इच्छा इस गर्दभ बन्धु [शरीर] को मार डालनेकी नहीं है। यह ईश्वरके हाथोंमें सुरक्षित है। यदि उसकी इच्छा इसे भूखों मारनेकी होगी तो तुम्हारा या मेरा प्रयत्न इसे बचा नहीं सकेगा। फिलहाल तो यह बकरीके दूध, ढेर-सारे फलों और घरकी बनी थोड़ी रोटीपर पुष्ट होता जा रहा है।

गुरुदेव अब भी प्रेम बरसा रहे हैं। उस छोटे से उपवाससे मुझे बहुत-सी ऐसी निधियाँ मिलीं जिन्हें पानेकी मैंने स्वप्नमें भी कल्पना नहीं की थी। उनमें सबसे बहुमूल्य गुरुदेव हैं। यदि किसीने मुझसे यह कहा होता कि "गुरुदेवको पानेके लिए उपवास करो" तो मैं बिना किसी दुविधाके उपवास कर सकता था। उनके हृदयमें थोड़ा स्थान पानेके लिए मैं तरस रहा था। ईश्वरकी कृपासे उपवासके द्वारा वह मुझे मिल गया।

हम सबका प्यार।

मोहन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९७६) से।

५७०. वक्तव्य : अस्पृश्यतापर – २

५ नवम्बर, १९३२

एक पत्र-लेखकने उदार शिक्षा प्राप्त करनेके बावजूद यह सुझाव दिया है कि हरिजन सवर्ण हिन्दुओंके साथ समान स्तरपर लाये जायें, इससे पहले उन्हें इस तरहके सम्मानके योग्य बनना चाहिए। उन्हें अपनी गन्दी आदतें छोड़नी चाहिए, मरे हुए पशुओंका मांस खाना छोड़ना चाहिए। एक और सज्जन यहाँतक कहते हैं कि भंगियों और चमारोंको अपने धन्धे, जो उनके विचारसे 'गन्दे काम' हैं, छोड़ देने चाहिए। ये आलोचक यह भूल जाते हैं कि हरिजनोंमें जितनी भी बुरी आदतें दिखाई देती हैं, उनके लिए सवर्ण हिन्दू ही जिम्मेदार हैं। तथाकथित उच्च वर्णोंने उन्हें साफ रहनेकी सुविधाओंसे और प्रेरणासे भी वंचित कर रखा है। जहाँतक भंगी और चमारके धन्धोंका सवाल है, वे बहुत-से अन्य धन्धोंसे, जिन्हें मैं गिना सकता हूँ, अधिक गन्दे नहीं हैं। हाँ, यह बात मानी जा सकती है कि ये धन्धे, कई और धन्धोंकी तरह, गन्दे ढंगसे किये जाते हैं। उसका कारण भी 'उच्च वर्णों' की घोर उदासीनता और दण्डनीय उपेक्षा है। अपने निजी अनुभवसे मैं यह कह सकता हूँ कि भंगीका काम और चमारका काम, दोनों पूर्णतया स्वस्थ और स्वच्छ तरीकेसे किये जा सकते हैं। हर माँ अपने बच्चोंके लिए भंगी होती है और आधुनिक चिकित्सा-शास्त्रका हर विद्यार्थी इस मानेमें चमार है कि उसे मानव-शवोंकी चीर-फाड़ करनी और चमड़ी हटानी पड़ती है। परन्तु उनके धन्धोंको हम पवित्र

मानते हैं। मेरा कहना यह है कि आम भंगियों और चमारोंके धन्धे माताओं और डॉक्टरोंके धन्धोंसे कम पवित्र और कम उपयोगी नहीं हैं। सवर्ण हिन्दू यदि अपने-आपको हरिजनोंके प्रतिपालक और उपकारकर्त्ता मानेंगे तो वे गलती करेंगे। सवर्ण हिन्दू हरिजनोंके लिए अब जो-कुछ करते हैं, वह उनके साथ पीढ़ी-दर-पीढ़ी किये गये अन्यायोंकी केवल बहुत विलम्बसे हुई क्षतिपूर्ति होगी। यदि सवर्णों द्वारा हरिजनोंको अब उनकी वर्त्तमान स्थितिमें ही अपनाना पड़ता है—और इसी तरह उन्हें अपनाना भी चाहिए—तो यह पिछले अपराधकी उचित सजा-भर होगा। पर इसमें इतना सन्तोष जरूर है कि खुले दिलसे उनका स्वागत करना ऐसा कार्य होगा जो उन्हें सफाईके लिए पर्याप्त प्रोत्साहन देगा, और सवर्ण हिन्दू खुद अपनी सुख-सुविधाकी खातिर हरिजनोंको साफ रहनेकी सहूलियतें देंगे।

इन बेचारे हरिजनोंपर हमने जो अन्याय किये हैं, उन्हें याद करना हमारे लिए अच्छा है। सामाजिक दृष्टिसे वे कोढ़ी हैं, आर्थिक दृष्टिसे गुलामोंसे भी बदतर हैं। धार्मिक दृष्टिसे देखें तो उन्हें उन स्थानोंमें भी घुसनेकी इजाजत नहीं है जिन्हें हमने 'ईश्वरका घर' का गलत नाम दे रखा है। उन्हें सार्वजनिक मार्गों, सार्वजनिक विद्यालयों, सार्वजनिक अस्पतालों, सार्वजनिक कुओं, सार्वजनिक नलों, सार्वजनिक उद्यानों आदिको सवर्ण हिन्दुओंकी तरह इस्तेमाल करनेकी इजाजत नहीं है। कहीं-कहीं तो उनका एक निश्चित दूरीके अन्दर आना भी सामाजिक अपराध है और कुछ-एक स्थानोंपर उनका दिखाई देनातक अपराध है। उन्हें रहनेके लिए शहरों और गाँवोंके निकृष्टतम स्थान दिये जाते हैं, जहाँ उन्हें लगभग कोई भी सामाजिक सुविधा उपलब्ध नहीं होती। सवर्ण हिन्दू वकील और डॉक्टर, समाजके अन्य लोगोंकी जिस तरह सेवा करते हैं उस तरह उनकी सेवा करनेको तैयार नहीं हैं। ब्राह्मण उनके धार्मिक अनुष्ठानोंमें पौरोहित्य करनेको राजी नहीं है। फिर भी, वे किसी तरह गुजारा कर रहे हैं और अभीतक हिन्दू समाजके अन्दर हैं, यही बड़ा आश्चर्य है। वे इतने अधिक कुचले गये हैं कि अपने उत्पीड़कोंके विरुद्ध विद्रोह करनेकी उनमें शक्ति ही नहीं है।

ये दुःखद और लज्जाजनक तथ्य मैंने इसलिए याद दिलाये हैं कि कार्यकर्त्ता यरवडा-समझौतेके गूढ़ार्थोंको साफ-साफ समझ लें। केवल सतत प्रयत्नसे ही इन कुचले हुए साथियोंको अधोगतिसे उबारा जा सकता है, हिन्दू धर्मकी शुद्धि की जा सकती है, और पूरे हिन्दू समाजको तथा उसके साथ पूरे भारतको ऊपर उठाया जा सकता है।

अन्यायोंके इस सीधे-सादे वर्णनसे हमें स्तम्भित और हताश नहीं होना चाहिए। पिछले सप्ताह जो-कुछ हुआ, वह यदि सवर्ण हिन्दुओंके पश्चात्तापकी वास्तविक अभिव्यक्ति है, तो सब ठीक हो जायेगा, और हर हरिजन शीघ्र ही स्वतन्त्रताका आलोक अनुभव करेगा। परन्तु इस अति अभीष्ट लक्ष्यकी प्राप्तिसे पहले स्वतन्त्रताका सन्देश दूर-दूरके गाँवोंतक पहुँचाना होगा। वस्तुतः बड़े-बड़े शहरोंकी अपेक्षा, जहाँ जनमत जल्दीसे संगठित किया जा सकता है, गाँवमें काम करना बहुत ज्यादा कठिन है। अब क्योंकि

अखिल भारतीय अस्पृश्यता-बिरोधी संघ बन गया है, इसलिए कार्यकर्त्ताओंको उस संघके साथ तालमेल रखते हुए काम करना चाहिए। यहाँ मैं उस बातको दोहराना चाहूँगा जो डॉ० अम्बेडकरने मुझसे कही थी। उन्होंने कहा था; "पुराना तरीका यह था कि सुधारक यह दावा करता था कि पीड़ितोंकी आवश्यकताओंको वह खुद पीड़ितोंसे ज्यादा जानता है। वह तरीका दोहराया नहीं जाना चाहिए।" इसलिए, उन्होंने आगे कहा था, "अपने कार्यकर्त्ताओंसे कहिए कि वे हरिजनोंके प्रतिनिधियोंसे यह मालूम करें कि उनकी पहली जरूरत क्या है और वे उसकी पूर्ति किस तरह चाहते हैं। सामूहिक जलपान आदि प्रदर्शनके लिए अच्छे हैं, पर उनकी अति हो सकती है। उनमें कृपा करनेका भाव रहता है। मैं खुद उनमें भाग लेना नहीं चाहूँगा। इससे अधिक सम्मानित तरीका यह होगा कि बिना किसी शोर-गुलके हमें साधारण सामाजिक समारोहोंमें आमन्त्रित किया जाये। हरिजनोंको मन्दिरोंमें प्रवेश करानेका काम बहुत अच्छा और आवश्यक है, लेकिन यह काम भी कुछ दिन रुक सकता है। तात्कालिक जरूरत तो आर्थिक स्तरको ऊपर उठानेकी और दैनिक सम्पर्कमें शिष्ट व्यवहारकी है।" स्वयं अपने कटु अनुभवसे उन्होंने जो-कुछ हृदय-विदारक विवरण दिये, उन्हें मैं यहाँ दोहराना नहीं चाहता। उनके विचारोंका मुझपर असर पड़ा और मुझे आशा है, प्रत्येक पाठकपर भी पड़ेगा।

सुधारक क्या तरीके अपनायें, इस विषयमें मुझे बहुत-से सुझाव भेजे गये हैं। एक तो, स्वामी श्रद्धानन्दजी जो बात अकसर दोहराया करते थे, उसीकी पुनरावृत्ति है; यानी प्रत्येक हिन्दू अपने घरमें एक हरिजन रखे, जो व्यवहारतः हर तरहसे कुटुम्बका ही सदस्य माना जाये। दूसरा सुझाव एक ऐसे गैर हिन्दू मित्रने भेजा है, जिनकी भारतके कल्याणमें गहरी रुचि है। वे कहते हैं कि हर सम्पन्न हिन्दूको चाहिए कि वह एक हरिजन लड़के या लड़कीको हो सके तो खुद अपनी देख-रेखमें, उच्च शिक्षा दिलानेका खर्च उठाये, जिससे कि वे अपनी शिक्षा पूरी करके अपने हरिजन भाइयोंके कल्याणके लिए काम कर सकें। दोनों सुझाव विचार करने और अपनाने लायक हैं। जिन लोगोंने भी सार्थक सुझाव रखे हैं, उन सबसे मैं यही कहूँगा कि वे उन्हें नव-स्थापित संघके पास भेज दें। पत्र-लेखकोंको मेरी सीमाएँ समझनी चाहिए। जेलके सीखचोंके भीतरसे मैं संघको और लोगोंको केवल सलाह ही दे सकता हूँ। योजनाओंको वस्तुतः अमलमें लानेमें मैं कोई भाग नहीं ले सकता। उन्हें यह भी समझना चाहिए कि मेरी सम्मतियाँ चूँकि लाजिमी तौरपर अपर्याप्त सामग्री और प्रायः परोक्ष जानकारीपर आधारित होती हैं, इसलिए नये तथ्योंके प्रकाशमें उनमें संशोधन हो सकता है और उन्हें स्वीकार करनेमें सावधानी बरतनी चाहिए।

यद्यपि अब यह अतीतकी बात हो चुकी है, फिर भी एक पैरेमें मैं उस आपत्ति की चर्चा करना चाहूँगा जो एक पत्र-लेखकने उठाई है और जिसकी आवाज दबी जबानसे समाचार-पत्रोंने भी उठाई है। समझौतेके राजनीतिक अंशके बारेमें वे पूछते हैं, "इससे आपको क्या लाभ हुआ? हरिजनोंको तो जो-कुछ प्रधान-मन्त्रीने दिया उससे कहीं ज्यादा मिल गया है।" मेरा उत्तर यह है कि वस्तुतः वही लाभ तो

हुआ है। उस फैसलेपर मुझे आपत्ति यही थी कि वह रोटीके बजाय पत्थर दे रहा था। इस समझौतेने रोटीके टुकड़े दिये हैं। हिन्दुओंके लिए निर्धारित सभी सीटें यदि हरिजनोंको मिल जातीं तो डॉ० मुंजेके साथ खुद मुझे भी खुशी हुई होती। सवर्ण हिन्दुओं और हिन्दू धर्मके लिए वह सबसे बड़ा लाभ होता। मैं जो चाहता था और अब भी चाहता हूँ, वह उनका सवर्ण हिन्दुओंमें और सवर्ण हिन्दुओंका उनमें पूरी तरह मिल जाना है। यह मेरा सुविचारित मत है — ऐसा मत जो प्रकाशमें आनेवाले किसी भी नये तथ्यसे बदलनेवाला नहीं है — कि उत्पीड़क पीड़ितोंको जितना अधिक देते हैं खुद उनका उतना ही अधिक लाभ होता है। उस हदतक वे दीर्घकालसे चढ़े ऋणोंसे मुक्ति पा लेते हैं। सवर्ण हिन्दू इस प्रश्नको जबतक इस विनम्र, पश्चात्तापपूर्ण, धार्मिक और न्यायोचित भावनासे नहीं देखेंगे, तबतक समझौतेके शेष अंशका उस भावनासे कभी पालन नहीं किया जा सकेगा जो उपवास-सप्ताहमें पूरे हिन्दू समाजमें फैली लगती थी।

जिन नरेशोंने अपनी-अपनी रियासतोंके मन्दिर हरिजनोंके लिए खोल दिये हैं और अस्पृश्यताको दूसरी तरहसे भी अपनी रियासतोंसे मिटानेकी घोषणा की है, उन्हें मैं बधाई देना चाहता हूँ। अगर अनुचित न हो तो मैं यह कहना चाहूँगा कि इस तरह उन्होंने अपनी तथा अपनी प्रजाकी ओरसे कुछ प्रायश्चित्त किया है। आशा है, इन रियासतोंमें रहनेवाले हिन्दू इन घोषणाओंकी शर्तोंपर अमल करेंगे और हरिजनोंके साथ ऐसा भ्रातृवत् व्यवहार करेंगे कि उन्हें यह लगने लगेगा, मानों वे हिन्दू समाजसे कभी तिरस्कृत और बहिष्कृत थे ही नहीं। हम इस अति दुःखद दृश्यके इतने अधिक निकट हैं कि यह महसूस ही नहीं करते कि अस्पृश्यताका यह जहरीला कीड़ा अपनी नियत सीमाओंसे बहुत आगे बढ़ गया है और इसने पूरे राष्ट्रकी जड़ें खोखली कर दी हैं। छुआछूतकी भावना आज वातावरणमें व्याप्त है। इसलिए इस दीमकको यदि जड़से ही नष्ट कर दिया जाये, तो मुझे यकीन है कि शीघ्र ही हम जातियों और धर्मोंके भेदोंको भूल जायेंगे और यह मानने लगेंगे कि जैसे सब हिन्दू एक और अविभाज्य हैं, उसी तरह हिन्दू, मुसलमान, सिख, पारसी, यहूदी और ईसाई — ये सभी एक ही वृक्षकी शाखाएँ हैं। धार्मिक सम्प्रदाय हैं, पर धर्म एक ही है। मैं चाहता हूँ कि अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनसे हम यही सबक सीखें। और यदि हम इसे धार्मिक भावना और अडिग संकल्पसे चलायेंगे तो यही सबक सीखेंगे भी।

[अंग्रेजीसे]

एपिक फास्ट, पृ० ३१८-२२

५७१. पत्र : अरुण दासगुप्तको

५ नवम्बर, १९३२

आशा है, तू मेरी इस बातका मतलब साफ-साफ समझ गया होगा कि तुझे अपने शरीरको अपना नहीं मानना चाहिए।[1] वह ईश्वरका है। पर ईश्वरने तुझे वह कुछ समयके लिए दिया है ताकि तू उसे स्वच्छ और स्वस्थ रखे और उसकी सेवाके काममें लाये। इसलिए तू उसका थातीदार है, स्वामी नहीं। स्वामी अपनी सम्पत्तिका सदुपयोग या दुरुपयोग जो चाहे कर सकता है। पर थातीदार या उसके रक्षकको बहुत सावधान रहना होता है और जो सम्पत्ति उसे देखरेख के लिए सौंपी गई है, उसका अच्छेसे-अच्छा उपयोग करना होता है। इसलिए तुझे शरीरकी चिन्ता तो नहीं करनी है, लेकिन उसकी यथाशक्य देख-रेख करनी है। ईश्वर जब चाहेगा तब उसे ले लेगा।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २०९

५७२. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

५ नवम्बर, १९३२

मैंने अपनी स्थिति[2] समाचार-पत्रोंको दिये गये वक्तव्यमें स्पष्ट करनेकी कोशिश की है। आपने वह देखा ही होगा। पता नहीं, उससे आपका सन्तोष हुआ या नहीं। मैं जाति और वर्णमें, जैसा कि मैंने सदा किया है, स्पष्ट भेद करता हूँ। जातियाँ असंख्य हैं और अपनी वर्तमान स्थितिमें वे हिन्दू धर्मके लिए बाधा हैं। इसलिए आप और मैं जाति-भेद नहीं मानते हैं। वर्णकी स्थिति इससे भिन्न है और उसका अर्थ पेशा है। भोजन-सम्बन्ध और विवाह-सम्बन्धसे उसका कोई वास्ता नहीं है। चारों वर्णोंके लोग पहले एक-दूसरेके साथ भोजन और विवाहतक करते थे और वैसा करनेसे स्वभावत: उनका वर्ण न तो छूट सकता था और न छूटता था। यह बात 'भगवद्गीता' में दी गई विभिन्न वर्णोंकी परिभाषासे बिलकुल स्पष्ट हो जाती है। मनुष्य अपने वर्णसे तभी पतित होता है, जब वह अपने कुलक्रमागत पेशेको छोड़ देता है। परन्तु आज तो वर्णाश्रम लुप्त धनकी तरह है और सब-कुछ बिलकुल गड़बड़ हो गया है। इसलिए जहाँतक मैं समझ सकता हूँ, आज केवल एक ही वर्ण है और वह है शूद्र। वर्णोंमें जो गड़बड़ है, वह लज्जाजनक है। हम अपनेको शूद्र कहें, यह कोई लज्जाकी बात नहीं है, क्योंकि धर्ममें न कोई ऊँचा है, न नीचा। शूद्रका

१. देखिए "पत्र: अरुण दासगुप्तको", २०-१०-१९३२।

२. वर्ण और जाति-भेदके सम्बन्धमें।

पेशा उतना ही सम्मानित और आवश्यक है जितना कि ब्राह्मणका। क्षत्रिय और वैश्यका भी वैसा ही है। किन्तु यदि अपने-आपको शूद्र माननेसे हमारे अभिमानको चोट पहुँचती हो, तो भी उससे कोई छुटकारा नहीं है। यह बात क्षण-भर विचार करनेसे ही स्पष्ट हो जायेगी। यह सौभाग्यपूर्ण परिस्थिति यदि आम तौरपर स्वीकार कर ली जाये तो हरिजनोंका दर्जा तय करनेकी कठिनाई दूर हो जाती है। समाजमें उनके आनेपर उनका वर्ण क्या होना चाहिए? यदि हम कहें 'शूद्र वर्ण', तो हम तुरन्त यह मान लेते हैं कि वर्ण-धर्ममें दर्जे हैं, और हरिजनोंको इस बातका विरोध करनेका कि उन्हें सबसे निचला दर्जा दिया जा रहा है, पूरा अधिकार होगा। यदि हम सभी शूद्र हैं तो कोई कठिनाई ही नहीं रहती। मुझे एक विद्वान् शास्त्रीकी बात याद है। १९१५ में नेल्लूरकी एक सामाजिक सुधार-सभामें उन्होंने यह कहा था कि वर्णोंमें गड़बड़ है और जैसे कि आरम्भमें केवल एक ही वर्ण — अर्थात् ब्राह्मण — था उसी तरह हम सभी अब अपने-आपको ब्राह्मण कहें। वह सुझाव तब मेरा समाधान नहीं कर सका था और आज तो और भी नहीं कर पाता है। हम सब सेवा कर सकते हैं और इसलिए शूद्र कहला सकते हैं। परन्तु हम सब विद्वान् नहीं हैं और न ब्रह्म-ज्ञानी हैं। इसलिए अपने-आपको ब्राह्मण मानना असत्य होगा। यदि हम भोजन-सम्बन्ध और विवाह-सम्बन्धको, जिस तरहका धार्मिक महत्त्व उनका आज समझा जाता है, उससे मुक्त कर दें, तो यह फिर केवल हमारी इच्छाकी बात हो जाती है कि हम कहाँ खाते हैं और कहाँ अपने बच्चोंका विवाह करते हैं। तब अस्पृश्यता-निवारणका ठीक वही अर्थ होगा जो मैंने उसे सदा दिया है। यह बात अब तो बिलकुल स्पष्ट हो जानी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २०५-६

५७३. पत्र : वी० रामजीरावको

५ नवम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका इसी महीनेकी १ तारीखका पत्र मिला। रामनाम लेते हुए अपना काम करते जाइए। सभी कठिनाइयाँ अपने-आप दूर हो जायेंगी। अस्पृश्यता-विरोधी कार्यके सम्बन्धमें मैं दिन-प्रतिदिन जो वक्तव्य जारी कर रहा हूँ, उन्हें देखिएगा। कृपया उन्हें ध्यानपूर्वक पढ़ें और उनको अच्छी तरह हृदयंगम कर लें। अस्पृश्यता-विरोधी कार्यकर्त्ताको उनसे पर्याप्त मार्ग-दर्शन मिलना चाहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४५७९)से।

५७४. एक पत्र

५ नवम्बर, १९३२

मोढ़ोंकी सेवाके बजाय हिन्दुस्तानी-मात्रकी सेवा क्यों नहीं? ये छोटे-छोटे बाड़े कहाँतक बने रहेंगे? ऐसे आन्दोलनमें क्यों पड़ा जाये जो बुजुर्गोंको पसन्द न हो और जिससे कुछ बने भी नहीं? और यह नहीं मानना चाहिए कि इस तरह पर्चोंकी संख्या बढ़ती ही रहे तो उससे कोई लाभ होता है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २०८

५७५. पत्र : बींदणीदेवीको[1]

५ नवम्बर, १९३२

तुम्हारा पत्र पाकर बहुत आनन्द हुआ। तुम्हारे विनोदसे ही मैं देख सकता हूँ कि तुम्हारा स्वास्थ्य अब ठीक हो रहा है। ईश्वर तुमको पूर्ण आरोग्य देवे। यदि वहीं शरीर अच्छा होवे तो जबलपुर जानेकी शीघ्रता करनेका कोई कारण न माना जाये।[2]

पुरुष लोगोंको पुत्र बनानेमें बड़ी आपत्ति रहती है।[3] वे लोग बहुत घमण्डी रहते हैं और पिताकी मिलकतमें हिस्सा माँगते हैं। गोविन्ददासने छोड़ दिया, सो तो अलग बात हुई। पुत्री बेचारी तो हिस्सा माँग ही नहीं सकती। और मेरे जैसे जो पिता बन बैठे हैं वह तो पुत्रियोंसे सेवा ही लेते हैं। देनेकी तो बात कहाँ है? मेरी पुत्री बननेमें क्या-क्या कठिनाइयाँ हैं वह तुमको बता दिया।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २१०

१. सेठ गोविन्ददासकी पत्नी।

२. श्रीमती गोविन्ददास हृदयरोगसे पीड़ित थीं, उन दिनों जयपुरमें स्वास्थ्य लाभ कर रही थीं।

३. श्रीमती गोविन्ददासने उलाहना देते हुए लिखा था कि आपने मुझे तो अपनी बेटी मान लिया किन्तु मेरे पतिको बेटा नहीं माना, इससे उन्हें दुःख हुआ।

५७६. पत्र : हबीबुर्रहमानको

५ नवम्बर, १९३२

आपका पत्र पाकर मुझे आनन्द भया। अब आपकी पहचान भेजिए। आपने संस्कृत भाषाका अभ्यास कहांतक किया? कितने वरसोंतक किया? आपकी उम्र कितनी है? कितने बरसोंसे आप अध्यापक हुए हैं? कितने लड़के संस्कृतका अभ्यास कर रहे हैं? उसमें से कितने मुसलमान हैं? कितने हिन्दु? आपके माता-पिता जीते हैं? और हैं तो पिताजी क्या करते हैं?

अब आपके प्रश्नोंका उत्तर देनेकी कोशिश करता हुं। हिन्दु धर्मकी खसूसियत यह है कि उसमें काफी विचार-स्वातंत्र्य है। और उसमें हरेक धर्मके प्रति उदारभाव होनेके कारण उसमें जो-कुछ अच्छी बातें रहती हैं, उनको हिन्दूधर्मी मान सकता है। इतना ही नहीं परन्तु माननेका उसका कर्त्तव्य है। ऐसा होनेके कारण हिन्दू धर्मग्रन्थके अर्थका दिन-प्रतिदिन विकास होता है।

'महाभारत' और 'गीता' के पात्रोंके बारेमें जो-कुछ मैंने कहा है वह मेरा कोई मौलिक ख्याल नहीं है, लेकिन मैंने टीका-ग्रन्थोंमें से यह विचार पाया है। सदानन्द मिश्रकृत 'भगवद्गीता' की एक टीका है उसमें इस विचारको अच्छी तरह बढ़ाया है। प्राकृत-ग्रन्थोंमें भी ऐसे विचार बताये गये हैं। हिन्दू धर्मके नामसे प्रचलित ग्रन्थोंमें जो-कुछ लिखा गया है वह सबके-सब धर्मवचन हैं, ऐसा नहीं है, और हिन्दू जनताको यह अब मानना चाहिए, ऐसा भी नहीं है। वेदपाठ सुननेवाले शूद्रके कानमें गरम सीसा डालनेकी बातको अगर ऐतिहासिक मानी जाय तो मैं उसे धर्म माननेके लिए हरगिज तैयार नहीं हूँ, और ऐसे असंख्य हिन्दू हैं जो उसे धर्मवचन नहीं मानते हैं। हिन्दू धर्मके लिये एक कसौटी रखी गई है, जिसको एक बालक भी समझ सकता है। जो बुद्धिग्राह्य वस्तु नहीं है और बुद्धिसे विपरीत है वह कभी धर्म नहीं हो सकती है; और जो सत्य और अहिंसासे विपरीत है वह भी धर्म नहीं हो सकती है।

अब रही यरवडा समझौतेकी बात। कमसे-कम मेरे नजदीक 'वोट' की गिनती की वह बात किसी हालतमें नहीं थी। मेरे नजदीक हरिजन भाइयोंका अंग्रेजी प्रधान-मण्डलके प्रस्तावसे जो बुरा हो रहा था उसीको मिटानेकी बात थी। अनशनव्रतके बारेमें आपसे मैं क्या विनय करूँ? इतना ही कह सकता हूँ कि वह ईश्वर प्रेरित बात थी, जिसको मैं रोक ही नहीं सकता था।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २०८-९

५७७. पत्र : हनुमानप्रसाद पोद्दारको

५ नवम्बर, १९३२[1]

भाई हनुमानप्रसाद,

तुम्हारा खत मिला। भले लंबा खत लिखा। मैं उसका सदुपयोग कर लुंगा। देवदासके बारेमें जो-कुछ लिखा है वह तुम्हारे लिये उचित ही है। 'नवजीवन'में से जो वचन तुमने उद्धृत किये हैं उसपर मैं आज भी वैसे ही कायम हूं। मेरे वचनोंको समजनेके लिये मेरे आचार समजनेकी आवश्यकता रहती है। क्योंकि मेरा प्रयत्न आचारके विरुद्ध वचन न कहनेका और वचनके विरुद्ध आचार न करनेका रहता है। जब मेरे आचार वचनके अनुकूल नहीं रहते हैं तब मैं निजी दुर्बलताका स्वीकार कर लेता हूं। यहां आचार और वचनमें ऐसा कोई विरोध नहीं है।

जो लोग सनातनीओंपर कटाक्ष करते हैं, उनकी निंदा करते हैं वे हिंसा करते हैं और अस्पृश्यता-निवारणमें बाधा डालते हैं उसमें कोई सन्देह नहीं है। यह सारा कार्य केवल धार्मिक है और धार्मिक दृष्टिसे ही बनना चाहिये। सनातनी जो अस्पृश्यताको धर्म मानते हैं उनपर किसी प्रकारका आक्रमण नहीं होना चाहिये। उनको अपने मंतव्यपर कायम रहनेका उतना हि अधिकार है जितना हमको अपने मंतव्यपर कायम रहनेका है। सहभोजमें भी मर्यादा, स्वच्छता, इ० के पालनकी हमेशा आवश्यकता है। और इसमें भी किसीपर बलात्कार करना अवश्य पाप है, और जो सहभोजमें संमत नहीं होना चाहते हैं उनको घृणा करना वह भी पाप है। इसी तरह मंदिरोंके संचालकोंका विरोध करके बलात्कारसे उसमें घुस जाना वह भी पाप-कर्म है। और इस तरहसे सब मन्दिरमें हरिजनोंका प्रवेश हो भी गया, हरिजनोंके साथ दूसरे हिंदू खान-पानके लिये बैठ गये भी तदपि मैं इसे अस्पृश्यता-निवारण हरगीज नहीं मानुंगा। ऐसे निवारणके साक्षी होनेके बदलेमें मैं मृत्युकी भेंट ही मेरे लिये कल्याणकर समजूंगा क्योंकि बलात्कारसे न अस्पृश्यता मिट सकती है, न हिंदु धर्मकी रक्षा होती है ऐसा मुझको पूर्ण विश्वास है।

मैं इतना स्पष्ट कर दूं। सहभोजका मेरे दिलमें कोई विरोध नहीं है; और जब किसीके साथ घृणासे या तो उसके जन्मके कारण कोई खानपानसे इनकार करता है तो उसे मैं अधर्म मानता हूं। खानपानसे मित्रभाव बढ़ता ही है ऐसा कहना अतिशयोक्ति है इसमें सन्देह नहीं है, लेकिन जो मनुष्य स्वच्छ है, निरामिषाहारी है उसके साथ भी खानपान करनेका इनकार करना, क्योंकि वह इतरधर्मी है या इतरप्रांतिक है या अंत्यज है इसमें अधर्म है। और अस्वच्छता इ० का आरोपण करके अंत्यज मात्रसे भोजन-व्यवहार करनेका इनकार कोई अच्छी बात नहीं मानी जा सकती।

१. यह तारीख **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-२ से दी गई है।

इस प्रश्नको धार्मिक दृष्टिसे देखनेके लिये एक बात स्मरणमें रखनी चाहिये। आजतक सवर्ण हिंदुने एक अवर्ण हिंदु वर्ग पैदा किया और उनके साथ अधर्मयुक्त हिंसक बर्ताव किया उसीके कारण उन लोगोंमें अस्वच्छता इत्यादि दोष आ गये। इस बूरे वर्तावका किसी-न-किसी रोज हिंदु जनताको प्रायश्चित करना ही है। आज यह मौका आ गया है उस वक्त जिन दोषोंके लिये हम जिम्मेवार हैं उन दोषोंको ही कारण बनाकर हम उनको मन्दिर-प्रवेशादिसे रोक नहीं सकते हैं। वे लोग जैसे हैं वैसे हि उनको भेंटना, उनको मन्दिरमें आने देना इ० सद्व्यवहार करना वही तो हमारा प्रायश्चित है। और हमारे विश्वास रखना चाहिये कि वही लोग हमारे संपर्कमें आयेंगे तव उनके आचार शुद्ध हो जायेंगे और शुद्ध करनेकी चेष्टा भी करेंगे। उनको शुद्ध करनेका और सवर्ण हिंदुको प्रायश्चित्त करनेका और कोइ ढंग है ही नहीं। यह बात भी स्मरणमें रखना आवश्यक है कि जो अस्वच्छता इ० दोष हरिजनोंमें पाये जाते हैं वैसे दोष दूसरे लाखों हिंदुमें भी हैं इस कारण हम न उनको मंदिरमें आनेसे रोकते हैं न उनको और कोई जाहेर संस्थासे दूर रखते हैं। हरिजनके लिये हम क्यों काजी बनें? आखरमें भगवान किसका है? पुण्यवान और धनवानका है कि सुदुराचारी[1] लोग जो अपनी तोतली जबानसे कष्टसे उसके नामका उच्चारण करते हैं उनका है? हम दूसरोंके काजी न बनें। हमारा कर्त्तव्य निजके काजी बननेका है। जो-कुछ मैंने लिखा है उसका धीरजसे विचार करो, मनन करो, और फिर कुछ पूछनेकी आवश्यकता रहे तो बिना संकोच पूछो। मैं तुमको संतोष देना चाहता हूं। और वह स्वार्थवश, क्योंकि तुमसे इस काममें बहुत साहाय्यकी आशा रखता हूं। मेरे नजदीक यह प्रश्न केवल धार्मिक है और तुम्हारे जैसे धार्मिक वृत्तिवालोंकी संपूर्ण सहाय मुझे चाहिये।

रतनगढ़में कहांतक रहना है?

पत्रकी फोटो-नकल (एस० एन० १८५९८) से।

५७८. पत्र : लीलावती आसरको

६ नवम्बर, १९३२

चि० लीलावती,

मेरे पत्रका गलत अर्थ लगाकर तू दुःखी हुई, इसके लिए मैं क्या करूँ? मैंने तुझे शान्त करनेके लिए पत्र लिखा और तू अशान्त हुई! मैंने तो तुझमें अपना विश्वास व्यक्त किया था। स्वेच्छासे मेरी लड़की बननेवालीको छोड़कर मैं कहाँ जानेवाला था? अपने खयालसे तो मैं तेरी रक्षा ही करता आया हूँ, और करता

१. देखिए **गीता**, ९-३०।

रहूँगा। तू चिन्ता मत कर, भगवान् तेरा कल्याण ही करेंगे। किन्तु तू धीरज रख, शान्त रह और लोभ छोड़ दे। मुझे पत्र लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५७१) से। सी० डब्ल्यू० ६५४३ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

५७९. पत्र : आश्रमके बालक-बालिकाओंको

६ नवम्बर, १९३२

बालको और बालिकाओ,

तुम्हारे पाँच दिनके वन-विहारका शारदा द्वारा लिखा हुआ सुन्दर विवरणवाला पत्र मिला। मैं तो उसका उत्तर संक्षेपमें ही दे सकूँगा। हरिजनोंसे सम्बन्धित काममें मेरा बहुत-सा समय चला जाता है, इसलिए तुम्हें विस्तारसे लिखनेका न तो मुझे समय मिलता है और न मेरे हाथमें इतनी ताकत रहती है। तुम्हें भी यथाशक्ति हरिजनोंकी सेवा करनी चाहिए।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

५८०. पत्र : जमनाबहन गांधीको

६ नवम्बर, १९३२

चि० जमना,

तुम्हारे पत्र मुझे बहुत अच्छे लगते हैं। इसी प्रकारकी निर्भयता सदा बनाये रखना। मैं यह समझ गया कि तुम राजकोटमें अच्छी रहती हो। यदि आश्रममें तुम्हारा शरीर और मन, दोनों स्वस्थ रहें तो मैं यह नहीं चाहूँगा कि एक क्षणके लिए भी तुम वहाँसे हटो।

बापू

[पुनश्च :]

आशा है, अब प्राइमस स्टोवकी तकलीफ दूर हो गई होगी।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८६१) से; सौजन्य : नारणदास गांधी

५८१. पत्र : केशव गांधीको

६ नवम्बर, १९३२

चि० केशव,

तूने पूछा है कि बा द्वारा चरखा ले लेनेकी बात जानकर मुझे दुःख क्यों हुआ। मुझे तुझपर और तेरी तटस्थतापर इतना अधिक विश्वास है कि मैं उसका कारण लिख रहा हूँ। सन्तोकको मेरा चरखा चलानेकी इच्छा हुई, इससे मुझे प्रसन्नता हुई थी। किन्तु बा की माँगमें मुझे द्वेषकी गन्ध आई, इससे मुझे दुःख हुआ। इसमें मैंने यह मान लिया था कि बा को यह बात मालूम थी कि यह चरखा सन्तोकको दिये जानेकी बात हो चुकी है। किन्तु यदि उसे यह मालूम नहीं था तो मैंने बा के प्रति बहुत अन्याय किया है। बां ने मेरे कारण बहुत दुःख पाया हैं, इसलिए मैं उससे कुछ पूछना नहीं चाहता था। तू यह समझ गया न कि इस तरह मेरा दुःख दुहरा था। सन्तोकको चरखा भी नहीं मिला और बा को ईर्ष्या हुई। किन्तु होनीको कैसे रोका जा सकता है! मुझे यह बतानेकी जरूरत नहीं कि तू बा पर क्रोध करनेका विचार भी मत करना। जितनी साधुताकी मैं आशा करता हूँ, यदि तुझमें उतनी साधुता हो तो तू बा के पास जाकर कहना कि 'बापूसे यह चरखा मैंने अपनी माँ के लिए माँगा था और उन्होंने दे भी दिया था। आपको नया चरखा बनवाकर दे दूँगा। क्या आप यह मुझे दे देंगी?' तुझमें हिम्मत हो तो यह करने लायक है। मैं तेरी भेजी हुई पूनियाँ कात रहा हूँ। ये मुझे अच्छी लगीं। उनमें एक यही दोष है कि वे बहुत कड़ी हैं। हम दोनोंको ऐसा ही लगा। एक तोला रुईमें ३२ नरम पूनियाँ बननी चाहिए।

बापू

[पुनश्चः]

महादेव मानते हैं कि बा को इस बातकी जानकारी नहीं थी। यदि ऐसा हो तो बहुत अच्छा है, किन्तु फिर भी मैं चाहता हूँ कि तू उसके पास जाये।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४६५) से; सौजन्य : राधाबहन चौधरी

५८२. पत्र : नारणदास गांधीको

६ नवम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारी डाक नियमानुसार मिल गई थी। चम्पाके बारेमें तुम्हारी बात समझ गया हूँ। बँगलेमें रंग कराना जरूरी हो तो करा देना। पत्थरकी बाड़ लगानेमें कितना खर्च आयेगा, मुझको बताना। अब अनुमति और किससे लेनी है? बेचारे [तीनों] भाई[1] तो पूरा विचार कर नहीं सकते, इसलिए वास्तवमें देखा जाये तो मुझे ही निर्णय करना है। लेकिन, यह पत्र लिखाते समय महादेवने सरकारी अनुमतिका प्रश्न उठाया है और उसका यह खयाल है कि तुमने इसी 'अनुमति' की बात की है। मैं तो तुम्हारी बातका ऐसा अर्थ नहीं करता, फिर भी इस तरह ईंट अथवा पत्थरकी दीवार खड़ी करनी हो तो अनुमति लेनी पड़ेगी या नहीं, इसपर विचार कर लेना। तो अब हमें दो प्रश्नोंपर विचार करना है — खर्च ज्यादा हो तो करना चाहिए या नहीं और अनुमति लेनी हो तो अभी ली जानी चाहिए या नहीं।

मोहनका बुखार अब तो बिलकुल ठीक हो गया होगा। हो गया हो तो भी अभी कुछ दिन उसका खास ध्यान रखना पड़ेगा। कुसुमके बारेमें तो मुझे बराबर डर लग रहा है। जैसा हम कहें वैसा करनेकी उसकी इच्छा तो है, पर अपने मनपर वह काबू नहीं रख सकती। उसके और भाऊके बारेमें मैंने पत्र लिखा है; वह इससे पहले ही मिल चुका होगा। उसके बाद कुसुमको एक कार्ड भी लिखा है। भाऊने जो लिखा है, उसके विषयमें उसके साथ बातचीत न हुई हो तो कर लेना। डॉ० तलवलकरका पत्र मुझको अबतक नहीं मिला है। रमणीकलाल और जोशीके पत्र आ गये थे, लेकिन यहीं रोक लिये गये थे। जमनालालजी के सम्बन्धमें मुझे पूरी खबर मिल गई है। उनकी तबीयत बहुत ठीक तो नहीं कही जा सकती।

रातके ८ बजे

रतुभाईको लिखा पत्र पढ़ना। उसे जल्दी रंगून जानेकी प्रेरणा देना। भाऊके पत्रसे मुझे यह सूझा है कि दक्षिण आफ्रिकाकी जेलोंमें जैसी खुराक दी जाती है, वह आरोग्य और संयमके लिए अनुकूल पड़ती है। हम सुबह चोकर-सहित गेहूँके आटेको पानीमें उबालकर देते हैं और उसमें गुड़ डाल देते हैं। यहाँ प्रति व्यक्ति पाँच तोले ज्वारके आटेकी लपसी नमक डालकर दी जाती है। यह प्रयोग वहाँ कर देखने लायक लगता है। हम शायद पाँच तोला आटा हजम न कर सकें। ढाई तोलेसे

१. डॉ० प्राणजीवन मेहताके पुत्र

आरम्भ करें। गुड़के बदले नमक देना बहुत अच्छा है, और उससे कैदियोंके साथ हमारा तादात्म्य भी स्थापित होता है। भात रोज देनेके बजाय एक-एक दिनके अन्तरसे दिया जाये, और इसलिए दाल भी इसी तरह। दक्षिण आफ्रिकाकी जेलोंमें दाल हफ्तेमें दो ही दिन दी जाती है और सो भी एक-एक वक्त ही। शाक रोज देना चाहिए और उसमें मुख्य रूपसे भाजी। एक ही शाक हो तो बहुत अच्छा। प्रतिदिन बदल-बदलकर भले दिया जाये। दक्षिण आफ्रिकामें शामको वैसी ही लपसी दी जाती है जैसी सुबह दी जाती है। मैं तो मानता हूँ कि ऐसे ही हम भी चला सकें तो इसमें कोई हर्ज नहीं होगा। इसके सम्बन्धमें बातचीत करके देखना। जो खुराक बाहरके धनी-मानी लोग और हम आश्रमवासी लेते हैं, उससे हम स्वस्थ तो नहीं ही रहते। जेलमें अच्छी-खासी संख्यामें कैदी लोग स्वस्थ रहते हैं। उसमें फेर-बदल करके हम भी क्यों न ऐसी खुराकका पता लगायें जिससे संयम और आरोग्य दोनों सधें? इसमें अभी तो मन्तव्य यही है कि हम अपने जीवनको कैदियोंके जीवनके समान बनायें और इस तरह ज्यादा संयमका भी अभ्यास डालें। इतना करनेपर भी हम दूध-घी तो चालू रखेंगे ही, जो जेलोंमें नहीं दिये जाते। मुझे इतना तो निश्चय है ही कि भात कोई खास जरूरी नहीं है और जहाँ दूध-घी है वहाँ दालकी भी कम ही जरूरत है। जिसमें से चोकर-भूसी न निकाली गई हो, ऐसा गेहूँ, दूध और सब्जियाँ जहाँ मिलती हैं, वहाँ दूसरी चीजोंकी जरूरत कम ही रहती है। हाँ, फलकी जरूरत मैं अवश्य मानता हूँ। खट्टा नीबू, टमाटर, बिना राँधी मूली, गाजर, मोगरी वगैरह थोड़ी मात्रामें मिले, यह इष्ट, बल्कि आवश्यक भी है। घीके अतिरिक्त ताजे तेलका उपयोग करना चाहिए। यदि इन बातोंके सम्बन्धमें तुम्हारे मनमें कोई उत्साह जगा हो तो दूसरोंके साथ बातचीत करना। जैसा ठीक लगे, वैसा फेरफार करके प्रयोग करना। शेष बातोंके सम्बन्धमें मुझसे पत्रोंके द्वारा चर्चा करना। मेरे मनमें तो बहुत-से विचार आते रहते हैं। उनमें से कुछको ही चुनकर मैंने यहाँ पेश किया है। तुम चाहोगे तो औरोंकी भी चर्चा करूँगा। आखिरको अगर तुम्हें परिवर्तन करने हों तो भी दूसरोंके साथ इनपर चर्चा तो करनी ही पड़ेगी। लेकिन अगर तुम्हें लगे कि अभी तो चर्चा करनेसे भी लोग भड़क उठेंगे तो छोड़ देना। किसी नये परिवर्तनके बारेमें मेरा आग्रह तो नहीं ही होगा, क्योंकि मैं खुद तो उन पर अमल करानेमें शामिल हो नहीं पाऊँगा। तुम्हारे सामने ऐसे नये विचार रखनेसे तुम्हें घबराहट नहीं होगी, यही समझकर मुझे जो सूझता है, लिख दिया करता हूँ।

४१ पत्र धागेसे बँधे हैं। पाँच खुले हैं। कुल ४६ हैं।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२६४ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

तेरे साथ कृष्ण नायरका संवाद मधुर है। तूने मुझे पूरा मुख्तियारनामा दिया हो तो तेरे उत्तर तो मैं भी दे दूँ।

किसनका वर्णन अच्छा है।

हमारा गीत[1] हमें शोभा देनेवाला है। सपनोंका विश्लेषण मुझे नहीं आता।

नारणदासकी दी हुई भेंटका अर्थ समझा न?

भावना कब प्रगट की जाये, इसका कोई एक नियम नहीं है। यह कहूँगा कि जब सत्यनारायण प्रेरित करे तब प्रकट की जाये।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३०९) से। सी० डब्ल्यू० ६७४८ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

५८५. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

६ नवम्बर, १९३२

चि० परशुराम,

पिताजी के बारेमें जो लिखा सो मैं समझता हूँ। मेरे बारेमें लिखनेके लिए ये शर्तें हैं: १. वहाँके काममें बाधा न पहुँचे; २. अपना स्वास्थ्य बिगड़नेका खतरा उठाकर न लिखा जाये; ३. मेरे बारेमें जो बातें आम लोग नहीं जानते वे न लिखी जायें और, ४. आवेशमें आकर मनमाने ढंगसे बातको बढ़ा-चढ़ाकर न कहा जाये।

यदि वास्तवमें तुमने अपना जीवन मुझे सौंप दिया है तो तुम्हारे इस कथनका कोई अर्थ नहीं रह जाता कि जीवनमें कोई रस नहीं रह गया है अथवा यदि कोई अर्थ निकलता है तो यही कि तुमने उसे मुझे अनिच्छापूर्वक सौंपा है, इसीलिए तो वह नीरस हो गया है। जिसने हृदयसे सेवा धर्मको स्वीकार किया है, उसका जीवन रसपूर्ण होना ही चाहिए, क्योंकि सेवामें ही रस है।

चना भी दाल ही है। चनेकी रोटी किसीको हजम नहीं होती। अतः अपना विचार छोड़ देना। गेहूँ, दूध और हरी सब्जियाँ ये तीनों सबसे अच्छी खुराक हैं।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५११) से। सी० डब्ल्यू० ४९८८ से भी; सौजन्य : परशुराम मेहरोत्रा

१. "वन्देमातरम्"।

५८६. पत्र : बबलभाई मेहताको

६ नवम्बर, १९३२

चि० बबल,

तुम्हारा पत्र मेरे लिए बहुत मददगार साबित हुआ। जिस गाँवमें तुमने काम शुरू किया है, उसका नाम देना तुम भूल गये। अब अगले पत्रमें लिखना। चमारकी आपत्तिका समाधान किया जा सकता है। वैसे है वह सही। हमें मरे हुए पशुओंको उठा ले जाना चाहिए। उस गाँवका नाम, उसकी आबादी आदि लिखना। हमने यह काम आश्रममें इसीलिए आरम्भ किया हैं। हमें पशुओंको गाड़ीमें उठा ले जाना चाहिए। इस कामके लिए केवल योजना और व्यवस्था चाहिए। हरिजनोंके साथ घुल-मिलकर तुमने अच्छा किया। गाँवोंसे जितनी मदद मिल सके उतनी मदद लेकर कामको आगे बढ़ाना चाहिए। मुझे समय-समयपर पूरा विवरण भेजते रहना। इस काममें यदि और अधिक समय देना आवश्यक हो तो देना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४४६)से।

५८७. पत्र : भाऊ पानसेको

६ नवम्बर, १९३२

चि० भाऊ,

आज अधिक लिखनेका समय नहीं है। आशा है, मेरा इस बीच लिखा पत्र मिला होगा। उपवासका परिणाम जाननेको उत्सुक हूँ। उपवासके बाद सामान्य भोजनपर आनेकी क्रिया तुम्हें आनी चाहिए। इतना याद रखना कि आहारको धर्मके साथ बहुत अधिक जोड़नेमें ज्यादती होनेका डर है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७४१) से। सी० डब्ल्यू० ४४८४ से भी; सौजन्य : भाऊ पानसे

५८८. पत्र : शान्ता शं० पटेलको[1]

६ नवम्बर, १९३२

चि० शान्ता,

तू पहले-जितनी ही शरारती लगती है। जो माँ अपनी लड़कीकी निजी शिकायतें नहीं सुनती वह माँ कैसी? और जो अपनी 'माँ' को इतना व्यस्त मान ले कि उसमे अपनी बात कहनेमें संकोच करे वह बेटी कैसी? लम्बा पत्र लिखनेके बावजूद जो तुझे कहना था सो तो तूने कहा ही नहीं है। महादेव तेरा मार्गदर्शन जरूर कर सकता है, किन्तु तू क्या किसीके हाथके नीचे रह पायेगी? तू काम चाहती है। काम तो आश्रममें बहुत है। और वहाँ तुम तीनोंका भरण-पोषण होता है। फिर चिन्ता किस बातकी? तू वेतनपर काम करना चाहे तो भी अपने भरण-पोषणसे अधिक तू और क्या चाहती है? तू यह जानती है न कि सामान्यतः मनुष्य चाहे जितना क्यों न कमाये, फिर भी उसे कमीका अनुभव होता है। कुछ और अधिक कमानेकी इच्छा बनी ही रहती है। ऐसी लालसासे मुक्ति दिलानेके लिए आश्रम है।

क्या तूने कभी अपने हृदयपर हाथ धरकर सोचा है कि तुझे घर नहीं बसाना है? मुझे तो तेरे पत्रसे ऐसा लगता है कि तू जानती हो या न जानती हो, तेरा यह सारा असन्तोष तेरी विवाह करनेकी इच्छाका सूचक है। विवाह करनेके बाद तू सुखी ही होगी, ऐसी बात नहीं है। किन्तु विवाह किया कि बन्धनमें बँधे। फिर सुख-दुःखका सवाल नहीं रहता। ऐसी ललचानेवाली और विचित्रतापूर्ण है यह चीज! अपने मनसे पूछना कि तुझे विवाह करना है या नहीं। यदि ऐसा उत्तर आये कि विवाह नहीं करना है तो अपना शरारती स्वभाव सुधरने और अज्ञान दूर होने तक तुझे आश्रममें ही रहना चाहिए। यदि प्रेमाबहनपर तू विश्वास करती हो तो उनसे खुले मनसे बात करना। तू चाहे तो मुझे लिखना और यदि महादेवको लिखना चाहे तो उन्हें लिखना। जिसे भी लिखे गम्भीरतापूर्वक लिखना। कमलाके आलस्यके कारण मुझे प्रसन्नता नहीं हुई। मंगलाके लिए तो जो मैंने बताया, वही इलाज है। ऐसा लगता है कि अब तो वह मुझे भूल ही गई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०६७) से। सी० डब्ल्यू० १८ से भी; सौजन्य : शान्ताबहन पटेल

१. शंकरभाई पटेलकी कन्या।

५८९. पत्र : गुलामरसूल और अमीना कुरैशीको

६ नवम्बर, १९३२

चि० कुरैशी,

तुम्हारा लिखा सुन्दर वर्णन मुझे मिला। मेरी तो कामना है कि तुम दोनोंका स्वास्थ्य भी इतना ही सुन्दर रहे।

बापूकी दुआ

चि० अमीना,

मुझे पत्र लिखनेसे बचना चाहती है, सो नहीं होगा। मैंने तुझे अपना स्वास्थ्य सुधारनेको लिखा था। वैसा करनेकी हिम्मत करे तो अच्छा हो।

बापूकी दुआ

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६६२)से।

५९०. पत्र : नर्मदाबहन राणाको

६ नवम्बर, १९३२

चि० नर्मदा,

तेरा पत्र मिला। वाक्य पूरा हो जानेके बाद उसके अन्तमें बिन्दी लगानी चाहिए। इसे [गुजरातीमें] पूर्णविराम कहते हैं।

तूने 'उतस्व' लिखा है, किन्तु सही शब्द 'उत्सव' है। तूने 'पूत्री' लिखा है, किन्तु होना चाहिए 'पुत्री'। इसी प्रकार तूने 'स्विकारशो' लिखा है, लेकिन 'स्वीकारशो' होना चाहिए।

पण्डितजी ने तुझे संगीत सिखाना बन्द कर दिया, इस कारण तुझे दुःखी नहीं होना चाहिए। पण्डितजी ने जो-कुछ किया है, सोच-समझकर ही किया है, यह मानकर सन्तोष कर लेना चाहिए।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २७६६) से; सौजन्य : रामनारायण एन० पाठक

५९१. पत्र : रतिलाल सेठको

६ नवम्बर, १९३२

भाई रतिलाल,

मैंने तुम्हें बम्बईके पतेपर एक पत्र लिखा था, उसका उत्तर अबतक आना चाहिए था, पर नहीं आया। इस बीच आज लीलावतीका तार मिला। उसमें वह लिखती है कि छगनलाल थिटान गया है। किन्तु वह तुम्हें और नानालालको पंचके रूपमें स्वीकार करती है। इससे मेरा बोझ हलका हो जाता है। अब मैं तुम्हारे पत्रका इन्तजार कर रहा हूँ। मैं चाहता हूँ कि तुम जैसे बने वैसे जल्दीसे-जल्दी रंगून जानेके लिए तैयार हो जाओ। यदि नानालाल और तुम, दोनों साथ ही जाओ तो बहुत अच्छा हो। इस समस्याको हल करना बहुत जरूरी है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१६९) से। सी० डब्ल्यू० ४६६३ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

५९२. पत्र : रेहाना तैयबजीको

६ नवम्बर, १९३२

प्यारी बेटी रेहाना,

वाह, अब तो तुंने खत लीखने बन्ध कर दीये हैं क्या? हर हफ्तामें कम-ज-कम एक खत तो मुझे चाहिये। जब तुम्हारा खत नहीं आता है, मैं डर जाता हूं कि तुं बिमार तो नहीं होगी? तुमको मैंने लीखा है के नहीं कि मुझे दुसरी उस्तानी मिल गई। वह है जोहरा अन्सारी। बहुत दीलचस्पीसे सबक दे रही है। हरूफ बहुत अच्छे नीकालती है।[1]

मुझे [उर्दूमें] खत लिखना सिखाना। जनाब कब लिखा जाता है, मौलवी कब और किसे लिखा जाता है? तुझे क्या लिखना चाहिए? क्या मैंने तेरा पता ठीक लिखा है? खबरदार, अगर बीमार पड़ी तो। और अगर बीमार हो ही जाये तो

१. यहाँतक का अंश उर्दूमें है।

हमीदासे कहना कि मुझे लिखे। अब्बाजान और अम्माजानको आदाब। तुम सबको मेरे आशीर्वाद।

बापू

बीबी रेहाना
मार्फत — अब्बास साहेब
कैम्प
बड़ौदा

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६६७) से।

५९३. पत्र: अमतुस्सलामको

६ नवम्बर, १९३२

प्यारी बेटी अमतुस्सलाम,

तुम्हारा खूबसूरत खत मिला। हरूफ बहुत अच्छे हैं। ऐसे ही लिखा करो। हिप बाथ जरूर लो। उससे तो फायदा होना चाहिए। नया काम भले लिया। लेकिन हदसे ज्यादा न किया जाये। जितना हो सके उतना करो और खुदाका अहसान मानो। मेरी दुआएं तो तुम्हारे पास हमेशा हैं ही। कुदसियाकी कुछ भी फिकर मत करो। उसकी फिकर नारणदास करते हैं। फिर तुम क्यों करोगी? डा० शर्माके बारेमें तुमने कुछ नहीं लिखा है। वह आनेवाले थे उसका क्या हुआ?

बापूकी दुआएँ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २६२) से।

५९४. पत्र: कपिलराय एम० मेहताको

[७ नवम्बर, १९३२ के पूर्व][1]

चि० कपिल[2],

तुम्हारी तबीयतके बारेमें कुछ सुना था, इसीसे तुम्हारे पत्रकी उत्सुकतासे राह देख रहा था। तभी तुम्हारा पत्र भी आ गया। अब पहले तो तुम्हें अपनी तबीयत बिलकुल ठीक कर लेनी है। उसके बाद ही काममें लगना है। जो जेलसे डरकर खादीका आश्रय लेते हैं वे दम्भी हैं, लेकिन जो खादीकी आवश्यकतामें विश्वास रखनेके बावजूद सिर्फ दम्भी माने जानेके भयसे जेलका आश्रय लेते हैं वे मिथ्याभिमानी हैं। हमारे लिए तो दम्भ और मिथ्याभिमान दोनों त्याज्य हैं। इसलिए जब जो

१. पत्रकी विषयवस्तुको देखनेसे लगता है कि यह "पत्र: कपिलराय एम० मेहताको", ७-११-१९३२ को लिखे पत्रके पहले लिखा गया था; देखिए पृ० ३९५।

२. पहले **गुजरात समाचार** और बादमें **सन्देश** के सम्पादक। गुजरात विद्यापीठके छात्र जिन्होंने १९३० के असहयोग आन्दोलनमें भाग लिया था।

सेवा करनेका अवसर आ जाये तब उसीको करनेमें सुख मानना चाहिए। अब तुम्हारे लिए क्या श्रेयस्कर है, इसका निर्णय तो तुम्हारी अन्तरात्मा ही कर सकती है। काका साहब जो कहें सो सुनकर, जैसा तुम्हारी अन्तरात्मा कहे वैसा करना। पत्र लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९७६) से। सी० डब्ल्यू० १६०१ से भी; सौजन्य : शशिलेखा मेहता

५९५. वक्तव्य : अस्पृश्यतापर – ३

७ नवम्बर, १९३२

एक सज्जनने, जिनसे मैं भलीभाँति परिचित हूँ और जो अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनसे सहानुभूति रखते हैं, यद्यपि उसके पूरे कार्यक्रमसे सहमत नहीं हैं, हिन्दी में एक लम्बा पत्र लिखा है। उसका सार मैं नीचे दे रहा हूँ :

> मुझे ऐसी आशंका है कि यह आन्दोलन देशके सब भागोंमें मर्यादाके अन्दर नहीं रह पा रहा है। मुझे मालूम है कि अपनेको अस्पृश्यता-विरोधी कार्यकर्त्ता बतानेवाले कुछ लोग सन्दिग्ध तरीके काम में ला रहे हैं, जैसे कि पुरानी व्यवस्थाके अनुयायियोंको गालियाँ देना और पवित्र नामोंका मजाक उड़ाना। यदि कोई आपकी कही या लिखी बातोंका विश्लेषण करने या आन्दोलनने जो अतिवादी रूप धारण कर लिया है, उसका विरोध करनेकी हिम्मत करता है, तो उसका तुरन्त मजाक उड़ाया जाने लगता है, उसे अपने धर्मका विरोधी कहा जाने लगता है और भयानक परिणामोंकी धमकीतक दी जाती है। उन्हें अछूतोंके भौतिक या नैतिक कल्याणकी चिन्ता हो, ऐसा नहीं लगता। वे समझते हैं कि सबके मिले-जुले भोजोंसे और ट्रस्टियोंके विरोध तककी अवज्ञा करते हुए हरिजनोंकी भीड़को मन्दिरोंमें ले जानेसे ही उनका कर्त्तव्य पूरा हो जाता है। मुझे यकीन है कि आप यह कभी नहीं चाहेंगे कि यह आन्दोलन हरिजनोंकी कोई सेवा करनेके बजाय केवल ऐसे आडम्बरपूर्ण प्रदर्शनका रूप धारण कर ले जिनका एकमात्र उद्देश्य पुराने विचारोंके लोगोंकी भावनाओंको चोट पहुँचाना हो।

पिछले महीने मुझे अस्पृश्यताके बारेमें कोई सौ पत्र मिले होंगे। उनमें यह पहला ही पत्र है जिसमें कार्यकर्त्ताओंपर लगभग हिंसात्मक व्यवहार करनेका अरोप लगाया गया है। फिर भी, इस शिकायतको प्रचारित करना मैंने आवश्यक समझा — और किसी कारण नहीं तो केवल इसी कारण कि पत्र-लेखकने कार्यकर्त्ताओं को जो चेतावनी दी है, उसका मैं आदर करता हूँ। मैं जानता हूँ कि वे जान-

बूझकर अतिरंजना करनेवाले नहीं हैं। धर्मके मामलोंमें, बल्कि मुझे कहना चाहिए किसी भी मामलेमें, जबरदस्ती नहीं की जा सकती। लोग यह अच्छी तरह जानते हैं कि किसी भी व्यक्तिके प्रति, चाहे वह किसी भी जाति, धर्म या देशका क्यों न हो, किसी भी प्रकारकी हिंसाका मैं सख्त विरोधी हूँ।

इसलिए इस आन्दोलनके संचालकोंको यह समझ लेना चाहिए कि सम्भावित उपवाससे मुझे बचानेकी अपनी अधीरताके बावजूद उन्हें आन्दोलनकी रफ्तारमें सन्दिग्ध तरीकोंके उपयोगसे तेजी नहीं लानी है। यदि वे ऐसा करेंगे, तो केवल मेरा अन्त ही निकट लायेंगे। जिस आन्दोलनके लिए, जैसी कि मेरी अपनी मान्यता है, ईश्वरने मुझे वह छोटा-सा उपवास करनेकी प्रेरणा दी, उसीको ऐसा विकृत रूप धारण करते देखना मेरे लिए जीते-जी मौतके समान होगा। हुल्लड़बाजीके तरीकोंसे हरिजनों और हिन्दू धर्मकी सेवा नहीं होनी है। यह यदि विश्वका नहीं तो शायद भारतका तो सबसे बड़ा धार्मिक सुधार-आन्दोलन है, क्योंकि इसमें दासताका जीवन बितानेवाले लगभग छः करोड़ मानव-प्राणियोंका कल्याण निहित है।

पुराने विचारोंवाला जो वर्ग इसके विरुद्ध है, उसके प्रति हर तरहकी शिष्टता बरती जानी चाहिए और उसका पूरा खयाल रखा जाना चाहिए। हमें उन्हें प्रेमसे, आत्मत्यागसे, पूर्ण आत्मसंयमसे और उनके हृदयोंपर अपने जीवनकी पवित्रताका मूक प्रभाव डालकर जीतना है। हममें यह आस्था होनी चाहिए कि हमारा सत्य और प्रेम हमारे विरोधियोंको हमारी राहपर ले आयेगा। इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि छः करोड़ मानव-प्राणियोंकी युगों पुराने दमनसे मुक्ति केवल दिखावटी प्रदर्शनोंसे नहीं होनी है। उसके लिए सभी मोर्चोंपर आक्रमणका ठोस और रचनात्मक कार्यक्रम आवश्यक है। इस अभियानके लिए हजारों ऐसे स्त्री-पुरुषों, लड़के-लड़कियोंकी एकाग्र शक्तिकी जरूरत है जो सर्वोच्च धार्मिक उद्देश्योंसे प्रेरित हों। इसलिए जिन्हें इस आन्दोलनका विशुद्ध धार्मिक स्वरूप पसन्द न हो उनसे मैं सादर आग्रह करूँगा कि वे इससे अलग हो जायें। जिनमें श्रद्धा और उत्साह है, वे चाहे थोड़े हों या बहुत, वही इस आन्दोलनमें काम करें।

अस्पृश्यता-निवारणके महान् राजनीतिक परिणाम निकल सकते हैं, बल्कि वास्तव में निकलेंगे, पर यह राजनीतिक आन्दोलन नहीं है। यह सीधा-सादा केवल हिन्दू धर्मकी शुद्धिका आन्दोलन है और वह शुद्धि केवल शुद्धतम साधनोंसे ही सम्पादित की जा सकती है। ईश्वरकी कृपासे आज भारतके सभी भागोंमें इस तरहके हजारों नहीं तो सैकड़ों साधन तो काम कर ही रहे हैं। अधीर और शंकाशील लोग प्रतीक्षा करें और देखें; पर प्रशंसनीय उद्देश्योंसे प्रेरित होते हुए भी जल्दबाजी और नासमझी-भरे हस्तक्षेपोंके द्वारा इस आन्दोलनको बरबाद न करें।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ८-११-१९३२

५९६. पत्र : भारत सरकारके गृह-सचिवको

७ नवम्बर, १९३२

सचिव, भारत सरकार
गृह-विभाग
नई दिल्ली

प्रिय महोदय,

मेरा ध्यान अभीतक केवल एक ही विषयपर केन्द्रित था — एक ऐसे विषय पर जिसके कि अस्पृश्यता-सम्बन्धी कार्यके मार्गमें अलंघनीय बाधा बन जानेकी आशंका थी। इसलिए कोई और बात मैं सोच ही नहीं सकता था। यह प्रसन्नताकी बात है कि वह संकट अब समाप्त हो गया है। अतः भारत सरकारसे अब मैं उसके कुछ ऐसे फैसलोंपर बात करना चाहूँगा जिन्हें मैं समझ नहीं पाया हूँ।

यदि मुझे अनुमति हो तो मैं यह जानना चाहता हूँ कि मौलाना शौकत अली,[1] अबुल कलाम आजाद[2] और डॉ० अन्सारीको जवाबमें लिखे गये मेरे वे तार, जिनमें मैंने हिन्दू-मुस्लिम एकता स्थापित होनेकी आशा व्यक्त की थी, भेजे जानेकी अनुमति क्यों नहीं दी गई। हिन्दू-मुस्लिम एकताके इसी प्रश्नपर मुझसे मुलाकात करनेकी मौलाना शौकत अलीकी प्रार्थनाके बारेमें उनके और महामहिम वाइसरायके बीच हुए पत्र-व्यवहारको मैंने समाचार-पत्रोंमें देखा है। उन्हें मुझसे मिलने न देनेके जो कारण बताये गये हैं, यदि वही कारण मेरे तारोंको यथास्थान पहुँचानेकी अनुमति न देनेके भी हैं, तो यह चीज मेरी समझमें नहीं आती कि सविनय अवज्ञासे मेरे लगावका हिन्दू-मुस्लिम एकतासे आखिर क्या सम्बन्ध है। सविनय अवज्ञासे मेरा लगाव सरकार को बुरा लगता है। परन्तु मैं ऐसी आशा करता हूँ कि हिन्दू-मुस्लिम एकतापर मेरे विचार और उसे बढ़ावा देनेकी मेरी इच्छा उसे बुरी नहीं लगती। मेरा यह अनुमान यदि ठीक हो, तो मैं इस मुलाकात और अपने तारोंपर प्रतिबन्धका केवल यही अर्थ लगा सकता हूँ कि मुझे और, जो लोग मुझसे मुलाकात या पत्र-व्यवहार करना चाहते हैं — सो भी ऐसे मामलोंके बारेमें जिनका सविनय अवज्ञासे कोई ताल्लुक नहीं है — यह उन लोगोंको दी जा रही एक सजा है और वह इसलिए दी जा रही है कि मैं अपनी अन्तरात्माके आदेशों और अपने विवेकको त्यागने और अपने-आपको सविनय अवज्ञासे अलग करनेके लिए तैयार नहीं हूँ। आशा है कि भारत सरकारने इस तरहकी किसी सजाकी बात नहीं सोची है।

१. देखिए "तार : शौकत अलीको", ७-१०-१९३२।
२. देखिए "तार : अबुल कलाम आजादको", २०-१०-१९३२।

भारत सरकारको यह मानना होगा कि एक कैदीकी हैसियतसे मैंने अधिकारियोंको खुशीसे अपना सहयोग दिया है। मैं चाहूँगा कि यह सहयोग बुद्धिसम्मत भी हो। जहाँ भी सम्भव हो, मुझे यह मालूम होना चाहिए कि कुछ विशेष प्रार्थनाएँ क्यों अस्वीकार की जाती हैं। जहाँतक सम्भव है, मेरी कोशिश यही रहती है कि अयुक्ति-युक्त प्रार्थनाएँ न की जायें। वे आम तौरपर या तो मेरे स्वास्थ्यके या लोक-कल्याण के हितोंके लिए ही रही हैं, स्वार्थपूर्तिके लिए नहीं।

इस पत्रमें उल्लिखित तारोंका जहाँतक सम्बन्ध है, उन्हें भेजनेकी अब कोई जरूरत नहीं है। परन्तु, अस्पृश्यतासे बाहरके और सविनय अवज्ञासे कोई सम्बन्ध न रखनेवाले सार्वजनिक मामलोंसे निपटनेकी स्थितियाँ तो निस्सन्देह पैदा होंगी ही। इसलिए मैं न केवल पूर्वोक्त मामलोंमें अनुमति न देनेके कारण, बल्कि इस तरहकी स्थितियोंमें सरकारकी भावी नीति भी जानना चाहूँगा।[१]

भवदीय,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (४), भाग १, पृ० ३०५

५९७. पत्र : मनुबहन गांधीको

७ नवम्बर, १९३२

चि० मनुड़ी,

तू बहुत आलसी और भुलक्कड़ जान पड़ती है। जब तू विलम्बसे पत्र लिखती है तो यह वचन देती है कि अब आलस्य नहीं करूँगी, किन्तु फिर भूल जाती है और वचन भंग करती है। यह बुरी बात है। हम जो-कुछ कहें, उसका पालन करें और जिसका पालन न कर सकें, वैसी कोई बात कहनी ही नहीं चाहिए। तुझे तो हर

१. गृह-सचिवने १६ नवम्बरके अपने पत्रमें बम्बई सरकारसे गांधीजी को यह सन्देश पहुँचानेको कहा: "भारत सरकारने, असाधारण कारणोंसे, श्री गांधीको अस्पृश्यता-निवारणकी सामाजिक और नैतिक समस्याके बारेमें अपना कार्यक्रम जारी रखनेके लिए सुविधाएँ प्रदान कर दी हैं। परन्तु सविनय अवज्ञा, जो अब भी उनका स्पष्ट घोषित कार्यक्रम हैं, के नेताकी हैसियतसे उनकी स्थिति उनका राज्यबन्दीके रूपमें नजरबन्द रखा जाना आवश्यक बना देती है; और बन्दी होनेके कारण, वे देशके सामान्य सार्वजनिक जीवनमें या राजनीतिक प्रश्नोंके विचार-विमर्शमें भाग लेनेकी आशा नहीं कर सकते — उन प्रश्नोंका सविनय अवज्ञासे कुछ भी सम्बन्ध न हो, तो भी। इसलिए भारत सरकार श्री गांधीको इस तरहके प्रश्नोंसे निपटनेकी सुविधाएँ देनेको तैयार नहीं है।" भारत सरकार, होम डिपार्टमेंट, पॉलिटिकल, फाइल नं० ३१/९५/३२।

रविवारको एक पत्र लिखना चाहिए और उक्त पत्र आश्रमको भेज देना चाहिए। उसमें हर सप्ताहका कार्य-विवरण देना चाहिए — क्या पढ़ा, अन्य कौन-सा काम किया और कितना काता। तू यह जानती है न कि हमें घरमें भी खादी ही पहननी चाहिए?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० १५१७) से; सौजन्य : मनुबहन मशरूवाला

५९८. पत्र : नारणदास गांधीको

७ नवम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारी डाक नियमानुसार कल मिल गई थी। साथमें विट्ठलका पत्र भेज रहा हूँ। उसको मैंने उत्तरमें लिख दिया है कि वह तुमपर विश्वास रखे और लीलाधर को भूल जाये। यदि उसकी पितृभक्ति उसमें मोह उत्पन्न करे तो वह लीलाधरके साथ जाकर कमाईका कोई रास्ता अपनाये। एक हाथ दहीमें और एक दूधमें, यह तो नहीं हो सकता। अगर उसके पत्रमें तुम्हारे जवाब देने लायक कोई बात हो तो जवाब दे देना।

जेठालालका भी पत्र आया था। वह अपना दोष तो कबूल करता है, फिर भी उसे छुट्टी दे दी गई, इसे वह गैरइन्साफी मानता है। उसमें पश्चात्तापका भाव दिखाई नहीं देता। उसे मैंने एक बड़ा पत्र लिखकर बताया है कि जबतक उसमें शुद्ध पश्चात्तापका भाव न जगे, मैं उसे आश्रम लौटनेकी सलाह न दूँगा। लेकिन अगर तुमको वह सन्तोष दे सके और तुम्हारी इच्छा उसे वापस ले लेनेकी हो तो मैं बीचमें न पड़ूँगा। उसका पत्र भेजकर तुम्हारा वक्त बरबाद करना मैंने ठीक नहीं समझा और इसलिए उसे फाड़ डाला है।

कान्तिका पत्र दुःखद लगा। उसका सुन्दर शरीर जर्जर हो गया लगता है। इसलिए आज तार किया है कि राजकोट चला जाये तो अच्छा हो। उसी तारमें प्रेमाका भी ऑपरेशन करानेको लिखा है। मेरा एक नियम याद रखना। जिसको बुखार आये, उसकी फलके अलावा सब खुराक बन्द कर दी जाये। और अगर पौष्टिक खुराक देनेकी जरूरत हो तो केवल दूध ही दिया जाये। इस नियमका पालन न किया जाये और बुखार कहीं टाइफाइड साबित हो तो इसका परिणाम भयंकर हो सकता है।

खुराकके बारेमें जो प्रयोग चल रहा है, उसके बारेमें भी एक नियम बता चुका हूँ। उसे यहाँ फिर बता रहा हूँ। जिसको जिस चीजसे नुकसान हुआ लगे, उसको वह चीज एक-दो दिनोंके लिए छोड़ देनी चाहिए। उसके बदले कुछ और नहीं लेना चाहिए। इस तरह, बहुत सम्भव है, वही वस्तु उसे रास आ जाये।

मदानकी पुस्तक अब तो मिल गई होगी।

छगनलाल अबतक यहाँ नहीं पहुँचा।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२६६ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

५९९. पत्र : निर्मलाबहन गांधीको[1]

७ नवम्बर, १९३२

तुझे कहानदास नाम अच्छा नहीं लगता, तो फिर रामदासके बारेमें भी ऐसा ही समझा जाये न? तब तो तुझे रामदासके लिए भी बत्तीस बरसकी उम्रमें नया नाम ढूँढ़ना चाहिए? रामदास खुद दास ठहरा, इसलिए उसे तो दूसरा दासवाला नाम ही पसन्द होगा। इसलिए उसकी पसन्द किस कामकी? मुझे तो तुझे रिझाना है। निर्मलदास रखें तो? अथवा निर्मललाल? अपनी पसन्दके अन्य नाम भी भेजना। रामदासके लिए भी कोई नया नाम भेजना!

क्रोधके प्रति क्रोध नहीं, अवगुणके प्रति अवगुण नहीं; क्रोधके बदले शान्ति, अवगुणके बदले गुण, गालीके बदले प्रेम और बुराईके बदले भलाई — यह धर्म है, यह आश्रम-व्यवहार है। खबरदार जो इसमें चूकी।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २१२-३

६००. पत्र : रामदास गांधीको

७ नवम्बर, १९३२

तेरे पत्रका जवाब आज दे रहा हूँ। इससे भी जल्दी देनेका इरादा था, मगर तेरी इच्छाके अनुसार श्लोक ढूँढ़ने लगा, तो मनमें खयाल आया कि तू जिन्हें आसानी से पचा सके ऐसे श्लोक एक ही बारमें संग्रह करके भेज दूँ तो अच्छा होगा। वह आज कर सका हूँ और इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ। उनमें अध्याय और श्लोकोंकी क्रम-संख्याएँ दे दी गई हैं, जिससे तू यह भी ढूँढ़ सके कि वे 'गीता' में कहाँ हैं। इसमें तू देखेगा कि सभी श्लोक हृदयस्पर्शी हैं, ऐसे हैं जिन्हें बालक भी झट समझ जाये। इसमें तू यह भी देखेगा कि भगवान्ने एक बार नहीं, बल्कि कई बार कहा है कि जो उसकी भक्ति करेगा उसे आवश्यक बुद्धि वही दे देगा, उसका निर्वाह भी वही करेगा। भक्तिका अर्थ है — जिसमें ईश्वर है, ऐसे जीव-मात्रकी निःस्वार्थ भावसे की

१. रामदास गांधीकी पत्नी।

गई सेवा। इसमें आत्मशान्तिके लिए रामनामका जप भी आ गया। फिर, तू देखेगा कि छठे अध्यायमें से जो संग्रह किया है, इस संग्रहमें भी, मैं फिलहाल तुझे जो-कुछ देना चाहता हूँ, वह आ जाता है। ग्यारहवें अध्यायके श्लोकोंका संग्रह अर्जुन द्वारा की गई भव्य स्तुतिका भव्यतम भाग है। और अठारहवें अध्यायका आखिरी श्लोक 'गीता' के अध्ययन और उसपर अभ्यासपूर्वक किये गये आचरणका फल है — अर्थात्, जहाँ श्रीकृष्ण हैं, यानी शुद्ध ज्ञान है और जहाँ अर्जुन है, यानी ज्ञानपूर्वक किया गया कर्म है, वहाँ सब-कुछ है। इन श्लोकोंका मनन करनेसे तू देख सकेगा कि किसी भी तरहकी चिन्ता करनेकी सख्त मनाही है। 'गीता' का अभ्यास करनेवाला कोई चिन्ता कर ही नहीं सकता। उसमें ऐसा आदेश है कि सब-कुछ ईश्वरके अर्पण कर दो — सब-कुछ, यानी किसी अपवादके बिना। और जो इस तरहसे सर्वार्पण करेगा, वह फिर क्या चिन्ताकी गठरीका भार ढोयेगा?

तूने अब तो जान लिया होगा कि तेरे पेटकी गड़बड़ बहुत विचार और चिन्ता करते रहनेके कारण है, या फिर खानपानमें कुछ रद्दोबदलकी जरूरत है। बूतेसे बाहर अध्ययन भी नहीं करना चाहिए। मनमें तूने जो-कुछ विचार कर लिया है, वह अब अपने-आप मनमें पकता रहेगा। तू जेलके बाहर निकलेगा तब तेरी शक्तिका अन्दाज लग जायेगा। लगेगा या नहीं, इस उलझनमें तू भी अभीसे क्यों पड़े? ऐसा करनेकी बिलकुल जरूरत नहीं। श्लोकोंका अर्थ 'अनासक्तियोग' में तो है ही, और सुरेन्द्र भी तेरे पास ही है। मैंने जो संग्रह किया है, उसमें तू अपने-आप या सुरेन्द्र वगैरहकी सलाहसे कमी-बेशी कर सकता है। जो श्लोक चुनने थे, उनको मैंने पहले ही नोट कर लिया था। मेरे पास जो 'गीता' है, उसमें उन्हें नोट करते हुए सहज भावसे मैंने इन्हें 'रामदास-गीता' नाम दे दिया है। अब देखना है कि तुझे ये कहाँतक ले जाते हैं।

अब एक हँसीकी बात लिखूँ। नीमूने बच्चेका नाम सुझानेको लिखा था। सविता ने तो उसे कहानजी नाम दे ही दिया है। इसपर यह सोचकर कि तेरे नामके साथ मेल खाये और सविताकी इच्छा भी पूरी हो जाये, मैंने कहानदास सुझाया। लेकिन जिसके अन्तमें दास आये, वह नीमूको कैसे भाये? इसलिए उसने नापसन्दगी जाहिर की और दूसरा नाम सुझानेको कहा; और अन्तमें लिखा कि इतनेपर भी तू कहानदास पसन्द कर ले, तो वह भी काम चला लेगी। वसुमतीने बूआजी होनेका दावा पेश किया और लिखा कि मैं तो अब बूढ़ा हो गया हूँ, इसलिए बूढ़ोंकी पसन्दका नाम ही ढूंढ़ निकालूंगा; और यह तो बूआ स्वीकार नहीं करेगी? इसलिए उसने ऐसा नाम सुझानेको कहा है, जो बीसवीं सदीको शोभा दे। वसुमतीको जवाब दे दिया है कि नाम देनेका ठेका बूआजी का ही होता है, इसलिए उसे जो नाम देना हो, वह दे दे। मैंने उसके चुनावके लिए दो-चार नाम सुझाये हैं — जैसे फक्कड़लाल, छोगाला-शंख, लखतरलाल, बारडोलीकर और साबरमतीवाला।[1] और नीमूको सुझाया है निर्मल-लाल। और उसे लिखा है कि यदि कहानदास नाम पसन्द नहीं है, तो रामदास

१. ये सब काल्पनिक और मजाकमें रखे गये नाम हैं।

नाम भी शायद ही पसन्द हो। इसलिए मैंने उसे तेरे लिए भी नया नाम सुझानेको लिखा है। यह भी सुझाते-सुझाते रह गया कि तेरा नाम 'निर्मलकान्त' रखें। मगर ऐसा करने लगेंगे तो बीसवीं सदीके बजाय हम तो ठेठ रामायण-युगमें चले जायेंगे, क्योंकि उस जमानेमें पतिकी पहचान पत्नीके नामसे होती थी। रामचन्द्र सीतापति थे, कृष्ण लक्ष्मीकान्त, और महादेव पार्वतीपति — ऐसे कई उदाहरण मिल जाते हैं। तुझे इस गूढ़ प्रकरणपर कोई प्रकाश डालना हो तो डालना।

तूने पूछा है कि मैंने अनासक्ति कैसे साधी? मेरा सब काम स्वाभाविक होनेसे, यानी सत्यकी साधनासे स्फुरित होनेके कारण, बहुत आसान हो गया है। जगत्-भरकी सेवा करनेकी भावना उदित हो जानेपर अनासक्ति सहज ही आ जाती है। मैं अगर सिर्फ कुटुम्बियोंकी ही सेवा करने बैठ गया होता, तब तो उसमें सहज ही राग पैदा हो जाता, आसक्ति भी रहती, व्याधि, मृत्यु वगैरहकी चिन्ता भी रहती; मगर जहाँ असंख्योंकी सेवा अपना ली जाती है, वहाँ चिन्ता मिट ही जाती है। किस-किसकी मृत्यु या व्याधिकी चिन्ता की जाये? वह लगभग असम्भव हो जाती है। मगर अनासक्तिका मतलब जड़ता भी नहीं है, निर्दयता भी नहीं, क्योंकि सेवा तो करनी ही होगी। इसलिए दयाकी भावना मन्द पड़नेके बजाय तीव्र हो जाती है; कार्यदक्षता भी बढ़ती है और एकाग्रता भी। और ये सब अनासक्तिके चिह्न हैं। फिर, खूबी यह है कि ऐसा करनेसे कुटुम्ब-सेवा समाप्त नहीं हो जाती, क्योंकि सबकी सेवामें यह सेवा भी आ जाती है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि बा की, तुम भाइयोंकी या किसी भी कुटुम्बी-जनकी सेवा मेरे हाथों कम हुई हो, सो मैं नहीं मानता। उसमें से आसक्ति मिट गई और समभाव आ गया इससे वह शुद्ध हो गई। मेरा विश्वास है कि इससे तुम लोगोंमें से किसीने कुछ भी खोया नहीं और मैंने तो बहुत-कुछ पाया है। इस प्रकार मेरे लिए तो अनासक्ति सुलभ हो गई। 'अनासक्ति' नाम तो जब मैं 'गीता' का अनुवाद पूरा कर चुका और काकाने उसके लिए एक खास नाम सुझानेको कहा तब मुझे सहज ही सूझ गया। सबकी सेवा करनी हो तो वह अनासक्तिपूर्वक ही हो सकती है, मगर ऐसी कोई बात नहीं थी कि यह ज्ञान प्राप्त करनेके बाद ही मैंने अनासक्तिको अपनाया। मुझे तो धीरे-धीरे मालूम हुआ कि मैं अनासक्त भावसे काम कर रहा हूँ; आस-पासके लोगोंको मुझसे पहले मालूम हो गया। मैं जब हिन्दुस्तान आया तब मुझे साधारण लोग 'कर्मयोगी' के रूपमें जानने लग गये थे। 'गीता' का अध्ययन तो मैं दक्षिण आफ्रिकामें भी करता था, मगर 'कर्मयोगी' क्या होता है, यह सब मैंने सोच नहीं रखा था। परन्तु दूसरोंने देखा कि मेरे जीवनमें यह सब है और बादमें मुझे भी ऐसा लगने लगा कि उनकी बात सही है। ऐसा सुयोग सभीको नहीं मिल सकता। मुझे मिला, इसका कारण मैं यह मानता हूँ कि मैं जन्मसे सत्यका पुजारी रहा हूँ। मगर अभी तो तुझे इस चक्कर में पड़नेकी जरूरत नहीं है। तुझे तो अभी अनासक्तिपूर्वक अनासक्ति साधनी है। यानी खेलते-कूदते, आनन्दपूर्वक, जिस सेवाका अवसर हाथ आये, उसे कर डालना है। ऐसा करते-करते जो अध्ययन हो जाये वह कर ले। न नीमूका विचार कर, न

बच्चोंका। तेरा और उनका विचार करनेवाला तो परमेश्वर है, यह तो अब तू नई दृष्टिसे 'रामदास-गीता' में देखेगा। यह सिर्फ बुद्धिसे ही माननेकी नहीं, श्रद्धापूर्वक अमलमें लानेकी बात है। ऐसा करनेसे तू सुखी होगा और तुझे सब-कुछ आ जायेगा। नवें अध्यायमें भगवान्का जो वचन है उसे रट लेना -- भारी दुराचारी जन भी अनन्य भावसे उसकी भक्ति करे तो वह साधु है। पृथ्वी रसातलमें चली जाये, तो भी भगवान्के वचन मिथ्या नहीं हो सकते। अब और क्या लिखूँ?

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २१४-७

६०१. पत्र : कपिलराय एम० मेहताको

७ नवम्बर, १९३२

चि० कपिल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारी अन्तरात्मा जो कहे सो अवश्य करना। दुविधामें कोई कदम मत उठाना। मैं, काका साहब या अन्य कोई भी पूरी बात जाने बिना निश्चित राय दे ही नहीं सकता। इसलिए सबको अन्तिम निर्णय तो स्वयं ही कर लेना चाहिए। यह नियम तुम्हारे लिए तो विशेष रूपसे लागू होता है। अपने शरीरसे उतना ही काम लेना जितना काम वह दे सके। जल्दी अच्छे हो जाओ। पत्र लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

भाई कपिलराय मेहता
मार्फत -- श्रीयुत रसिकलाल वोरा
सब-डिवीजनल ऑफिसर
गवर्नमेंट एग्रीकल्चर फार्म
हड़पसर

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९७१) से। सी० डब्ल्यू० १५९९ से भी; सौजन्य : शशिलेखा मेहता

६०२. पत्र : रामीबहन कुँ० पारेखको

७ नवम्बर, १९३२

चि० रामी[1],

तूने बहुत दिनों बाद पत्र लिखा; और सो भी बली[2] द्वारा प्रेरित करनेपर ही लिखा न? तुझे स्वयं पत्र लिखनेकी बात नहीं सूझती — यह सच है न?

तू सपरिवार सुखी रहे, इसीमें मुझे सन्तोष है। यदि कभी-कभी किसीके कहनेसे ही पत्र लिख दिया करे तो मुझे प्रसन्नता होगी। किन्तु कुँवरजी तेरी तरह आलसी नहीं हैं। वे क्यों नहीं लिखते? उनसे लिखनेको कहना। क्या बम्बईमें घरका खर्च पूरा पड़ जाता है? क्या तुझे वहाँकी आबोहवा माफिक आई?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७१८) से। सी० डब्ल्यू० ६९९ से भी; सौजन्य : नवजीवन ट्रस्ट

६०३. पत्र : बलीबहन एम० अडालजाको

७ नवम्बर, १९३२

चि० बली,

तूने बहुत दिनों बाद पत्र लिखा। किन्तु तेरे दोष निकालनेका मन नहीं होता। मैं यह मानता हूँ कि तूने अपने सिरपर बहुत बोझ ले रखा है। ऐसी स्थितिमें यदि तू केवल औपचारिकताकी खातिर पत्र नहीं लिख पाती तो इसमें मुझे कोई बुराई नजर नहीं आती। ऐसा लगता है कि तू तो अपनी बहनोंके कुटुम्बोंकी देखभालके लिए ही जीवित है। किन्तु यह भी एक कर्त्तव्य है और अच्छा है। यदि तू स्वार्थवश अलग-थलग जाकर बैठ गई होती तो तुझे कौन रोक सकता था? इसके बजाय तूने छोटा ही सही फिर भी सेवाका मार्ग खोज निकाला है। ईश्वर तेरा कल्याण करे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५०५७) से; सौजन्य : मनुबहन मशरूवाला

१. हरिलाल गांधीकी कन्या।

२. बलीबहन एम० अडालजा, हरिलाल की साली।

६०४. भेंट : समाचार-पत्रोंको[1]

७ नवम्बर, १९३२

यरवडा जेलमें श्री गांधीकी एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिकी विशेष भेंटवार्त्ता हुई। उसमें श्री गांधीने इस बातपर जोर दिया कि दक्षिण भारत तूफानका केन्द्र बन गया है और उन्होंने समझाया कि गुरुवायूरका प्रश्न इतना महत्त्वपूर्ण क्यों है कि उन्होंने उसके लिए इतनी बड़ी कीमत चुकानेका इरादा जाहिर किया है।

. . . आरम्भिक पूछताछका जवाब देते हुए उन्होंने कहा कि अभी तो वे बस एक वक्तव्य ही जारी करेंगे, लेकिन वे बिड़ला समितिके साथ पत्र-व्यवहार कर रहे हैं और इस महीनेके अन्तमें जब वे उन लोगोंसे मिलेंगे तब अन्य योजनाएँ तय की जायेंगी।

जब श्री गांधीसे डॉ० अम्बेडकरके इस वक्तव्यके बारेमें पूछा गया कि मन्दिर-प्रवेशका प्रश्न इतना महत्त्वपूर्ण नहीं है कि उसके लिए वे अपनी जानकी बाजी लगायें, तब उन्होंने कहा :

मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नको डॉ० अम्बेडकर जितना तुच्छ समझते हैं मैं नहीं समझता। मेरे विचारसे यह इस बातकी निर्णायक कसौटी है कि सनातनी हिन्दुओंके मनपर समयकी पुकारकी अनुकूल प्रतिक्रिया हुई है या नहीं और वे हिन्दू धर्मपर लगे अस्पृश्यताके काले दागको धोनेको तैयार हैं या नहीं। मेरे खयालसे जो शर्तें सवर्ण हिन्दुओंके लिए हैं बिलकुल उन्हीं शर्तोंपर सभी सार्वजनिक मन्दिर हरिजनोंके लिए खोल देनेसे हिन्दू जनमानस, जिसमें हरिजन भी शामिल हैं, जितना उद्वेलित होगा उतना और किसी चीजसे नहीं होगा। डॉ० अम्बेडकरकी अपेक्षाकृत उदासीनताको मैं समझ सकता हूँ। पर मैं दलित वर्गोंके थोड़ेसे सुशिक्षित लोगोंकी बात नहीं सोच रहा बल्कि बहुत-सारे अशिक्षित और मूक लोगोंकी बात सोच रहा हूँ। आखिर, हिन्दू मन्दिरोंकी जन-साधारणके जीवनमें बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है और मैं, जो जीवन-भर अपनेको सबसे अनपढ़ और कुचले लोगोंके साथ एकाकार करनेकी कोशिश करता रहा हूँ तबतक सन्तुष्ट नहीं हो सकता जबतक कि सभी मन्दिर हिन्दू समाज के बहिष्कृतोंके लिए खोल नहीं दिये जाते।

परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि वे आज जिन अन्य निर्योग्यताओंके शिकार हैं उन्हें मैं किसी भी रूपमें कम विचारणीय मानता हूँ। उन्हें मैं उतनी ही तीव्रतासे अनुभव करता हूँ जितनी कि डॉ० अम्बेडकर करते हैं। लेकिन मुझे लगता है कि

१. यह भेंट-वार्त्ता जेल-अधीक्षकके कार्यालयमें हुई थी। उस समय वहाँ महादेव देसाई, प्यारेलाल नैयर और सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटीके पी० कोदण्डराव भी उपस्थित थे।

इस बुराईकी जड़ें इतनी गहरी हैं कि विभिन्न निर्योग्यताओंमें से हमें कुछको चुनना नहीं चाहिए बल्कि सभीसे एक साथ निपटना चाहिए। अस्पृश्यता-विरोधी लीगसे मेरे पत्र-व्यवहारमें भी मुख्य स्वर यही है। गुरुवायूर मन्दिर मेरे मार्गमें संयोगसे ही आ गया है और मेरे लिए कोई विकल्प नहीं रहा है। आखिर श्री केलप्पन मेरे खयालमें भारतके सर्वश्रेष्ठ मूक समाज-सेवियोंमें से हैं। एक समय था जब उनके सामने, वे जब भी चाहते तब, प्रतिष्ठित सामाजिक जीवनका अवसर था। वे मलाबारके सुप्रसिद्ध कार्यकर्त्ता हैं। परन्तु उन्होंने अपना भाग्य जान-बूझकर उन लोगोंके भाग्यके साथ जोड़ दिया जिन्हें देखने या जिनके पास आनेमें भी सवर्ण छूत मानते हैं। वाइकोम सत्याग्रहके[1] समय मुझे उनके साथ काम करनेका सुख और सौभाग्य मिला था। उन्होंने तबसे और उससे भी पहलेसे अपने-आपको दलित मानवताके उद्धारमें लगा रखा है। जैसा कि सब लोग जानते हैं, बहुत समय प्रतीक्षा करनेके बाद उन्होंने गुरुवायूर मन्दिरको हरिजनोंके लिए खुलवानेकी कोशिशमें अपने प्राण देनेका दृढ़ निश्चय किया था।

परन्तु मुझे उनके उपवासमें एक त्रुटि पता चली और वह तुरन्त ही मैंने उन्हें बताई।[2] यद्यपि उनका यह खयाल था कि विजय आँखोंके सामने थी, फिर भी उन्होंने उदारता दिखलाई और उसे अपने हाथोंसे निकल जाने दिया। अपने कदम उन्होंने पीछे हटा लिये और उपवास स्थगित कर दिया। मैंने जब उन्हें तार दिया था तो अपनेको इस बातके लिए वचनबद्ध कर लिया था कि तीन महीनेके उनके नोटिसकी अवधि बीतनेपर यदि उपवास फिर शुरू करना आवश्यक हुआ तो मैं उनके साथ उपवास करूँगा। यदि मैं अब झिझकता हूँ और केलप्पनको उनके भाग्यपर छोड़ देता हूँ, तो मैं भारतका एक अयोग्य सेवक और एक अयोग्य साथी सिद्ध हूँगा। परन्तु इसमें एक साथीके जीवन या मेरे अपने व्यक्तिगत सम्मानसे अधिक कुछ और भी बात है। हर कोई यह मानता है कि दलित वर्गोंके सवालको इस पीढ़ीके कालमें या अगली कुछ पीढ़ियोंके कालमें नहीं बल्कि अभी हल होना है या फिर कभी हल नहीं होना है। मेरे-जैसे हजारों ऐसे नर-नारी हैं जो हिन्दू धर्मको अपनी छातीसे इसीलिए लगाये हुए हैं कि वे यह मानते हैं कि इसमें मानसिक, नैतिक और आत्मिक विकासके लिए सबसे अधिक गुंजाइश है। लगभग छ: करोड़ मानव-प्राणियों पर लगा यह कुटिल प्रतिबन्ध उस दावेके विरुद्ध एक स्थायी प्रमाण है। मेरे-जैसे लोगोंका यह विचार है कि अस्पृश्यता हिन्दू धर्मका अभिन्न अंग नहीं है। यह मात्र एक अपवृद्धि है। लेकिन यदि यह बात अन्यथा निकलती है और यदि हिन्दू जन-मानस सचमुच अस्पृश्यतासे चिपटा रहता है, तो मेरे-जैसे सुधारकोंके लिए अपने-आपको अपने विश्वासकी वेदीपर बलिदान करनेके सिवा और कोई विकल्प नहीं है।

मैं इस तानेको धैर्यसे और चुपचाप सुनता रहा हूँ कि इस तरहका उपवास आत्महत्याके समान है, मैं ऐसा नहीं मानता। इसके विपरीत, गहरी धार्मिक आस्था-

१. यह सत्याग्रह मार्च-अप्रैल, १९२५ में हुआ था और इसका उद्देश्य उन मार्गोंको खुलवाना था जिनपर अस्पृश्योंको चलना मना था; देखिए खण्ड २६।

२. देखिए "तार: के० केलप्पनको", २९-९-१९३२।

वाले व्यक्तियोंको जब हर अन्य प्रयास बिलकुल बेकार लगने लगता है तो इस अन्तिम बलिदानके सिवा उनके लिए अपनी आत्माकी व्यथाको प्रकट करनेकी और कोई राह नहीं रहती। अतः यह आन्दोलन, मेरी रायमें, हिन्दू धर्मके बारेमें मेरा जो दावा है उसकी सचाईकी कसौटी है, और जो बात मैंने गोलमेज परिषद्में कही थी उसे मैं फिर दोहरा सकता हूँ कि यदि अस्पृश्यता जीवित रहती है तो हिन्दू धर्म मर जायेगा और यदि हिन्दू धर्मको जीवित रहना है तो अस्पृश्यताको मरना होगा। आज मैं यह कहनेकी हिम्मत कर सकता हूँ कि इस समय यदि हजारों नहीं तो सैकड़ों ऐसे भारतीय नर-नारी जरूर हैं जो केलप्पन और मेरी तरह हिन्दू धर्मके इस दावेको सिद्ध करनेके लिए अपने प्राण न्योछावर कर देंगे। यह एक संकीर्ण पंथ या रूढ़ि नहीं, बल्कि एक सजीव धर्म है जो अत्यन्त चौकस चेतना, गहरेसे-गहरे चिन्तक और अधिकसे-अधिक ईश्वर-परायण व्यक्तिको भी सन्तोष दे सकता है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ८-११-१९३२

६०५. पत्र : एम० जी० भण्डारीको

८ नवम्बर, १९३२

प्रिय मेजर भण्डारी,

उपवासवाले सप्ताहमें मिस्रसे दो तार आये थे, एक मदाम जगलुलका और दूसरा नहास पाशाका। मैंने दोनोंका तारसे उपयुक्त उत्तर दिया था।[1] उस सप्ताहमें सभी महत्त्वपूर्ण तार और उनके मेरे उत्तर समाचार-पत्रोंको दे दिये गये थे। लेकिन अभी मैं देख रहा हूँ कि उपर्युक्त तारोंके विकृत पाठान्तर ही बहुत-कुछ हास्यास्पद रूपमें पत्रोंमें छप रहे हैं, मानों वे ही उनके वास्तविक पाठ हों। वे मिस्रके देशी समाचार-पत्रोंसे किये गये अनुवाद लगते हैं। मैं समाचार-पत्रोंको उनकी सही नकलें देना चाहता हूँ। क्या आप सरकारसे यह पता लगानेकी कृपा करेंगे कि क्या मैं समाचार-पत्रोंको ये नकलें भेज सकता हूँ? निस्सन्देह, ये तार अस्पृश्यतासे सम्बन्धित हैं। नहास पाशाको तारके सिवा, जो फिलहाल मुझे अपने कागजोंमें मिल नहीं रहा है, मैं उनका मजमून इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ। 'इंडियन सोशल रिफॉर्मर' की विकृत पाठान्तरवाली कतरन भी साथ है, जिससे मूलका कुछ अभास मिल जायेगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग ३, पृ० ३५३

१. देखिए "तार : सफिया जगलुल पाशाको", २४-९-१९३२ और "तार : मुस्तफा नहास पाशाको", २५-९-१९३२।

६०६. पत्र : एम० जी० भण्डारीको

८ नवम्बर, १९३२

प्रिय मेजर भण्डारी,

आपको मेरे लिए प्रेषित हिन्दी मासिक 'वैदिक मैगज़ीन,' मराठी मासिक 'पुरुषार्थ'— ये दोनों धार्मिक प्रकाशन हैं — मद्राससे प्रकाशित होनेवाला माननीय श्री नटेसनका मासिक 'इंडियन रिव्यू' और शायद अन्य पत्र-पत्रिकाएँ मिलती रही हैं।

अब क्योंकि मुझे अस्पृश्यताके सिलसिलेमें प्रचार-कार्य करनेकी अनुमति मिल गई है, इसलिए मैं इन तथा अन्य प्रकाशनोंको चाहता हूँ, जिससे कि समाचार-पत्रोंमें व्यक्त जनमतसे अपना सम्पर्क रख सकूँ और जहाँ आवश्यक हो वहाँ उनमें निकलने-वाली आलोचनाका खण्डन कर सकूँ।

आपके मनमें शायद यह शंका है कि मेरी अपीलके उत्तरमें जो पत्र-पत्रिकाएँ आने लगी हैं और आ सकती हैं वे भारत सरकारके हालके निर्णयके अधीन मुझे दी जा सकती हैं या नहीं। क्या आप इस विषयमें सरकारी व्याख्या यथासम्भव शीघ्राति-शीघ्र प्राप्त करनेकी कृपा करेंगे?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग ३, पृ० ३६३

६०७. पत्र : राधाकान्त मालवीयको[1]

८ नवम्बर, १९३२

आपके पत्रकी जिस बातका मुझपर असर हुआ वह है सर्वश्री चिन्तामणि और कुँजरूके बारेमें दी गई जानकारी। इसलिए अब आपको या तो मुझे उनसे इस जानकारीकी पुष्टि प्राप्त करनेमें सहायता देनी है या फिर मुझे उसको प्राप्त करनेकी छूट देनी है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २१७

१. राधाकान्त मालवीयने लिखा था: "उपवास दबाव डालनेका सबसे बुरा तरीका है। इस समझौतेसे कोई सन्तुष्ट नहीं है — चिन्तामणि और कुँजरू भी नहीं।"

६०८. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

८ नवम्बर, १९३२

प्रिय मित्र और बन्धु,

आपने यह देखा होगा कि अपनेको सनातनी कहनेवाले लोग गुरुवायूरको अपने आक्रमणका केन्द्र बना रहे हैं। हमारे पास खोनेके लिए अब समय बिलकुल नहीं बचा है। मुझे नहीं मालूम कि आपका स्वास्थ्य आपको, सुधारकोंकी ओरसे, युद्धका मोर्चा संगठित करनेकी कहाँतक अनुमति देगा। पर मैं चाहूँगा कि जहाँतक भी सम्भव हो, आप संस्कृतके अपने प्रकाण्ड ज्ञानको इस ध्येयके लिए अर्पित करें। मुझे विश्वास है कि आप स्वयं इस विषयमें सोच रहे होंगे। पर मैं जब बहुत-से मित्रोंको सिरपर मँडराते इस तूफानके बारेमें लिख रहा हूँ, तो आपको भी एक पंक्ति लिखनेसे अपनेको रोक नहीं सका।[1]

मुझे इस बातकी बड़ी खुशी है कि मैं यहाँ 'सर्वेंट्स'[2]से कुछ काम ले पा रहा हूँ।

आशा है, आप अब पहलेसे अच्छे होंगे।

सप्रेम,

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री, पृ० २४३

१. साधन-सूत्रके अनुसार, शास्त्रीने एक मित्रको लिखते हुए कहा था कि मैंने "दो पत्र लिखे हैं जिनमें उनके [गांधीजीके] विचारोंसे और जिस उपवासकी उन्होंने धमकी दी है, उससे अपनी असहमति मैंने साफ-साफ बता दी है।" शास्त्रीने यह भी कहा था कि वे अस्पृश्योंके मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें हैं।

२. सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटीके सदस्य।

६०९. पत्र : जमनालाल बजाजको

८ नवम्बर, १९३२

चि० जमनालाल,

तुम्हारा पत्र अभी मेरे हाथ लगा; उसे सुना और उसका जवाब लिखवा रहा हूँ। तुम्हारे जन्म-दिवसपर, जो तुम चाहते हो, वे सभी आशीर्वाद तुम्हें टोकरियाँ भर-भरकर भेजता हूँ। मृत्यु तो चाहे जब छोटे-बड़े, गोरे-काले, मनुष्य-पशु या दूसरे सबके लिए आने ही वाली है, फिर उसका डर क्या? और उसका शोक भी क्या? मुझे तो अकसर ऐसा लगता है कि जन्मकी अपेक्षा मृत्यु शायद अधिक अच्छी चीज हैं। जन्मसे पहले माताके गर्भमें जो यातना भोगनी पड़ती उसे तो पलभरके लिए छोड देता हूँ, किन्तु जन्मकालसे ही जो यातना प्रारंभ होती है, उसका तो हमें प्रत्यक्ष अनुभव है। उस वक्तकी पराधीनता कैसी है? और वह तो सबके लिए एक-सी होती है। मृत्युमें, यदि जीवन स्वच्छ हो तो, पराधीनता-जैसी कोई चीज नहीं रहती। बालकमें ज्ञानकी इच्छा नहीं होती और न उसमें किसी तरहके ज्ञानकी सम्भावना ही होती है। मृत्युके समय तो ब्रह्ममय स्थितिकी सम्भावना है। इतना ही नहीं, बल्कि हम जानते हैं कि बहुत लोगोंकी मृत्यु ऐसी स्थितिमें होती है। जन्मके माने तो दुःखमें प्रवेश है ही, जब कि मृत्यु सम्पूर्ण दुःखोंसे मुक्ति हो सकती है। इस प्रकार मृत्युके सौन्दर्यके विषयमें और उसके लाभके विषयमें हम बहुत-कुछ विचार कर सकते हैं और इसे अपने जीवनमें सम्भव भी बना सकते हैं। इस प्रकारकी मृत्यु तुमको प्राप्त हो, ऐसे आशीर्वाद और ऐसी कामनामें जो-कुछ भी इष्ट हो, वह सब आ गया। यह कामना करनेमें मेरे दोनों साथी भी शामिल हैं, ऐसा समझो। तुम्हारे स्वास्थ्यके सम्बन्धमें सब-कुछ जाननेके बाद भी जो विचार मैंने बताये हैं, उनपर मैं दृढ़ हूँ। तुमको अपने खर्चसे भोजन प्राप्त करनेकी सुविधा मिल सके तो उसे प्राप्त करनेमें मैं कोई दोष नहीं मानता। शरीरको एक अमानत समझकर यथासम्भव उसकी रक्षा करना रक्षकका धर्म है। मौज-मजेके लिए गुड़की एक डली भी न माँगो, न लो; परन्तु औषधके तौरपर महँगेसे-महँगे अंगूर भी मिल सकें, तो प्राप्त करनेमें कोई बुराई नहीं दिखाई देती। इसलिए ऐसे भोजन-पानको ग्रहण करनेमें उद्विग्न होनेकी आवश्यकता नहीं है। ऐसी ही स्थितिमें दूसरोंको भी ऐसा खाना दिलाया जा सके तो दिलाना चाहिए। मेरी दृष्टिमें जितना गेहूँ मिलता है, उतना खानेकी जरूरत नहीं है। गुड़को बिलकुल छोड़ देना मैं उचित मानता हूँ। तुम्हारे शरीरको गुड़की जरा भी आवश्यकता नहीं है। इसके बदले निर्दोष शहद लेना अधिक अच्छा है। परन्तु जबतक मीठे फल मिल सकते हैं, उसकी भी जरूरत नहीं। दूधमें किसी भी प्रकारका मीठा मिलाना दूधको पचानेमें हानिकारक है। दूधकी मात्रा बढ़ाना अच्छा

है। जैतूनके तेलकी जगह मक्खन लेते हो, यह ठीक ही है। यहाँ जो जैतूनका तेल मिलता है, वह हमेशा शुद्ध नहीं होता, ताजा तो मिलता ही नहीं। और मक्खनमें जो विटामिन होते हैं, वे जैतूनके तेलमें नहीं होते। सागमें हरी सब्जी होनी चाहिए। आलू वगैरह लगभग रोटीका स्थान लेते हैं। इनमें स्टार्च होता है। तुमको स्टार्चकी कमसे-कम जरूरत है, और जितनी होगी, वह सब गेहूँसे पूरी हो जायेगी। दाल हर्गिज मत लो। मक्खन यदि काफी ले लो तो दो पौंड दूध काफी है। इसके घटाने-बढ़ानेका आधार वजनके ऊपर है। वजनके स्थिर हो जानेतक, और हजम होता रहे तबतक मक्खन अथवा दूधकी या दोनोंकी मात्रा बढ़ाते जाना चाहिए। तर-कारियोंमें लौकी, भिन्न-भिन्न प्रकारकी सब्जियाँ, फूल गोभी, पत्तागोभी, बिना बीजकी सेम, बैंगन इन सबकी गिनती अच्छी हरी सब्जियोंमें होती है। गेहूँका आटा चोकर मिला हुआ होना चाहिए। यदि गेहूँ बिलकुल साफ करके पीसा गया हो तो उसका कोई भी अंश नहीं फेंकना चाहिए। फलोंमें ताजा अंगूर, मोसम्बी, संतरा, अनार, सेव, अनन्नास लेने योग्य हैं। आजकल जो प्रयोग अमेरिकामें हो रहे हैं, उनसे मालूम होता है कि एक ही साथ बहुत-सी चीजें नहीं मिला देनी चाहिए। फल अकेला ही खानेसे उसका गुण अधिकसे-अधिक हमें मिलता है, और खाली पेट खाना तो सर्वो-त्तम है। अंग्रेजीमें कहावत भी है कि सुबहका फल सोना है और दोपहरका चाँदी है, इसलिए पहला खाना अकेले फलका होना चाहिए। इससे पहले सुबह गर्म पानी पियो तो हर्ज नहीं। तुमको चौबीसों घंटे खुली हवामें रहनेकी इजाजत मिल सकती हो तो ले लेनी चाहिए। खुली हवामें रोज धीमे-धीमे प्राणायाम कर सको तो अच्छा है। रातकी सर्दीसे डरनेकी बिलकुल जरूरत नहीं। गलेतक अच्छी तरह ओढ़ लिया हो और सिरपर और कानपर कपड़ा लपेट लो तो फिर कोई हानि नहीं होगी। चौबीसों घंटे शुद्धसे-शुद्ध हवा श्वासके लिए फेफड़ोंमें जाये, यह अति आवश्यक है। सुबहकी धूप सहन हो सके तो इस तरह शरीरको खुली हवामें जितना खुला रख सको, उतना रखना चाहिए। इस सबकी चर्चा डॉ० कंट्रेक्टरके साथ कर लेना और फिर जो उचित मालूम हो, सो करना।

माधवजी की गाड़ी तो ठीक चल ही रही होगी। वहाँ जो साथी रहते हों और जो आयें उन्हें आशीर्वाद और हम तीनोंका यथायोग्य। अस्पृश्यताके सम्बन्धमें यहाँ जो-कुछ चल रहा है, वह शायद तुम जानते होगे। तुमको जो विचार सूझे, वह मुझे लिख सकते हो। उन्हें भेजनेकी इजाजत तुमको वहाँसे मिल सकेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९०३) से।

६१०. पत्र : नारणदास गांधीको

८ नवम्बर, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला, भाऊका नहीं मिला। तोशक वगैरह चुरा ले जानेवाला चोर तो सब-कुछ जाननेवाला कोई भेदी ही रहा होगा। लाल बँगलेका सामान क्या वहाँसे हटाया नहीं जा सकता? जब चोर पड़ोसी हो गये हैं तो चौकसी कहाँतक बढ़ाओगे? चोरसे ही मिला जाये, यह क्या नहीं हो सकता? रतिलाल और चम्पा क्या यह सब समझते हैं?

कुल मिलाकर कितना नुकसान हुआ होगा?

राधाको अचानक क्या हो गया?

इंजेक्शनपर मेरा विश्वास बहुत ही कम है।

बापू

[पुनश्च :]

अपने यहाँ 'वेदमें ब्रह्मचर्य' नामक एक पुस्तक है। प्रेमा उसे ढूँढ़कर भेज दे।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२६७ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

६११. पत्र : कीकी लालवानीको

८ नवम्बर, १९३२

यह तो सच्ची बात है कि मेरे साथियोंको आराम-जैसी कोई चीज है ही नहीं। क्या करें? भगवानने ही 'गीता' में बताया है कि वह तो क्षणका भी आराम नहीं लेता है। उसे तो न सोना चाहिये, न खाना चाहिये, न पानी चाहिये। तब हमारे नसीबमें आराम कैसे हो सकता है?

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २१८

६१२. एक पत्र

८ नवम्बर, १९३२

वड़ी कठिनाई सत्य-पथपर चलनेवालों के लिये यह है कि शास्त्र किसको कहें? जब संस्कृतमें लिखे हुए स्मृति इत्यादि नामसे प्रचलित अनेक ग्रंथ मिलते हैं और उसके विरोधी वचन भी मिलते हैं तब सादा और श्रद्धालु मनुष्य क्या करेगा? इसी कारण हिन्दू धर्मका सर्वसामान्य सिद्धान्त मैंने ग्रहण कर लिया है; सत्य और अहिंसा से जो आचार विरुद्ध है वह निषिद्ध है और जो ग्रंथ उसका विरोधी है उसे शास्त्र न माना जाये।

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २१८

६१३. वक्तव्य : अस्पृश्यतापर – ४

९ नवम्बर, १९३२

एक सज्जन लिखते हैं:[1]

आपके पिछले उपवासको मैं सबसे बुरे किस्मकी जबरदस्ती मानता हूँ। यरवडा-समझौतेके बारेमें अपनी भावना मैं आपसे छिपाना नहीं चाहता। मैं जानता हूँ कि मेरे-जैसा विचार कितने ही गण्यमान्य व्यक्तियोंका भी है। पर आपके प्रति आदरभाव रखनेके कारण और आपके यरवडा जेलमें नजरबन्द होनेके कारण, उन्होंने यह समझौता करानेकी आपकी कार्यवाहीके खिलाफ खुलेआम कुछ कहना ठीक नहीं माना। मैं इस समझौतेको जनताका दुर्भाग्य मानता हूँ। आपने यदि वह दुर्भाग्यपूर्ण उपवास न किया होता तो यह कभी सम्पन्न नहीं होता। आपके एक बहुत ही आदरणीय मित्रकी बात मुझे मालूम है। उन्होंने कहा था कि यदि अस्वीकृतिका अर्थ आपकी निश्चित मृत्यु न होती तो वे इस समझौतेको अपनी स्वीकृति कभी न देते। ऐसे विचारशील हिन्दुओंकी एक बड़ी संख्या है, जिनको इस बातका दुःख है कि उन्हें यह समझौता स्वीकार करना पड़ा, क्योंकि उन लोगोंका यह खयाल है कि जो-कुछ आपने अब स्वीकार किया है वह यदि लन्दनमें कर लिया होता तो इसकी कोई जरूरत ही न पड़ती।

१. लिखनेवाले राधाकान्त मालवीय थे; देखिए "पत्र: राधाकान्त मालवीयको", ८-११-१९३२, और "पत्र: चि० य० चिन्तामणिको", ११-११-१९३२।

एक वक्तव्यमें आपने कहा है, "मेरा उपवास इन्हीं करोड़ों लोगोंके विरुद्ध था।" मैं मानता हूँ कि आपका वैसा इरादा था, पर वास्तविक परिणाम यह निकला कि इन करोड़ों लोगोंके लिए नहीं, बल्कि औरोंके लिए इस मामलेमें अपने निर्णय और अपनी भावनाको छोड़नेके सिवा और कोई चारा नहीं रह गया, और उन्हें उन शर्तोंको मानना पड़ा जिन्हें, यदि उनके इनकारका अर्थ आपके बहुमूल्य जीवनका अन्त न होता तो, दुनियाकी कोई भी शक्ति उनसे मनवा नहीं सकती थी। पाँच दिनके अन्दर-अन्दर यह भारी परिवर्तन कर दिखाने और यरवडा-समझौता सम्पन्न करानेका श्रेय उनके स्वतःस्फूर्त प्रेमको है। यदि यह कथन सत्य है तो क्या यह कहना अधिक सत्य न होगा कि अनशनसे आपकी मृत्युके भयने ही यह समझौता कराया है? जिन परिस्थितियोंमें यह सम्पन्न हुआ, उन्हें याद रखते हुए, मैं समझता हूँ, आप यह स्वीकार करेंगे कि यदि इस समझौतेपर पूरी तरह अमल न हो तो इसे बहुत महत्त्व देनेकी जरूरत नहीं है, और आपके दूसरा उपवास शुरू करनेकी तो और भी कम जरूरत है।

आप-जैसे प्रसिद्ध नेताकी आलोचना करते मुझे खुशी नहीं होती, पर यह अवसर ही ऐसा है कि चुप रहना पूरी ईमानदारीकी बात नहीं होगी। जन-साधारणने, जिसको लक्ष्य करके आपने अस्पृश्यताके प्रश्नपर अपनी बातें कहीं, खुलेआम उन बातोंका विरोध नहीं किया। यदि केवल इतनेसे ही आप यह मान लें कि लोगोंने इस प्रश्नपर आपकी बातें स्वीकार कर ली हैं, तो यह सही नहीं होगा। आपके महान् व्यक्तित्वके प्रति आदर रखनेके कारण और आपके राजनीतिक नेतृत्वके कारण, वे लोग आपकी बात चुपचाप सुन लेते हैं। आपके विचारोंसे उनका चाहे कितना भी विरोध हो — और मैं जानता हूँ कि कमसे-कम उत्तर भारतमें तो बहुतोंका है — आपकी बात सादर सुनना वे अपना कर्त्तव्य समझते हैं। आप जानते ही हैं कि ये लोग बहुत मुखर नहीं होते और अपनेसे भिन्न विचार रखनेवालों का, खासकर यदि वे विचार आप-जैसे किसी महान् व्यक्ति द्वारा व्यक्त किये गये हों तो, विरोध करनेकी कोई खास कोशिश नहीं करते।

पत्रमें से मैंने अनावश्यक अनुच्छेद और पत्र-लेखक द्वारा उल्लिखित लोकसेवी जनोंके नाम छोड़ दिये हैं। पत्र-लेखकने जिन ऐसे व्यक्तियोंका उल्लेख किया है, यदि उन्होंने सचमुच अपने विचार दबाये हैं और ऐसे सुझाव माने हैं जिनका वे मेरी मृत्युका डर नहीं होनेपर कभी समर्थन न करते तो यह मेरे लिए बहुत ही दुःखकी बात है। यदि उन्होंने वैसा ही किया है जैसा कि पत्र-लेखकका कहना है, तो उन्होंने देशकी बड़ी कुसेवा की है और उस उपवासके विशुद्ध धार्मिक स्वरूपको नहीं समझा है। सार्वजनिक जीवनमें व्यक्तिको प्रायः सत्य या लोक-कल्याणकी खातिर मित्रोंको त्यागनेका दुःखद कर्त्तव्य पूरा करना पड़ता है।

और फिर समझौतेमें ऐसी क्या चीज थी जो इन मित्रोंको अत्यन्त आपत्तिजनक लगी? संरक्षित सीटें, या संयुक्त निर्वाचक-मण्डल, या तथाकथित प्रारम्भिक चुनाव द्वारा उम्मीदवारोंकी नामजदगीका तरीका निश्चय ही ऐसी चीज नहीं है। हरिजनोंको जिन सामाजिक और धार्मिक अधिकारोंसे युगोंतक निर्दयतापूर्वक वंचित रखा गया है, वे उन्हें फिरसे देनेके प्रस्तावपर भी उन्हें आपत्ति नहीं हो सकती थी। फिर जो अकेली चीज रह जाती है वह उन्हें दी गई सीटोंकी संख्या है, पर उससे अधिक तो उन्हें राजा-मुंजे समझौतेमें ही दिया गया था और, जैसा कि मैं एक पिछले बयान में कह चुका हूँ, यदि सवर्ण हिन्दू हरिजनोंको, जिन्हें वे अबतक पैरों तले कुचलते रहे हैं, सचमुच अपना बन्धु-बान्धव मानते हैं तो चाहे उन्हें कितनी ही सीटें दे दी जायें, वे कभी ज्यादा नहीं होंगी। समझौतेने जो-कुछ उन्हें दिया है, यदि वे उसे अनिच्छुक सवर्ण हिन्दुओंसे मेरे उपवास द्वारा छीनी गई एक अनधिकार रियायत मानते हैं, तब तो उनका भविष्य निस्सन्देह चिन्त्य है।

इसलिए, यदि पत्र-लेखक द्वारा दी गई सूचना सच निकलती है, तो मैं अपने उपवासका दोहरा औचित्य मानूँगा। जो समाज बिना किसी कसूरके बहिष्कृत किये गये अपने सदस्योंके साथ देरसे भी थोड़ा-सा न्यायतक करनेको तैयार न हो, उसके सदस्यके रूपमें जीनेकी मुझे जरा भी इच्छा नहीं है। और यदि पत्र-लेखकका यह कथन भी सच हो कि जिन करोड़ों लोगोंके लिए मैं लिखता रहा हूँ, उन्होंने वस्तुतः मेरे द्वारा की गई अस्पृश्यताकी तीव्र निन्दाका कभी समर्थन नहीं किया है और वे केवल मेरे "महान् व्यक्तित्व या मेरे राजनीतिक नेतृत्व" के प्रति आदर रखनेके कारण ही चुप रहे हैं या अपनी स्वीकृतितक जाहिर करते आये हैं, तो मेरे उपवासका औचित्य तिगुना हो जाता है। इस तरहके झूठके बीच जीवन मेरे लिए भार हो जायेगा। लोकसेवी जन और साधारण लोग मुझ-जैसे तथाकथित महात्माओंतक का विरोध करने और अपने विचार दृढ़तापूर्वक रखनेकी आवश्यकताको जितनी जल्दी समझ जायें, स्वयं उनके लिए, देशके लिए, और मुझ-जैसे लोगोंके लिए उतना ही अच्छा रहेगा। वातावरणकी इस तरहकी शुद्धिके लिए भी मैं खुशी-खुशी उपवास कर सकता हूँ।

इन सज्जनका यह पत्र आन्दोलनमें एक समयोचित योगदान है। जो आन्दोलनमें भाग ले रहे हैं, उन्हें आन्दोलन और सम्भावित उपवास, दोनोंके गूढ़ार्थोंको समझना चाहिए। जितना भी जोर मैं दे सकता हूँ, उतने जोरके साथ, मैं केवल यही बात दोहरा सकता हूँ कि मेरे उपवासका उद्देश्य किसीको भी, जिसे वह समाज या देशका सबसे बड़ा हित मानता है, उसके विरुद्ध कार्य करनेको बाध्य करना नहीं है। मेरा उपवास किन्हीं ऐसे व्यक्तियोंके विरुद्ध भी नहीं है, जिनके नाम या जिनकी संख्या बताई जा सकती हो। इसका उद्देश्य अदृश्य और अज्ञात रूपसे उन करोड़ों लोगोंको प्रभावित और आन्दोलित करना है, जिनका विचार मेरे मनमें है और जिनके साथ, मैं समझता हूँ, मेरा अटूट नाता है। इस तरहके उपवासोंका किस तरह असर पड़ता है, यह मैं कई बारके अपने निजी अनुभवसे जानता हूँ।

पत्र-लेखकका कहना है कि "जो-कुछ मैंने अब स्वीकार किया है, वह यदि लन्दनमें कर लिया होता तो इस समझौतेकी कोई जरूरत ही न पड़ती।" गड़े मुर्दे उखाड़नेकी कोई जरूरत नहीं है। मैं केवल इतना ही कहूँगा कि जो-कुछ भारतमें कर सका, वह मैं लन्दनमें नहीं कर सकता था। पत्र-लेखक यद्यपि उस समय लन्दनमें ही थे, फिर भी उन्हें वे सब तथ्य मालूम नहीं हैं जो मुझे मालूम हैं।

परन्तु लोगोंको इससे यह नहीं सोचना चाहिए कि समझौतेके विरुद्ध मेरे पास बहुत-से पत्र आये हैं। जहाँतक मुझे याद है, इस तरहका यह अकेला पत्र है। दो-तीन पत्र जबरदस्तीकी शिकायतके जरूर आये हैं, पर किसीमें भी यह नहीं कहा गया है कि हरिजनोंको कोई ऐसी चीज दी गई है जिसका उन्हें अधिकार नहीं था। और इस एक पत्रके मुकाबले मेरे पास सैकड़ों पत्र और तार ऐसे आये हैं, जो स्वयं उपवास और समझौतेका सोत्साह समर्थन करते हैं। मेरे यहाँके और पश्चिमके निकटतम सहयोगियोंमें से केवल एक-दोको छोड़कर शेष सभीने इसका समर्थन किया है और इसका आध्यात्मिक प्रभाव स्वयं अनुभव किया है। परन्तु अपने कायदेके मुताबिक और जिस ध्येयको मैंने अपनाया है, उसे हर तरहकी क्षतिसे बचानेके लिए, मैं विरोधी आलोचनावाले पत्रोंको भी प्रकाशित कर देता हूँ — खास तौरपर यदि वे ऐसे व्यक्तियोंके पाससे आये हों जिनके मन्तव्य मेरे जानते मैत्रीपूर्ण रहे हैं। ये पत्र-लेखक भाई भी, निस्सन्देह, ऐसे ही लोगोंमें हैं।

इस वक्तव्यको तैयार करते-करते मुझे अखिल भारतीय अस्पृश्यता-विरोधी संघके सदैव सतर्क रहनेवाले मन्त्रीका तार मिला है, जिसमें बताया गया है कि अस्पृश्योंकी कुल संख्या भारतमें ६ करोड़ नहीं, बल्कि ४ करोड़से कम है। श्रीयुत ठक्करने उपवासके दिनोंमें ही मेरी भूल सुधारी थी, फिर भी गलत संख्या दी गई, इसका मुझे खेद है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १०-११-१९३२

६१४. तार : कालिकटके जमोरिनको

[९ नवम्बर, १९३२][1]

आज अखबारोंमें आपका बयान[2] पढ़कर दुःख हुआ। मेरी रायमें केलप्पनको दिया गया आपका आश्वासन वास्तवमें जनताको दिया गया आश्वासन था। केलप्पनने अशिष्टता दिखाई हो या न दिखाई हो पर मुझे यकीन है कि आप एक सार्वजनिक कर्त्तव्यको पूरा करनेसे केवल इसलिए इनकार नहीं करेंगे कि एक सार्वजनिक कार्यकर्त्ताने उसका आदर नहीं किया। इसलिए आपसे मेरा अनुरोध है कि अपने बयानमें आपने जो कठोर रुख अपनाया है वह कृपया न अपनायें। यदि आप यह मानते हैं कि अवर्ण हिन्दुओंका मन्दिरोंमें प्रवेश एक ऐसा सुधार है जो बहुत पहले ही हो जाना चाहिए था, तो आप हर कठिनाईपर काबू पानेकी कोशिश करेंगे।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १२-११-१९३२

६१५. पत्र : मीराबहनको

९ नवम्बर, १९३२

चि० मीरा,

नियमानुसार तुम्हारा पत्र मिला।

जहाँ तुम्हारा वजन एक पौंड घट गया है, मेरा लगभग ३ पौंड बढ़ गया है, क्योंकि आज वह १०२ पौंड निकला। इसकी वजह यह है कि मैं दूध अधिक ले पाता हूँ। उसके कुछ भागको मैं ऐसा रूप दे देता हूँ जिसे पनीर कहा जा सकता है और फिर उसे रोटीके साथ खाता हूँ। कह नहीं सकता कि इसे कबतक चलाता रहूँगा।

तुम्हें कब्जसे तुरन्त छुट्टी पा लेनी चाहिए। इसके लिए खाली पेट फल लेने चाहिए। उसके बाद दो घंटेतक कुछ और नहीं खाना चाहिए। कब्ज होनेपर दूसरा काम यह करना चाहिए कि प्रोटीनवाली चीजें, जैसे कि रोटी और दूध, छोड़ देनी चाहिए और बारी-बारीसे उबली हुई हरी सब्जियाँ और फल लेने चाहिए।

१. "दैनन्दिनी, १९३२" में इसका उल्लेख इसी तिथिके अन्तर्गत है।
२. जमोरिनका पत्र, जो ७-११-१९३२ के **हिन्दू** में छपा था; देखिए पृ० ४३३।

उपवासके बाद मैंने अपना शरीर इसी तरह बनाया। और हालमें वल्लभभाई अपने कब्ज, भारीपन और खाँसीको इसी तरहके पौष्टिक-तत्त्वरहित, वसाहीन और स्टार्चहीन भोजनसे ठीक करते रहे हैं। इससे आदमीका वजन काफी हदतक ठीक बना रहता है। मेवे बेशक लिये जा सकते हैं। मेवे और फल मिलाकर न लेना शायद बेहतर रहे। इस तरह आदमी चार बार भोजन कर सकता है: एक बार मान लो अनार और मोसम्बी, दूसरी बार लौकी और टमाटर-जैसी सब्जियाँ, तीसरी बार सूखे अंजीर या खजूर या सूखे हुए आलूबुखारे रात-भर पानीमें भिगोकर और फिर उन्हें गर्म करके या ठण्डे ही; चौथी बार वही सब्जी या कद्दू, जिसपर नीबू निचोड़ा जा सकता है या फिर दोबारा टमाटर लिये जा सकते हैं या रस-शाक (लेटिस) और टमाटर या कसी हुई गाजरका सलाद हो सकता है। इस तरहका भोजन कुछ दिन लेते रहनेसे सख्त कब्ज भी दूर हो जाना चाहिए। कभी-कभी रोटी या दूध छोड़नेसे ही काम चल सकता है। मैं समझता हूँ कि तुम्हारी रोटी मोटे आटेकी होती होगी और जब चपाती लेती होगी तो वह भी बे-छने मोटे आटेकी ही होती होगी। गेहूँको पीसनेसे पहले अच्छी तरह साफ कर लेना चाहिए। यदि गेहूँका पूरा लाभ उठाना हो तो उसमें सारा-का-सारा चोकर रहना बहुत जरूरी है। इन बातोंका केवल सहायताके रूपमें ही उपयोग करना चाहिए और अपने निजी अनुभवसे इनमें सुधार कर लेना चाहिए।

हाँ, मैं लगभग अपना सारा समय अस्पृश्यताके कार्यमें लगा रहा हूँ। कुहनियाँ एक खास ढंगसे काममें लानेपर उनमें अब भी दर्द होता है। अपने ज्यादातर पत्र मैं अब बोलकर लिखवाता हूँ। थोड़े-से जो मैं लिखता हूँ, उनके लिए दोनों हाथोंको बारी-बारीसे इस्तेमाल करता हूँ। लगता है, इससे काम चल जायेगा। कताई मैंने फिलहाल २०० तारसे घटाकर १०० तार कर दी है। पर कुहनियोंके इस दर्दमें चिन्ताकी कोई बात नहीं है। उनको सिर्फ आरामकी जरूरत है और कोई बात नहीं है। शक्ति वापस आने और मांसपेशियोंके भरनेसे दर्द शायद जाता रहेगा।

किसन अभी तुम्हारे साथ ही है, मुझे इसकी खुशी है। तुम्हारे उच्चारणके बारेमें उसे बहुत सख्त रहना चाहिए।

हम सब अच्छी तरह हैं और तुम दोनोंको अपना प्यार भेजते हैं।

बापू

[पुनश्च :]

पत्रके साथ जो कागज[1] संलग्न है, वह तुम्हें दिलचस्प लगेगा। आश्चर्यकी बात यह है कि इस तरहकी चीज भी मेरे पास आ जाती है। मैं तो परिवारका सदस्य ही हूँ।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२४९) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७१५ से भी।

१. यह उपलब्ध नहीं है।

६१६. पत्र : मोतीलाल रायको

९ नवम्बर, १९३२

प्रिय मोतीबाबू,

अभी तो मैं बोलकर ही पत्र लिखवाऊँगा। आपकी पुस्तक मिल गई है। महादेव अच्छी बंगला जानता है। पुस्तक आज ही आई। उसने पढ़ना शुरू भी कर दिया है और उसमें रम गया है। जल्द ही वह मुझे उसके [महत्त्वपूर्ण] अंश पढ़कर सुनायेगा।

वर्णाश्रमके बारेमें आपके प्रश्नका उत्तर किसी हदतक अखबारोंमें जारी किये गये मेरे एक वक्तव्यमें मिल जायेगा। सुरेशबाबूको लिखे पत्रमें मैंने यह तो कभी नहीं कहा कि वर्णाश्रम किसी भी तरहसे कोई बुरी चीज है; हाँ, यह जरूर कहा है कि जाति-प्रथा बुरी चीज है और आज नहीं तो कल उसे मिटना ही है। वर्ण और जातियों में मैं बहुत बड़ा अन्तर मानता हूँ। इस विषयपर मैंने पहले जितना-कुछ लिखा है, उसपर मैं अब भी दृढ़ हूँ। अपवाद शायद बस यही हो सकता है: जो चीज अब मेरे सामने बिलकुल स्पष्ट है, उसका हलका-सा आभास मैंने अपने पिछले लेखोंमें दिया है — मतलब यह कि चारों आश्रमोंकी तरह ही चारों वर्ण भी अब ठीक काम नहीं कर रहे हैं। इसलिए आजकल तो केवल एक वर्णका अस्तित्व है। हम सब शूद्र हैं और अगर हम अपने मनको यह बात स्वीकार करनेपर राजी कर लें तो हरिजनोंका सवर्ण हिन्दुओंमें मिला लिया जाना बहुत ही आसान हो जाता है, और तब कालान्तरमें हम फिर चारों वर्णोंका निर्माण कर सकते हैं। मुझे यह बात भी पहलेकी अपेक्षा अधिक स्पष्ट दिखती जान पड़ती है कि हमारे पूर्वजोंने जिस नियमकी खोज की थी, वह यह नहीं था कि वर्ण चार हैं और ये सदा चार ही रहेंगे, बल्कि वह नियम यह था कि हर-एकको अपने-अपने वर्ण-धर्मका पालन करना है। अंग्रेजीका 'प्रोफेशन' (धन्धा) शब्द इस वर्ण-धर्मका लगभग पूरा मतलब देता है। रोटी-बेटी-व्यवहारका नियमन करना वर्ण-धर्मका अंग नहीं था। वर्णसे तो धन्धा तय होता था। स्वभावतः ऐसी प्रथा बन गई कि जो जिस वर्णका हो, वह उसी वर्णमें शादी-विवाह करे। रोटी-व्यवहारपर प्रतिबन्ध बहुत बादमें लगे। लेकिन दूसरे वर्णमें विवाह करनेका मतलब यह नहीं होता था कि विवाह करनेवाला अपने वर्णसे च्युत हो गया। जो वक्तव्य मैं जारी करने जा रहा हूँ, उनमें अपने वर्ण-धर्म-सम्बन्धी विचारोंका पल्लवन करनेकी आशा करता हूँ। लेकिन मेरा खयाल है, अपने पत्रमें मैंने इतना तो कह दिया है, जिससे आप इस सम्बन्धमें मेरी स्थिति समझ सकें।

संघके आप सभी सदस्योंको स्नेह।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (११०३९)से।

६१७. पत्र : वालजी और महेन्द्र देसाईको

९ नवम्बर, १९३२

भाईश्री वालजी,

तुम्हारा पुरजा मिला। वल्लभभाई तुम्हारी पुस्तिका अथसे इतितक पढ़ गये और उन्होंने मुझसे कहा : "यह वालजी को क्या सूझा ? ऐसा तो जो चाहे वह लिख सकता है। ईसाई ऐसा लिख सकता है। यदि वालजी को लिखना ही था तो कोई ऐसी असाधारण चीज लिखनी थी जिसे हमारे लोग समझ सकें।" महादेवने बहुत आलोचना नहीं की, क्योंकि वे अध्यायोंके शीर्षकोंको देखनेसे आगे नहीं बढ़ पाये थे, किन्तु अब पढ़ जायेंगे। बादमें मैं उनकी राय लिखूँगा। मैं यह नहीं कहता कि कोई पुस्तक मुफ्त दी जा सकती है। बल्कि जिसे किसी पुस्तक-विशेषकी आवश्यकता हो और उसे खरीदनेकी सामर्थ्य उसमें न हो तो उसे वह पुस्तक तुम अपने भण्डारसे दे सकते हो।

बापू

चि० मनु,

इस बार तेरी लिखावट ठीक है। मुझे पत्र लिखती रहना।

बापू

श्री वालजी देसाई
डाकखाना - संजोली
शिमला

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू ७४४३)से; सौजन्य : वालजी गो० देसाई

६१८. पत्र : फूलचन्द बा० शाहको[1]

९ नवम्बर, १९३२

भाई फूलचन्द,

इस बार तुम्हारा पत्र आशासे अधिक विलम्बसे मिला, लेकिन अब मिल गया, इसलिए निश्चित हो गया हूँ। मैंने वहाँकी बीमारीके बारेमें सुना तो था ही, इसलिए तुम्हारे पत्रकी बहुत उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा कर रहा था। अहमदनगरके समाचार तो मुझे मिलते ही रहते हैं और अब सब भय-मुक्त हो गये हैं, और सबकी भली-भाँति देखभाल होती है। गंगाबहन आदि उनसे मिल भी आये हैं। हम तीनों आनन्दपूर्वक हैं। मेरे शरीरमें ताकत लगभग आ गई है।

देवदास प्रयागमें है, प्यारेलाल बम्बईमें है और जमनालाल भी ठीक ही हैं। उन्हें कानकी तकलीफ है, लेकिन चिन्ताका कोई कारण नहीं। बा साबरमतीमें है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४६६)से; सौजन्य : चन्द्रकान्त फू० शाह

६१९. पत्र : अहमदाबाद-स्थित अस्पृश्यता-विरोधी संघके मन्त्रीको

[१० नवम्बर, १९३२ के पूर्व][2]

हमें दलित वर्गोंके लोगोंको ऐसी स्थितिमें नहीं डालना चाहिए जिसमें उनका अपमान या कोई क्षति हो। इसके बजाय उनकी खातिर हमें स्वयं ही ऐसी स्थितिका सामना करना चाहिए। . . .

यह विचार[3] बड़ा शानदार है। लेकिन अगर जनमत इसके खिलाफ है तो इसमें जो खतरा है, वह मुझे दिखाई दे रहा है।

हिन्दू, १०-११-१९३२

१. साधन-सूत्रसे यह पता नहीं चलता कि ये कौनसे फूलचन्द शाह हैं। किन्तु अहमदनगरके उल्लेखसे जान पड़ता है कि ये फूलचन्द बापूजी शाह हैं, जो उन दिनों विसापुर जेलमें थे। उस समय राजनीतिक बन्दियों और जेल-अधिकारियोंके बीच आपसी झगड़ा चल रहा था।

२. रिपोर्टपर १० नवम्बर, १९३२ की तिथि दी गई है।

३. अस्पृश्यता-विरोधी संघके मन्त्रीने गांधीजी को सूचित किया था कि संघ अस्पृश्य वर्गोंके लोगोंको सार्वजनिक मार्गोंसे गुजरनेवाले लोगोंको पानी पिलानेके कामपर लगाना चाहता है।

६२०. पत्र : रामानन्द चटर्जीको

१० नवम्बर, १९३२

प्रिय रामानन्द बाबू,

बंगाल और असमके पिछड़े वर्गोंके लोगोंकी स्थिति सुधारने . . .[1] वार्षिक रिपोर्टोंकी प्रतियोंके लिए धन्यवाद। इन रिपोर्टोंको उलट-पलटकर देखनेसे . . .[2] उनकी दशा सुधारनेके काममें . . .[3] जो निश्चित प्रगति हो रही है, उसकी ओर मेरा ध्यान गया है। मेरी यही कामना है कि यह अपने प्रयासमें दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक सफल हो।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९५८१)से; सौजन्य : शान्तादेवी

६२१. पत्र : भूदेव मुखर्जीको[4]

१० नवम्बर, १९३२

पुर्नालिखित

प्रिय मित्र,

यद्यपि आपने मुझे अपने पत्रका उत्तर देनेकी बाध्यतासे मुक्त कर दिया है, पर मुझे आपकी इस कृपासे लाभ नहीं उठाना चाहिए। यह स्पष्ट है कि अस्पृश्यता-विरोधी कार्यकर्त्ताओंपर आपने इतना-कुछ आरोपित कर दिया है, जितनेका उन्होंने खुद भी दावा नहीं किया है। वर्णाश्रम-धर्मको नष्ट करनेकी बात किसीने कभी नहीं सोची है। और आपका यह सोचना भी बिलकुल गलत है कि यह आन्दोलन अंग्रेजी-भाषी लोगों द्वारा चलाया जा रहा है या उन्हींतक सीमित है। यह जन-आन्दोलन है, जिसमें बिलकुल निरक्षर स्त्री-पुरुष तक धार्मिक उत्साहसे भाग ले रहे हैं, और क्या आपको इस बातका यकीन है कि अपनेको सनातनी माननेवाले लोगतक वर्ण-धर्म और आश्रम-धर्मका कोई खास पालन कर रहे हैं? "बराबर करने" से आपका आशय क्या है — मुझे नहीं मालूम और आप जबरदस्ती बराबर करनेकी बात कहते हैं।

१. २ व ३. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ शब्द पढ़े नहीं जा सके।

४. कलकत्ता विश्वविद्यालयके भूतपूर्व प्राध्यापक; उन्होंने गांधीजी को ३० अक्टूबरको पत्र लिखा था। (एस० एन० १८५९६)

किसीने किसीको ऊपरसे खींचकर बराबरीके स्तरपर लानेके लिए — चाहे इन शब्दोंका कुछ भी अर्थ क्यों न हो — जबरदस्ती की है, ऐसा मुझे नहीं मालूम है। अस्पृश्योंपर ऐसे दुर्गुणोंका आरोप लगाकर जिनसे कि स्पष्टतः आप स्पृश्योंको मुक्त मानते हैं, आपने निश्चित रूपसे उनका अपमान किया है। सभी अस्पृश्य ताड़ी या शराबका व्यापार, और जो चीज उससे भी बुरी है, मद्यपान या मद्य-विक्रय नहीं करते हैं। अस्पृश्योंके व्यक्तिगत जीवनका क्या आपको कोई निजी अनुभव है? बहुत-से स्पृश्योंके, जो स्वयंको और हिन्दू धर्मको कलंकित कर रहे हैं, घृणित और अनैतिक जीवनके लिए क्या आप अस्पृश्योंको ही दोषी मानते हैं? और अस्पृश्योंमें जो भी बुराई है, उसके लिए जिम्मेदार कौन है? इससे अधिक मैं कहना नहीं चाहता। आपके पत्रके सरनामेसे मुझे पता चलता है कि आप स्वयं अंग्रेजी शिक्षाकी विशिष्ट उपज हैं और 'सांख्य' तथा 'वेदान्तके' अपने ज्ञानके लिए आपने उपाधि प्राप्त की है। 'सांख्य' या 'वेदान्त' में मुझे कभी भी ऐसा कुछ दिखाई नहीं दिया जो मनुष्यको अपने बन्धु-प्राणियोंसे घृणा करनेकी शिक्षा देता हो, मगर अपने पत्रकी प्रायः प्रत्येक पंक्तिमें आप इसी तरहकी घृणा करने लगते हैं। मुझे पूरा सन्देह है — और इस सन्देहके कारण मेरा दुःख और भी बढ़ जाता है — कि आपने उन अभागे हिन्दू भाइयोंके जीवनको समझनेकी कभी परवाह नहीं की है, जिन्हें आपने और मैंने और श्रेष्ठताका दम भरनेवाले अन्य हिन्दुओंने पीसकर धूलमें मिला दिया है। मेरी प्रार्थना है कि आप समयको पहचानें और मेरी तरह यह सोचें कि हिन्दू धर्मकी शुद्धि दम्भ और निर्दोष लोगोंकी निन्दासे नहीं होनी है।

हृदयसे आपका,

भूदेव मुखर्जी
कलकत्ता

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८६०९)से।

६२२. पत्र : जी० एस० नरसिंहाचारीको[1]

१० नवम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

पिछले महीनेकी २३ तारीखका आपका पत्र यथासमय मिल गया था, पर जिन कारणोंसे मैं उसका पहले जवाब नहीं दे सका, उन्हें आप अब जानते ही हैं। छात्र यदि दिलसे और बुद्धिमानीसे काम करें, तो वे कट्टरपंथियोंके विरोधके बावजूद, बहुत-कुछ कर सकते हैं। वे अस्पृश्योंके हलकोंमें जाकर उनके साथ बराबरीके आधार पर भाईचारा स्थापित कर सकते हैं, उनकी कठिनाइयोंको समझ सकते हैं और उनमें से

१. आन्ध्र विश्वविद्यालय कॉलेज तेलुगु संघ, विशाखापत्तनमके मन्त्री।

जिन्हें वे दूर कर सकते हों, उन्हें दूर कर सकते हैं, उन्हें डॉक्टरी सहायता दे सकते हैं, सफाईके नियम सिखा सकते हैं, उनके लिए दिवा व रात्रि-पाठशालाएँ चला सकते हैं, उन्हें अपने खेलोंमें बुला सकते हैं और उनके बच्चोंको अपने साथ सैरके लिए ले जा सकते हैं। जिन कठिनाइयोंको वे दूर न कर सकते हों, उनकी ओर वे नव-स्थापित संघकी स्थानीय शाखाका ध्यान आकर्षित कर सकते हैं या उनके बारेमें केन्द्रीय समितिको लिख सकते हैं, उनकी परिस्थितियोंका वे आलोचनात्मक और विद्वत्तापूर्ण अध्ययन कर सकते हैं और उसे पुस्तिकाके रूपमें प्रकाशित कर सकते हैं। छात्रोंके लिए यह अपनी पढ़ाईमें विघ्न डाले बिना सेवा करनेका सबसे कारगर और आसान तरीका है। परन्तु यदि उन्हें इस मूक सेवामें भी बड़े लोगोंके विरोधका सामना करना पड़े तो उन्हें बिना किसी झल्लाहट और कमजोरीके अपने कर्त्तव्यपर डटे रहना चाहिए।

कृपया मुझे यह बताइए कि आप लोगोंने यह कार्य शुरू किया है या नहीं और यदि कर दिया तो कितने लोग ऐसा कर रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ७-१२-१९३२

६२३. पत्र : के० नटराजन्को[1]

१० नवम्बर, १९३२

जो-कुछ मैं देख सकता हूँ और महसूस कर सकता हूँ, उससे लगता है कि गुरुवायूरकी लड़ाईको अखिल भारतीय महत्त्व प्राप्त होगा और कट्टरपंथी अपना सारा आक्रमण इस मन्दिरपर केन्द्रित करेंगे। मुझे इस चीजका स्वागत करना चाहिए। इसका परिणाम जितना मैंने सोचा था, उससे भी अधिक शुद्ध निकलना चाहिए। पर इसका अर्थ यह है कि हिन्दू धर्मकी जो सर्वोत्तम शक्तियाँ हैं, उन सबको संगठित हो जाना चाहिए और कट्टरपंथियोंके हमलेका सामना करना चाहिए। इसलिए मैं इस बातके लिए उत्सुक हूँ कि यदि आपके लिए सम्भव हो और यदि आप मेरी तरह महसूस करते हों, तो सम्पूर्ण हृदयसे इस आन्दोलनमें कूद पड़िए। लेकिन पिछले उपवासपर लिखे गये आपके लेखोंसे मैंने देखा कि आप इस तरहके उपवासके विरुद्ध हैं। इस बारेमें मेरे विचार बहुत ही दृढ़ हैं और मुझे लगता है कि यह न केवल एक न्यायोचित अस्त्र है, बल्कि जिसे किसी भी रूपमें हिंसाका सहारा नहीं लेना है, उसके लिए तो कुछ परिस्थितियोंमें यह अनिवार्य ही हो जाता है। अब क्योंकि मैं इस आन्दोलनके सिलसिलेमें मुलाकातियोंसे मिलनेको स्वतन्त्र हूँ, इसलिए मैं चाहूँगा कि आप अगले सप्ताह कभी भी १ बजेके करीब मुझसे मिल लें, ताकि हम पश्चात्ताप-रूप सार्वजनिक उपवासोंकी नैतिकतापर विचार-विमर्श कर सकें और यह

१. **इंडियन सोशल रिफॉर्मर**के सम्पादक।

देख सकें कि हम परस्पर सहमत हो सकते हैं या नहीं। आप मुझे जितना जानते हैं, उससे आपको यह विश्वास तो हो ही सकता है कि यदि हमारे विचार-विमर्शके दौरान मुझे अपनी भूलका पता चल गया तो मुझे अपना कदम पीछे हटानेमें कोई झिझक नहीं होगी।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २२१-२

६२४. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

१० नवम्बर, १९३२

प्रिय गुरुदेव,

मैंने अखबारोंमें जो वक्तव्य[1] जारी किया है, वह तो आपने देखा ही होगा। इस अगले प्रयत्नके लिए यदि मिल सके तो मैं आपका आशीर्वाद चाहता हूँ। मुझे नहीं मालूम कि आप ऐसा महसूस करते हैं या नहीं कि यह प्रयत्न, यदि पहले प्रयत्नसे भी कोई अधिक शुद्ध प्रयत्न हो सकता है तो, उससे अधिक शुद्ध है। पिछले उपवासमें राजनीतिका कुछ रंग था और चीजोंको ऊपरसे देखनेवाले आलोचक ऐसा कह पाये थे कि वह ब्रिटिश सरकारके खिलाफ था। इस बार यदि उस अग्नि-परीक्षाको आना है तो उसे कोई राजनीतिक रंग देना सम्भव नहीं होगा। यह तो आपको याद ही होगा कि पिछला उपवास तोड़ते समय यह बात बहुत ही स्पष्ट ढंगसे बता दी गई थी कि यदि तथाकथित सवर्ण हिन्दुओंने तनिक भी विश्वासघात किया तो मैं फिर उपवास शुरू कर सकता हूँ। रही गुरुवायूर मन्दिरके सम्बन्धमें सम्भावित उपवासकी बात, सो वह तो विशुद्ध रूपसे वचनका पालन करनेके लिए करना है। कट्टरपंथी लोग उसे अपने प्रहारका केन्द्र बना रहे हैं और उसे अखिल भारतीय महत्त्व दिया जा रहा है। मैं इसे एक तरहसे पसन्द भी करता हूँ। लेकिन तब यह और भी जरूरी हो जाता है कि उदार वृत्तियाँ रखनेवाले समस्त लोग एक होकर क्रियाशील हो जायें ताकि अस्पृश्यताके इस राक्षसको पराजित किया जा सके। यदि इस सम्बन्धमें आपकी भी भावना वही हो जो मेरी है तो इसमें मैं आपका हार्दिक सहयोग चाहता हूँ।

आशा है, आप स्वस्थ-प्रसन्न होंगे।

हार्दिक स्नेह-सहित,

आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६३५) से। **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-२, पृ० २२०-१ से भी

१. तात्पर्य "वक्तव्य : अस्पृश्यतापर-१", ४-११-१९३२ से है; देखिए पृ० ३६१-५।

६२६. पत्र : रुक्मिणीदेवी और बनारसीलाल बजाजको

१० नवम्बर, १९३२

चि० रुक्मिणी,

तेरा पत्र मिला। पत्र लिखने या अन्य काम निबटानेका तरीका यह है कि हर कामका समय निश्चित कर लिया जाये। यदि सचमुच तेरी हर हफ्ते पत्र लिखनेकी इच्छा हो तो तुझे अपने मनमें ऐसा निश्चय कर लेना चाहिए कि अमुक दिन और अमुक समय पत्र लिखना है। इस प्रकार उक्त विचारका बोझ भी मनपर नहीं रहता, और बिना किसी अड़चनके यह काम नियमित रूपसे होता रहेगा। मथुराके वैद्यराज कौन हैं? क्या वहाँ गायका दूध मिल सकता है? घी गायका होता है या भैंसका?[1]

चि० बनारसी,[1]

तुम्हारे दस्तखत देखे। पिताजी का खत हर हफ्ते आता है। उनका काम कैसे चलता है? डबलिनमें वे क्या करते हैं?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१४४) से।

६२७. पत्र : मणिलाल गांधीको

१० नवम्बर, १९३२

चि० मणिलाल,

तू मद्राससे बहुत जल्दी लौट आया। सर कूर्माके घर ठहरा, यह बहुत ठीक किया। शास्त्री स्वभावसे ही अल्पभाषी हैं। उनके प्रति गलतफहमीमें मत पड़ना।

प्रागजीका पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ। इसे पढ़ना और इसपर विचार करना। उनपर रोष मत करना। उनका पहलू समझनेकी कोशिश करना और मुझे लिखना। तेरा पत्र मिलनेके बाद ही मैं उन्हें लिखूँगा। इस बातपर ध्यान देना कि उन्होंने तो तेरी शिकायतसे उलटी ही बात लिखी है।

यदि तू दिसम्बरमें वहाँ पहुँचनेके लिए वचनबद्ध हो तो तुझे जानेकी तैयारी शुरू कर ही देनी चाहिए।

मुझे तुरन्त उत्तर देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८००) से।

१. मूलमें पत्रका यह हिस्सा हिन्दीमें ही है।

६२८. पत्र : रेहाना तैयबजीको

१० नवम्बर, १९३२

प्यारी बेटी रेहाना,

मेरा कारड मिला होगा। मैंने जो डर माना था वही हुवा। तुमने रिवाज कर रखा है इसलिये जब तुम्हारा खत नहीं मिलता है तो मैं बेचेन हो जाता हुं। ऐसी हालतमें अब्बाजान या अम्माजानसे भी एक कारड लीखवा शकती हो। कैसे भी हो मैं ये हरगीज नहीं चाहता कि तुम बिमार होते हुए भी तुम्हारे लीखना। क्यों बिमार हो गई? बहुत काम कीया था? तुम्हारे तो बिमार होना ही नहीं चाहिये। अब अच्छी होगी। इस कारडका जवाब तुम्हारे देनेकी कोई जरूर[त] नहीं। अब्बाजान एक कारड भेज दें तो काफी होगा। हमिदाका खत मुजे नहीं मिला है। खुदा हाफिज।

बापूकी दुआएँ

उर्दूकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६६६) से।

६२९. पत्र : उडीपी-स्थित अस्पृश्यता-विरोधी संघको

११ नवम्बर, १९३२

मेरी स्पष्ट राय है कि अभी आपके सत्याग्रह करनेका अवसर नहीं आया है। आपको बहुत ही नम्र तरीकोंसे अपने पक्षमें जन-मत तैयार करना है। आपको यह देखना चाहिए कि मन्दिरोंमें जानेवाले लोग उन्हीं शर्तोंपर हरिजनोंके मन्दिरमें प्रवेश करनेके पक्षमें हैं या नहीं जिन शर्तोंपर दूसरे लोग प्रवेश करते हैं, और आपको यह भी याद रखना चाहिए कि हमें केवल मन्दिर-प्रवेशके लिए ही काम नहीं करना है। आपको जीवनके हरएक क्षेत्रमें अपने पड़ोसके अस्पृश्योंकी स्थितिकी जानकारी प्राप्त करनी है, उसका शास्त्रीय अध्ययन करना है और अपने अध्ययनके निष्कर्षोंको मेरे पास भेजना है। साथ ही आप हरिजनोंके जिन दुःखोंको दूर कर सकते हैं उनको दूर करनेका प्रयत्न भी करते रहना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २२९

६३०. पत्र : चि० य० चिन्तामणिको

११ नवम्बर, १९३२

मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि अस्पृश्यताके सम्बन्धमें जारी किये अपने चौथे वक्तव्यमें[1] मैंने जिस पत्रकी चर्चा की है उसके लेखक कौन हैं, इसका अनुमान आपने लगा लिया होगा। अब उस पत्रके लेखक राधाकान्तने मुझे यह अनुमति दे दी है कि मैं आपको और पण्डित कुँजरूको उनका नाम बता दूँ। पहले मुझे आपसे यह जान लेना चाहिए कि क्या मेरे उपवाससे आपने सचमुच दबाव महसूस किया और अपनी अन्तरात्माके खिलाफ काम किया। यह जान लेनेपर ही मुझे कुछ कहना चाहिए। पण्डित कुँजरूको भी मैं लिख रहा हूँ।[2]

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २३५

६३१. पत्र : वासन्तीदेवी दासको

११ नवम्बर, १९३२

अखबारोंको अगर आप जरा भी देखती होंगी तो इस चीजपर आपका ध्यान अवश्य गया होगा कि शुद्धिकी प्रगतिको रोकनेके लिए सभी असत प्रतिक्रियावादी शक्तियोंको एकत्रित किया जा रहा है। इसलिए यह समय है जब हिन्दू धर्मकी सभी स्वच्छ और ऊपर उठानेवाली शक्तियोंको संगठित हो जाना चाहिए और अस्पृश्यताके नाना सिरोंवाले राक्षसको परास्त करनेके लिए सम्मिलित प्रयत्न करना चाहिए। क्या आप इसमें सहयोग नहीं करेंगी? यदि आप पत्र लिखने लायक साहस न बटोर सकें तो मैं आपपर आलस्यका आरोप लगानेकी हिम्मत नहीं करूँगा। पर आशा है, आप मुझे एक तार भेजनेका उत्साह तो दिखायेंगी ही। पिछले सप्ताह ही मैंने, केरलकी माँगके उत्तरमें उर्मिलादेवीको दक्षिण जानेका निमन्त्रण दिया था। उन्होंने तारसे तुरन्त स्वीकृति भेज दी। क्या आप भी ऐसा ही करेंगी? मैं आपसे दक्षिण जानेको नहीं कहता, पर यह तो चाहता ही हूँ कि मनुष्यको ऊपर उठानेवाले इस कार्यमें आप उचित भाग लेनेका वचन दें। कार्यका क्षेत्र आप खुद चुनेंगी, वैसे वह भी मुझपर छोड़ देना चाहें तो बात दूसरी है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २२८

१. देखिए "वक्तव्य : अस्पृश्यतापर–४", ९-११-१९३२।

२. यह पत्र उपलब्ध नहीं है, लेकिन साधन-सूत्रके अनुसार दोनों पत्रोंके मजमून एक-से थे।

६३२. पत्र : एस्थर मेननको

११ नवम्बर, १९३२

रानी बिटिया,

तुम्हारा सबसे ताजा पत्र मिला, जिसमें तुमने मुझे बताया है कि किस तरह हर्षातिरेकमें[1] तुम मुझे तार देनेके लिए तारघर दौड़ गई होतीं और फिर जिस तरह तुमने यह महसूस किया कि वैसा करना गलत होगा — यदि और किसी कारण नहीं तो केवल इसी कारण कि हम गरीब लोग हैं और हमारे पास जो भी पैसा है उसे ईश्वरकी सेवाके लिए अमानत समझना चाहिए। और मुझे तुम्हारा वह लम्बा प्रेम-पत्र भी मिला, जो तुमने आश्रमके पतेपर भेजा था।

हाँ, तो उपवासका कोई और परिणाम निकला हो या न निकला हो, उसने यदि मेननका धूम्रपान छुड़ा दिया तो केवल इस परिणामके लिए भी वह करने योग्य था। महत्त्वकी बात यह है कि वह चीज छोड़ी गई है, जिसका वह इतना वशीभूत था। मुझे मालूम है कि बहुत-से युवा और वृद्ध स्त्री-पुरुष उपवास-सप्ताहमें इस तरहके संयम और आत्मत्यागके लिए प्रेरित हुए थे। इससे यह पता चलता है कि वह ईश्वर-प्रेरित था।

ग्रुप फोटो, जिसमें एन्ड्र्यूज भी हैं, मैंने देखा और वह हम सबको बहुत पसन्द आया। वह बहुत ही अच्छा था। और उसमें नंगे बदन तंगै। वह बिलकुल चित्र-सी लगती है।

तुम्हारे अगले पत्रमें मैं बीमार बहनसे तुम्हारे मिलनेके विवरणकी अपेक्षा करता हूँ।

सनफील्ड स्कूलवालों का मुझे एक लम्बा पत्र मिला था, जिसमें नई इमारतोंका ब्योरा दिया हुआ था।

तुम्हें अपने शरीरमें ऐसी चीजें भरकर जो उसके अनुकूल नहीं रहतीं, उसकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। दालोंसे तुम अपने शरीरको पुष्ट नहीं कर सकोगी। तुम्हें उनकी बिलकुल जरूरत नहीं है। तुम्हारे आहारमें अधिकतर दूध, अंडे (क्योंकि तुम उन्हें लेती हो और यह अच्छा ही है), चोकर मिले आटेकी रोटी, फल और हरी सब्जियाँ, सलाद, टमाटर, पालक, कद्दू और इसी तरहकी चीजें होनी चाहिए। जिस तरह सैनिक अपने शस्त्रोंको साफ और सुव्यवस्थित रखता है, उसी तरह हमें भी अपने शस्त्रों (ईश्वरके दिये हुए शरीरों)को साफ और पूरी तरह सुव्यवस्थित रखना चाहिए।

मैंने अपनी शक्ति लगभग पुनः प्राप्त कर ली है और मैं सामान्य भोजन ले रहा हूँ। मीरा मुझे नियमसे हर सप्ताह पत्र लिखती रहती है और वह अच्छी तरह

१. गांधीजी का उपवास समाप्त होनेकी खबरसे।

है। देवदास पहलेसे बहुत अच्छा है, पर वह अपनी शक्तिसे अधिक काम कर रहा है, और यही हाल प्यारेलालका है। महादेव बेशक मेरे साथ है। तिलकम् आश्रममें है। वह अच्छा लड़का है। शरीरसे वह तगड़ा नहीं है।

इसके साथ एक पत्र[1] डेन्मार्कके युवा मित्रके लिए भी है। बा आश्रममें है। मेरा खयाल है वह मुझसे अधिक बूढ़ी हो गई है, वैसे उसमें गजबकी फुर्ती है। उसका दिमाग जल्दी थक जाता है। वह चिन्ता बहुत अधिक करती है।

तुम सबको स्नेह और बच्चोंको अलगसे दुलार भी।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सं० ११५) से। सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार। **माई डियर चाइल्ड,** पृ० ९५-६ से भी

६३३. पत्र : एस० एम० माइकेलको

११ नवम्बर, १९३२

मेरे प्रत्याशित उपवाससे यदि किसीकी बौद्धिक स्वतन्त्रता छिनती है तो मुझे निश्चय ही उसका दुःख होगा। खैर, जो भी हो, मैंने स्पष्ट शब्दोंमें यह घोषणा कर दी है कि यह केवल जन-मानसको प्रभावित करनेके लिए है। अस्पृश्यता-निवारणमें विश्वास रखनेवाले मित्र और सहयोगी स्वभावतः इससे कार्यके लिए प्रेरित होंगे। यह चीज खेद करनेकी नहीं है। फिर भी, यदि आपको अन्तःकरणका स्पष्ट आदेश मिले तो बेशक आप उपवास करें।[2] परन्तु जबतक मेरा यह विश्वास बना रहता है कि मैं भी ईश्वरके आदेशका पालन कर रहा हूँ, तबतक वह मुझे विचलित कर पायेगा — ऐसी आशा आप न रखें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २१-११-१९३२ तथा **महादेवभाईनी डायरी,** भाग-२, पृ० २३६

१. यह उपलब्ध नहीं है।

२. श्री माइकेलने अपना यह इरादा जाहिर किया था कि मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नपर गांधीजी ने जिस "दबाव डालनेवाले उपवास" का फैसला किया है, उसके विरुद्ध वे १ दिसम्बरसे "निराशा और विरोध" के प्रतीकस्वरूप जवाबी उपवास शुरू करेंगे।

६३४. पत्र : पी० एन० राजभोजको

११ नवम्बर, १९३२

प्रिय राजभोज,

आपसे और आपके साथ आये मित्रोंसे मिलकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। मेरी सलाह आपको स्वीकार करने लायक लगी इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। मेरा यह निश्चित मत है कि जबतक सारा ध्यान गुरुवायूरपर लगा है तबतक मन्दिर-प्रवेशके सिलसिलेमें कोई सत्याग्रह नहीं किया जाना चाहिए और न किसी व्यक्तिको उपवास ही करना चाहिए। यदि श्रीयुत केलप्पनके और मेरे लिए उपवास करना आवश्यक हो जाये, तो किसी भी व्यक्तिको सहानुभूतिमें उपवास करनेकी बात नहीं सोचनी चाहिए। परन्तु जबतक सारी शक्ति गुरुवायूर मन्दिरपर लगाई जा रही है तबतक सत्याग्रह स्थगित करनेकी मेरी सलाहका अर्थ यह नहीं है कि अन्य मन्दिरोंको खुलवानेके लिए और कोशिश करनी ही नहीं चाहिए। वह तो लगातार करनी है। लेकिन अभी इसी समय वैसा करना ऐसी बात है जो सवर्ण हिन्दुओंकी प्रतिष्ठासे सम्बन्ध रखती है। जब यह चीज स्पष्ट रूपसे सिद्ध हो जाये कि सवर्ण हिन्दू सार्वजनिक मन्दिरोंको हरिजनोंके लिए खुलवानेके लिए कुछ नहीं करेंगे तो हरिजनोंको उसके बारेमें सोचनेको काफी समय मिलेगा। सौभाग्यसे कहीं-न-कहीं किसी-न-किसी मन्दिरके अपने-आप हरिजनोंके लिए खोले जानेकी खबरें रोज आ रही हैं और जो विवरण मुझे मिलते रहे हैं उन सबसे लगता है कि इस तरहकी कोशिश बराबर जारी है, यद्यपि निस्सन्देह उसमें उपवास-सप्ताह-जितना उत्साह नहीं है। परन्तु हरिजन, सवर्ण हिन्दुओंके कामको आसान बनानेके लिए जो कर सकते हैं वह यह है कि वे जहाँतक सम्भव हो, आन्तरिक सुधार करें, जैसे कि सफाईके नियमोंका पालन और मरे पशुओंके मांस और मदिराका त्याग। इस तरहकी बातोंपर मैं आपके साथ विस्तारसे विचार-विमर्श कर चुका हूँ।

हरिजनोंके बच्चोंके लिए तकनीकी प्रशिक्षणकी सुविधाओंकी व्यवस्था करने और योग्य हरिजन युवकोंको छात्रवृत्तियाँ देनेके मामलेपर मेरा विचार सेठ घनश्यामदास बिड़ला और अखिल भारतीय अस्पृश्यता-विरोधी संघके[1] अन्य सदस्योंके साथ उनके यहाँ मुझसे मिलने आनेपर विचार-विमर्श करनेका है।

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७८७) से। **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-२, पृ० २३३-४ से भी।

१. ऑल इंडिया एंटी-अनटचेबिलिटी लीग। बादमें इसका नाम बदलकर हरिजन सेवक संघ कर दिया गया था।

६३५. पत्र : श्यामजी मारवाड़ीको

११ नवम्बर, १९३२

भाई श्यामजी,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने मुझे लिखकर बहुत अच्छा किया। बम्बईमें चलने-वाली शिक्षा-संस्थाओंके बारेमें मैं प्रमुख कार्यकर्त्ताओंसे विचार-विमर्श कर रहा हूँ। मुझे पूरे समाचार देते रहना और साथ ही धीरज भी रखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५२०६)से।

६३६. एक पत्र

११ नवम्बर, १९३२

पुंजाभाई तो हमारे पास ही है। मुझे उसकी गैरहाजरी महसूस नहीं होती क्योंकि ऐसा लगता ही नहीं कि वह नहीं है। इतने दिनोंतक तो वह कुछ लेता और कुछ देता रहा था। और अब तो वह केवल देता ही है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २१२

६३७. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

११ नवम्बर, १९३२

भाई घनश्यामदास,

आपका खत मिल गया। मैंने लिखा हुआ खत मिला होगा। हम थोड़े ही दिनोंमें मिलनेवाले हैं इसलिये यहां ज्यादह नहीं लिखना चाहता हूं। कुछ सूचना शीघ्र देने जैसा नहीं है।

समितिकी योजना मिल गई है। कुछ कहना होगा वह हम मिलेंगे तब कहुंगा। भाई अम्बालालको[1] मैंने लिखा है, समितिमें आ जानेको आग्रह किया है। प्रचार और रचना दोनों हमारे साथ-साथ करना होगा। मैं कर रहा हूं ऐसा समजकर प्रचार-कार्य समिति नहीं छोड़ सकती है। मैं जो करता हूं वह भिन्न वस्तु है, लेकिन इस बारेमें भी मिलने पर काफी चर्चा कर लेंगे। सहभोजका काम समितिसे नहीं [हो]

१. देखिए "पत्र: अम्बालालको", १०-११-१९३२।

सकता है — इसमें मेरे दिलमें कोई संदेह नहीं है। केरलसे उत्तरकी एक बहनकी सहाय चाहते हैं। राजाजी की संमती लेकर मैंने उर्मीलादेवीको तार भेजा है। वह जायगी। उनका खर्च समितिकी मार्फत देना चाहिये ऐसा मेरा अभिप्राय है। आज तो मेरे पास यहां कुछ पैसे आ गये हैं उसमें से मैंने भेज दिये वही पैसे मैं समितिको देना चाहता था। अगर समिति उर्मिलादेवीको भेजनेकी बात पसंद करेगी तो बाकी पैसे समिति देगी। अगर समितिके कार्यक्रममें ऐसी बातें नहीं आ सकती है, ऐसा निश्चय होगा तो देखा जायेगा।

मेरा स्वास्थ्य अच्छा रहता है। वजन भी ठीक हो गया है। असल शक्तिमें थोड़ी कसर है सही लेकिन वह आ जायेगी ऐसी प्रतीति है। तुम्हारे शरीरको अच्छा कर लेना चाहिये। सोडाके बारेमें जो कुछ लिखा था वह ठीक नहीं लगता है।[1] एक डा० मित्रका मुझे कहना था कि सोडाका सेवन नित्य करनेसे संधिवातसे मनुष्य बच जाता है। और दूसरी तरहसे भी अच्छा है। मैंने कुछ नुकसानका अनुभव नहीं किया और यों तो थोड़ा-बहुत सोडा पानीमें रहता ही है।

प्रतिज्ञापत्र पढ़ गया। उसपर बहुत खयाल तो नहीं किया। लेकिन निर्दोष-सा लगता है।

बापूके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ७९०३ से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

६३८. पत्र : वियोगी हरिको

११ नवम्बर, १९३२

भाई वियोगी हरि,

आपका पत्र मिला। आनंद हुआ। मुझे तो टंडनजी की सूचना सबसे अच्छी लगती है। साहित्य और भाषासेवा आपका कार्यक्षेत्र है और यह करते हुए हरिजन सेवा भी हो सके तो उसमें सब-कुछ आ जाता है। 'पतित बन्धु'का पुनरुध्धार करने की कोई आवश्यकता मैं नही देखता हूं। आज अपने वर्तनसे ज्यादह प्रचार हो सकता है। अखबार तो बहुत निकलते हैं उसमें आपके ऐसे लेखोंको हमेशा स्थान मिलता ही रहेगा।

आपका,
मोहनदास

[पुनश्च :]

आप मिलना चाहें तो अवश्य आ सकते हैं।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७२) से।

१. यहाँ बिड़लाजी ने डॉ० केलॉगकी राय उद्धृत की है। जिसके अनुसार गांधीजी को सोडा बाइकार्बका नियमित प्रयोग नहीं करना चाहिए क्योंकि ऐसा करना पेटके लिए हानिकारक है और उससे उबकाई आने लगती हैं।

६३९. भेंट : पी० एन० राजभोजको[1]

११ नवम्बर, १९३२

राजभोज : अस्पृश्य सभी सम्भव उपायोंसे मन्दिरोंमें जानेकी कोशिश कर रहे हैं। मान लीजिए समझाने-बुझाने और पारस्परिक सद्भावके तरीके सफल नहीं होते, तो क्या आपके विचारमें अस्पृश्योंको सत्याग्रहका उपयोग करना चाहिए? यदि वे उसका उपयोग करें तो उसके लिए क्या तरीका अपनाया जाना चाहिए?

गांधीजी : आजकी परिस्थितियोंमें मैं सत्याग्रहको कतई उचित या आवश्यक नहीं मानता। सभी प्रयत्न गुरुवायूरपर केन्द्रित रहने चाहिए। हरिजनोंको फिलहाल यह देखना चाहिए कि सवर्ण हिन्दू क्या करते हैं। गुरुवायूरके विषयमें जो-कुछ होना है, वह यदि अन्य सभी मन्दिरोंके विषयमें नहीं, तो बहुतसे मन्दिरोंके विषयमें तो हो सकता है।

पार्वती मन्दिरमें प्रवेशके लिए सभी तरीके आजमाये जा चुके हैं, जिनमें श्रीयुत जमनालाल बजाज और श्री न० चि० केलकरकी कोशिशें भी आ जाती हैं। इस उलझनसे कैसे निकला जाये, क्या मैं जान सकता हूँ?

पार्वती मन्दिरके बारेमें आपकी कोशिशों और सत्याग्रहसे मैं परिचित हूँ। पर इस मामलेमें भी मेरी सलाह आपको यही है कि गुरुवायूरके मामलेका पक्ष या विपक्षमें किसी भी ओर निबटारा होनेतक आप प्रतीक्षा करें। इस बीच आप पार्वती मन्दिर के न्यासियोंके साथ बातचीत जारी रख सकते हैं और जनमत तैयार कर सकते हैं।

सरकारने आपको अब अस्पृश्यताके सम्बन्धमें बेरोकटोक काम करनेकी अनुमति दे दी है। फिर आपको बाहर आकर अपने-आपको पूरी तरह केवल इसी ध्येयमें लगा देनेमें क्या आपत्ति है?

किसी भी प्रतिबन्धके अधीन अपनी रिहाई मैं मंजूर नहीं कर सकता। पर इस विषयकी मुझे चर्चा नहीं करनी चाहिए।

समाचार-पत्रोंमें प्रकाशित पत्र-व्यवहारसे हमें पता चला है कि आपने श्री केलप्पनके समर्थनमें उपवासकी घोषणा कर दी है। मान लीजिए कोई 'स्पृश्य' या अस्पृश्य किसी और महत्त्वपूर्ण मन्दिरके बारेमें, जैसे कि काशी विश्वेश्वरके बारेमें एक और

१. यहाँ उद्धृत पाठ **बॉम्बे क्रॉनिकल**की रिपोर्टसे लिया गया है, जिसमें प्रश्न और उत्तर दोनों दिये गये हैं। कुछ उत्तर एक टाइप की गई कापीकी फोटो-नकलसे लिये गये हैं, जिसपर गांधीजी ने अपने हाथसे कुछ संशोधन भी किये हैं।

उपवासकी घोषणा कर देता है, तो क्या आप इस तरहके हर मामलेमें अपनी जान की बाजी लगानेको तैयार हो जायेंगे? क्या आप यह सोचते हैं कि आपका शरीर इस तरहकी असाधारण परिस्थितिसे निपट सकेगा?

श्री केलप्पनको मैं वचन दे चुका हूँ, और २ जनवरी, १९३३ को उनके साथ अपना उपवास शुरू करनेको मैं वचनबद्ध हूँ। यदि कोई और व्यक्ति किसी और मन्दिरके बारेमें इसी तरहका उपवास शुरू करता है, तो उसमें शामिल होनेको मैं अपनेको बाध्य नहीं मानता। हर मामलेकी उसके गुण-दोषानुसार परीक्षा करनी होगी। इसके अलावा, किसी भी मामलेमें कार्यकर्त्ताओंको पूरी तरह विचार किये बिना और औचित्य देखे बिना उपवासका सहारा नहीं लेना चाहिए।

सार्वजनिक कुएँ, तालाब और जलके इसी तरहके अन्य सामान्य स्रोतोंके 'स्पृश्यों' और अस्पृश्यों द्वारा भेद-भावरहित उपयोगके बारेमें उन दोनोंके दायित्व और कर्त्तव्य क्या हैं?

अस्पृश्योंको सार्वजनिक कुओं और तालाबोंसे जल लेनेका उतना ही अधिकार है जितना कि 'स्पृश्यों' को है। यदि कहीं कोई मतभेद हो तो मामला समझा-बुझाकर और बातचीतसे मित्रोंकी तरह सुलझाना चाहिए।

वे सभी कठिनाइयाँ, जो वहीं-की-वहीं दूर न हो सकें, अखिल भारतीय अस्पृश्यता विरोधी संघके सामने लाई जानी चाहिए। जो-कुछ मैं यहाँसे कर सकता हूँ निस्सन्देह वह तो करूँगा ही।

सार्वजनिक कुओंके उपयोगके बारेमें क्योंकि स्पष्ट कानूनी अधिकार है, अतः अस्पृश्य अदालतोंसे सुरक्षा प्राप्त कर सकते हैं। परन्तु यह तरीका कुचले हुए लोगोंकी सहायता नहीं करेगा। शक्तिशाली सदा कानूनसे बच जायेंगे या उसकी अवज्ञा करेंगे। इसलिए मुख्य चीज यही है कि मेल-मिलापके रुखसे अनुकूल स्थानीय जनमत तैयार किया जाये।

श्री बिड़ला और श्री ठक्कर इस समस्यापर तथा इसे सुलझानेके उपायोंके बारेमें मेरे साथ विचार-विमर्श करनेके लिए पूना आ रहे हैं। आपको पूरे दिलसे संघके साथ सहयोग करना चाहिए और उसकी सहायता करनी चाहिए।[1]

दलित वर्गोंकी यह इच्छा है कि संघको अपने कोष, अन्य प्रचार-कार्योंपर खर्च करनेके बजाय, पहले दलित वर्गोंको देश तथा विदेशोंमें चमड़ा कमाने, चमड़ेकी चीजें बनाने, रस्सी बटने-जैसी तकनीकी शिक्षा दिलानेपर खर्च करना चाहिए। इसलिए उनकी ओरसे मुझे यह प्रार्थना करनी है कि आप इस विचारको प्रश्रय देनेके लिए इस दृष्टिकोणपर जोर दें।

हमारी यह भी इच्छा है कि ऐसे छात्रावास स्थापित किये जायें जहाँ 'स्पृश्य' और अस्पृश्य एक-साथ रहें।

१. उपर्युक्त तीन अनुच्छेद जिन प्रश्नोंके उत्तर हैं, वे उपलब्ध नहीं हैं।

आपके इस सुझावसे मैं सहमत हूँ कि संघके कोषोंका कुछ अंश अस्पृश्योंकी छात्रवृत्तियोंपर और उन्हें देश तथा विदेशोंमें चमड़ा कमाने, चमड़ेकी चीजें बनाने, रस्सी बटने-जैसी तकनीकी शिक्षा दिलानेपर खर्च होना चाहिए। 'स्पृश्यों' और अस्पृश्योंके लिए सामान्य छात्रावास स्थापित करने और मौजूदा छात्रावासोंको अस्पृश्यों के लिए खोलनेके आपके सुझावसे भी मैं पूरी तरह सहमत हूँ। संघ निश्चय ही इसकी कोशिश करेगा और इस मामलेमें अपने प्रभावका उपयोग करेगा।

क्या आप ऐसा नहीं समझते कि अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनको, बजाय नगरों के जहाँ लोग शिक्षित और कमसे-कम कुछ हदतक उदार विचारोंके हैं, गाँवोंतक ही सीमित नहीं रखना चाहिए, जो कट्टरपंथियोंके गढ़ हैं। गाँवकी स्त्रियोंमें प्रचार-कार्य करनेके लिए क्या कुछ महिला कार्यकर्त्ताओंकी आवश्यकता नहीं है?

हाँ, अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलन जोर-शोरसे मुख्यतया गाँवोंमें चलाया जाना चाहिए। पूर्व खानदेश जिले और कई अन्य प्रान्तों व जिलोंमें इस तरहका आन्दोलन शुरू भी कर दिया गया है। स्त्रियोंको इस आन्दोलनमें काम करनेके लिए बड़ी संख्यामें आगे आना चाहिए।

यह बहुत ही सुन्दर प्रश्न है। अस्पृश्योंको खुद भी खूब सहायता करनी चाहिए। उन्हें आम सफाई रखनी चाहिए, मरे हुए पशुओंका मांस नहीं खाना चाहिए और मद्यपान नहीं करना चाहिए, अपने बच्चोंको स्कूलोंमें भेजना चाहिए, अपने बीच अस्पृश्यता खत्म कर देनी चाहिए और आम तौरपर अपने अन्दर ऐसे सुधार करने चाहिए जो सम्भव हों।[1]

अस्पृश्यता-निवारणके प्रश्नको, मूल अधिकारोंके रूपमें, भारतके नये संविधानमें शामिल करना क्या आप आवश्यक समझते हैं? अर्थात्, यदि किसी हिन्दूके साथ किसी सार्वजनिक स्थानपर अस्पृश्यका-सा व्यवहार किया जाता है तो क्या इसे दण्डनीय अपराध मानना उचित होगा, और उसकी धार्मिक संवेदनशीलताको आघात पहुँचानेपर क्या उस व्यक्तिको कानूनके अधीन दण्ड देना उचित होगा? क्या भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस समय आनेपर इस सिद्धान्तको संविधानमें शामिल करनेको तैयार होगी और उसकी कोशिश करेगी?

अस्पृश्यता-निवारण, निस्सन्देह, भारतके नये संविधानके मूल अधिकारोंमें होना चाहिए।

हाँ, किसी भी हिन्दूके साथ अस्पृश्यका-सा व्यवहार करना दण्डनीय अपराध माना जाना चाहिए। कांग्रेस निश्चय ही इस सिद्धान्तको संविधानमें शामिल करनेको तैयार होगी।

उन्हें इस बातका खयाल रखना चाहिए कि अपने उद्देश्योंकी पूर्तिके लिए हिंसा का उपयोग न हो।

१. जिस प्रश्नका यह उत्तर है, वह उपलब्ध नहीं है।

मैं यह नहीं मानता कि भंगीका काम, मरे हुए पशुओंको ढोना और जूतोंकी मरम्मत आदिका काम केवल अस्पृश्योंको ही करना चाहिए। तथाकथित अस्पृश्योंके इस तरहके किसी कामको करनेसे इनकार करनेपर यदि उनके साथ दुर्व्यवहार होता है, तो ऐसे मामले संघके स्थानीय प्रतिनिधिके सामने लाये जाने चाहिए।

अन्तर्जातीय भोजपर किसीको भी आपत्ति नहीं होनी चाहिए, पर जो लोग इस तरहके आयोजनोंमें शामिल होना नहीं चाहते, उन पर कोई जोर-जबरदस्ती नहीं होनी चाहिए। किन्तु मेरी राय यह है कि अन्तर्जातीय भोजोंको अपने कार्यक्रममें शामिल करना समझदारी नहीं होगी।

अस्पृश्योंको मैं अपने धन्धे छोड़नेकी सलाह नहीं दूँगा।[१]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९६) से। **बॉम्बे क्रॉनिकल,** १७-११-१९३२ से भी

६४०. पत्र: प्रेमलीला ठाकरसीको

१२ नवम्बर, १९३२

प्रिय बहन,

तुम हरिजन-सेवाके कार्यमें ठीक-ठीक हाथ बँटाओगी न? जब फुरसत मिले, मुझसे आकर मिल जाना। इस कामके लिए तो जो चाहे वह मिल सकता है। बहुत करके तुमने उपवास-सप्ताहके दौरान देशबन्धु दासकी बहन उर्मिलादेवीको देखा था। वे थोड़े दिनोंमें हरिजन-सेवाके लिए दक्षिणकी ओर जायेंगी। वे मुझसे मिल कर जायेंगी। एक-दो दिन पूनामें रहेंगी। क्या वे तुम्हारे यहाँ ठहर सकती हैं? अगले सप्ताह किसी भी दिन उनके पहुँचनेकी सम्भावना है। टेलीफोन अथवा पोस्ट-कार्ड लिखकर मुझे सूचित करना या आकर स्वयं मिल जाना।

मोहनदासके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४८२५) से; सौजन्य: प्रेमलीला ठाकरसी

१. इससे ऊपरके चार अनुच्छेद जिन प्रश्नोंके उत्तर हैं, वे उपलब्ध नहीं हैं।

६४१. पत्र : श्रीपाद दामोदर सातवलेकरको

१२ नवम्बर, १९३२

भाई सातवलेकर,

इस अस्पृश्यता-निवारणके प्रश्नमें आप क्या हिस्सा ले रहे हैं? स्वनिर्मित — सनातनी हुमला कर रहे हैं। उनके सामने हिंदु धर्मकी शुद्धि व उन्नति चाहनेवालों का धर्म्य संगठन होनेकी आवश्यकता है। यहां जैसा संगठन आजकल होता है वैसा संगठन अभिप्रेत नहीं है लेकिन सुधारकोंके विचारकी विवेकपूर्ण घोषणा एक सूरमें होनी चाहिये। आलस्य अथवा संकोचसे कोइ सुधारक बैठ न रहे ऐसा मैं चाहता हूं। इस बारेमें जो उचित समजा जाय वह करें।

आपका,
मोहनदास

सी० डब्ल्यू० ४७६८ से; सौजन्य: श्री० दा० सातवलेकर

६४२. भेंट : 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको

१२ नवम्बर, १९३२

यह पूछनेपर कि क्या आपने 'न्यूज लेटर' में छपी लॉर्ड सैंकीकी सबसे ताजी अपील देखी है, गांधीजी ने कहा:

जहाँतक मैं समझ सका हूँ, कॉमन्स सभामें सर सैम्युअल होरका जवाब और मुझे सविनय अवज्ञा छोड़नेकी बात समझानेवाले पत्र जेलकी चारदीवारीको पार कर सकते हैं और मुझे दिये जा सकते हैं। पर मुझे यह मालूम है कि इस तरहके पत्रोंके उत्तर इस विश्वासके साथ भेजनेका कि वे जेलकी चारदीवारीके बाहर पहुँचेंगे, मुझे अधिकार नहीं है। जो मर्यादाएँ मैंने स्वीकार कर ली हैं या अपने ऊपर थोप ली हैं उनके अधीन, जहाँतक इन भेंटोंका सम्बन्ध है, मैं संवाददाताओं या मुझसे मिलने आनेवाले निजी मित्रोंतक के ऐसे प्रश्नोंका कोई उत्तर नहीं दे सकता।

जब उन्हें यह बात याद दिलाई गई कि लॉर्ड सैंकी सदाशयताका संकेत चाहते थे और यह पूछा गया कि उन्हें उत्तर कैसे मिलेगा, तो गांधीजी ने कहा कि वे लॉर्ड सैंकीकी अपीलको सहर्ष पढ़ेंगे और ऐसे व्यक्तिकी अपीलको जितने अधिक सम्मान और ध्यानसे पढ़ना चाहिए उतने ही ध्यान और सम्मानसे पढ़ेंगे। महात्माजी ने आगे कहा:

उसे पढ़नेके बाद यदि मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा कि मैं कोई उपयोगी उत्तर दे सकता हूँ, तो वह लॉर्ड सैंकीके पास पहुँचानेके लिए यथाविधि सरकारको भेज दिया जायेगा।[1]

गुरुवायूरके बारेमें मेरे प्रश्नका उत्तर देते हुए गांधीजी ने मुझे बताया कि अगला उपवास श्री केलप्पनके उपवासपर निर्भर है। उन्होंने कहा:

मैं ऐसी परिस्थितियोंकी कल्पना कर सकता हूँ, जिनमें मुझे स्वतन्त्र रूपसे उपवास करना पड़ सकता है। भगवान् न करे कि ऐसा हो, मगर मान लीजिए श्री केलप्पनका देहान्त हो जाता है, तो मुझे तो उपवास करना ही पड़ेगा। यहाँ मैंने एक चरम उदाहरण दिया है। वैसे, सामान्यतः श्री केलप्पनसे अलग स्वतन्त्र रूपसे उपवास करनेकी मैं आशा नहीं करता।

यह पूछनेपर कि यदि केलप्पनको यह सन्तोष हो जाता है कि सच्ची लगनसे कोशिश की जा रही है और मन्दिर ठीक अगली १ जनवरीको चाहे न खुले, पर शीघ्र ही, मान लीजिए उसके एक-दो सप्ताह बाद, खुल जायेगा तो आपका रुख क्या होगा, गांधीजी ने कहा:

मान लीजिए, श्री केलप्पन इस तरहके निष्कर्षपर पहुँचते हैं तो उन्हें मुझसे बातचीत करके बुद्धिपूर्वक मुझे यह विश्वास दिलाना होगा कि उपवासकी आवश्यकता नहीं है। वैसे मैं यह बता दूँ कि श्री केलप्पन कभी ऐसा कहेंगे, मुझे यह आशा नहीं है। लेकिन मान लीजिए कि श्री केलप्पन कमजोर पड़ जाते हैं। और ईश्वर और मनुष्यके आगे की गई प्रतिज्ञासे बच निकलना चाहते हैं — यदि इस तरहका जरा भी सन्देह हुआ, तो मैं यह अपेक्षा करूँगा कि वे इस विषयमें तर्क द्वारा मेरी बुद्धि को सन्तुष्ट करें। किन्तु मेरा सदा यह विश्वास रहा है कि श्री केलप्पन अपने संकल्प पर अडिग हैं और अपने इस सदुद्देश्यके मार्गमें आनेवाली कठिनाइयोंके सामने झुकनेवाले नहीं हैं।

जब गांधीजी से यह पूछा गया कि, जैसा कि आपका तरीका है, क्या आपने उपवासका निश्चय करनेसे पहले गुरुवायूर मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नकी पूरी तरह छान-बीन कर ली थी, तो उन्होंने यह जवाब दिया:

इस प्रश्नकी मैंने पूरी तरह छान-बीन की है, यह दावा मैं नहीं कर सकता। यद्यपि मैं पूर्णतया इसपर निर्भर रहा हूँ कि श्री केलप्पनने छानबीन कर ली है, फिर भी मोटे तौरपर यह कहा जा सकता है कि मन्दिरको अस्पृश्योंके लिए खुलवानेके दावेकी सचाईके बारेमें मैंने निस्सन्देह अपनी तसल्ली कर ली है। लेकिन यदि कोई मुझसे यह पूछे कि क्या मैंने गुरुवायूर मन्दिरका न्यासपत्र — यदि ऐसा कोई दस्तावेज हो तो — देखा है या उस प्रसिद्ध मन्दिरके प्रबन्धकी रीतियों और शर्तोंकी आलोचनात्मक ढंगसे जाँच की है, तो मुझे अपनी अनभिज्ञता स्वीकार करनी होगी।

१. लॉर्ड सैंकीको गांधीजी के उत्तरके लिए देखिए "तार: लॉर्ड सैंकीको", १३-११-१९३२।

उनका ध्यान ७ नवम्बरके 'हिन्दू' में प्रकाशित जमोरिनके इस आशयके नवीनतम पत्रकी ओर दिलाया गया कि जमोरिनने श्री केलप्पनको उपवास शुरू करते समय जो यह आश्वासन दिया था कि यदि उन्होंने इस बीच अपना उपवास तोड़ दिया तो वे इस प्रश्नपर विचार करेंगे, उससे जमोरिन अब बँधे हुए नहीं हैं, क्योंकि श्री केलप्पनने उनका प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया था और उपवास जारी रखा था। इस पर गांधीजी ने कहा:

श्री केलप्पनके विरुद्ध जमोरिनका अशिष्टताका आरोप और उस आधारपर उनका अपने आश्वासनको पूरा करनेसे इनकार समझमें नहीं आता। उन्होंने आश्वासन यद्यपि श्री केलप्पनको दिया था, पर वह पूरी तरहसे जन-साधारणको दिया गया आश्वासन था और वह लगभग इस बातकी घोषणा थी कि वे कोई रास्ता निकालनेकी हर सम्भव कोशिश करनेके अपने कर्त्तव्यके प्रति सजग हैं। मेरे विचारसे तो एक उत्तरदायी व्यक्ति और न्यासीकी हैसियतसे वे उस आश्वासनको पूरा करनेके लिए बँधे हुए हैं — फिर चाहे श्री केलप्पनका आचरण कैसा भी क्यों न रहा हो।[1]

एक हिन्दू मन्दिरके न्यासीका कर्त्तव्य केवल प्रचलित रीतियों या किसी खास जातिके तथाकथित विशेषाधिकारोंकी ही रक्षा करना नहीं है। उसका यह भी कर्त्तव्य है कि वह हिन्दू धर्मकी विशुद्धताकी रक्षा करे, और हिन्दुओंकी दिन-प्रतिदिन बढ़ती आध्यात्मिक आकांक्षाओंको पूरा करे। ऐसा न्यासी इस बातसे क्षुब्ध नहीं हो सकता कि कोई एक या बहुत-से आदमी उसके खिलाफ क्या कहते हैं।

जहाँतक इस प्रश्नके कानूनी पक्षका सम्बन्ध है, जमोरिनके तर्कको मैं जानता हूँ। किन्तु कानूनी कठिनाइयाँ जब एक बड़े नैतिक सुधारके मार्गमें अड़ी हों तो उनसे जूझना चाहिए और उनपर काबू पाना चाहिए। इसलिए जमोरिन या कोई भी व्यक्ति कानूनी कठिनाइयोंको मन्दिर खुलवानेके खिलाफ पर्याप्त कारणके रूपमें पेश करे, तो इस स्थितिको स्वीकार नहीं किया जा सकता। यदि जनमत स्वयं नैतिक रूपसे न्यायोचित हो, तो जमोरिन-जैसे उत्तरदायी न्यासीसे यह अपेक्षा की जाती है कि जनताकी नैतिक माँगकी पूर्तिमें जो कानूनी अड़चनें हैं, उन्हें वे दूर करें।

प्र०: यदि अस्पृश्योंको मन्दिरमें जाने देनेके लिए अधिनियममें संशोधन करनेकी कोशिशें होती हैं, लेकिन विधान सभाको १ जनवरीसे पहले विधेयकको पास करनेका समय नहीं मिलता, तो क्या आप उपवास स्थगित कर देंगे?

उत्तर: मान लीजिए कि १ जनवरीसे पहले अधिनियममें संशोधन करा सकना असम्भव है, तो यह बात उपवास स्थगित करनेका पर्याप्त कारण होगी। लेकिन उसके पर्याप्त कारण होनेका मतलब यह होगा कि इस सम्बन्धमें और जो-कुछ किया जा सकता था, किया जा चुका है और अगर कोई अनहोनी बात न हुई तो कानूनके पास हो जानेकी पूरी सम्भावना है। मगर ऐसी सम्भावना है, इसका अर्थ फिर यह होगा कि आम जनता, मन्दिरके न्यासीगण और सब लोग इस विषयमें एकमत हैं।

१. देखिए "तार: कालिकटके जमोरिनको", ९-११-१९३२ भी।

यह पूछनेपर कि क्या महात्माजी पुराने विचारोंके सनातनियोंके एक दलको भेंटके लिए आमन्त्रित करने और इस समस्याके एक सौहार्दपूर्ण समाधानपर पहुँचनेकी कोशिश करनेके सुझावका स्वागत करेंगे, उन्होंने कहा :

बड़े-बड़े लोगोंके एक दलको भेंटके लिए आमन्त्रित करना मेरे विचारसे धृष्टता होगी। उनके प्रति आदर-भाव रखनेके कारण ही मैं यह कहता हूँ कि मैं उन्हें आमन्त्रित नहीं करूँगा। मैं जो उन लोगोंको आमन्त्रित नहीं कर रहा हूँ, इसका कारण यह नहीं है कि मैं उनसे मिलना नहीं चाहता, या मैं यह सोचता हूँ कि उनके पास मुझसे कहनेको कुछ नहीं हो सकता। उनके दर्जेका खयाल रखकर ही मैं अपनेको उन्हें आमन्त्रित करनेसे रोक रहा हूँ। किन्तु यदि मुझे यह मालूम हो जाये कि मेरे केवल निमन्त्रण भेजनेसे ही वे खुशीसे आ जायेंगे, तो मुझे इस तरहका निमन्त्रण भेजनेमें कोई झिझक नहीं होगी।

यह पूछनेपर कि जो लोग मन्दिर-प्रवेश आन्दोलनसे तो सहानुभूति रखते हैं, लेकिन साथ ही पुराने विचारोंवाले सनातनियोंकी भावनाओंका सम्मान करनेके लिए यह चाहते हैं कि तथाकथित अस्पृश्योंको मन्दिरोंके भीतर ध्वज-स्तम्भतक जाने देना चाहिए और देव-प्रतिमाको पर्वों और त्योहारोंपर दर्शनके लिए वहाँ ले आना चाहिए, उनके बारेमें आपका क्या विचार है, महात्माजी ने कहा :

यह आन्दोलन अस्पृश्यताको समाप्त करनेके लिए है। इसलिए अस्पृश्योंको बिलकुल वही अधिकार होने चाहिए जो 'स्पृश्यों' को हैं। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि उन्हें गर्भ-गृहतक जाने देना चाहिए, जहाँ केवल पुजारी ही जा सकते हैं। यदि अब्राह्मणोंको वहाँ जानेसे इसलिए रोका जाता है कि वे अस्पृश्य समझे जाते हैं तो वह अस्पृश्यता निस्सन्देह समाप्त होनी चाहिए। लेकिन यदि इस विषयमें उनपर अस्पृश्यताके लांछनके कारण प्रतिबन्ध न हो बल्कि नियम ही यह हो, कि गर्भ-गृहके कुछ भागों तक केवल ब्राह्मण ही जायें, तो इस आन्दोलनके अन्तर्गत मुझे उसके खिलाफ कुछ नहीं कहना है। धार्मिक अनुष्ठानोंमें ब्राह्मणोंके एकान्तिक अधिकारोंका जो सवाल है, उसका आधार भिन्न है और यदि वह एकान्तिकता समाप्त होनी है तो उस प्रश्नपर अलगसे विचार करना होगा। कुछ धार्मिक कार्योंको करनेका अधिकार एक विशेष जातिके लिए सुरक्षित रखनेके चलनकी निन्दा करनेके लिए मैं इस समय, जबकि इस सवाल पर कुछ सोचा ही नहीं है, तैयार नहीं हूँ। यह अधिकारकी नहीं, बल्कि कर्त्तव्यकी बात है, जो आवश्यक योग्यताएँ रखनेवाले विशेषज्ञोंके एक दल द्वारा किया जाना है।

श्री वी० वी० श्रीनिवास अय्यंगारके इस कथनके सिलसिलेमें कि मन्दिर-प्रवेश पर राजनीतिक मेल-मिलापके एक उदार प्रदर्शनके रूपमें जोर दिया जा रहा है, गांधीजी ने कहा :

श्री वी० वी० श्रीनिवास अय्यंगार जब मद्रास उच्च न्यायालयके न्यायाधीश नहीं बने थे, तभी मुझे उनका परिचय प्राप्त करनेका सौभाग्य मिला था। कल्पनाकी कैसी भी खींचातानीसे मन्दिर-प्रवेश राजनीतिक प्रश्न कैसे माना जा सकता है, यह मेरे लिए हैरानीकी बात है। इस चीजको मैं समझ ही नहीं पाता हूँ।

अन्तमें गांधीजी ने कहा :

अन्तमें हिन्दू धर्म बाहरी हस्तक्षेपके बिना अपनेको इस युगों पुराने अभिशापसे मुक्त कर सके, तो यह बात हिन्दू धर्मके लिए अधिक कल्याणकारी होगी। तब गैर-हिन्दू तुरन्त यह सोचने लगेंगे कि हिन्दू धर्ममें कोई चीज बहुत ही जीवन्त है। मैं ऐसा महसूस करता हूँ कि अस्पृश्यता-निवारण हिन्दू धर्ममें इतना जबरदस्त सुधार है कि इसका प्रभाव सारी दुनियापर पड़ेगा। यदि इस समस्यासे निपटनेकी मेरी पद्धति असफल सिद्ध होती है, तो वह मेरे अस्तित्वका पूर्ण खण्डन होगा।

बातचीतके अन्तमें मैंने देखा कि गांधीजी थक गये हैं। मैंने जब यह सन्देह प्रकट किया कि क्या एक और उपवास वे सफलतापूर्वक कर सकेंगे, तो गांधीजी ने कहा कि वे आशा तो ऐसी ही करते हैं।

मद्रास कौंसिलने यदि प्रस्तावित विधेयक अस्वीकार कर दिया तो वे क्या करेंगे, इस बातके उत्तरमें महात्माजी ने कहा :

इस तरहकी असफलताकी मुझे आशंका नहीं है। जो सदन डॉ० सुब्बारायनके समाधानको स्वीकार कर चुका है, वह वर्तमान अधिनियममें संशोधनके विधेयकको, यदि वह पेश किया गया तो, अस्वीकार नहीं करेगा। अपने दिन पूरे होनेसे पहले मरनेमें मैं विश्वास नहीं करता।

डॉ० सुब्बारायनके प्रस्तावको पास करनेकी मद्रास कौंसिलकी कार्रवाईसे गांधीजी खुश हैं और अब वे इस बातकी राह देख रहे हैं कि उसे कार्यान्वित करनेके लिए क्या कदम उठाये जाते हैं।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १४-११-१९३२

६४३. पत्र : चम्पाबहन र० मेहताको[1]

[१३ नवम्बर, १९३२ के पूर्व][2]

यदि तू यह मानती है कि ट्रस्टमें रहनेसे तू स्वतन्त्र हो जाती है तो यह तेरी भूल है। ट्रस्टका मतलब जिम्मेदारी है और कोई अपनी मिल्कियतका ट्रस्टी बने, यह मुझे अच्छा लगेगा। जो अपनी मिल्कियतका ट्रस्टी बन गया उसकी मालिकी खत्म हो जाती है। फिर तो उसे एक रक्षककी तरह मिल्कियतमें से जो कमीशन मिले, उसीमें अपना खर्च चलाना रह जाता है। यही ट्रस्टका मतलब है। जो ट्रस्टी

१. साधन-सूत्रमें यह नहीं बताया गया है कि यह पत्र किसको लिखा गया था। लेकिन पत्रमें चोरीके उल्लेखसे ज्ञात होता है कि यह चम्पाबहन मेहताको, जिनके घरमें चोरी हुई थी, लिखा गया था। देखिए "पत्र : रतिलाल मेहताको", १३-११-१९३२।

२. साधन-सूत्रमें इसे १४ नवम्बरके विवरणके अन्तर्गत रखा गया है, लेकिन "पत्र : नारणदास गांधीको", १३/१४-११-१९३२ के पूर्व लिखे पत्रमें इसके उल्लेखसे प्रकट होता है कि यह उससे पहले ही लिखा गया था

रक्षक बनकर भक्षक हो जाता है, उसकी बात मैं यहाँ नहीं कह रहा हूँ। यहाँ तो यही बता रहा हूँ कि ट्रस्टीका धर्म क्या है। तू लिखती है कि तू अपने पैरोंपर खड़े होनेकी शक्ति माँग रही है। इसका अर्थ तू समझती है? अपने पैरोंपर खड़े होनेका मतलब है, न बापकी कमाई खाना, न श्वसुरकी और न पतिकी, बल्कि अपने बल-बूते जो टुकड़ा मिल जाये, उसीको खाकर रह जाना। इस तरह रहनेकी अपनी शक्तिका परिचय तूने कभी दिया नहीं। तुझमें ऐसी इच्छा है, यह भी मैंने कभी नहीं देखा।

जिनकी सम्पत्तिकी चोरी हुई है, उनको मैं बधाई देता रहा हूँ। वैसा ही इस चोरीके बारेमें भी है। हमें अपने पास एक कौड़ी भी रखनेका अधिकार नहीं है। जो-कुछ रखते हैं, वह चोरीका माल है। चूँकि दुनिया ही इस तरहकी चोर है, इसलिए इसे चोरी नहीं कहा जाता। लेकिन इसीसे हमें भ्रममें नहीं पड़ जाना चाहिए। यदि अपने पास चोरीका माल पड़ा हो और उसे दूसरा चोर लूटकर ले जाये, इसमें आश्चर्यकी क्या बात है? इससे यह शिक्षा लेनी चाहिए कि अपने पास इतना धन रखना ही नहीं चाहिए कि उसे चोर लूटने आये और जो थोड़ा-बहुत रखा भी हो तो जबतक दूसरा उसे उठाकर न ले जाये तभीतक उसकी मालिकी भोगकर सन्तोष करना चाहिए। यदि तू इस चोरीसे इतनी सीख ले ले तो माना जायेगा कि तूने कुछ खोया नहीं, बल्कि तुझमें ज्ञान आया, और इस तरह कुछ पाया ही।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २४३-४

६४४. तार: लॉर्ड सैंकीको

१३ नवम्बर, १९३२

लॉर्ड चांसलर
लन्दन

'न्यूज-लेटर' के[१] जरिये आपने मुझसे जो अपील की है उसका तारसे प्राप्त सार पढ़कर मुझे दुःख हुआ। क्या कैदी अपने जेलरोंके प्रति उदारता प्रदर्शित कर सकता है? मन्त्रियों और वाइसरायका मेरे कार्यों या

१. **न्यूज लेटर**में प्रकाशित "एक भारतीय मित्रको पत्र" में लॉर्ड सैंकीने कहा था:

"मेरा ऐसा विश्वास है कि यदि गांधी सविनय अवज्ञाके हथियारको छोड़ दें और ब्रिटिश सरकारके साथ सहयोग करें तो पूरी परिस्थिति बिलकुल बदल जायेगी।...

"भारतीयोंमें मतैक्य स्थापित करनेके संयुक्त प्रयत्नसे समस्या सुलझ जायेगी। शान्ति स्थापित करनेके ध्येयमें सहायता करनेके लिए उनका राजी न होना युद्धका वैसा ही हथियार है जैसे कि टैंक और हवाई जहाज। यदि लोग संघ बनानेको तैयार न हों तो कोई भी संघ सफल नहीं हो सकता। पिछले कुछ सालोंमें, जब हम सलाह-मशविरे और सहयोग द्वारा एक सर्वसम्मत समाधानपर पहुँचनेकी भरसक कोशिश कर

रुखकी आलोचना करना और चाहे अनजाने ही उन्हें गलत ढंगसे पेश करना और मुझे प्रत्याख्यानका अवसर न देना, शायद ही उचित कहा जा सके। याद रखिए कि मैं यहाँ शान्ति को बढ़ावा देनेका विचार करके लौटा था। लन्दनमें और लौटते समय रास्तेमें जहाजपर मैंने जो भाषण दिये, निजी वार्त्ताएँ कीं और वहाँसे जो पत्र लिखे, उनको देखनेसे यह बात साफ हो जायेगी। वस्तुतः उसके लिए मैंने भ्रमणकी एक योजना तक बनाई थी। वाइसरायसे मैंने मुलाकात करनी चाही, जिसका अत्यन्त अविनम्र उत्तर मिला। मुलाकातकी प्रार्थनाको स्वीकार करनेके लिए ऐसी शर्तें रखी गईं जिन्हें पूरा करना असम्भव था।[1] उस उत्तरसे और अवसर आते ही लोगोंको गिरफ्तार करनेकी तैयारियोंसे जो शायद ही किसीसे छिपी रही हों, मेरे आगे कांग्रेसके लिए सविनय अवज्ञाका एक प्रारम्भिक कार्यक्रम तैयार करनेके सिवा और कोई चारा नहीं रह गया। घटनाक्रम यह दिखाता है कि जब मैं लन्दनमें था तभी उस सारी योजनाको, जो बादमें सामने आई, कार्यान्वित करनेकी तैयारियाँ पूरी कर ली गई थीं, जिनमें अध्यादेशों के मसौदेतक शामिल थे। इससे अनिवार्य निष्कर्ष यही निकलता है कि भारत सरकार हर हालतमें कांग्रेसको कार्रवाईके लिए उत्तेजित करके संकट पैदा करना चाहती थी। किसी भी निष्पक्ष न्यायाधिकरणके सामने मैं यह सिद्ध कर सकता हूँ कि भारत सरकारने मेरी गिरफ्तारीसे पहले इर्विन-गांधी समझौतेकी कई शर्तोंको जान-बूझकर तोड़ा था और मेरी गिरफ्तारीके बाद तो उन्हें बिलकुल ही तोड़ दिया था। उनमें से कुछका सम्बन्ध उच्चतम सार्वजनिक हितोंसे था, और उन्हें किसी भी हालतमें नहीं तोड़ना चाहिए था। और अब तो देशमें वस्तुतः मार्शल लॉ लागू है। फिर भी लोगोंका आत्मबल चाहे दब गया हो, पर टूटा नहीं है। असन्तोष और गहरा हो गया है। गमनागमन और समाचार-पत्रोंकी स्वतन्त्रता लगभग खत्म कर दी गई है। किसी भी व्यक्तिकी स्वतन्त्रता या सम्पत्ति सुरक्षित नहीं है। कैदियोंके रिश्तेदारोंसे या उनकी निजी चीजें बेचकर भारी जुर्माने वसूल किये जा रहे हैं। कुछ लोगोंके अपराधके लिए गाँवों और पूरी-की-पूरी आबादियोंपर दण्डात्मक कर थोपे गये हैं, और हजारों लोगोंको जेलोंमें बन्द कर उनके साथ जरायमपेशा लोगोंका-सा बरताव किया जा रहा

रहे थे, औरोंने दो बार अपने उद्देश्योंको सविनय अवज्ञा-आन्दोलनसे पूरा करनेकी कोशिश की थी। जबतक आपका काम इस तरहका है, मेरा काम और भी कठिन हो जाता है।

"गांधीमें परिस्थितिको बदलनेकी शक्ति है और वे फिरसे शान्ति स्थापित करनेके लिए बहुत-कुछ कर सकते हैं। सविनय अवज्ञाका प्रहार व्यक्तियोंपर नहीं, बल्कि संगठित सरकारों और सभ्य समाजपर होता है। मेरा यह विश्वास है कि यदि गांधी सदाशयताका प्रदर्शन करें और सविनय अवज्ञाके हथियारको छोड़ दें और अपने अनुगामियों-सहित ब्रिटिश सरकारके साथ सहयोग करें, तो पूरी परिस्थिति बिलकुल बदल जायेगी।" **स्टेट्समैन**, १२-११-१९३२।

१. इस विषयपर वाइसरायके साथ गांधीजी के पत्र-व्यवहारके लिए देखिए खण्ड ४८।

है। इस सबके बावजूद आप मुझसे सविनय अवज्ञा छोड़नेके लिए कह सके हैं, यह मेरे लिए हैरानीकी बात है। लगता है, आप यह भी नहीं समझ रहे हैं कि यह आन्दोलन मेरे या किसी एक व्यक्तिके हाथमें नहीं है, 'मुझे जेलमें या बाहरके अपने साथियोंसे मिलनेकी इजाजत नहीं है, और सर्वश्री सप्रू और जयकरको तथा हालमें ही मौलाना शौकतअलीको भी मुझसे मुलाकातकी और सविनय अवज्ञा स्थगित करनेकी सम्भावनापर विचार-विमर्श करनेकी अनुमति नहीं दी गई। बन्दीसे उदारता प्रदर्शित करनेके लिए कहना उसका मजाक उड़ाना है। मैं चाहूँगा कि आप यह भी समझ लें कि जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, किन्हीं खास परिस्थितियोंमें सविनय अवज्ञा करना मैं अपना धर्म मानता हूँ। किसी भी अवस्थामें पाशविक बलके प्रयोगोंमें मेरा विश्वास नहीं है। इसलिए सविनय अवज्ञाका मेरे लिए वही महत्त्व है जो व्यक्तियों या समूहोंके लिए आम तौरपर सशस्त्र विद्रोहका होता है। जिस वातावरणका मैंने वर्णन किया है, उसमें उदार संविधानकी आशा करना व्यर्थ है। आपके इस कथनका मैं पूर्णतया समर्थन करता हूँ कि लोगोंको अलग करनेकी अपेक्षा उन्हें एक साथ लाना कहीं अच्छा है। परन्तु आप अपने विचारके इस तर्कसम्मत परिणामको स्वीकार नहीं करते कि विजेताओं और विजितोंका अस्वाभाविक सम्बन्ध उन दोनोंको अवश्य अलग रखेगा, जैसे कि कैदी और उनके पहरेदार शारीरिक रूपसे एक-दूसरेके निकट रहते हुए भी वास्तवमें अलग ही रहते हैं। सविनय अवज्ञा और उससे मिलते-जुलते तरीकोंसे मैं उस अस्वाभाविक सम्बन्धको नष्ट कर दोनोंको एक जगह लानेकी भरसक कोशिश कर रहा हूँ। मैं आपको यह बताना चाहूँगा कि अपनी गिरफ्तारीके बाद भी मेरे लिए सदाशयताका जो एक सर्वोच्च प्रदर्शन सम्भव था, और जो शायद बहुत हदतक आपकी शैलीका था, वह मैंने अपनी नजरबन्दीके कुछ दिनोंके अन्दर ही किया था। मैंने वाइसरायको एक व्यक्तिगत पत्र[१] लिखकर उनसे यह अपील की थी कि वे मुझे मुलाकातका और सारे मामलेपर इस तरह विचार-विमर्श करनेका मौका दें जिस तरह एक आदमी दूसरेके साथ करता है। जो कदम मैंने उठाया था उसकी मैंने सर सैम्युअल होरको भी पत्र लिखकर सूचना दे दी थी।[२] यथासम्भव अधिकसे-अधिक मैत्रीपूर्ण ढंगसे लिखे गये मेरे पत्रकी वाइसरायने प्राप्ति-सूचना तक नहीं दी। इसलिए अब मैं केवल एक ही सम्मानजनक प्रयास कर सकता हूँ, और यही मेरे लिए सम्भव है कि यातनाके इस प्यालेकी आखिरी बूँदतक

१. दिनांक १५ जनवरीका यह पत्र मिल नहीं सका।

२. देखिए खण्ड ४९, पृष्ठ १०-११।

पी लूँ। औचित्यकी दृष्टिसे मेरा सुझाव है कि यह उत्तर प्रकाशित कर दिया जाये।[1]

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९४२) से। बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (४), भाग २, पृ० १३ से भी

६४५. पत्र : बम्बईके गवर्नरके निजी सचिवको

१३ नवम्बर, १९३२

परमश्रेष्ठ गवर्नरके निजी सचिव
बम्बई

प्रिय महोदय,

लॉर्ड सैंकीकी मेरे नाम जो सार्वजनिक अपील है, वह मैंने देखी है। मैं समझता हूँ कि मुझे उसका तुरन्त जवाब देना चाहिए। इसलिए मैं वह परमश्रेष्ठकी स्वीकृति और समुद्री तारसे भेजे जानेके लिए इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ। यह परमश्रेष्ठ गवर्नर महोदयके अधिकार-क्षेत्रमें आता है या परमश्रेष्ठ वाइसरायके, मुझे मालूम नहीं है। यदि यह परमश्रेष्ठ वाइसरायके अधिकार-क्षेत्रमें आता हो तो मेरी प्रार्थना है कि लॉर्ड सैंकीको मेरे जवाबका मजमून तारसे उन्हें भेज दिया जाये ताकि वह समुद्री तारसे लॉर्ड चांसलरको भेजा जा सके।

भवदीय,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८६८) से। बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (४), भाग २, पृ० ५ से भी

१. वाइसरायकी सिफारिशपर भारत-मन्त्री इसपर सहमत हो गये थे कि गांधीजी का सन्देश प्रकाशित नहीं होना चाहिए और उसका कोई उत्तर भी नहीं भेजना चाहिए। लॉर्ड सैंकीको तदनुरूप सूचना दे दी गई थी। — भारत सरकार, होम डिपार्टमेंट, पॉलिटिकल, फाइल नं० ३१/९५/३२।

६४६. सन्देश : वेरियर एलविनको

१३ नवम्बर, १९३२

स्वच्छतम वायु, स्वच्छतम जल, सादेसे-सादा आहार और स्वच्छतम विचार, जिसका मतलब वास्तवमें ईश्वरका सामीप्य है — यही चार नियम हैं, और इनमें से पहले तीन चौथेसे ही निकलते हैं। इसीलिए तो आपकी भाषा अंग्रेजीमें 'सादा जीवन और उच्च विचार' वाली कहावत है। इसे मैं सरल करके इस रूपमें रखना चाहूँगा — स्वच्छ विचार और स्वच्छ जीवन। अस्वच्छ जीवनका जो अर्थ मैं लगाता हूँ, उस अर्थमें फोड़े-फुन्सियाँ ऐसे ही जीवनके लक्षण हैं। तो आरम्भके तौरपर भाइयोंके लिए[1] यही मेरा सन्देश मानिए।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २४०

६४७. पत्र : एम० एम० अनन्तरावको

१३ नवम्बर, १९३२

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। आपकी दलील इस प्रकार लगती है: 'भगवद्गीता' ने उपासकको शास्त्र-विधिका सहारा लेनेका निर्देश दिया है और शास्त्र क्योंकि अस्पृश्यताका समर्थन करते हैं, इसलिए यह कहना चाहिए कि 'भगवद्गीता' उसका समर्थन करती है। तब प्रश्न उठता है कि शास्त्र क्या है? इस प्रश्नका मैं यह उत्तर दे चुका हूँ कि जो 'गीता' के मुख्य विषयके प्रतिकूल है, उसे शास्त्र न मानकर अस्वीकार कर देना चाहिए। मुख्य विषय क्योंकि एकत्व और इसलिए प्राणि-मात्रकी समानता है, अतः 'गीता' में अस्पृश्यताका कोई समर्थन नहीं है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५५८)से; सौजन्य : मैसूर सरकार

१. ईसाई सेवा संघके सदस्योंके लिए।

६४८. पत्र : आश्रमके बालक-बालिकाओंको

१३ नवम्बर, १९३२

बालको और बालिकाओ,

नव-निर्वाचितोंकी नामावलि देखी। देखें, अब तुम नये सालमें कौन-सा नया काम करते हो। एक-दूसरेपर अविश्वास मत करना। किसीसे उद्दण्डतापूर्ण व्यवहार मत करना। एक-दूसरेके प्रति भी विनम्रता आवश्यक है। अपने समयके हर क्षणका सदुपयोग करना। खेलके वक्त खेलना भी समयका सदुपयोग है। किन्तु खेलके समय पढ़ना और पढ़ाईके समय खेलना समयका दुरुपयोग करना है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

६४९. पत्र : जमनाबहन गांधीको

१३ नवम्बर, १९३२

चि० जमना,

स्टोवके बारेमें मैं अपना कर्त्तव्य कर चुका हूँ, अतः निश्चिन्त हूँ।[1] स्वतन्त्र रूपसे और साहसपूर्वक, तुम्हें जो उचित लगे, वही करना।

मेरी कुहनीके बारेमें चिन्ता करनेका कोई कारण ही नहीं है।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८६२) से; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. एक दुर्घटना हो जानेसे गांधीजी ने स्टोवका उपयोग न करनेकी सलाह दी थी। देखिए "पत्र : जयशंकर पी० त्रिवेदीको", ४-१०-१९३२।

६५०. पत्र : जमनादास गांधीको

१३ नवम्बर, १९३२

चि० जमनादास,

तू तो मुझे ही दोष देता जान पड़ता है। महीनों बाद एक पत्र लिखा और उसका उत्तर पानेको अधीर हो उठा। बात यह है कि मैंने तो लौटती डाकसे ही जवाब दे दिया था।

तेरा दूसरा पत्र मिला। तुझे पैसोंकी कमी तो रहेगी ही, किन्तु संकटके समय ईश्वर भेज ही देगा।

यदि तू किसी तरह अपना स्वास्थ्य सुधार ले तो उसे मैं बड़ी भारी जीत मानूंगा। अनावश्यक आत्मविश्वास मत करना। तुझसे यथासम्भव जो हो सके, उसे करके तू आनन्दसे नाच क्यों नहीं सकता? ऐसा क्यों मानता है कि तुझमें तेरी इच्छानुसार ही सामर्थ्य होनी चाहिए।

हरिजनोंके बारेमें तेरा अनुभव रोचक है और उतना ही दुःखद भी है। किन्तु ऐसा तो करीब-करीब सब जगह है। इस सेवा-कार्यके सम्बन्धमें तू जब चाहे मुझसे मिलने आ सकता है। अब मुझे लिखना शुरू कर दिया है तो भविष्यमें भी लिखता रहना। यह देखना तो मेरा काम है कि तेरा लिखा हुआ मूर्खतापूर्ण है या बुद्धिमत्तापूर्ण।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४६७) से; सौजन्य : नारणदास गांधी

६५१. पत्र : गुलाबको

१३ नवम्बर, १९३२

चि० गुलाब,

तुझे अपनी गुजराती सुधारनी चाहिए। उदाहरणके लिए, [जहाँ तू ने 'अन्त्यज' लिखा है वहाँ] 'अन्त्यज' नहीं, 'अत्यन्त' होना चाहिए। 'अत्यन्त' का अर्थ है-- 'बहुत'।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७३२) से

६५२. पत्र : रमाबहन जोशीको

१३ नवम्बर, १९३२

चि० रमा,

जोशीको मैं गंगाबहनसे अधिक भाग्यशाली मानता हूँ। उसकी चिन्ता हमें नहीं होनी चाहिए। चिन्ता करनेवाला तो परमेश्वर है।

काकीका देहान्त होनेसे यदि कुछ दिनोंके लिए तेरा वहाँ हो आना जरूरी हो तो हो आ।

धीरूको जो ताना दिया गया, उसके सम्बन्धमें मुझे इतना ही कहना है कि कोई ऐसा कहे तब भी तुझे न तो रोष करना चाहिए और न उत्तेजित होना चाहिए। जिस प्रकार यदि कोई हमें अपने ही घरसे निकल जानेको कहता है तो उसका कोई अर्थ नहीं होता, उसी प्रकार यदि कोई तुझ-जैसेको, जिसे वह अच्छी तरह जान चुका है, आश्रमसे जानेको कहे तो उसका भी कोई अर्थ नहीं होता। और ऐसी बात जब किसी बालकसे कही जाये तब तो पूछना ही क्या? इसके बावजूद इसमें तो कोई शक ही नहीं है कि किसीको ऐसी धमकी नहीं देनी चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३३९) से।

६५३. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१३ नवम्बर, १९३२

चि० प्रेमा,

आज भी छोटा-सा ही पत्र लिखूँगा। अब हरिजन भाई-बहन मेरा बहुत समय लेते हैं।

कमलाबाई[1], जो नई आई है, शिकायत करती है कि उसे न अपनी लड़कीके लिए समय मिलता है और न पढ़नेके लिए। देख लेना।

तू गोंद हजम कर गई, यह बधाई देनेकी बात है। कितना खाया? साथमें क्या मिलाया था?

तेरे कामकी कठिनाई मैं अच्छी तरह समझता हूँ। भगवान् तुझे निभा लेंगे और आवश्यक शक्ति भी देंगे।

१. महाराष्ट्रके एक खादी-कार्यकर्त्ताकी पत्नी।

बीमारीका कारण ढूँढ़ लिया है तो अब इलाज भी कर ले।

मेरी भावनाके बारेमें तू पूछती है, इससे कुछ लाभ नहीं होगा; क्योंकि कोई अपनी भावनाका विश्लेषण पूरी तरह नहीं कर सकता।

जब तत्त्व व्यवहारमें उतरता न दिखे तब जान ले कि हमने तत्त्वको अच्छी तरह नहीं पहचाना है। शुद्ध तत्त्व हमारे व्यवहारमें उतरना ही चाहिए। पूरी तरह तो कोई तत्त्व व्यवहारमें नहीं उतारा जा सकता। परन्तु जो व्यवहार तत्त्वके निकट नहीं आता, वह अशुद्ध और त्याज्य है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३१०)से। सी० डब्ल्यू० ६७४९से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

६५४. पत्र : गजानन वी० खरेको

१३ नवम्बर, १९३२

चि० गजानन,

चित्रोंके सम्बन्धमें तूने जो-कुछ लिखा, उसे पढ़कर मुझे प्रसन्नता हुई। बुखार आता है तो उसे जल्दीसे-जल्दी दूर करना चाहिए। मेरी सलाह है कि तुझे बीजापुर या राजकोट जाना चाहिए। किन्तु पहले लिखकर पूछ देखना चाहिए। यदि यह अनुकूल न जान पड़े तो जहाँ ठीक लगे वहाँ जाकर जल्दीसे-जल्दी ठीक हो जाना चाहिए। स्थान-परिवर्तनका विचार मुझे उचित जान पड़ता है। तू वर्धा भी जा सकता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ३१०) से; सौजन्य : लक्ष्मीबहन ना० खरे

६५५. पत्र: नारायण मोरेश्वर खरेको

१३ नवम्बर, १९३०

चि० पण्डितजी,

भंगी, चमार सफाईसे नहीं रहते, क्योंकि उनकी ओर हमने कभी देखातक नहीं। अब उनसे यह नहीं कहा जा सकता: "सफाईसे रहोगे तो हम तुम्हें अपना लेंगे।" लेकिन ऐसा जरूर कह सकते हैं: "आओ, हम तुम्हें गले लगायेंगे और सफाईसे रहने आदिके नियम सिखायेंगे।" मेरे इस कथनमें तनिक भी अतिशयोक्ति नहीं है। मैं जब हरिजनोंके प्रति हिन्दुओंकी निर्दयता और उनकी भलाई के प्रति उदासीनताके बारेमें सोचता हूँ तो मेरे मनमें प्रश्न उठता है कि हिन्दू धर्म किसके पुण्यसे टिका हुआ है। यदि हम उस पापको नहीं धो डालते, तो हिन्दू धर्मका विनाश मुझे प्रत्यक्ष दिखाई दे रहा है।

बापू

[पुनश्च :]

'भजनावली' पड़ी है। किन्तु समय कहाँ है? देखूँगा।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २१९) से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे

६५६. पत्र: रामचन्द्र ना० खरेको

१३ नवम्बर, १९३२

चि० रामचन्द्र,

तेरा पत्र मिला। तू मामाके यहाँ रह आया, यह अच्छा किया। और कुछ दिन रहा होता तो शायद ज्यादा लाभ होता। अब जल्दीसे ताकत आ जाये तो अच्छा हो।

प्रेमाबहनसे माफी माँग ली? मिल गई?

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ३००) से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे

६५७. पत्र : रतिलाल पी० मेहताको

१३ नवम्बर, १९३२

चि० रतिलाल,

तेरा पत्र देखकर प्रसन्नता हुई। मैंने तो तुझसे कहा ही था कि ईश्वर तेरी रक्षा करता है। चोरी हो जानेकी चिन्ता मत करना। वे चीजें फिरसे कदापि इकट्ठी मत करना। जब हमारे पास अधिक चीजें होती हैं तब कभी-कभी चोरी भी हो जाती हैं।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७६४)से। सी० डब्ल्यू० १०४८ से भी; सौजन्य : चम्पाबहन मेहता

६५८. पत्र : नर्मदाबहन राणाको

१३ नवम्बर, १९३२

चि० नर्मदा,

इस बार तेरी लिखावट ज्यादा अच्छी है। तुझे अक्षरोंके ऊपरकी ओर कुछ जगह छोड़कर लिखना चाहिए। तेरी बहन कहाँसे गई? उसकी कितनी उम्र है?

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २७६७) से; सौजन्य : रामनारायण एन० पाठक

६५९. पत्र : सुलोचनाको

१३ नवम्बर, १९३२

चि० सुलोचना,

तूने अपने कामका अच्छा विवरण दिया है और तेरी लिखावट भी अच्छी है। यह नहीं लिखा कि तकलीपर कितना सूत काता।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७४५) से।

६६०. एक पत्र[1]

१३ नवम्बर, १९३२

तू मेरे लिए अरुण-जैसा ही है और तुझे आश्रममें लिया जा सकता हो, तो ले लूँ। मगर अभी तो कलकत्तेमें अपंगोंके लिए जो आश्रम है, उसमें जाना चाहे तो उसकी व्यवस्था कर दूँ।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २४१

६६१. पत्र : तुलसी मेहरको

१३ नवम्बर, १९३२

चि० तुलसी महेर,

तुमारा खत आनेसे आनंद हुआ। यहांके सब हाल तो मीलते होंगे। तुमारी प्रवृत्तिका कुछ बयान देना।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६५४१) से।

६६२. पत्र : केशवराम टंडनको

१३ नवम्बर, १९३२

भाई केशवराम टंडन,

आपका पत्र मिला। अस्पृश्यता-निवारणमें सहभोज और बेटी-व्यवहार आवश्यक नहीं है।

आपका,

मोहनदास गांधी

श्री केशवराम टंडन
जमुना कोल ट्रेडिंग कं०
फरुखाबाद, यू० पी०

पत्रकी फोटो-नकल(जी० एन० ५०५७)से।

१. यह पत्र एक मुसलमान युवकको लिखा गया था; साधन-सूत्रमें उसका नाम नहीं दिया गया है।

६६३. पत्र : नारणदास गांधीको

[१३]/१४, [नवम्बर], १९३२ के पूर्व[1]

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र नियमानुसार मिल गया। दूसरी छोटी डाक भी मिल गई है। साथमें चम्पाको पत्र भेज रहा हूँ। इसे पढ़कर उसको दे देना, क्योंकि इसमें चोरीके बारेमें भी मेरे विचार हैं। तो इस तरह इस विषयमें मुझे दोबारा लिखनेकी जरूरत नहीं रह जायेगी। यह सीख-सलाह एक बार फिर औरोंको भी सुना देना, क्योंकि जब-जब चोरी हुई है, ऐसी बातें तो मैंने कही ही हैं। चम्पाको उसके कर्त्तव्यका बोध करानेके लिए जो-कुछ कहा है, उसपर भी नजर डाल लो, यह आवश्यक है।

इस स्थितिमें मैं तुम्हारा नाम ट्रस्टियोंमें नहीं दूँगा। तुम्हारी स्थिति किसी भी तरह नाजुक हो, ऐसा कुछ मैं जान-बूझकर तो नहीं ही करूँगा। हमें तो बस जब-जहाँ जो कर्त्तव्य सामने आ जाये, उसका पालन करना है। शेष कुछ है ही नहीं। सिर्फ अधिकारके लिए अधिकार पानेकी वृत्तिको तो हमें सर्वथा त्याज्य ही समझना है।

कोई आता-जाता हो और तुम्हें आसानीसे याद रहे तथा मिले तो सिर्फ नमूनेके तौरपर वहाँके कुछ संतरे और मोसम्बियाँ भेज देना। फल थोड़े ही सही किन्तु निकलते तो हैं, इससे मुझे बहुत खुशी होती है। पेड़ों और खेतीकी दूसरी मदोंपर हुआ खर्च मुझे खटकता नहीं। शायद कुछ अनुचित खर्च हुआ हो, लेकिन मेरे मनपर यह छाप पड़ी है कि कुल मिलाकर तो ठीक ही हुआ है।

नवीनके बारेमें तो प्रभुदाससे पूछ-ताछ कर ही ली होगी।

दामोदर सोनेके लिए बँगलेपर नहीं गया, यह तो तुम्हें उसे बता देना चाहिए था।

अगर लगे कि छारोंपर[2] कोई असर डाला ही नहीं जा सकता तो मावलंकरसे मिलना और इस सम्बन्धमें कुछ किया जा सकता हो तो करना, अन्यथा सहन तो करना ही है।

शेलत के बच्चे अच्छे हो गये होंगे। शेलत के पास 'फ्लावर्स ऑफ सेंट फ्रांसिस' नामक पुस्तक होनी चाहिए। यह जोशीके पत्रसे मालूम हुआ है। अगर हो तो लेकर इधर आनेवाले किसी आदमीके साथ भेज देना। इसकी कीमत तो इस बातमें है कि यह अत्यन्त प्रेमपूर्वक दी गई भेंट है।

बलभद्रके बारेमें तुम्हारी बात समझ गया हूँ।

१. स्पष्टतः यह पत्र १३ नवम्बरसे पहले शुरू किया गया था। १३ को लिखना जारी रहा और १४ नवम्बर को पूरा हुआ।

२. किसी समय जरायमपेशा मानी जानेवाली मध्य गुजरातकी एक जन-जाति।

रामजी का पोस्टकार्ड आया है, जिसमें उसने लिखा है कि मेरा अस्पृश्यता-विषयक वक्तव्य पढ़कर अब वह यहाँ आना चाहता है। साथ ही उसको अपने मनका गुबार भी तो निकालना होगा। लेकिन, मुझे लगता है कि उसको एक बार यहाँ आने देना लाभदायक रहेगा। और उसे तो जब चाहे आनेकी इजाजत मिल ही जायेगी।

बारीक सूत बुनने लायक राछ-फन्नी हमें चाहिए, इस सम्बन्धमें अभी याद आता है कि अपने यहाँ बहुत बारीक सूतसे कपड़ा बुननेके लिए राछ-फन्नी थीं तो। वे हमें आदमजी मियाँखाँके यहाँसे मिली थीं। मुझे यह भी याद है कि मगनलालने इन्हींमें से तोड़-फोड़कर मोटा सूत बुननेके लिए कुछ फन्नियाँ तैयार की थीं। लेकिन, फन्नियाँ तो बहुत-सी थीं। वे शायद कहीं पुराने सामानमें पड़ी हुई होंगी। जरा खोज कराना और न मिलें तो मियाँखाँके यहाँ पता करना। हो सकता है, वहाँ अब भी दूसरी फन्नियाँ मिल जायें; और न भी मिलें तो वे लोग नई तो जरूर तैयार करवा देंगे। मियाँखाँ चार भाई थे — आदमजी, गुलाम हुसेन, चाँदाभाई और चौथेका नाम मुझे मालूम नहीं है। उनमें से आदमजी तो गुजर गये, गुलाम हुसेन शायद नेटालमें ही रहते हैं और चाँदाभाई आते-जाते रहते हैं। छगनलाल उन्हें व्यक्तिगत रूपसे जानता है। और अगर उनका पता तुममें से किसीको मालूम न हो तो छगन-लालको तो मालूम होना ही चाहिए। शायद कालूपुर, बोहरावाड़में उनका घर है और एलिस ब्रिजके पास उनका बँगला भी है।

बड़ी कुसुम तुम्हारे पड़ोसमें ही है। उसके बारेमें कोई समाचार मिल सके तो पता करना। तुममें से कोई उससे मिल सके तो मिलो और वह पुस्तक वगैरह माँगे तो पहुँचा दो।

तिलकम्के लिए भात और आलू जहरके समान हैं। और दोनों विशुद्ध स्टार्च हैं, सो उसमें स्फूर्ति आये कहाँसे? स्टार्चसे स्फूर्ति तो नहीं ही मिलती, उलटे पेटमें खटास पैदा होती है। उसे तो जितना पचा सके उतना दूध ही लेना चाहिए और उसके अलावा फल तथा सब्जियाँ। इतना पचे तो फिर ऊपरसे रोटी भी ली जा सकती है।

जेठालालके बारेमें तुम्हें जो ठीक लगे, करना। पुरुषोत्तमको कोष्ठबद्धता होते ही समझ जाना चाहिए कि गड़बड़ी शुरू हो गई। शहरके पानीका प्रयोग लगभग बेकार है। वहाँका पानी उबालकर पिये, यह ज्यादा अच्छा है। अँतड़ियोंके लिए नित्य प्राणायाम और पेड़ूपर हलकी मालिशकी जरूरत है।

अगर कुसुम खुद ही प्रसन्न मनसे आश्रममें रह सके और मैंने जो तीन महत्त्व-पूर्ण नियम बताये हैं, उनका पालन करे तो मैं तो बिलकुल निर्भय और निश्चिन्त हो जाऊँ। बादमें चाहे जो परिणाम आये।

रावजीभाईने संशोधित पत्र क्यों नहीं लिखा?

तो तुमने बिलकुल तर्कपूर्वक कसुम्बाको यह समझा ही दिया कि तुम लोगोंके साथ बैठकर खानेसे वह जातिभ्रष्ट तो हो ही गई। मनको बहलानेके बजाय अगर

आदमी इस तरह, जो बात दिनके उजालेके समान स्पष्ट है, वही करे तो दोहरा पुण्य कमाये और शान्तिका भी उपभोग करे।

बाबाको लेकर यह धमा-चौकड़ी तो आश्रममें ही मच सकती है। वेदका रहस्य न जानें, तब भी हम वेदज्ञ होनेका दावा तो कर ही सकते हैं। गनीमत है कि इस दुनियामें आदमी निन्द्य कार्योंकी अपेक्षा हास्यास्पद कार्य बहुत अधिक करता है। तुम्हें इस सबका पूरा ज्ञान है, अन्यथा तुम्हें पागलोंके अस्पतालमें भरती करानेकी नौबत न आ गई होती।

परशुरामका पत्र तो मैं अबतक नहीं पढ़ पाया हूँ। लेकिन, उसे पढ़े बिना ही, तुम्हारे पत्र और सलाहके अनुसार, उसको वे चीजें देनेकी स्वीकृति देता हूँ जो उसने माँगी हैं।

[पुनश्च :]

रविवार, दोपहर, १३ नवम्बर, १९३२

हाथको जितनी जरूरत है उतना आराम देता हूँ। मेरा वजन इस हफ्ते १०२ पौंडतक पहुँच गया है। उसी अनुपातमें शक्ति आ गई हो, ऐसा नहीं है।

आशा है, मेरे लेखोंसे कोई घबराया नहीं होगा। यह तो खुशी मनानेका प्रसंग है। बा के बारेमें राजाजी से पूछूँगा। उर्मिलादेवी तो वहाँ जायेंगी ही।

लीलाधरको लिखा पत्र पढ़ना।

[पुनश्च :]

मौनवार, प्रातःकाल [१४ नवम्बर, १९३२]

विनोबाका तकली-माहात्म्य सबके विचारने योग्य है। भाऊसे उन्हें तकली चलानेका तरीका सीख लेना चाहिए।

बापू

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो-९ : श्री नारणदास गांधीने, भाग-१, पृ० ५०१-४। सी० डब्ल्यू० ८२६८ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

६६४. वक्तव्य : अस्पृश्यतापर – ५

१४ नवम्बर, १९३२

अपने इस पाँचवें वक्तव्यमें मैं समाचार-पत्रोंके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करना चाहूँगा क्योंकि वे मेरे वक्तव्योंका और आम तौरपर इस आन्दोलनका प्रचार कर रहे हैं। पिछले सप्ताह श्रीयुत राजभोज और उनके मित्रोंने मुझसे मिलकर लगभग पूरे आन्दोलनपर विचार-विमर्श किया था।[1] उनसे जो-कुछ मैंने कहा, उसके एक अंशका सार मैं यहाँ देना चाहता हूँ।

उनका एक प्रश्न यह था कि इस आन्दोलनमें हरिजन किस तरह सहायता दे सकते हैं। वे इस दिशामें बहुत-कुछ कर सकते हैं। कुछ सवर्ण हिन्दू उनके साथ पूर्ण समानताके आधारपर न मिलनेका औचित्य सिद्ध करते हुए उनपर जो आरोप लगाते हैं, उनका वे पहलेसे ही खयाल करके निराकरण कर सकते हैं। मैं पहले ही जोरदार शब्दोंमें यह कह चुका हूँ कि हरिजनोंके विशाल समुदायकी निस्सन्देह जो शोचनीय दशा है, उसके लिए पूर्णतया सवर्ण हिन्दू ही दोषी हैं और अस्पृश्यताकी समाप्तिके बाद सुधार अपने-आप होगा। उसे समाप्तिकी पूर्व शर्त कदापि नहीं बनाना चाहिए। फिर भी, वर्तमान परिस्थितियोंमें भी जितना सम्भव है उतना आन्तरिक सुधार करना हरिजन कार्यकर्त्ताओंका स्पष्ट कर्त्तव्य है।

इसलिए हरिजन कार्यकर्त्ताओंको अपनी सारी शक्ति इन कामोंमें लगा देनी चाहिए :

(१) हरिजनोंमें सफाई और स्वास्थ्य-विज्ञानका प्रचार,

(२) पाखानोंकी सफाई और चमड़ा कमाने-जैसे गन्दे माने जानेवाले कामोंके करनेकी पद्धतिमें सुधार,

(३) मांस-मात्रका नहीं तो मुर्दा ढोरके मांस और गोमांस का त्याग,

(४) मादक पेयोंका त्याग,

(५) जहाँ दिवा-पाठशालाएँ हों वहाँ अपने बच्चोंको उनमें भेजने के लिए और जहाँ रात्रि-पाठशालाएँ खुल गई हों वहाँ स्वयं उनमें जानेके लिए बच्चोंके माता-पिताओंको राजी करना,

(६) उनमें आपसमें ही जो छुआछूत है, उसे समाप्त करना।

अब इन मदोंके बारेमें अपना आशय स्पष्ट करनेके लिए मैं इनकी थोड़ी चर्चा कर रहा हूँ। नित्य स्नान कमसे-कम हमारे यहाँकी जलवायुमें आवश्यक है, और साफ कपड़े तो हर जलवायुमें आवश्यक हैं। मुझे मालूम है कि हरिजन बस्तियोंमें

१. देखिए "भेंट: पी० एन० राजभोजको", ११-११-१९३२।

पानी आसानीसे नहीं मिलता। सार्वजनिक कुओं और तालाबोंपर जानेकी उन्हें आम तौरपर छूट नहीं होती और वे इतने गरीब हैं कि कपड़े नहीं बदल सकते। आम तौरपर लोग यह नहीं जानते कि एक लोटे पानीसे भी स्वच्छ स्नान किया जा सकता है। इसका तरीका है साफ अँगोछेको पूरी तरह भिगोकर सिर समेत सारे शरीरको उससे जोरसे रगड़ना और उसके बाद सूखे अँगोछेसे शरीरको पोंछ लेना। यदि स्नान रोज किया जाये तो गीले अँगोछेका सब पानी निचोड़कर उसीसे शरीर भी सुखाया जा सकता है। और इस जलवायुमें वही कपड़े, केवल लँगोटी पहनकर आसानीसे धोये जा सकते हैं और तुरन्त वहींके-वहीं सुखाये जा सकते हैं।

मैं जानता हूँ कि मैं जो-कुछ कह रहा हूँ, उसमें कुछ नया नहीं है। फिर भी ये प्रारम्भिक बातें मुझे सैकड़ों कार्यकर्त्ताओंको समझानी पड़ी हैं। स्नातकोंमें भी ऐसे लोग देखनेको मिले हैं जिन्हें पाखाना वगैरह साफ करनेके सुधरे तरीकोंसे सम्बन्धित सफाई-विज्ञानकी इन प्रारम्भिक बातोंकी जानकारी नहीं है। स्वार्थी और अज्ञानी सवर्ण लोग मनुष्यके मल-मूत्रको सभ्य ढंगसे हटाना लगभग असम्भव बना देते हैं। अस्पृश्यता के कारण पाखाने इतने गन्दे रहते हैं कि कुछ कहा नहीं जा सकता। वे अँधेरे होते हैं और उनमें हवाका आना-जाना मुश्किल होता है। वे इस ढंगसे बने होते हैं कि किसी तरह केवल उनके एक हिस्सेको ही, और सो भी बहुत ही गन्दे तरीकेसे, साफ किया जा सकता है। इन पाखानोंका उपयोग करना रोज-रोज नरकमें जानेके समान है और अगर यहाँकी जलवायु इस दृष्टिसे अच्छी न होती तो आजकी अपेक्षा कई हजार अधिक लोग अकाल ही काल-कवलित हो जाते। लोगोंमें अपनी विष्ठा आप न देखने और पाखानेके भीतरी हिस्सेको न दूसरोंको साफ करने देने और न खुद साफ करनेका एक अन्धविश्वास-सा है, जिससे हरिजनोंको यह अत्यन्त आवश्यक सामाजिक कार्य बहुत ही प्रतिकूल परिस्थितियोंमें करना पड़ता है। लेकिन, आजकी परिस्थितिमें भी वे इतना तो कर ही सकते हैं कि यह काम करके तुरन्त स्नान कर लें और सफाईके कामके लिए थोड़ी-सी घासके बजाय काफी मात्रामें सूखी मिट्टीका इस्तेमाल करें।

एक कुशल भंगी होनेके नाते, जैसा कि मेरा दावा है, मैं इस कामको करनेके, खासकर यदि ग्रामवासी और शहरके लोग सहायता करें तो अनेक बहुत ही सस्ते, कारगर और बिलकुल साफ तरीके बता सकता हूँ। लेकिन जल्दीमें तैयार किये इस सामान्य वक्तव्यमें मैं इस दिलचस्प विषयपर विचार नहीं कर सकता। जिज्ञासु लोग आम सफाईपर और विशेषकर गाँवकी सफाईपर मेरे लेख पढ़ सकते हैं। भंगियोंको सफाईका काम करते समय अपने धन्धेकी खास पोशाक पहननी चाहिए। हर काम करानेवाला या काम करानेवाले कुछ लोग मिलकर अपने भंगी या भंगियोंको इस तरहकी पोशाक दे सकते हैं।

साफ ढंगसे चमड़ा कमानेका काम तो इससे कहीं ज्यादा मुश्किल है। हमारे चमारोंको मुर्दा ढोरका चमड़ा उतारने या चमड़ा कमानेकी आधुनिक पद्धति मालूम नहीं है। 'चमड़ा कमाना' शब्द यहाँ मैंने व्यापक अर्थमें प्रयुक्त किया है। तथाकथित ऊँची जातियोंने अपने स्वधर्मियों और स्वदेशवासियोंके इस उपयोगी वर्गकी अक्षम्य

उपेक्षा की है, जिससे मुर्दा ढोरको उठाकर ले जानेसे लेकर खालके परिष्कारतक की सारी प्रक्रिया भोंडे ढंगसे होती है, और उसके फलस्वरूप देशकी न जाने कितनी सम्पत्तिकी हानि हो रही है तथा घटिया चीजें तैयार हो रही हैं।

स्वर्गीय मधुसूदन दासने[1], जो महान् परोपकारी व्यक्ति थे और जिन्होंने चमड़ा कमानेकी आधुनिक प्रक्रिया स्वयं सीखी थी, आँकड़े देकर यह दिखाया था कि अस्पृश्यताके अन्धविश्वासके कारण, जिसे धर्मका नाम दे दिया गया है, देशको हर साल कितनी हानि होती है। हरिजन कार्यकर्त्ता चमड़ा कमानेकी आधुनिक पद्धति सीख सकते हैं और जहाँतक व्यावहारिक हो, चमारोंको उससे अवगत करा सकते हैं। भंगियोंको यह शिक्षा देनी चाहिए कि वे रोजमर्राके खानेकी जूठन, जिसे घरके मालिक वस्तुतः बहुत ही क्रूर ढंगसे उनकी ओर फेंक देते हैं, हरगिज नहीं लेनी चाहिए। सालोंकी आदतसे भंगियोंकी सुरुचिकी भावना जड़ हो गई है और उन्हें दूसरे आदमीकी जूठन खानेमें कोई बुराई दिखाई नहीं देती। उनमें अपने मालिकोंके भोजनके थालके उच्छिष्टके लिए, जिसे वे व्यंजन कहते हैं, एक लालसा-सी रहती है। मैं ऐसे भंगियोंको जानता हूँ जिन्होंने अपने बच्चे स्कूलसे इसीलिए हटा लिये हैं कि वहाँ उन्हें इस जूठनको न छूने और अपने घरमें पकी ज्वार और बाजरेकी रोटीसे सन्तुष्ट रहनेकी शिक्षा दी जाती है।

चमारोंको यह समझाना चाहिए कि वे मुर्दा ढोरका मांस और गोमांस खाना छोड़ दें। शाकाहारी होनेके नाते मैं तो यह चाहूँगा कि हरिजन मांस खाना बिलकुल ही छोड़ दें, जैसा कि बहुतोंने किया है। परन्तु यदि वे इस सुधारके लिए तैयार न हों, तो उन्हें मुर्दा ढोरका मांस, जो अस्वास्थ्यकर होनेके अलावा शेष मानव-समाजमें निषिद्ध है, और गोमांस, जो हिन्दू धर्ममें वर्जित है, छोड़नेकी शिक्षा तो देनी ही चाहिए। मुझे मालूम है कि मुर्दा ढोरका मांस उस मूल्यका एक अंश होता है जो उसे हटानेके लिए उन्हें मिलता है। डॉ० अम्बेडकरने मुझे बताया कि कुछ स्थानों पर गाँववालोंने उन चमारोंको पीटा जिन्होंने मुर्दा ढोरका मांस खाना छोड़ दिया था और उनसे यह कहा कि उसे खाना तुम्हारा धर्म है। सचाई यह थी कि उन्हें यह डर था कि यदि चमारोंने मुर्दा ढोरका मांस खाना छोड़ दिया तो वे उसका मूल्य माँगेंगे या मुर्दा ढोरको उठाना बन्द कर देंगे। चाहे कैसी भी कठिनाई हो, पर मुर्दा ढोरका मांस और गोमांस अवश्य छोड़ देना चाहिए। यह एक ही संयम हरिजनोंको सवर्ण हिन्दुओंकी निगाहमें तुरन्त ऊपर उठा देगा और उससे अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनमें सवर्ण सुधारकोंका काम अपेक्षाकृत आसान हो जायेगा।

चौथी और पाँचवीं मदोंके बारेमें कुछ कहनेकी जरूरत नहीं है। वे स्वतः स्पष्ट हैं।

१. वस्तुतः मधुसूदन दास मरे नहीं थे। गांधीजी को बादमें एक आश्रमवासीसे अपनी भूल पता चली और उन्होंने तुरन्त मधुसूदन दाससे क्षमायाचना की। देखिए खण्ड ५२, "तार: मधुसूदन दासको", १८-११-१९३२।

आखिरी मद खुद अस्पृश्योंमें जो छुआछूत है उसे समाप्त करना है। यह ऐसा काम है जिसे तुरन्त करना आवश्यक है। यदि यह दोहरी अस्पृश्यता एक ही झटकेमें मिटा नहीं दी गई, तो अस्पृश्यताको मिटाना बहुत ही कठिन होगा। हरिजन कार्य-कर्त्ताओंके लिए यह एक कठिन काम है। लेकिन यदि वे यह समझ लें कि यह आन्दोलन मुख्यतया धार्मिक है और हिन्दू धर्ममें जो गन्दगी घुस गई है, उसे दूर करनेके लिए है, तो उनमें इस महान् सुधारको पूरा करने लायक आवश्यक साहस और आत्मविश्वास आ जायेगा।

इस बातपर मेरे जोर देनेकी जरूरत नहीं है कि इस तरहके आन्दोलनमें कार्यकर्त्ता निःस्वार्थ और शुद्ध चरित्रके होने चाहिए। मैंने यहाँ एक रचनात्मक कार्य-क्रम रखा है जो हरिजनोंमें बड़ेसे-बड़े उत्साही सुधारकोंको भी सन्तोष प्रदान कर सकता है और उनका सारा समय और सारी शक्ति खपा सकता है। पर दो-एक बातें ऐसी हैं जो हरिजन कार्यकर्त्ताओं और हरिजनोंको अभी कुछ दिनतक, जबकि हम यह काम और तरीकोंसे पूरा करनेकी आशासे इसमें लगे हुए हैं, नहीं करनी चाहिए। कमसे-कम किसी भी हरिजनको किसीके विरुद्ध उपवास नहीं करना चाहिए और न उन्हें सत्याग्रह ही करना चाहिए। वे देखें कि सवर्ण हिन्दू जो इस समय कसौटीपर हैं, वे हरिजनोंको उनसे अलग करनेवाली रुकावटोंको दूर करनेके लिए क्या करते हैं। स्थानीय सवर्ण हिन्दुओंके साथ उन्हें झगड़ा नहीं करना चाहिए। उनका व्यवहार हमेशा, और इस समय तो और भी अधिक विनम्र और शालीन होना चाहिए। जबरदस्तीसे उन्हें चाहे बहुत-सी चीजें मिल जायें, पर धर्मकी रक्षा केवल कष्ट-सहन करके ही की जा सकती हैं, उत्पीड़कोंके प्रति हिंसासे कभी नहीं की जा सकती। उनकी शोभा इसीमें है कि वे अपने अधिकार सवर्ण हिन्दुओंका हृदय-परिवर्तन करके प्राप्त करें, और आज तो उनके पास आशा रखनेके लिए काफी कारण हैं, क्योंकि उन्हें यह मालूम होना चाहिए कि इस समय दसियों हजार सवर्ण हिन्दू ऐसे हैं, जिनमें अपने अपराधका एहसास जाग उठा है और जो हरिजनोंकी क्षतिपूर्तिके लिए पूरी शक्तिसे प्रयत्न कर रहे हैं। उन्हें अपने ध्येयके सर्वथा न्यायसंगत होने और उसकी प्राप्तिके लिए कष्ट सहनकी अपनी क्षमतामें पूर्ण विश्वास होना चाहिए।

अगले वक्तव्यमें[1] मैं उन सवर्ण हिन्दुओंको उत्तर दूँगा, जिन्होंने यह पूछा है कि इस आन्दोलनमें वे किस प्रकार सहायता कर सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १५-११-१९३२

१. देखिए पृ० ४५९-६१।

६६५. तार : जमनालाल बजाजको[1]

१४ नवम्बर, १९३२

जमनालाल बजाज
कैदी, धूलिया जेल

डॉ० मोदीसे पूरी रिपोर्ट लो। तुम्हारी जाँचके लिए वे तुरन्त बुलाये जायें ताकि निश्चित निदान कर सकें। खाँसी कैसी है?

बापू

[गुजरातीसे]
पाँचमां पुत्रने बापुना आशीर्वाद, पृ० ८०

६६६. पत्र : भाऊ पानसेको

प्रातःकाल, मौनवार, १४ नवम्बर, १९३२

चि० भाऊ,

मेरा पत्र तुम्हें बहुत देरसे मिलेगा, क्योंकि जब यह मिलेगा तब तुम्हें उपवास खोले हुए बारह दिन हो चुके होंगे। तुम्हें क्या खाना चाहिए, यह तो मैं पहले ही लिख चुका हूँ। उसमें अपनी शारीरिक प्रकृतिके अनुसार थोड़ा हेर-फेर कर सकते हो। यदि छः-सात दिन या उससे भी पहले एनीमा लेनेकी जरूरत न पड़े, खुलकर भूख लगे और सामान्य खुराक आसानीसे हजम हो जाये, वजन और ताकत भी बढ़ने लगे, तभी यह कहा जा सकता है कि उपवास सफल रहा। किन्तु यदि एनीमाके बिना पाखाना हो ही नहीं तो विरेचन ले लेना चाहिए। इसके लिए रेंड़ीका तेल बहुत अच्छा है; सुबह उठते ही दातुन करनेके बाद एकसे दो चम्मचतक पी लेना चाहिए। यदि जरा-सा नमक मुँहमें डालकर तेल निगल लिया जाये और बादमें थोड़ा-सा नमक चाट लिया जाये तो उसका बुरा जायका महसूस न होगा। इसके बाद तो बिना एनीमाके पाखाना होना ही चाहिए। यदि पाखाना न हो तो समझ लेना चाहिए कि आँतें अभी साफ नहीं हुईं। थोड़ी-सी ताकत आ जानेके बाद फिर उपवास करना चाहिए। किन्तु कब्ज इसी प्रकार जायेगा।

विनोबाने जो तकली-माहात्म्य लिखकर भेजा है, उसे मैं तो पूरी तरह मानता हूँ। और जो सेवा-भावसे यज्ञार्थ तकली कातता है, उसके लिए वह मोक्षप्रद हो सकती है, इसमें मुझे तनिक भी सन्देह नहीं है।

बापू

१. मूल अंग्रेजी तार उपलब्ध नहीं है।

६६८. पत्र : कुन्हप्पाको

१४ नवम्बर, १९३२

आपने अपना पत्र तथा जमोरिन और केलप्पन द्वारा एक-दूसरेको भेजे गये पत्रों और तारोंकी नकलें भी भेजकर अच्छा किया। आपका पत्र और उसके साथ भेजी गई सामग्री मेरे लिए अत्यन्त मूल्यवान सिद्ध हुई है। उपवास यदि करना पड़ा तो वह जमोरिनके विरुद्ध नहीं होगा। सवर्ण हिन्दुओंका विशाल समूह यदि सचमुच मन्दिरको अवर्णोंके लिए खुलवानेके पक्षमें हो, तो क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि जमोरिन भी मन्दिरको उनके लिए बन्द नहीं कर सकते? वह उनकी सम्पत्ति नहीं है। यह याद रखना चाहिए कि वे खुद कोई दावा नहीं करते और यह मानते हैं कि वे केवल एक ट्रस्टी हैं। एक क्षणके लिए हम यह मान लेते हैं कि वे केवल मन्दिरमें जानेवाले सवर्ण हिन्दुओंके ट्रस्टी हैं। तो यह भी मानना पड़ेगा कि मन्दिरकी कुंजी उन लोगोंके हाथमें है और जमोरिन उसे उन्हींकी ओरसे अपने पास रखे हुए हैं। सवर्ण यदि सचमुच उद्यत हों तो बहुत-से ऐसे तरीके हैं जिनसे वे अपनी उद्यतता अचूक ढंगसे व्यक्त कर सकते हैं। मन्दिरका उपयोग करनेवाले सभी सवर्ण स्त्री-पुरुषों की मतगणनाका क्या कभी कोई प्रयास किया गया है? यदि स्थिति वैसी नहीं है, जैसी कि मैं सोचता हूँ, और सवर्णोंको कोई अधिकार नहीं है, और यदि यह ट्रस्ट उनके ही हितार्थ नहीं है तो मुझे सही स्थितिकी सूचना मिलनी चाहिए। तभी आपका मुझसे निर्णय बदलनेके लिए कहना ठीक रहेगा। उदाहरणके लिए, यदि मन्दिर जमोरिनकी निजी सम्पत्ति है, दूसरे शब्दोंमें, यदि वे मन्दिरके द्वार इच्छा होनेपर किसीके लिए भी बन्द कर सकते हैं, तो गुरुवायूरको हरिजनोंके लिए खुलवानेका सारा आन्दोलन शुरूसे ही गलत है और हमें अपने कदम पीछे हटाने होंगे। सभी कार्यकर्त्ताओंको इस स्थितिकी इसी दृष्टिकोणसे जाँच करनी चाहिए। यदि गलती हो गई है, तो उसे खुलेआम स्वीकार करनेमें कोई शर्म महसूस नहीं होनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २४४-५

६६९. पत्र : पी० एन० राजभोजको

१४ नवम्बर, १९३२

प्रिय राजभोज,

आपका पत्र मिला। अपने उत्तरोंकी[1] संशोधित प्रति साथ भेज रहा हूँ। आपके प्रश्नोंमें कोई संशोधन नहीं किया है। कुछ प्रश्नोंमें तो एक ही तरहकी बातें दोहराई गई हैं, इसलिए उन्हें निकाल दिया जाये तो हर्ज नहीं।

आशा है, मेरा पिछला पत्र मिल गया होगा। उसमें आप चाहते थे, वह सन्देश भी था।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९६) से।

६७०. एक पत्र[2]

१४ नवम्बर, १९३२

मैं आपकी इस बातसे पूरी तरह सहमत हूँ कि किसीके साथ अस्पृश्यका-सा व्यवहार नहीं करना चाहिए, और मुझे पूरा विश्वास है कि जिस दिन हम चार करोड़ हिन्दुओंके साथ ऐसा व्यवहार करना बन्द कर देंगे उसी दिनसे ईसाइयों और मुसलमानोंके साथ भी ऐसा व्यवहार करना बन्द कर देंगे।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २४२

१. देखिए "भेंट: पी० एन० राजभोजको", ११-११-१९३२।

२. साधन-सूत्रमें यह नहीं बताया गया है कि यह पत्र किसको लिखा गया था। पत्र-लेखकने पूछा था: "क्या हम औरोंके साथ भी — जैसेकि ईसाइयों आदिके साथ — अस्पृश्योंका-सा व्यवहार नहीं करते?"

६७१. एक पत्र[1]

१४ नवम्बर, १९३२

तुम महसूस करते हो कि यहाँके करोड़ों लोग गरीब हैं, यह जानकर खुशी हुई। भगवान् कृष्णसे प्रार्थना करनेका सच्चा तरीका यह है कि हम उसके नामपर उन लोगोंकी थोड़ी सेवा करें जो हमसे बुरी अवस्थामें हैं। जब हम अपने दैनिक जीवनमें सेवाकी भावनाका परिचय देंगे तो श्रद्धाहीन पड़ोसियोंकी भी ईश्वरमें श्रद्धा जगने लगेगी। अस्पृश्योंके बीच जाकर और इस भावसे मानों वे तुम्हारे ही परिवारके सदस्य हैं उनकी जितनी बने उतनी सेवा करके तुम खुद अस्पृश्यता-निवारणका काम कर सकते हो। अगर तुम हिन्दी नहीं जानते हो तो जल्दी सीख लेनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २४३

६७२. वक्तव्य : अस्पृश्यतापर – ६

१५ नवम्बर, १९३२

हरिजनोंमें से तो केवल श्रीयुत राजभोजने ही मुझसे यह पूछा है कि इस आन्दोलनको आगे बढ़ानेके लिए हरिजन क्या कर सकते हैं, किन्तु सवर्ण हिन्दुओंकी ओरसे भारतके सभी हिस्सोंसे इस तरहके बीसियों पत्र आये हैं। पत्र लिखनेवालों में पुरुष भी हैं और स्त्रियाँ भी, विद्यार्थी भी हैं और दूसरे लोग भी। इनमें यह पूछा गया है कि अपने और कार्योंको रोके बिना वे इस आन्दोलनमें किस प्रकार सहायता कर सकते हैं। अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलन तो, जहाँतक उसका जनसाधारणसे सम्बन्ध है, उनके हृदय-परिवर्तन और हरिजनोंके प्रति उनके रुखको बदलनेका आन्दोलन है, इस लिए सवर्ण हिन्दुओंके विशाल समुदायको हरिजनोंकी सेवा करनेके लिए अपने रोजमर्रा के कामोंको रोकनेकी जरूरत नहीं है।

इसमें पहली बात तो यह है कि हरएक स्त्री और पुरुष अपने जीवनमें अस्पृश्यता-निवारणके फलितार्थोंको समझे, और अगर उसका मन यह उत्तर दे कि हरिजनोंके सार्वजनिक मन्दिरोंमें प्रवेशपर, पाठशालाओं, सरायों, सड़कों, अस्पतालों, औषधालयों आदि सार्वजनिक स्थानोंके उनके द्वारा उपयोगपर — संक्षेपमें कहें तो धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक क्षेत्रोंमें जिस स्थितिका उपभोग वह स्वयं कर रहा है, वही स्थिति हरिजनोंको प्रदान करनेपर — उसे न केवल कोई

१. यह एक लड़केके पत्रके उत्तरमें लिखा गया था। उसने गांधीजी से पूछा था कि वह किस तरह सेवा-कार्य कर सकता है। साधन-सूत्रमें उसका नाम नहीं बताया गया है।

आपत्ति नहीं है, वल्कि वह इन बातोंके लिए उत्सुक है तो माना जायेगा कि व्यक्तिगत रूपसे उसने कदम उठा लिया है।

लेकिन प्रश्नकर्त्ता इतना ही नहीं चाहते और न मुझे उनके सिर्फ इतना ही करने से सन्तोष होगा। इतना करने के बाद वे यह जानना चाहते हैं कि इस उद्देश्यको सफल बनानेके लिए वे और क्या कर सकते हैं। ऐसे प्रश्नकर्त्ताओंको अपनी प्रवृत्तियों को अपने आसपासके क्षेत्रोंसे बाहर फैलानेकी जरूरत नहीं है। उन्हें चाहिए कि वे प्रतिदिन जिन लोगोंके सम्पर्कमें आते हैं, उनका मत बदलनेकी कोशिश करें और अगर ये लोग अस्पृश्यता-निवारणकी आवश्यकताके कायल नहीं होते तो उनका फर्ज यह है कि यदि उन्होंने इस आन्दोलनका आलोचनात्मक अध्ययन किया है तो उसके आधारपर दलील करके अपने ऐसे पड़ोसियोंको अस्पृश्यता-निवारणकी आवश्यकताका कायल बनायें, और अगर उनमें यह करनेकी योग्यता न हो तो आवश्यक साहित्य प्राप्त करके वे अपने पड़ोसियोंको दें और उनका सम्पर्क ऐसे पूर्णकालिक कार्यकर्त्ताओंसे करायें जिनमें इस तरहके प्रचारकी विशेष योग्यता है। यदि उन्हें लगे कि उनके आसपासका क्षेत्र इस आन्दोलनकी भावनासे प्रभावित नहीं है और अगर उस क्षेत्रमें उनका कोई प्रभाव हो तो उन्हें सार्वजनिक भाषणों तथा प्रदर्शनोंका आयोजन करना चाहिए। इतना तो सवर्ण हिन्दुओंके बीच आवश्यक कार्यके बारेमें हुआ।

लेकिन यह विशाल जनसमुदाय जो असली काम कर सकता है वह तो निस्सन्देह हरिजनोंके बीच ही करनेका है। जिन लोगोंने मेरा पाँचवाँ वक्तव्य पढ़ा है उन्होंने इस बातको लक्ष्य किया ही होगा कि इस क्षेत्रमें ऐसे बहुत-से सेवा-कार्य करनेको पड़े हुए हैं जो सवर्ण हिन्दू अपना अधिक समय, शक्ति या पैसा खर्च किये विना चुपचाप और प्रभावकारी ढंगसे कर सकते हैं। हरिजनोंको आवश्यक जलके साधनोंके उपयोगकी सुविधा सुलभ कराकर सवर्ण हिन्दू हरिजन कार्यकर्त्ताओंके उन प्रस्तावोंमें कारगर योग दे सकते हैं जो वे हरिजनोंमें सफाईकी आदतें डालनेके लिए कर रहे हैं। वे हरिजन बस्तियोंके निकट स्थित सार्वजनिक कुओं और तालाबोंका पता लगा कर उनका उपयोग करनेवाले सवर्ण हिन्दुओंको यह बताते हुए कि ऐसी सार्वजनिक सुविधाओंका लाभ उठानेका हरिजनोंको कानूनी अधिकार है, उनका मत-परिवर्तन कर सकते हैं। साथ ही वे इस बातका भी ध्यान रख सकते हैं कि हरिजनोंको इन सुविधाओंका लाभ उठाने देनेके लिए सवर्ण हिन्दुओंकी सहमति प्राप्त हो जानेपर हरिजन लोग उनका उपयोग इस तरहसे करें जिससे सवर्ण हिन्दुओंको बुरा न लगे।

जहाँतक पाखाने आदिकी सफाईका सम्बन्ध है, उनके पड़ोसके जिन घरोंमें हरिजन काम करते हों, उनके मालिकोंसे मिलकर वे उन्हें समझा सकते हैं कि हरिजनोंको ऐसी सुविधाएँ देना जरूरी है जिससे उनको सफाईका काम स्वास्थ्यकर ढंगसे करनेमें आसानी हो। स्वाभाविक ही है कि इसके लिए उन्हें पाखाने बनाने और मल-मूत्र साफ करनेकी वैज्ञानिक पद्धतिका अध्ययन करना होगा। वे घरोंके मालिकोंसे हरिजनोंको सफाईका काम करते समय पहननेके लिए खास पोशाकें भी दिला सकते हैं और खुद बेहिचक सफाईका काम करके हरिजनोंमें यह भाव पैदा कर सकते हैं कि

इस तरहकी सेवा करना कोई नीचा और अप्रतिष्ठाका काम नहीं है। सवर्ण लोग अपने दैनिक भोजनकी जूठन अपने भंगियोंको दे दिया करते हैं। कार्यकर्त्ताओंको इसके खिलाफ भी प्रचार करना चाहिए और जहाँ भंगियोंको ठीक मजदूरी नहीं मिलती वहाँ उनके मालिकोंको ठीक मजदूरी देनेको समझाना-बुझाना चाहिए।

चमड़ा कमानेके कामके सम्बन्धमें तो ठीक सहायता तभी की जा सकती है जब मानवताकी भावनासे प्रेरित होकर कोई उत्साही स्वयंसेवक अपने अवकाशके समयमें मरे हुए ढोरोंका चमड़ा उतारनेकी साफ-सुथरी पद्धतिका अध्ययन करके इन चर्मशोधकोंके बीच उस ज्ञानका प्रचार करे।

एक काम तो वे कर ही सकते हैं। वे मरे हुए पशुओंको ठिकाने लगानेकी प्रचलित रीतिका पता लगाकर ऐसी कोशिश कर सकते हैं जिससे चमड़ा कमानेवालों को ठीक मजदूरी मिल सके। जिनके पास क्षमता और समय हो, वे दिवा-पाठशालाएँ या रात्रि-पाठशालाएँ चला सकते हैं, छुट्टियोंके दिन या जब भी मौका मिले, हरिजन बच्चोंको पिकनिकपर और दर्शनीय स्थल दिखानेके लिए ले जा सकते हैं, हरिजनोंसे खुद उनके घरोंमें जाकर मिल-जुल सकते हैं, जहाँ जरूरी हो, वहाँ उन्हें चिकित्सा-विषयक सहायता दिला सकते हैं, और आम तौरपर उनमें यह एहसास जगा सकते हैं कि उनके जीवनका एक नया अध्याय शुरू हो गया है और अब उन्हें अपने-आपको मानव-समाजका उपेक्षित और तिरस्कृत अंग नहीं समझना चाहिए।

मैंने जो-कुछ कहा है, उस सबको विद्यार्थी-समाज बड़ी आसानीसे कर सकता है। यदि बहुत-सारे स्त्री-पुरुष चुपचाप पूरे उत्साह, संकल्प और समझदारीसे यह काम करें तो निस्सन्देह, इसका मतलब यह होगा कि अपने लक्ष्यको प्राप्त करनेकी दिशामें हम कई कदम आगे बढ़ चुके हैं और तब हम यह भी देखेंगे कि मैंने यहाँ जिन बातोंकी चर्चा की है, उसके अलावा भी बहुत-सी ऐसी बातें हैं जिनकी ओर हमें ध्यान देना चाहिए। यहाँ तो मैंने, अपने दौरोंमें जो बातें मेरे ध्यानमें आई थी, उन्हींमें से कुछ दे दी हैं।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रानिकल, १६-११-१९३२

६७३. तार : फीरोजचन्दको[1]

१५ नवम्बर, १९३२

आशा है, लालाजी की स्मृतिका आदर करनेवाले सभी लोग अस्पृश्यता-निवारणके लिए कुछ-न-कुछ जरूर करेंगे।

गांधी

(अंग्रेजीसे)

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, ब्रांच, फाइल नं० १०० (४०) (३), भाग ३, पृष्ठ ३६७

६७४. तार : मणिबहन पटेलको

(१५ नवम्बर, १९३२)[2]

मणिबहन पटेल
कैदी, सदर जेल
बेलगाँव

डाह्याभाईको गत सात दिनोंसे बुखार है। अब मोतीझरा (टाइफाइड) बताया गया है। खास गड़बड़ी नहीं है। विशेष परिचारिका सेवा कर रही है। चिन्ताको कोई बात नहीं। रोजकी खबर भेजनेकी कोशिश रहेगी।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (४), भाग २, पृ० ५५

१. लाहौर-निवासी।

२. देखिए अगला शीर्षक।

६७५. पत्र : ई० ई० डॉयलको

१५ नवम्बर, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

श्रीयुत डाह्याभाई सरदार वल्लभभाई पटेलके एकमात्र पुत्र हैं। पिछले आठ दिनोंसे वे ज्वरसे पीड़ित हैं। डॉक्टरोंने अब उन्हें टाइफाइड बताया है। डाह्याभाईकी बहन मणिबहन पटेलको, जो बेलगाँव सदर जेलमें हैं, उनकी बीमारीकी प्रतिदिन सूचना देना आवश्यक है। उनके पास भेजे जानेके लिए एक तारका मजमून मैं इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ। आशा है, आप कृपा करके इसे इस निर्देशके साथ अधीक्षकके पास भेज देंगे कि यह मणिबहनको दे दिया जाये और वे जो सन्देश देना चाहें, वह उनसे ले लिया जाये। जबतक ज्वर रहता है, तबतक क्या मैं उन्हें प्रतिदिन विस्तृत सूचना भेज सकता हूँ और उसके उत्तरमें वे जो भी सन्देश देना चाहें, क्या उसे प्राप्त कर सकता हूँ? वे रोज एक पोस्टकार्ड ही भेज दिया करें, यह मैं इसलिए चाहता हूँ कि वह रोगीको दिया जा सकेगा। यह जानकर कि उनकी एकमात्र बहनको उनकी बीमारीकी हालतसे बराबर अवगत रखा जा रहा है और वह उन्हें स्नेह-सन्देश भेज रही है, उनकी हिम्मत बढ़ेगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (४), भाग २, पृ० ५५

६७६. पत्र : यू० गोपाल मेननको[1]

[१५ नवम्बर, १९३२][2]

खैर, अगर वैधानिक कठिनाई हो तो भी हमें धीरजके साथ ऐसा लोकमत तैयार करना चाहिए जो जरूरी विधान बनानेकी भी माँग करे। इसलिए आपको सवर्णोंको गुरुवायूर मन्दिरके द्वार हरिजनोंके लिए खोलनेके पक्षमें लानेकी कोशिश करनी चाहिए। आम तौरपर सभी मन्दिरोंमें हरिजनोंके प्रवेशकी आवाज उठाकर सवालको

१. त्रावणकोर अस्पृश्यता-विरोधी संघके अध्यक्ष।
२. "दैनन्दिनी, १९३२" से।

उलझाइए नहीं। श्री केलप्पनने गुरुवायूर मन्दिरके द्वार खुलवानेके लिए उपवास[1] किया था, और अगर फिरसे उपवास शुरू करना है तो उसका उद्देश्य उसी मन्दिर तक सीमित रहना चाहिए। अगर इस मन्दिरके द्वार हरिजनोंके लिए खुल जाते हैं तो देर-सवेर अन्य मन्दिरोंके द्वार भी खुलेंगे ही, लेकिन हमें सदा अपने धर्मपर आरूढ़ रहना चाहिए। जमोरिनके प्रति कोई दुर्वचन नहीं कहा जाना चाहिए। जरूरी होनेपर उनकी स्थितिका विरोध बेशक कीजिए। मैंने उनका वक्तव्य पढ़ा है। अगर केलप्पनने अभद्रता दिखाई हो तो उन्हें क्षमा माँग लेनी चाहिए। लेकिन, मेरी रायमें, जमोरिनका यह कहना गलत है कि श्री केलप्पनकी अभद्रताके फलस्वरूप उनका आश्वासन अब रद्द हो चुका है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १७-११-१९३२

६७७. एक पत्र[2]

१५ नवम्बर, १९३२

आपके और आपकी पत्नीके साथ मेरी गहरी सहानुभूति है। आपको क्या तरीका अपनाना चाहिए, यह मेरे दिमागमें बिलकुल साफ है। उस आदमी और उसके कृत्य को आप भूल जायें। दण्ड और पुरस्कार देनेवाला केवल ईश्वर है। अपराधीके विरुद्ध कानूनी कार्रवाई करनेका आपको अधिकार था, और मैं समझता हूँ अब भी है। पर जाहिर है, वैसा करनेका आपका इरादा नहीं है। कुछ भी हो, वह आदमी अपने होशमें नहीं था। कौन जानता है कि वह किसी दिन सबक नहीं लेगा और अच्छा आदमी नहीं बनेगा? यदि आपको उसकी भलाई करनेका कोई अवसर मिले तो आप उसे करने से चूकिए नहीं। अपनी पत्नीको आप सान्त्वना दीजिए और समझाइए कि वे उस घटनाको भूल जायें। आपकी लड़कीको उस घटनाकी स्मृति भी नहीं रहनी चाहिए। मैं सोचता हूँ, उसे यह पता नहीं होगा कि उसके साथ क्या करनेकी कोशिश की गई थी। लेकिन उसे पता हो तो भी उसके साथ ऐसा व्यवहार करना चाहिए जिससे वह उसे बिलकुल भूल जाये।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृ० २४५-६

१. उपवास २० सितम्बरको शुरू होकर २ अक्टूबरको समाप्त हुआ था।

२. साधन-सूत्रमें यह नहीं बताया गया है कि यह पत्र किसको लिखा गया था। पत्र-लेखकने गांधीजी को लिखा था कि उसके एक परिचित ५० वर्षीय व्यक्तिने नशेमें धुत हो उसकी ६ वर्षकी पुत्रीके साथ बलात्कार करनेकी कोशिश की जिससे उसे और उसकी पत्नीको गहरा आघात पहुँचा। उसने गांधीजी से सलाह माँगी थी कि उसे क्या करना चाहिए।

६७८. पत्र : वसन्तराम शास्त्रीको

१५ नवम्बर, १९३२

अपनी दृष्टिसे तो मैं जैसा सन् २१ में था, वैसा ही हूँ। अलवत्ता, ऐसी आशा रखता हूँ कि मैंने इसी दिशामें कुछ प्रगति की होगी। इस जगत्में कोई चीज स्थिर तो है ही नहीं। हर चीज या तो आगे बढ़ती है या पीछे हटती है। जिन लोगोंके लिए आपका यह खयाल है कि वे पाखण्डी हैं, उनके लिए मैंने नहीं लिखा। पाखण्डी माने जानेवाले लोग तो इने-गिने ही होते हैं। मैंने तो असंख्य लोगोंके बारेमें लिखा है। उनमें अज्ञान हो सकता है, मूर्खता हो सकती है, मगर पाखण्ड नहीं हो सकता। जरा गहराईसे सोचेंगे तो आपको इस बातकी प्रतीति हुए बिना नहीं रहेगी। मैं चाहता हूँ कि आप अत्याचारके बारेमें जरा ज्यादा साफ लिखें।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ २४७

६७९. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

१५ नवम्बर, १९३२

भाई घनश्यामदास,

यरवडा संधिकी टीकाके बारेमें जब मिलेंगे तब। अब इसमें समय बरबाद न करूं। ठक्कर बापाने पटनाके बारेमें जो कुछ लिखा है ऐसा बहुत जगह पर है। इस बारेमें स्थानिक लोगोंको लिखना चाहिए। म्युनिसिपालटी क्यों यह काम न करें? प्रति पक्ष या प्रति सप्ताह समितिके तरफसे एक विवरण कहो, पत्रिका कहो, अखबार कहो जो कुछ निकलना चाहिये जिसमें ऐसी सब भयानक बातें बताई जाये।[१] हम कैसे भी गरीब हैं तो भी कोई म्युनिसिपालीटी इतनी गरीब नहीं है जो ऐसी ऐबोंको दुरुस्त न कर सकें। मथुरादासको मैंने लिखा। अंबालालको भी।[२]

बापूके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ७९०४ से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१. गांधीजी के सुझावपर बिड़लाजी ने जनवरी, १९३३ से एक साप्ताहिक पत्र निकालनेकी योजना बनाई थी और उनसे प्रथम अंकके लिए एक लेख लिखनेका अनुरोध किया था।

२. देखिए "पत्र : अम्बालाल को", १०-११-१९३२। मथुरादास को लिखा पत्र उपलब्ध नहीं है।

६८०. दैनन्दिनी, १९३२[1]

(१-९-१९३२ से १५-११-१९३२)

१ सितम्बर, बृहस्पतिवार, यरवडा मन्दिर[2]

चरखेपर २३८ तार काते। पत्र लिखे : वासुकाका, मीरा, ब्रजकिशन, माणेकबाई, अनसूयाबहन + शंकरलाल।

२ सितम्बर, शुक्रवार

चरखेपर २२४ तार काते। पत्र लिखे : चम्पा, प्यारअली, तिलकम्, निर्मला, मशरूवाला, देवदास, तारामती + रामचन्द्र, प्रसाद + दिलीप। जोशी, रमण गांधी और आगासे से मिला। डाह्याभाई वल्लभभाईसे मिलने आये। कलक्टरने मुआयना किया।

३ सितम्बर, शनिवार

चरखेपर २५० तार काते। पत्र लिखे : सुरेश बनर्जी, माणेकलाल, खीमचन्द।

४ सितम्बर, रविवार

चरखेपर २५० तार काते।

५ सितम्बर, सोमवार

चरखेपर २५० तार काते। पत्र लिखे : आश्रम (४७ – "संकटमें बहनें क्या करें?") मणिलाल + गुलाब + तिलक + धीरू, नीलम, सत्यवती चिदम्बर, मोहनलाल भट्ट, उमाशंकर श्रीवास्तव, नागरी प्रचारिणी, प्यारअली + अमीना + हमीदा + कुरैशी, गोविन्ददास, छगनलाल मेहता, पोलक, मणिलाल कोठारी। नारणदासका पत्र रामदासको भेजा।

लाला हंसराजकी ओरसे शहद और दूसरी चीजें मिलीं। पद्मजाकी ओरसे कल मोसम्बियोंकी टोकरी आई।

६ सितम्बर, मंगलवार

चरखेपर २३० तार काते। पत्र लिखे : करसनदास, केखुशरू कांगा, पद्मजा, बाबूराम, संतराम, लिली, नानालाल, रेहाना।

दलालने बत्तीसीकी जाँच की।

१. खण्ड ५० से आगे।

२. अगले इन्दराजोंमें स्थान के नामका उल्लेख नहीं किया गया है। गांधीजी को ४-१-१९३२ को गिरफ्तार किया गया था और ८-५-१९३२ को मुक्त किया गया।

७ सितम्बर, बुधवार

चरखेपर २२० तार काते। पत्र लिखे : लाला हंसराज, देवदास + डॉ० दासगुप्त। नकली बत्तीसीकी जाँच करने डॉ० दलाल फिर आये। निचले हिस्सेमें थोड़ा सुधार कर लौटा गये। आज पारसी 'नौरोज'[1] है। मार्न ने शामको मद्यपान न करनेकी प्रतिज्ञा की। उन्होंने बाहर जाकर कुछ दिन बाद मुझे लिखनेका वचन दिया है। आज जेलके गेहूँकी रोटी खाई।

८ सितम्बर, बृहस्पतिवार

चरखेपर [...]।[2] पत्र लिखे : कमला नेहरू, कृष्णदास, रामशरणसिंह, कर्नल (डॉयल) रोटीके बारेमें।

कर्नल डॉयलको दूसरा पत्र २० वींके बारेमें। सरकारी निर्णयके बारेमें कर्नल डॉयलसे लम्बी बातचीत। उनके द्वारा उठाये गये प्रश्नोंके उत्तर दिये। बातचीतके दौरान उन्होंने बताया कि जिन्हें रोटी खानेकी आदत है उन्हें कोई परेशानी नहीं होगी। काका और बा के समाचार मिले। महादेवको आज बुखार-सा लगता है। वह आज रोटी बनानेमें मदद करने गया था।

९ सितम्बर, शुक्रवार

चरखेपर २१३ तार काते। पत्र लिखे : खीमचन्द, दिनकर, प्रभाशंकर + बलवन्त, मथुरादास त्रिकमजी, तारामती, निर्मला मशरूवाला, नारणदास, मैकडॉनाल्डका पत्र मिला और उसका उत्तर दिया। डॉयलको पत्र लिखा। आज यहाँकी बनी 'ब्राउन ब्रेड' खाई। 'प्लम' [आलूबुखारे] और खजूर मँगाई।

मैकडॉनाल्डका पत्र मेजर लाये थे। महादेवको हलका बुखार है।

१० सितम्बर, शनिवार

चरखेपर २०६ तार काते। पत्र लिखे : गोविन्दवल्लभ पन्त, विधान राय।

कल ४ रुपयेके 'प्लम' आये। जरा भी अच्छे नहीं लगे किन्तु खाना ही उचित जान पड़ा। सुबह-शाम मिलाकर २० 'प्लम' खाये।

११ सितम्बर, रविवार

चरखेपर २४८ तार काते। आश्रमको पत्र लिखनेमें दिन बीत गया।

१२ सितम्बर, सोमवार

चरखेपर २३६ तार काते। पत्र लिखे : आश्रम ("कार्य और विचार [-२]" सहित)। प्यारअली, जमशेद मेहता, सरोजिनीदेवी। कटेली आज महादेवको कुछ अनशनकारियोंका अनशन तुड़वानेके लिए ले गये। किन्तु वह अनशन तुड़वा नहीं सका। २० तारीखके उपवासके बारेमें अपीलका मसौदा तैयार किया।

१. नव वर्ष।

२. साधन-सूत्रमें सूतके तारोंकी संख्या नहीं दी गई है।

१३ सितम्बर, मंगलवार

चरखेपर २२३ तार काते। पत्र लिखे : रतिलाल देसाई + मणि + जेकी + माणेकबाई, प्रभाशंकर, देवदास। अनशन-सम्बन्धी पत्र-व्यवहार प्रकाशित। नायडूसे, जो कि अनशन कर रहा था, मिला; उसने अनशन छोड़ दिया। एन्ड्रचूजका तार, एन्ड्रचूजको तार।

१४ सितम्बर, बुधवार

चरखेपर २२५ तार काते। पत्र लिखे : देवदास, मोहनलाल भट्ट, नारणदास, बा, माणेकबाईको तार, भक्तिबहन [को पत्र]। हीथ आदिके तार आये। मेजरने सूचित किया कि कलवाला तार एन्ड्रचूजको भेज दिया गया है।

१५ सितम्बर, बृहस्पतिवार

चरखेपर २५० तार काते। पत्र लिखे : परचुरे शास्त्री (विवेकानन्द-कृत ४ पुस्तकें), सावित्री स्टैंडेनेथ, घनश्यामदास, विट्ठल, कामकोटि, गुरुदेव। राजा और घनश्यामदासके तार — उनके उत्तर दिये। डॉ० दलाल आकर मेरी बत्तीसी साफ कर गये। आज रोटियाँ बिगड़ गईं।

१६ सितम्बर, शुक्रवार

चरखेपर २०५ तार काते। पत्र लिखे : नरगिस, लिली, सरलादेवी, अनसूयाबहन, रेहाना, मीरा, राधा, रोमाँ रोलाँ, म्यूरिएल, बेरियर, पोलक, प्रिवा, अन्सारी, अगाथा हैरिसन। आज उपवासके बारेमें बहुत-से तार आये। इनमें से सप्रू, जमशेद मेहता और सतीशबाबूको तारसे उत्तर दिया। भोरमें २ बजे जग गया, ३ बजे शय्या छोड़ी। एक सार्वजनिक वक्तव्यका मसौदा तैयार किया और मेजरको प्रकाशनार्थ दिया। रामदास और सुरेन्द्रसे लगभग दो घंटे तक बातचीत हुई और बादमें खाडिलकरके साथ। साँझको पढ़ा कि बाशर्त उपवास शुरू करने पर मुझे छोड़ दिया जायेगा। इसपर मैंने तार दिया कि मैं इस प्रकार छूटनेके लिए तैयार नहीं हूँ।

१७ सितम्बर, शनिवार

चरखेपर २०६ तार काते। पत्र लिखे : कुरेशी, मधुकान्त, नारायणराव, माटे, गोसीबहन।

आज मैंने अपने दृष्टिकोणके अनुसार स्पृश्य और अस्पृश्य हिन्दुओंमें समझौतेका मसविदा तैयार किया। वल्लभभाईको बुखार। डॉ० दलालने मेरी बत्तीसीकी जाँच की।

१८ सितम्बर, रविवार

चरखेपर २४० तार काते। पत्र लिखे : सरोजिनी नायडू, पद्मजा, दरबारी साधु। आज भी वल्लभभाईको हलका बुखार रहा। आज शामको घनश्यामदास, पुरुषोत्तमदास, चुन्नीलाल और मथुरादास मुझसे मिले। एक घंटेसे ज्यादा बातचीत हुई। मुझे जो कहना था वह मैंने लिखकर समझाया।

१९ सितम्बर, सोमवार

चरखेपर २०९ तार काते। पत्र लिखे: नानाभाई मशरूवाला, राजबहादुरलाल, गोरा, राजा, मेरी बार, मणिलाल गांधी, माधवदास + कृष्णा, मगनलाल मेहता, डॉ० मुथु, तारामती, हंसा मेहता, शंकर कालेलकर, लक्ष्मी (राजाकी), क्राइस्ट सेवा संघ, आश्रम (६० पत्र)। सर पुरुषोत्तमदास, मथुरादास, चिमनलाल, घनश्यामदास मिलने आये। दो घंटे बातचीत हुई। साँझको देवदास आया। आज दूध नहीं लिया, उसके बदले बादाम लिये।

२० सितम्बर, मंगलवार

चरखेपर २०९ तार काते। पत्र लिखे: नारणदास + पुंजाभाई, त्रिवेदी, नरीमान, राजभोज, काका, मीरा, देवधर, गुरुदेव, शिन्दे। निम्नलिखितको तार दिये: अम्बालाल, हॅरिस, अगाथा, उर्मिला, काशी कृष्णाचार्य, रानीकाकीका, कृष्णदास, ताइपिंगके भारतीय, डाह्याभाई, रमणीकलाल देसाई, अपर्णा, गुरुदेव, हरिसिंह। कर्नल डॉयल सरकारका निर्णय दे गये। सम्वाददाताओंसे मिला, प्यारेलाल, ब्रजकिशन, सरोजिनी।

१२ बजे अग्नि-प्रवेश।[1] रेहानाके भजनसे आरम्भ किया। महादेवने 'गीता' का पारायण किया।

२१ सितम्बर, बुधवार

चरखेपर १५३ तार काते। पत्र लिखे: मथुरादास, किशोरलाल, जयरामदास, मणि, फूलचन्द, जमनालाल, नरहरि। पोलकको तार। सरोजिनी, सप्रू, जयकर, राजा, राजेनबाबू, घनश्यामदास आदिके साथ बातचीत। राजभोज आया, उसके साथ माटे आदि भी थे। पद्मजा मिलने आई।

२२ सितम्बर, बृहस्पतिवार

चरखेपर १९५ तार काते। पत्र लिखे: नरगिसबहन, तारामती।

२३-२९ सितम्बर, शुक्रवार-बृहस्पतिवार

इन दिनोंकी दैनन्दिनी प्रतिदिन नहीं लिखी जा सकी। यह ३० तारीखको प्रात: लिखी जा रही है। इस बीच कता हुआ सूत नीचे लिखे अनुसार निकला: २३ तारीख – ६०, २४ तारीख – ४३, २५ तारीख – ६०, २६ तारीख – ६०, २७ तारीख – १०८, २८ तारीख – १००, २९ तारीख – १२५ तार।

इन दिनों मानसिक शान्ति बनी रही। २६ तारीखको उपवास तोड़नेके पहले भयंकर शारीरिक यातना थी। बहुतसे लोग आते-जाते रहे। गुरुदेवका आना बहुत अच्छा लगा। केलप्पनके उपवाससे बहुत दुःख हुआ और अब भी है। उपवासके दौरान २६ तारीखसे केशूके नये चरखेपर कातना शुरू किया। २९ तारीखसे मुलाकातें बन्द हो गईं। केवल घनश्यामदास और मथुरादास अन्त्यज-कार्यके सिलसिलेमें

१. अनशनका आरम्भ।

मिल सकते हैं। इसपर मैंने कड़ा पत्र लिखा है। बा और सरोजिनीको साँझको ले गये। देवदास रातको मिल गया। बुधवारको वजन लिया गया जो ९५ निकला। सोमवारको ९३।। था। उपवासके पहले १०१ था।

३० सितम्बर, शुक्रवार

चरखेपर २३५ तार काते। यूरोपको काफी पत्र लिखे। डाकमें आई कुछ चिट्ठियाँ पढ़ीं। अच्छी तरह बैठा। कुछ कदम चला। साँझको दस्त साफ आया। बा को आज छोड़ दिया गया और दिनमें मेरे पास आनेकी फिर अनुमति दे दी गई। जिस तरह सुबह अंग्रेजी पत्र लिखे थे उसी तरह रातके आठ बजेतक अन्तर्देशीय पत्र लिखे।

१ अक्टूबर, शनिवार

चरखेपर २२५ तार काते। पत्र लिखे : बिड़ला, डेविड, आनन्दशंकर, क० मुंशी, जमशेद मेहता, मनमोहन गांधी, कृष्णन् नायर, कृष्णदास, अवन्तिकाबाई, मीरा। अन्सारी को तार। पत्र : किंग्सले (चिकागो ट्रिब्यून), मिस पीटर्सन। केलप्पन और माधवन् नायरको तार। घनश्यामदास और मथुरादास वसनजी १२ बजे आये और ४ बजे तक रहे। बा सारे दिन रही।

२ अक्टूबर, रविवार

चरखेपर २१९ तार काते। पत्र लिखे : मैथिलीशरण, भिक्षु बालचन्द्राचार्य, चमन कवि, हेमप्रभा, कमलनयन, अलीहसन, पाल, प्रभाशंकर, हसन इमामके बालक, तारामती, मिस पीटर्सन, रामदास। आज वजन लेनेपर १०० निकला, वल्लभभाई १४० और महादेव १४३।

३ अक्टूबर, सोमवार

चरखेपर २४७ तार काते। पत्र लिखे : दीपसिंहजी, मगनलाल वेलजी, सोहन लाल शर्मा, धीरजराम शास्त्री, ज्ञानचन्द वर्मा, जोगलेकर, खीमचन्द, फड़के, मणिलाल पटेल, सत्यानन्द बोस, कोवदकर, केसरीमल अग्रवाल, माटे, माणेकबाई मेहता, मूलचन्द पारेख। मोतीलाल रायको तार। उपर्युक्त कल भेज दिये गये। आज भेजे जायेंगे : कस्तूरभाई लालभाई, फूलचन्द बापूजी, हरिइच्छा, आश्रमको ५० पत्र। केलप्पन, जमोरिन और रंगस्वामीको तार। केवलराम गीदूमलको कीकीबहनके बारेमें तार। निर्मला मशरूवाला, केवलराम + कीकीबहन, जोहरा, आत्माराम, प्रभाशंकर भट्ट, कणबीवाड, नारण घुघुरी डेलो। देवदास हडसनकी अनुमति लेकर आया।

४ अक्टूबर, मंगलवार

चरखेपर २५० तार काते। पत्र लिखे : केकी दरियाशा, बार्टलेट, हॉयलैंड, सैम्युअल, जॉन पारसन्स, स्कॉट हैंडर्सन, मोतीलाल राय, बर्नार्ड, चन्द्रशंकर पण्ड्या, शंकरलाल, उमियापति, नन्दिनी, बालमन्दिर — खार, जोसेफ, गोविन्ददास, शंकरप्रसाद,

रामेश्वरदास — डबलिन, पूर्णचन्द्र, कृष्णानन्द, सीताराम, सत्येन्द्रकुमार, मणिबहन, गली-आरा, किसन। बद्रीदत्त पाण्डेको तार।

५ अक्टूबर, बुधवार

चरखेपर २०९ तार काते। पत्र लिखे : नारायण मेनन, प्रेमी, प्रकाशम्, वीरेन्द्र-प्रकाश, बद्रीदत्त पाण्डे, अलेक्जैंडर, एस्थर, विन्स्टन, लार्क्स ऑफ सेंट फ्रांसिस, सुब्बैया, स्टैंडेनेथ, अरिस्टार्शी, किंग्सले हॉल + ग्लैडिस + देवी, रामचन्द्र बहल। देवदास मिलने आया था। बा तो थी ही। आज वजन ९८$\frac{3}{8}$ निकला।

६ अक्टूबर, बृहस्पतिवार

चरखेपर २१७ तार काते। पत्र लिखे : वासुदेव, हीरालाल, पद्मकुमार, मणि-लाल व्यास, पद्मजा, बहरामशाह, मगनलाल मेहता, रमण गांधी, हरिभाऊ फाटक, गौरीशंकर भट्ट, अगाथा, एलविन, श्रीमती लिंडसे, कोरा फ्राइ, मीरा, सिडनी बॉकेन, कमला नेहरू + सैयद महमूद, पाटणकर, गुलबाई दस्तूर, बी० डी० लक्ष्मण, सैम्युअल बोरगाई, दरबारीलाल (जापला, पालामऊ)। जमोरिनके तारके बारेमें कर्नल डॉयलको पत्र और सरूपरानीको बा की मार्फत। खगेन्द्रप्रियाकी खादी बरुआसे आई। कल पाटणकरकी ओरसे बेलगाँवसे पेड़े आये।

७ अक्टूबर, शुक्रवार

चरखेपर २१५ तार काते। पत्र लिखे : कर्नल डॉयल + स्वामी आनन्द, निर्मला मशरूवाला, अन्नदानाप्पा, डाह्याभाई सावजी, रुखी, मणिशंकर, दादाचानजी, लिली, कटियाल, कहानचकु गांधी, बापालाल वैद्य, चन्दूलाल गणदेरीया, रानी विद्यावती, अब्दुल्ला फकीर, खगेन्द्रप्रिया, शंकर (मद्रास), रामजीराव, लक्ष्मीनारायण गाडोदिया, थप्पन नायर, भक्तिबहन, काका, सरूपरानी। उम्मेदराम और आतीतकर मिलने आये। शौकत अलीको तार। देवदास आया था। आज मेजर रायने जाँच की। अर्शके लक्षण हैं। जिलाधीश मिलने आये।

८ अक्टूबर, शनिवार

चरखेपर २०५ तार काते। पत्र लिखे : प्रभावती, सदाशिव, गोमती, मणि, मथुरादास, मोहनलाल, इलियट ब्रैकेट, नाथ, सैम्युअल, सेलवी, नानीबहन, अंगरिका गोविन्द, द्वारकाप्रसाद शर्मा, ज्योतिप्रकाश, मेरी पीटर्सन, शंकर कालेलकरको उपवासके सम्बन्धमें। फादर विन्स्लोको गगनके द्वारा पत्र भेजा। शंकरने उपवास तोड़नेसे इनकार कर दिया है इसलिए उसे पुनः पत्र लिखा। आज दूध नहीं पीया। साँझको गुलकन्द लिया।

९ अक्टूबर, रविवार

चरखेपर २१० तार काते। पत्र लिखे : एमा हार्कर, चिन्तामणि, आत्माराम, कृष्णनारायण, उर्मिला, वासन्तीदेवी, गुरुवायुरूपम्, मूलचन्द पारेख, रुखी, सुरबाला + रोहिणी, बजेरम, परमहंस यति, ठाकोरलाल मेहता, मोहनलाल सोमालाल, श्रवण

चौधरी, जदुनाथ सरकार, बिमला च० गुप्ता, चुन्नी मेहतर, ग्राम्य चरखा समिति, सुरसासंग ऐंड सन्स, सिंगापुरके युवक, टेलिग्राफ चैक आफीसर।

१० अक्टूबर, सोमवार

चरखेपर २०४ तार काते। पत्र लिखे: आश्रम — २३, डॉ० महमूद, मूलजीभाई, मोहनलाल, सोमसुन्दरम्, फ्रेन्ड्स ऑफ इंडिया, लियोनार्ड, मॉड, गुरुदेव, चौंडे महाराज, सुरेश, बलदेवदास, मेघाणी, रामैया, रमण सोनी, संथियावु, कथीरावेलु, कोटक + शारदा, तारामती, ठक्कर बापा, हरदयाल नाग, हेल्स, जयराम वरलरकर, शान्तिस्वरूप, गिरीन्द्रकिशोर, कृष्णदास, कीरचन्द शिवलाल, दादाचानजी, जमनालाल, त्रिवेदी, रेहाना। मणिलाल आया। आज मेजरने शंकरको बुलाकर धमकाया। उसके साथ जिन लोगोंने उपवास किया था, कल पत्र लिखकर उनका उपवास तुड़वाया।

११ अक्टूबर, मंगलवार

चरखेपर २२३ तार काते। पत्र लिखे: पोतदार (विलासपुर), कृष्णचन्द्र, न्यालचन्द, रोहित मेहता, जमशेद, हरिइच्छा, रेहाना, निजामुद्दीन, मुहम्मद हयातखाँ, पारुलेकर, बापालाल, मनजी रामभाई, त्रिभुवनदास, इन्दुमती पटेल (मोम्बासा), भोगीलाल पोपटलाल, रामभाऊ (नागपुर), चतुरसेन शास्त्री, रघुनाथप्रसाद, सुशीला, रघुनाथ लिमये। देवदास आया था। वह मणिलालके ज्वरकी खबर लाया।

१२ अक्टूबर, बुधवार

चरखेपर २२१ तार काते। पत्र लिखे: टर्टन, पोलक, एरिस्टार्शी, बहरामशा, चमन, छोटेलाल, थडानी, प्रो० वाडिया, नरसिंहराव, स्टोक्स। मणिलाल मिलने आया। आश्रमसे पूनियाँ, चमड़ा, चप्पलें आदि आईं। वजन ९८¾।

१३ अक्टूबर, बृहस्पतिवार

चरखेपर २२५ तार काते। पत्र लिखे: मीरा, वामन आठवले, मूलचन्द पारेख। आजसे मगन चरखा चलाना शुरू किया। थडानीकी पुस्तक पूरी की।

१४ अक्टूबर, शुक्रवार

चरखेपर २०७ तार काते। पत्र लिखे: जोशी बेचरलाल, गोडसे, ठक्कर बापा, केशव, मनुकुमार, रा[व]ब[हादुर], अयंगार, आत्माराम शास्त्री, डॉ० दत्ता, केलवकर, मोतीलाल राय, रेनॉल्ड्स, कुमुदचन्द्रजी, हेमप्रभा, भक्तिबहन। देवदास मिलने आया। बा अब नहीं आयेंगी। अम्बेडकरका तार मिला कि यदि छुट्टी मिल गई तो वे सोमवारको मिलने आयेंगे। वाडियाकी पुस्तक पूरी की।

१५ अक्टूबर, शनिवार

चरखेपर २०० तार काते। पत्र लिखे: दत्त, उर्मिलादेवी, रामभद्र आयर, नरगिसबहन, हीरालाल, जेकी, मीठूबहन, जॉर्ज, मगनलाल मेहता, जमोरिन, केलप्पन, रंगस्वामी, ठाकोरभाई।

१६ अक्टूबर, रविवार

चरखेपर २०५ तार काते। पत्र लिखे : माणेकबाई मेहता, प्यारेलाल, लालजी नारणजी, कीकीबहन, राधाकृष्ण, कमला नेहरू, शंकर, ओंकार उपासना प्रचार, रुखी। मदनकी उपवास-सम्बन्धी पुस्तक पूरी की।

१७ अक्टूबर, सोमवार

चरखेपर २१० तार काते। पत्र लिखे : नारणदास (८१), नानालाल कालिदास, पद्मजा, जोहरा, रंगस्वामी, माइकेल, लाला रोशनलाल, स्कॉट हैंडर्सन, पोलक (छोटा और बड़ा)। आज अम्बेडकर मिले। सरोजिनी भी साथमें थीं। हडसनने चेतावनी दी थी कि सिर्फ अस्पृश्यताके बारेमें ही बातचीत हो और उसे भी जाहिर न किया जाये।

१८ अक्टूबर, मंगलवार

चरखेपर २२२ तार काते। पत्र लिखे : डॉ० दलाल, मणिबहन देसाई, मगनलाल मेहता, छगनलाल मेहता, नानालाल कालिदास, नरसिंहराव भोलानाथ, बेगम मुहम्मद आलम, प्रेमजी दयालजी, मणिलाल गांधी, डेविड। कोलम्बोके मन्दिर-ट्रस्टीको तार। हडसनको पत्र। डॉ० कटियाल मिलने आये।

१९ अक्टूबर, बुधवार

चरखेपर २०८ तार काते। पत्र लिखे : नलिनी, कृष्णचन्द्र, खम्भाता, हरिजन (बालवे), दादाचानजी, शम्भुशंकर, कमलानी, जात-पाँत तोड़क मण्डल, शैलप्पा, कन्हैयालाल, अर्जुनदा, किसन, विन्स्लो, गौरीशंकर लाल, नाथ, मोहनलाल भट्ट। मणिलाल मिलने आया। आज शामको हमें पुरानी कोठरियोंमें ले जाया गया।

२० अक्टूबर, बृहस्पतिवार

चरखेपर २१६ तार काते। पत्र लिखे : एन्ड्रचूज, नारायण कुलकर्णी, अरुण, वालजी देसाई, श्रीनिवास सिन्हा, मीरा, मामा, शंकर, निर्मला, तारामती, कर्नल डॉयल, डोरोथी न्यूमैन। आज साँझसे रोटी शुरू की।

२१ अक्टूबर, शुक्रवार

चरखेपर २०० तार काते। पत्र लिखे : श्रीमती शिवप्रसाद गुप्त, शंकरभाई, गोडसे, शान्तिकुमार चटर्जी, लाला दुनीचन्द, कौशल्या, अलुविहारी, हॉयलैंड, जाइजी पेटिट। कैम्पसे सुलेमान काजी और ईश्वरलाल आये। ब्रेलवी भी मिला। उसकी खुराकके बारेमें बातें हुईं।

२२ अक्टूबर, शनिवार

चरखेपर २१७ तार काते। पत्र लिखे : मणिलाल गांधी, डॉ० दलाल, ख्वाजा, हीरालाल, उर्मिलादेवी, जमशेद, जरमन, मेरी बार, भिलोड[1] चन्द्रजी। सरदार प्रताप सिंहसे मिला।

१. साधन-सूत्रमें इसे 'त्रिलोक' भी पढ़ा जा सकता है।

२३ अक्टूबर, रविवार

चरखेपर २२० तार काते। पत्र लिखे : प्रो० त्रिवेदी, डेविड, शेषा अय्यंगार, जमशेद, हरिलाल परीख, रामभरोसे, हेमप्रभा, माधवन्, नगेन्द्रनाथ, लेडी ठाकरसी। पुंजाभाईका ३।। बजे स्वर्गवास हो जानेकी सूचना कल रातको ९ बजे घेलाभाईके तारसे मिली। पूरा दिन आश्रमको पत्र लिखनेमें बिताया। पुंजाभाईके संस्मरण लिखे।

२४ अक्टूबर, सोमवार

चरखेपर २०८ तार काते। पत्र लिखे : आश्रमको ४५ जिसमें पुंजाभाईका संस्मरण भी सम्मिलित है; अबुल कलाम, लक्ष्मी। आज भण्डारीने अस्पृश्यता-सम्बन्धी पत्र-व्यवहारके बारेमें सरकारका निर्णय पढ़कर सुनाया। उन्होंने उसकी नकल देनेसे इनकार कर दिया। मैंने आज उसका उत्तर दिया है। अबुल कलाम आजादका तार भी नहीं दिया।

२५ अक्टूबर, मंगलवार

चरखेपर २०० तार काते। पत्र लिखे : खम्भाता, सीतलासहाय, दिनशा मेहता, हरजीवन, रुखी, वैकुण्ठलाल, मणिलाल रेवाशंकर (बा, प्यारेलाल, नीलम, मणिलाल)। देवदास मिलने आया। उसके साथ प्यारेलाल और मणिलालकी पुस्तक भेजी। रातको कटेली आये और पत्रमें से डॉयल द्वारा सरकारी पत्रकी नकल न देनेवाले अंशको निकाल देनेका सुझाव दिया। उन्होंने मुझे उसकी नकल रखनेकी अनुमति दी। संशोधित पत्र आज दिया।

डेविडका भेजा हुआ शहद कल मिला।

२६ अक्टूबर, बुधवार

चरखेपर २१९ तार काते। पत्र लिखे : सातवलेकर, वसन्तलाल मुरारका, ब्रजेन्द्र, शंकरराव गोडसे, रामनाथ 'सुमन', कृष्णदास, दोड्डामति, रोहित, अतुलेन्दु गुप्त, सप्रू, लालजी नारणजी, रामदास गांधी। शिवप्रसाद गुप्तको तार। कर्नल डॉयल, डाह्याभाई आये।

२७ अक्टूबर, बृहस्पतिवार

चरखेपर २२३ तार काते। पत्र लिखे : मीरा, रतिलाल सेठ, मगनलाल मेहता, हरिसिंह गौर, नानालाल (नटवरलाल), छगनलाल (लीलावती), शंकर घाटगे, नेमचन्द कचराभाई, प्रभाशंकर, हरचन्दभाई, थडानी, नरसिंहराव।

२८ अक्टूबर, शुक्रवार

चरखेपर २४५ तार काते। पत्र लिखे : एरिस्टार्शी, ह्यू मार्शल, प्यारेलाल। मणिको तार। भक्तिबहन, दादाचानजी, सॉल्टको पत्र। बिड़लाको तार।

२९ अक्टूबर, शनिवार (दीवाली)

चरखेपर २०७ तार काते। पत्र लिखे : मगनलाल प्रा० + मंजुला, केवलराम + निर्मला, शिवजी नानजी, तारामती, नरेन्द्र देव (कलकत्ता), मगनलाल परमार।

३० अक्टूबर, रविवार, प्रतिपदा १९८९[1]

चरखेपर[. . .]।[2] पत्र लिखे: मथुरादास, मोहनलाल, गर्ट्रूड केलर, श्री हिरनोम, मथुरादास, शंकर, केदारनाथ, मुकाभाऊ, सरोजिनी, लेडी विट्ठलदास। आज पैरमें दर्द होनेके कारण बाकी कताई 'गाण्डीव' पर पूरी की।

३१ अक्टूबर, सोमवार

चरखेपर[. . .]।[3] पत्र लिखे: आश्रम – ४३, हरजीवन कोटक, छोटालाल शाह + माणेकबाई, सातवलेकर, प्रभावती। मणिको तार।

[पत्र लिखे:] मणि गलियारा + वनिता + रतन + देवी, कमला, नेहरू। मेजर भण्डारीको कलसे असहयोग आरम्भ करनेके बारेमें। लेडी अली इमामको समवेदना-सूचक तार। दोनों मेजर मिलने आये। 'भाखरी' के साथ फीकी दाल लेना स्वीकार किया। वल्लभभाईको जोरकी सर्दी।

१ नवम्बर, मंगलवार

चरखेपर १२४ तार और तकलीपर + ३६ तार काते। पत्र लिखे: मूलचन्द परमार, सत्यमूर्ति, होमी पेस्तनजी, नम्बियार, उ० वासुदेव जोशी, कृष्णचन्द्र अग्रवाल, डा० लतीफ सईद, भक्तिबहन, पद्मजा नायडू, अनसूयाबहन, शान्तिकुमार। भक्ति-बहनको गुजरातीकी ५ पुस्तकें भेजीं। प्रो० वाडियाकी ओरसे टमाटर आये। मणिलाल, सुशीला, तारा, सुरेन्द्र, सीता मिलने आये। आजसे 'सी' क्लासकी खुराक लेनी शुरू की। उसमें 'भाखरी', फीकी दाल और सुबहकी कांजी ली। महादेवने उपवास किया। 'गीता' का पारायण किया।

२ नवम्बर, बुधवार

चरखेपर १०६ तार काते। पत्र लिखे: प्रो० वाडिया, रामदास, आश्रम (भाऊ, रमा, टाइटस), जमनालाल, मदनमोहन। जमनालालको तार। कल रातको मेजर मिलने आये और भारत सरकारका तार मुझे दिया। आज उसका उत्तर दिया। और तारके फलस्वरूप आज मैंने सामान्य खुराक ली। लेडी विट्ठलदासके यहाँसे फल मँगाये।

३ नवम्बर, बृहस्पतिवार

चरखेपर ११५ तार काते। पत्र लिखे: मयाशंकर, मीरा, रॉस-बन्धु, माइकेल विलसन (सनफील्ड), नाजुकलाल, डॉ० गौर, नरोत्तम गिरधर कं०। अस्पृश्यताके बारेमें सरकारी निर्णय प्राप्त हुआ। इसे अच्छा ही कहा जायेगा। मैंने उत्तर दिया। फिल-हाल तो ईश्वरकी कृपासे बादल छँट गये हैं। हाथमें इतना अधिक दर्द महसूस होता है कि फिलहाल मैं जितनी कताई करता हूँ उसमें कमी करनी होगी।

१. गुजराती नववर्ष।

२ व ३. साधन-सूत्रमें तारोंकी संख्या नहीं दी गई।

४ नवम्बर, शुक्रवार

चरखेपर ९० तार काते। पत्र लिखे : कुसुम गांधी, प्रभाशंकर, अमृतलाल शाह, हीरजी, भणसाली, दादाचानजी। अस्पृश्यताके बारेमें : गोपाल मेनन, हरसरूप, निवारण-चन्द्र, दुनीचन्द, नरसिंहभाई, सोहनलाल, जगन्नाथप्रसाद, हेमप्रभा, जगन्नाथ विशारद, रघुनाथ शास्त्री, रामेश्वरनाथ ओझा, प्रफुल्ल घोष, चतुर्भुज विट्ठलदास, सन्तपाल, प्रभुनाथ मिश्र, शर्मा, दौलतराम गुप्त, धनुलाल शर्मा, ताताचारी। वझे और पटवर्धनको बुलाने पर दोनों आकर मिल गये। उन्हें समाचार-पत्रोंके लिए पहला वक्तव्य दिया। कैम्पसे त्रिवेदी और नानावटी तथा सर्कलसे मुंशी आकर मिल गये।

५ नवम्बर, शनिवार

चरखेपर १०५ तार काते। पत्र लिखे : शं० गोडसे, निर्मला (राजकोट), घन-श्याम बिड़ला, परचुरे शास्त्री, वर्नेकर, रामजीराव, सोमसुन्दरम्, आत्माराम शास्त्री, तलेगाँवकर। तार दिये : सरूपरानी, छ० मेहता, बिड़ला। वझे, कोदण्डराव और लिमये मिलने आये। उन्हें दूसरा वक्तव्य दिया।

६ नवम्बर, रविवार

चरखेपर १०२ तार काते। पत्र लिखे : नानालाल कान्तिलाल वोरा, अरुणा, उमा, सुशीला, गोविन्ददास, कालिदास जसकरण, जमशेद, चुन्नीलाल व्यास, हनुमान-प्रसाद, हबीबुर्रहमान, सतीशबाबू।

७ नवम्बर, सोमवार

चरखेपर ११६ तार काते। पत्र लिखे : लीलावती मेहता, बली + कुमुद + रामी + मनु, आश्रम (४६), रेहाना। बिड़ला, उर्मिलाको तार। आज प्यारेलाल, कोदण्डराव, शास्त्री आदि आये। उन्हें तीसरा वक्तव्य दिया। महादेवको मेरे साथ रहनेकी अनुमति मिली।

८ नवम्बर, मंगलवार

चरखेपर ११३ तार काते। पत्र लिखे : हरजीवन कोटक, आश्रम (बा + राधा + चम्पा + नारणदास + तलवलकर), रामदास (साथमें दो पुस्तकें — 'रामायण' और रस्किन), जमनालाल। नटराजन्को अस्पृश्यताके बारेमें, कोदण्डराव, शास्त्री। मेजर भण्डारीको ईजिप्टके तारके बारेमें। आनन्दशंकर ध्रुव, समाचार-पत्रोंके बारेमें भण्डारीको (२)। शान्ति, चीनीको तार। मामा मिलने आये। 'सकाल' के सम्वाददातासे भेंट।

९ नवम्बर, बुधवार

चरखेपर १११ तार काते। पत्र लिखे : हासमअली साले, कपिल, श्रीमती चिद-म्बर, डॉ० मोदी, कीकीबहन, मुन्नालाल, राँका, अन्नदानाप्पा, बर्नार्ड, फूलचन्द, लालजी नारणजी, मगनलाल मेहता, वालजी देसाई। अस्पृश्यताके बारेमें राधाकान्त, मोतीलाल राय, वासुकाका, वकील, गोसीबहन, नामजोशी, रामसामी, अध्यक्ष–जिला परिषद्,

अमरावती; जेठालाल रामजी, दामोदर मिश्र, महादेव शास्त्री, छोटाभाई उ० पटेल। अस्पृश्यताके बारेमें चौथा वक्तव्य, भूदेव मुकर्जी। राजभोज, सर लल्लूभाई और जमोरिन एवं ठक्करको तार।

१० नवम्बर, बृहस्पतिवार

चरखेपर १०३ तार काते। पत्र लिखे: करसनदास चितलिया, मीरा, बोरीदास (मद्रास), अनसूया, नौरोजी बेलगाँववाला, नरसिंहराव, अन्सारी, रुक्मिणी, माणेकबाई, भगवानदास, हीरालाल, छगनलाल मेहता, जेकी, फीरोजचन्द, भगवती, देवी, लक्ष्मणलाल, नारायणस्वामी, प्यारेलाल, केवलराम, रेहाना, भक्तिबहन। अस्पृश्यताके बारेमें चुन्नीलाल, गणेश भीकाजी, कैनेडी, हीरालाल शाह, मुखाभाऊ, बनुभाई परमार, वासुकाका, नटराजन्, गुरुदेव। अम्बालाल, र० बाबू, गोपाल मेनन, कीरचन्दको तार। कुरेशीके बारेमें बढवान आश्रमको तार।

११ नवम्बर, शुक्रवार

चरखेपर १०४ तार काते। पत्र लिखे: देवी वेस्ट, सत्यानन्द, जी० एस० नरसिंहाचारी, भारती, छगन झवेरी, लक्ष्मी, एस्थर। अस्पृश्यताके बारेमें श्रीनिवासन्, जी० रामचन्द्रन्, पुरुषोत्तमदास, हरकिशनदास, मथुरादास वसनजी, साटुर, के० एम० शाह, सदानन्द, वृद्धिवल्लभ, उर्मिला, वासन्तीदेवी, के० आर० नाथ। उर्मिलाको तार। उर्मिलाको सौ रुपयेका मनिआर्डर भेजा। लल्लूभाई, राजभोज और उनके मित्र मिलने आये। इसमें तीन घंटे लगे। मित्रोंमें [जो मिलने आये] प्रो० ओतुरकर, भाग्यवन्त, दातार थे।

१२ नवम्बर, शनिवार

चरखेपर १०० तार काते। पत्र लिखे: भटनागर, मगनलाल नरसिंहदास, अमृतलाल गोरधनदास, कोटक। अस्पृश्यताके बारेमें पुरुषोत्तमदास, माइकेल, हीरालाल जोशी, विश्वनाथ गवारीकर, श्यामजी मारवाड़ी, स्वामी योगानन्द, कीकाभाई लवजीभाई, उत्तमचन्द गंगाराम, वेंकटरामैया, वियोगी हरि, राजभोज, बिड़ला, वकीलको मेरे साथ हुई उसकी चर्चा। आनन्दशंकर, चिन्तामणि, कुँजरू, रा[व] ब[हादुर] राजा, अवन्तिकाबाई, करसनदास चितलिया, हंसाबहन, प्रेमलीलाबहन, सातवलेकर, हीरालाल शाह। आनन्दशंकरको तार। 'हिन्दू' के सालीवती, कोदण्डराव, वासुकाका और हरिभाऊ मिलने आये।

१३ नवम्बर, रविवार

११३ तार कानिटकरके चरखेपर काते। पत्र लिखे: हरदयालबाबू, अब्दुल आलिम, एलविन, रोहित, नानालाल। अस्पृश्यताके बारेमें केशवराम टंडन, सूर्यनारायण व्यास, गौर गोपाल, परीक्षितलाल, रामनाथ 'सुमन', महादेव शास्त्री, धनुमल शर्मा, शारदा मेहता, मदनमोहन मिश्र, राधाकान्त, बसन्तकुमार चटर्जी।

१४ नवम्बर, सोमवार

तकलीपर ५२ तार काते। हाथमें दर्द होनेकी वजहसे तकलीपर कातना शुरू किया। सेठ जमनालाल और छगनलालको तार। पत्र लिखे: आश्रमको (४१), डॉ० मोदी, साहनी। अस्पृश्यताके बारेमें कानिटकर, नृपेन्द्रसिंह, राजभोज, अनन्तराव, मन्मथराय। सतीश बाबूको तार। कोदण्डरावको पाँचवाँ वक्तव्य दिया।

१५ नवम्बर, मंगलवार

तकलीपर ४० तार काते। पत्र लिखे: कर्नल डॉयलको मणिबहनके बारेमें, मेजर भण्डारी, चिन्ना थम्बी। केवलराम, मगनलालको तार। पत्र: भवानजी, शुक्रराम शास्त्री, लक्ष्मीकान्त, नरसिंहराव, लक्ष्मणलाल मेहता, तारामती, गुलाबचन्द शाह, परमहंस प्रज्ञानेश्वर, लेडी ठाकरसी, नटराजन् (पुत्र)। अस्पृश्यताके बारेमें तार कुन्हप्पा, शर्मा, जेंकिन्स, फीरोजचन्दको। [पत्र:] दातार, करसनदास, घनश्यामदास, गोपाल मेनन, वसन्तराम शास्त्री, हरिहरप्रसाद, नेमिचन्द्र।

राधाकृष्ण, प्रो० पुरन्दरे और उनकी पत्नी तथा कोदण्डराव मिलने आये।

गुजराती (एस० एन० १९३३७) से।

परिशिष्ट

परिशिष्ट १[1]

(क) वल्लभभाई पटेलसे विचार-विमर्श

६ सितम्बर, १९३२

गांधीजी : सुबह तो तुम परिहास कर रहे थे, किन्तु मैं सचमुच कहता हूं कि तुम्हें यदि कुछ पूछना हो तो पूछ लो।

वल्लभभाई पटेल : आपके खयालमें ये लोग क्या करेंगे?

गां० : मुझे अब भी यही लगता है कि ये लोग १९ तारीख या उससे पहले मुझे छोड़ देंगे। ये लोग मुझे उपवास करने दें और किसी को कोई खबर न दें और यह कहें कि कैदीके रूपमें जो नहीं करना चाहिए था सो उन्होंने किया, तो हम क्या करें। यह तो नीचताकी पराकाष्ठा होगी। मैं यह नहीं कहता कि ये लोग इस हदतक नहीं जा सकते, बल्कि ये लोग उस हदतक जाना जरूरी नहीं समझते। और ये लोग आवश्यकतासे अधिक दूर जानेवाले हैं नहीं।

व० प० : तो फिर आप क्या करेंगे?

गां० : २० तारीखको तो उपवास शुरू किया ही नहीं जा सकता। २० तारीखका आग्रह नहीं किया जा सकता।

व० प० : क्या फिर इसका मतलब यह नहीं हुआ कि नया विधान बननेतक हमें समय मिल गया? या फिर लोगों और सरकारको आप लम्बी मियादका नोटिस दे सकते हैं?

गां० : हाँ, किन्तु यह तो इस बातपर निर्भर करता है कि ये लोग मुझे बाहर जाकर कितना करने देते हैं। क्या स्थिति होगी, इसकी तो कल्पना मैं नहीं कर सकता। यह भी मुझे नहीं सूझता कि मैं कैसा पत्र तैयार करूँगा। किन्तु मुझे तो हिन्दू समाज, अन्त्यज, सरकार, मुसलमान, सभीको ध्यानमें रखकर करना पड़ेगा। हिन्दू समाजको तो अन्त्यजोंके साथ मिलकर जगह-जगह सभाएँ करके इस चीजसे इनकार करना होगा। सरकारने तो खृष्टी सरकारके रूपमें ऐसा किया है, इसलिए सरकार और ईसाइयों, दोनोंसे मुझे एक ही बात कहनी होगी कि आप ईसाई होनेके नाते ऐसा नहीं कर सकते। हमारा स्वराज हो जाने दीजिए फिर आप अन्त्यजोंपर जो असर डालना चाहें सो डालें, किन्तु आज हमारे टुकड़े मत कीजिए। मुसलमानोंसे तो

१. देखिए पृष्ठ ६५-६९।

यह मैंने विलायतमें भी कहा था। यहाँ भी यही कहता हूँ। मैं हिन्दू समाजको भी समझाऊँगा कि अब तो अन्त्यजोंके लिए मुसलमान या ईसाई बननेके सिवा कोई चारा नहीं है।

व० प०: परन्तु यहाँ तो सुननेवाले मुसलमान हैं ही कहाँ?

गां०: भले ही कोई न हो। किन्तु हमें आशा रखनी चाहिए कि ये लोग भी जागेंगे। मानव-स्वभावमें विश्वास रखना सत्याग्रहका मूल है, दुष्टतम व्यक्तिको पिघला सकनेकी श्रद्धामें है। इसलिए यह कहनेवाला कोई-न-कोई मुसलमान तो जरूर निकलेगा कि इतनी ज्यादती तो हम बरदाश्त नहीं कर सकेंगे। यह सब करनेके लिए खास-खास लोगोंको तो मैं बुलवा लूँगा। मैं नहीं जानता कि उन सबको आने दिया जायेगा या नहीं। किन्तु ये लोग तो मेरा अपमान भी कर सकते हैं। ये लोग कह सकते हैं कि इसे हमने इसलिए छोड़ा है क्योंकि हम इसकी मृत्युकी जिम्मेदारी लेनेको तैयार नहीं हैं। किन्तु यदि यह सविनय अवज्ञा करेगा तो हमें उसे फिर बन्द कर देना पड़ेगा।

महादेव देसाई: जो लोग आयेंगे उनमें ईसाई मित्र भी होंगे और वे कहेंगे कि आप सरकारको दोष देते हैं किन्तु अपना दोष क्यों नहीं दूर करते? हिन्दू समाज अन्त्यजोंको अछूत क्यों मानता है?

गां०: यह समझाना मेरे हाथमें है। यह कोई बड़ी बात नहीं है। उनसे तो यह कहा जा सकता है कि 'हमें आपसमें निबट लेने दीजिए, आप क्यों बीचमें पड़ते हैं? जब हम अपना कारबार चलाने लग जायें तब आपको जो करना हो सो करना। हममें फूट डालकर फिर क्यों ये सब बातें बनाते हैं? आज तो अन्त्यजोंके लिए आपके या मुसलमानोंके पास जानेके सिवा कोई चारा ही नहीं रहा।' स्त्रियोंका सवाल भी अन्त्यजों-जैसा ही है। परन्तु स्त्रियाँ कोई अछूत नहीं हैं। यदि वे अछूत बनना चाहें तो भी पुरुष उनकी खाटपर जाकर बैठेंगे। उनका अलग निर्वाचक-मण्डल बनाकर भी उन्हें अलग नहीं किया जा सकता। आज तो अन्त्यजोंको स्थायी रूपसे अलग कर दिया गया है। इसका परिणाम क्या निकलेगा? आन्तरिक विग्रह होगा।. . . जैसे लोग तो हैं ही। वे बिरादरीमें से गुंडोंको इकट्ठा करके हिन्दुओंपर अत्याचार करायेंगे, कुओंमें जहर डलवायेंगे और चाहे जो कार्रवाई कर सकते हैं।

यहाँ रहनेवाले तुम सब लोगोंका तो इतना ही कर्त्तव्य है कि कैम्प जेलमें सबको बता दो कि उपवास करनेकी सख्त मनाई है और शान्ति रखनी है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ७-९

(ख) भी० रा० अम्बेडकरसे विचार-विमर्श

२२ सितम्बर, १९३२

अम्बेडकर: हमें यह मानकर चलना चाहिए कि देशमें दो भिन्न विचारधाराओंके लोग हैं और मुझे उसका मुआवजा मिलना चाहिए। मेरी यह माँग है कि एक ऐसा स्पष्ट समझौता हो जाए जिससे अन्य प्रकारसे मेरी क्षतिपूर्ति हो जाए। निर्णयके अनुसार मुझे ७१ जगहें मिलती हैं। यह सही, अच्छा और निश्चित हिस्सा है।

गांधीजी: आपके विचारसे।

अ०: इसके अतिरिक्त सामान्य निर्वाचक-मण्डलमें मुझे मत देने और उम्मीदवारके रूपमें खड़े होनेका अधिकार भी मिलता है। फिर मजदूरोंके निर्वाचक-मण्डलमें भी मुझे मताधिकार मिलता है। हम इतना समझते हैं कि आप हमारी बहुत अधिक मदद करनेवाले हैं।

गां०: आपकी नहीं।

अ०: किन्तु आपके साथ मेरा एक ही झगड़ा है, आप केवल हमारे लिए नहीं बल्कि तथाकथित राष्ट्रीय हितोंके लिए काम करते हैं। यदि आप केवल हमारे लिए काम करें, तो आप हमारे चहेते नायक बन जायेंगे।

गां०: यह तो बहुत सुन्दर बात है।

अ०: मुझे तो अपने वर्गके लिए राजनीतिक सत्ता चाहिए। हमारे जीवित रहनेके लिए यह अनिवार्य है। इसलिए मेरे समझौतेका आधार यह है कि मुझे उचित हिस्सा मिले। मैं हिन्दुओंसे कहना चाहता हूँ कि मुझे मुआवजेका आश्वासन मिलना चाहिए।

गां०: आपने अपनी स्थिति बहुत सुन्दर ढंगसे स्पष्ट कर दी है। किन्तु मैं आपसे एक प्रश्न पूछना चाहता हूँ। आपने कहा कि यदि दलित वर्गमें कोई अन्य सच्चा दल हो तो उसे भी आगे आनेकी पूरी गुंजाइश होनी चाहिए। इसलिए ये लोग अलग प्रारम्भिक चुनावोंके बिना संयुक्त निर्वाचक-मण्डलकी शर्त न मानें, यह सर्वथा उचित है। मुझे जो चीज पसन्द नहीं है वह यह कि आपने यह क्यों नहीं कहा कि इस ढंगका एक अलग चुनाव होना चाहिए। इस मामलेका मैंने जहाँतक अध्ययन किया है वहाँतक मुझे लगता है कि यदि मैं अलग प्रारम्भिक चुनावको स्वीकार कर लूँ तो उससे मेरी प्रतिज्ञाका शब्दार्थ भंग नहीं होता। इसलिए मैं यह [प्रारम्भिक चुनावकी] शर्त मंजूर करता हूँ किन्तु मुझे उसकी भाषाकी निश्चय ही जाँच करनी पड़ेगी। फिलहाल तो मैं इतना ही कहता हूँ कि अलग प्राथमिक चुनाव का विचार मेरी प्रतिज्ञाके विरुद्ध नहीं है। किन्तु इसमें आप जो केवल तीन व्यक्तियोंका ही पैनल रखनेकी बात कहते हैं उससे मुझे कुछ सन्देह होता है। इसमें तो मेरे लिए पहलू बदलनेतक की गुंजाइश नहीं है। इसके अतिरिक्त आप तो कुछ सीटोंके लिए ही दो अलग-अलग चुनाव करनेका विचार करते हैं, और इस प्रकार [हरिजनों के] दोनों पक्षोंको सन्तुष्ट करना चाहते हैं। एक चुनाव केवल हरिजन मतदाताओंके लिए प्राथमिक ढंगका हो और दूसरा संयुक्त निर्वाचक-मण्डलके लिए हो। मुझे एक

पक्षका हित नहीं बल्कि पूरे अस्पृश्य वर्गके हितको सजग और सावधान रहकर साधना है। मुझे अस्पृश्योंकी सेवा करनी है। इसीलिए मुझे आपके प्रति तनिक भी रोष नहीं है। जब आप मेरे प्रति किसी अपमानजनक या क्रोधपूर्ण शब्दका प्रयोग करते हैं तो मैं अपनेसे यही कहता हूँ कि तू इसी लायक है। यदि आप मेरे मुँहपर थूकें तो भी मैं क्रोध नहीं करूँगा। ईश्वरको साक्षी मानकर मैं यह कहता हूँ। मैं यह जानता हूँ कि आपको जीवनमें बहुत कटु अनुभव हुए हैं। किन्तु मेरा दावा असाधारण है। आप तो जन्मसे अस्पृश्य हैं किन्तु मैं स्वेच्छासे अस्पृश्य बना हूँ। और इस जातिमें नवागन्तुकके नाते इस जातिके हितकी बात इस जातिके पुराने लोगोंकी अपेक्षा मुझे ज्यादा महसूस होती है। फिलहाल मेरी नजरके सामने मूक अस्पृश्य — दक्षिण भारतके 'अगम्य' (अन अपरोचेबल्स) और 'अदृश्य' (अनसीएबल) — खड़े हैं। मैं इस भावनासे इस योजनाकी जाँच कर रहा हूँ कि इसका इन सबपर क्या असर पड़ेगा। आप तो कह देंगे कि इसकी चिन्ता आप क्यों करते हैं। हम सब ईसाई या मुसलमान बन जायेंगे। मैं कहता हूँ कि मेरे शरीरके न रहनेपर आपको जो करना हो सो करें। इस योजनाके बारेमें मैं कहता हूँ कि यदि यह योजना दलित वर्गोंके लिए अच्छी हो तो यह सभी मतदाताओंके लिए अच्छी होनी चाहिए। शुरूसे ही इस प्रकार दो विभाग कर दिये जायें, यह मुझे पसन्द नहीं। यदि सभी अस्पृश्य एक ओर संगठित होंगे तो मैं सनातनियोंके किलेको सुरंग लगाकर उड़ा सकूँगा और जमींदोज़ कर दूँगा। मैं चाहता हूँ कि पूरा अस्पृश्य समाज एक स्वरसे सनातनियोंके विरुद्ध विद्रोह करे। जबतक उम्मीदवारोंको नामजद करना आपके हाथमें है तबतक आपको संख्याकी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। मैं तो आजीवन लोकतन्त्रवादी रहा हूँ। जब मेरी भस्म हवामें उड़ने लगेगी या, यदि ऐसा न हो सका, उसे गंगाजी में विसर्जित कर दिया जायेगा तो सारी दुनिया यह मानने लगेगी कि मैं लोकतन्त्रवादियोंमें शिरोमणि था। यह मैं अभिमानसे नहीं कहता बल्कि नम्रतापूर्वक सत्यका उच्चारण कर रहा हूँ। बारह वर्षकी कोमल आयुमें मैंने प्रजातन्त्रका पाठ पढ़ा था। अपने घरके भंगीको अस्पृश्य माननेके कारण मैंने अपनी माँ के साथ झगड़ा किया था। उस दिन मैंने भंगीको ईश्वरके रूपमें अवतार लेते देखा। जब आपने यह कहा कि अस्पृश्योंका हित मुझे अपने जीवनसे भी अधिक प्रिय है तो आपने ईश्वरके वचन कहे थे। अब आप ईमानदारीसे इसपर जमे रहें। आपको मेरे जीवनकी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। बल्कि अस्पृश्योंके प्रति झूठे मत बनना। मेरी मृत्युसे मेरा काम कोई समाप्त नहीं हो जायेगा। मैंने अपने पुत्रसे परिषद्को एक सन्देश देनेको कहा है। जिसमें मैंने उससे कहा है कि मेरा जीवन खतरेमें पड़नेकी वजहसे तू अछूतोंका हित छोड़ देनेके लालचमें मत फँसना। और मुझे विश्वास है कि यदि मैं मरूँगा तो मेरे पीछे मेरा लड़का भी मरेगा। वह अकेला ही नहीं बल्कि और भी बहुत-से मरेंगे। क्योंकि मेरा एक ही लड़का नहीं बल्कि हजारों लड़के हैं। हिन्दू धर्मकी प्रतिष्ठाको बचानेके लिए यदि वह अपने प्राण उत्सर्ग नहीं करता तो वह मेरा लायक लड़का नहीं माना जायेगा। और अस्पृश्यताको जड़-मूलसे उखाड़कर फेंके बिना हिन्दू धर्मकी प्रतिष्ठा बचनेवाली नहीं है।

ऐसा तभी होगा जबकि अस्पृश्योंको हर मामलेमें स्पृश्य हिन्दुओंके बराबरका दर्जा मिलेगा। आज जिन्हें 'अदृश्य' माना जाता है उन्हें भी हिन्दुस्तानका वाइसराय बननेका पूरा अवसर मिलना चाहिए। हिन्दुस्तान पहुँचनेके बाद मैंने जो पहला राजनीतिक भाषण दिया था उसमें मैंने कहा था कि मैं तो किसी भंगीको कांग्रेस-अध्यक्ष बनाना चाहूँगा।

अतः मैं आपसे अपील करता हूँ कि आप मोलतोल मत कीजिये। जो देखनेमें अच्छी न लगे ऐसी भद्दी चीज मेरे पास मत लाइये। मेरे पास तो ऐसी सुन्दर भेंट लाइये जिससे स्वेच्छासे मृत्युशय्या पर पड़े इस मनुष्यके जीवमें कुछ चेतना आये। किन्तु ऐसा आप तभी करें जब आपको यह लगे कि मेरे सहयोगका कोई मूल्य है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ६९-७२

(ग) एक वक्तव्य

२२ सितम्बर, १९३२

डॉ० अम्बेडकरने प्रारम्भिक चुनावकी जो पद्धति मुझे समझाई है और जो मुझे दी गई योजनाकी धारा (ब)में बताई गई है, उसमें मेरी प्रतिज्ञाकी दृष्टिसे कोई आपत्ति नजर नहीं आती। परन्तु अन्तिम रूपसे किसी भी योजनाको स्वीकार करनेके पहले मैं इस पूरी चीजको स्पष्ट भाषामें लिखा देखना चाहूँगा। तदुपरान्त मैं धारा (ब)के सम्बन्धमें अपना अन्तिम निर्णय दे सकूँगा। उसकी भाषा मुझे पसन्द नहीं है। उसमें काफी रद्दोबदल करनेकी जरूरत है। उक्त धाराके कुछ अंशों और उसकी भाषाके सम्बन्धमें मुझे जो आपत्तियाँ हैं वे मैंने समझा दी हैं। मेरी आपत्तियाँ इस प्रकार हैं:

(१) प्राथमिक चुनाव-पद्धति और विशेष रूपसे सुरक्षित सीटें दस वर्ष बाद स्वतः समाप्त हो जानी चाहिए।

(२) मतदाताओंकी संख्या लोथियन कमेटीकी रिपोर्टके अनुसार तय की जानी चाहिए। धारा (ब)के सम्बन्धमें मुझे दोहरी आपत्ति है। मैं जिस उद्देश्यसे इस मरण-शय्या पर पड़ा हुआ हूँ उस उद्देश्यको वह नगण्य ही नहीं बना देती बल्कि राष्ट्रको भी भारी नुकसान पहुँचानेवाली है।

अन्य मुद्दोंके बारेमें तो आपको हिन्दू जातिको उसकी प्रतिष्ठापर छोड़ देना चाहिए। ऐसा कुछ करनेको आप मुझसे मत कहिए जो मरणशय्या पर पड़े व्यक्तिको करना शोभा न दे। मैं जानता हूँ कि यदि मैं अपने मुद्देसे हट जाऊँगा तो राष्ट्रका सर्वनाश हो जायेगा।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ७२

(घ) भेंट : बोहरोंके प्रतिनिधि-मण्डलको[1]

२३ सितम्बर, १९३२

यदि आप गहराईसे विचार करें तो देखेंगे कि इस दुनियामें कोई काम जानकी बाजी लगाए बिना नहीं हो सकता। मेरे प्रति आपका प्रेम मेरी दृढ़ताके कारण है, प्राण देनेकी मेरी शक्तिपर अवलम्बित है। इसलिए आप मुझे जिस विचारसे चाहते हैं उसी विचारसे छोड़ दीजिए। मेरा जीवन भगवान्के हाथमें है। यदि मैं चाहूँ तो भी नहीं जा सकता और यदि जानेवाला हूँगा तो अच्छेसे-अच्छे डॉक्टर भी मुझे बचा नहीं सकते। यदि आप इस बातकी गवाही दे सकें कि मैं सच्ची बातके लिए मरा तो यह बड़ी बात होगी। जिस कलंकको दूर करनेके लिए मैं उपवास कर रहा हूँ, वह केवल हिन्दू धर्मपर नहीं बल्कि पूरे हिन्दुस्तानपर है। क्योंकि सारा हिन्दुस्तान इस कलंकका गवाह है। इसलिए आप सबको यह प्रार्थना करनी चाहिए कि गांधीने जो व्रत लिया है वह पूरा हो। ऐसी कोई बात नहीं है कि हिन्दूके लिए मुसलमान और मुसलमानके लिए हिन्दू प्रार्थना नहीं कर सकता। इस तरहका विचार ढोंग है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ७३-७४

(ङ) सन्देश : मदनमोहन मालवीय, एम० आर० जयकर और तेजबहादुर सप्रूको[2]

२४ सितम्बर, १९३२

मेरी वजहसे अनावश्यक जल्दबाजी न करें। उन्हें जो चीज सही लगे उसीपर हस्ताक्षर करें। बादमें यदि मुझे मनानेकी जरूरत पड़ेगी तो उसकी गिनती दोषमें की जायेगी और मुझे भी दोषी माना जायेगा। धर्मके मामलेमें लिहाज नहीं किया जा सकता। इसलिए जो सत्य, उचित और न्याय्य है उसपर डटे रहना चाहिए। यदि ऐसा करनेसे मेरी जीवन-डोर टूट जाये तो भले ही टूट जाये। इसलिए जिसे जो उचित लगे वह वही करे। मेरी स्थिति यह है कि या तो पाँच वर्ष बाद हरिजनोंकी मतगणना हो या मुझे मरने दिया जाये, जिसे यह उचित न जान पड़े या हानिकारक लगती हो तो वह उसे मंजूर न करे।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ ८०

१. बोहरे गांधीजी से यह अनुरोध करने आये थे कि वे उपवास करनेका विचार छोड़ दें।

२. गांधीजी ने महादेव देसाईसे यह सन्देश भेजनेको कहा था।

(च) भी० रा० अम्बेडकरसे विचार-विमर्श

१७ अक्तूबर, १९३२

अम्बेडकर: मैं तो अस्पृश्यताके बारेमें नहीं बल्कि राजनीतिक परिस्थितिके बारेमें बातचीत करने आया हूँ।

गांधीजी: सच बात है। मैं उस बारेमें आपसे बातचीत नहीं कर सकता; यदि आप करेंगे भी तो मैं अपनी राय नहीं दे सकता, मेरा मन ही उस दिशामें काम नहीं करता।

अ०: मैं तो कह-भर देता हूँ कि मैं सिर्फ इसीलिए आया हूँ। मुझे आपसे सविनय अवज्ञा छोड़कर बाहर आकर गोलमेज परिषद्में सम्मिलित होनेकी प्रार्थना करनी थी। बात यह है कि यदि आप नहीं चलेंगे तो हमें विलायतमें कुछ नहीं मिलेगा, उलटे सब-कुछ बिगड़ जायेगा। इकबाल-जैसे व्यक्ति तो देशके दुश्मन हैं, वे सब-कुछ बिगाड़ आयेंगे। और हमें तो किसी भी तरहके विधानके अनुसार करना है। अतः सामान्य व्यक्ति होनेके बावजूद आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप चलें।

गां०: यदि आप अपने तर्कको विस्तारसे बतायें तो मैं उसपर विचार करूँ। मेरा सुझाव है कि आप बाहर जाकर समाचार-पत्रोंमें इस विषयपर विस्तारसे लिखें। मैं उसपर विचार करूँगा।

अ०: यह पूरी चीज लिखी नहीं जा सकती है। इसमें तो मुझे ऐसी बातें कहनी पड़ेंगी जिससे मुसलमानोंको बहुत दुःख हो सकता है और यह मैं सार्वजनिक रूपसे नहीं कह सकता। किन्तु अब तो मैं अपना नाम दिये बिना दूसरी ही तरहसे लिखूँगा या लिखवाऊँगा। उसे आप देखियेगा और यह समझकर उसपर विचार कीजियेगा कि वह मेरा ही है।

गां०: अच्छा तो यह होगा कि आप अपने नामसे ही लिखें। फिर जैसी आप की इच्छा।

अ०: मुझे ईमानदारीसे कहना चाहिए कि ये जो मन्दिर खुल रहे हैं, सहभोज हो रहे हैं, इसमें मुझे दिलचस्पी नहीं है; क्योंकि इसमें तो हमारी मौत है। मेरे आदमियोंको मार खानी पड़ती है और कटुता बढ़ती है। विलेपारलेमें सहभोज निबट जानेके बाद काम करनेवाले मराठोंने हड़ताल कर दी। यदि उच्च वर्णके हिन्दुओंमें सामर्थ्य होती तो वे अस्पृश्योंको नौकर रखते। किन्तु यह तो हो नहीं सकता। इसलिए इसमें मुझे दिलचस्पी नहीं है। मैं तो यह चाहता हूँ कि सामाजिक और आर्थिक कष्ट मिट जायें।

गां०: आप उदाहरण दीजिए।

अ०: अस्पृश्योंको रहनेके लिए घर नहीं मिलते; उनपर अन्याय और अत्याचार होते रहते हैं। एक मामलेमें एक अस्पृश्यपर किसी मराठेका खून करनेका जुर्म था। मामलेको सेशनमें ले जाकर मैं उसे छुड़वा सकता था, किन्तु मजिस्ट्रेटने खूनके बदले सख्त चोटका इलजाम लगा दिया। अब उसे कुछ-न-कुछ सजा होगी। स्वयं

मुझपर क्या बीतती है सो आप नहीं जानते होंगे। मुझे बम्बईमें पोर्टट्रस्ट की चालके अतिरिक्त और कहीं रहनेकी जगह नहीं मिलती। अपने गाँवमें तो मुझे महारोंकी बस्तीमें ही रहना पड़ता है। पूनामें अन्य सब लोग अपने मित्रोंके यहाँ ठहरते हैं। मुझे नेशनल होटलमें ठहरना पड़ता है और सात रुपये तथा आने-जानेका किराया खर्च करना पड़ता है।

गां० : भारत सेवक समाज?

अ० : हाँ, वहाँ शायद रहा जा सकता है। किन्तु वहाँ भी शायद ही। यदि आप वझे से पूछें तो पता चले। वझे की उपस्थितिमें एक बार उनके नौकरने मेरा अपमान किया था। मुझे तो ये सब परेशानियाँ दूर करनी हैं।

गां० : मैं आपसे सहमत हूँ। आपको यह मालूम होना चाहिए कि अभी मेरा उपवास पूरा नहीं हुआ है, अभी बना ही हुआ है। समझौतेको सुधरवाना तो गौण बात थी। मुख्य बात तो अभी बाकी है। इसके लिए मैं अपने प्राण उत्सर्ग करनेको तैयार हूँ। आपने जिन अन्यायोंका उल्लेख किया वे सब निश्चय ही मिटने चाहिए।

अ० : बिड़लाने मुझे अस्पृश्यता-निवारण कमेटीमें लेनेको कहा। मैंने इनकार कर दिया; क्योंकि मैं अकेला क्या कर सकता हूँ? मुझे तो आप जैसा चाहेंगे उस तरहके अस्पृश्यता-निवारणके काम में सहमति देनी पड़ेगी। हम यदि बहुमतमें हों तो जिस तरह चाहें उस तरह सुधार करवा सकते हैं। आप चाहेंगे कि मन्दिर बनवाये जायें या कुएँ खुदवाये जायें। हमें लगेगा कि यह पैसा बेकार जा रहा है, इसके लिए कोई दूसरा रास्ता होना चाहिए।

गां० : मैं आपके दृष्टिकोणको समझता हूँ और मैं इसे ध्यानमें रखूँगा और देखूँगा कि क्या किया जा सकता है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ १४४-४६

परिशिष्ट २[1]

विधानमण्डलोंमें दलित वर्गोंके प्रतिनिधित्व तथा उनके कल्याण-सम्बन्धी कुछ अन्य बातोंपर दलित वर्गों एवं शेष हिन्दू समुदायके पक्षोंको प्रस्तुत करनेवाले नेताओंके बीच हुआ समझौता।[2]

१. देखिए पृष्ठ १४९-५०।

२. समझौतेपर हस्ताक्षर २४ सितम्बरको ६ बजेके लगभग शान्त और सौहार्दपूर्ण वातावरणमें हुए। २६-९-१९३२ के **बॉम्बे क्रॉनिकल**की रिपोर्टके अनुसार श्री मदनमोहन मालवीयने सबसे पहले हस्ताक्षर किये, उसके बाद डॉ० अम्बेडकरने। अम्बेडकरने श्री राजगोपालाचारीकी कलमका उपयोग इस उद्देश्यके लिए किया और उसे अपने ही पास रख लिया और उसके बदलेमें अपनी कलम उन्हें (श्री० राजगोपालाचारी को) हस्ताक्षर करने तथा इस अवसरकी निशानीके तौरपर अपने पास रखनेके लिए दे दी।

१. आम निर्वाचन-क्षेत्रोंमें से कुछ स्थान दलित वर्गोंके लिए सुरक्षित रखे जायेंगे। राज्य विधानमण्डलोंमें ये सुरक्षित स्थान निम्न प्रकार होंगे :[1]

मद्रास	३०
सिन्ध सहित बम्बई	१५
पंजाब	८
बिहार और उड़ीसा	१८
मध्य प्रान्त	२०
असम	७
बंगाल	३०
संयुक्त प्रान्त	२०
योग	१४८

२. इन सीटोंके लिए चुनाव संयुक्त निर्वाचन-मण्डलों द्वारा होंगे, परन्तु इन चुनावोंकी विधि निम्न प्रकार होगी :

आम मतदाता-सूचीमें जिनके नाम दर्ज हैं, दलित वर्गोंके ऐसे सभी मतदाताओंका एक निर्वाचक-मण्डल बनाया जायेगा। यह निर्वाचक-मण्डल प्रत्येक सुरक्षित सीटके लिए चार-चार दलित वर्गीय उम्मीदवारोंका चुनाव एकमतकी पद्धतिसे करेगा और इस प्राथमिक चुनावमें क्रमशः सबसे अधिक मत पानेवाले चार उम्मीदवार ही आम निर्वाचक-समूह द्वारा सम्पन्न किये जानेवाले चुनावके उम्मीदवार होंगे।

३. केन्द्रीय विधान-मण्डलमें भी दलित वर्गोंके प्रतिनिधि इसी तरहसे संयुक्त निर्वाचन-क्षेत्र और सुरक्षित स्थानके सिद्धान्तपर उसी पद्धतिसे चुने जायेंगे जिसकी व्यवस्था उपर्युक्त धारा २ में राज्य विधान-मण्डलोंमें उनके प्रतिनिधि चुननेके सम्बन्धमें की गई है।

४. केन्द्रीय विधान-मण्डलमें ब्रिटिश भारतके आम निर्वाचक-समूहको जितनी सीटें दी गई हैं उनका १८ प्रतिशत दलित वर्गोंके लिए सुरक्षित रहेगा।

५. केन्द्रीय और प्रान्तीय विधान-मण्डलोंके लिए उम्मीदवारोंकी सूचीके लिए प्राथमिक चुनावकी जिस पद्धतिकी व्यवस्था की गई है वह प्रथम दस वर्षोंके बाद समाप्त होगी, बशर्ते कि इसे नीचेकी धारा ६ में की गई व्यवस्थाके अनुसार पारस्परिक समझौते द्वारा पहले ही समाप्त न कर दिया जाये।

६. धारा १ और ४ में केन्द्रीय और प्रान्तीय विधान-मण्डलोंमें सुरक्षित जगहोंके माध्यमसे दलित वर्गोंके प्रतिनिधित्वकी पद्धतिकी जो व्यवस्था की गई है वह तबतक चलती रहेगी जबतक कि इस समझौतेसे सम्बन्धित समुदायोंमें पारस्परिक मतैक्यसे पुनः कोई निर्णय न लिया जाये।

१. ये आँकड़े प्रधान मंत्रीके निर्णयमें घोषित प्रान्तीय विधान परिषदोंकी कुल सीटोंकी संख्यापर आधारित हैं।

७. केन्द्रीय और प्रान्तीय विधान-मण्डलोंके लिए दलित वर्गोंको वैसा ही मताधिकार प्राप्त होगा जैसाकि लोथियन समितिकी रिपोर्टमें निर्दिशित है।

८. स्थानीय संस्थानोंके लिए निर्वाचित होने अथवा सरकारी पदोंपर नियुक्त होनेके लिए किसीको महज इसलिए अयोग्य करार नहीं दिया जायेगा कि वह दलित वर्गका सदस्य है।

विभिन्न सरकारी पदोंपर नियुक्तिके लिए जो शैक्षणिक योग्यता निर्धारित की जायेगी उसका खयाल रखते हुए इस बातका पूरा प्रयत्न किया जायेगा कि इस क्षेत्रमें और स्थानिक संस्थाओंमें दलित वर्गोंको पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्राप्त हो।

९. प्रत्येक प्रान्तमें शिक्षाके लिए मिले हुए अनुदानमें से एक खासी धनराशि दलित वर्गीय लोगोंको शिक्षा-सम्बन्धी सुविधाएँ प्रदान करनेके लिए अलग कर दी जायेगी।

मदनमोहन मालवीय
तेजबहादुर सप्रू
एम० आर० जयकर
बी० आर० अम्बेडकर
श्रीनिवासन्
एम० सी० राजा
सी० वी० मेहता
सी० राजगोपालाचारी
राजेन्द्रप्रसाद
जी० डी० बिड़ला
रामेश्वरदास बिड़ला
लल्लूभाई सामलदास
हंसा मेहता
के० नटराजन्
कामकोटि नटराजन्
पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास
मथुरादास विसनजी
वालचन्द हीराचन्द
एच० एन० कुँजरू
के० जी० लिमये
बी० एस० कामत
जी० के० देवधर
ए० वी० ठक्कर
आर० के० बाखले
पी० जी० सोलंकी
पी० बालू
शंकरलाल बैंकर
गोविन्द मालवीय
देवदास गांधी
विश्वास
पी० एन० राजभोज गवई[1]
पी० कोदण्डराव
जी० के० गाडगिल
मनु सूबेदार
अवन्तिकाबाई गोखले
के० जे० चितालिया
राधाकान्त मालवीय
ए० आर० भट्ट
कोलम
प्रधान

[अंग्रेजीसे]
एपिक फास्ट, पृष्ठ १५३-६

१. जो हस्ताक्षर आगे दिये जा रहे हैं उन्हें २५ सितम्बरको बम्बईमें होनेवाले हिन्दू सम्मेलनकी आखिरी बैठकमें इस दस्तावेजके साथ जोड़ा गया।

परिशिष्ट ३

भेंट: 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिको[1]

१० नवम्बर, १९३२

गांधीजी : जमोरिन यह नहीं कहता कि मन्दिर खोलना असम्भव है, बल्कि वह अपनी मुश्किलें पेश करता है। यदि वह असफल हो जाता है तो मुझे और केलप्पनको उपवास करना पड़ेगा, बशर्ते कि जो दावा किया जाता है उसमें मुझे कोई स्पष्ट त्रुटि दिखाई [न] दे। असलमें कोई त्रुटि है ही नहीं। जमोरिनके मार्गमें कठिनाइयाँ हैं किन्तु वे ऐसी नहीं हैं कि उनसे पार न पाया जा सके। खरी कसौटी तो यह है कि मन्दिरमें जानेके अधिकारी सवर्ण अस्पृश्योंके मन्दिरम जानेपर आपत्ति करते हैं या नहीं? मुझे जो सूचनाएँ मिली हैं उन सबसे यह पता चलता है कि मन्दिरमें जानेवाले लोगोंके बहुत बड़े भागको कोई आपत्ति नहीं है। पूरा आन्दोलन इस मान्यतापर आधारित है कि मन्दिरमें जानेवाले लोग अर्थात् सवर्ण हिन्दू इस सुधारके लिए तैयार हैं। अगर ये लोग सुधारके लिए तैयार न हों तो हमारा उपवास बेवक्त किया गया माना जायेगा।

प्रश्न : यदि मन्दिर-सम्बन्धी यह मुश्किल दूर कर दी जाये तो उपवास नहीं होगा न?

गां० : उपवास खास तौरसे यह मन्दिर खुलवानेके बारेमें है। कारण यह है कि केलप्पनने उदाहरण और कसौटीके रूपमें इस एक मन्दिरपर अपने प्रयास केन्द्रित किये थे। इन लोगोंने मन्दिर खुलवानेके लिए अथक परिश्रम किया है। बादमें जब मैंने उपवास किया तो केलप्पन इस निर्णयपर पहुँचे कि स्वयं उन्हें भी उपवास करना चाहिए। किन्तु उन्होंने नोटिस नहीं दिया था। इस त्रुटिकी ओर मैंने उनका ध्यान दिलाया और उनसे उपवास स्थगित करनेको कहा। उन्होंने इसे मान लिया। अतः अब उनके साथ उपवास करना मेरे लिए इज्जतका सवाल बन गया है। अपने प्रयास गुरुवायूर मन्दिरपर केन्द्रित करनेका यही कारण है।

प्र० : जमोरिनका कहना है कि हजारों सनातनी मरनेको तैयार हैं।

गां० : उनका यह कहना ठीक नहीं है। किन्तु स्वयंको सनातनी कहनेवाले हजारों लोग भी यदि उपवास करें तो भी मैं घबरानेवाला नहीं हूँ। सत्य लाखों करोड़ों लोगोंके जीवनसे भी बढ़कर है। उपवासके सम्बन्धमें मेरा विचार यह है कि वह आत्मशुद्धि और अन्तरात्माको जाग्रत करनेकी एक क्रिया है। वह जबरदस्तीका साधन कदापि नहीं हो सकता।

१. देखिए पृष्ठ ४०९।

प्र० : क्या इस आन्दोलनसे हिन्दू समाजके टुकड़े नहीं हो जायेंगे? क्या सनातनी अवशिष्ट हिन्दू समाजसे अलग नहीं हो जायेंगे?

गां० : मुझे ऐसा कोई भय नहीं है। यदि मुझे सन्तोष हो जाये कि सनातनी आन्दोलनके नामसे जाने जानेवाले आन्दोलनको बहुसंख्यक लोगोंका सचमुच समर्थन प्राप्त है तो स्वभावसे ही लोकतन्त्रवादी होनेके कारण आज मैं जिस तरह विरोध करता हूँ उस तरह विरोध नहीं करूँगा। अस्पृश्यता-निवारण-सम्बन्धी पूरा आन्दोलन इस मान्यतापर आधारित है कि उसके विरोधका कोई सही आधार नहीं है। यह तो जानी-मानी बात है कि उसके पीछे कोई नैतिक समर्थन नहीं है।

प्र० : क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि यदि आप बाहर हों तो ज्यादा असर डाल सकते हैं? क्या आप अस्पृश्यता-निवारणको सविनय भंगकी अपेक्षा कम महत्त्वपूर्ण मानते हैं?

गां० : मैं दोनोंमें से किसीको भी कम महत्त्व नहीं देता। मेरे लिए तो दोनों धार्मिक सिद्धान्त हैं। इसलिए मैं एकसे दूसरेको गौण नहीं मान सकता। मैंने यहाँ सविनय अवज्ञाकी बात एक सिद्धान्तके रूपमें कही है, आजकलके आन्दोलनके रूपमें नहीं। आजकल जो सविनय अवज्ञा चल रही है उसके बारेमें मैं कोई राय नहीं दे सकता।

प्र० : जितने जोरसे आन्दोलन चलना चाहिए उतने जोरसे चलता तो नजर नहीं आता।

गां० : मैं ऐसा नहीं कह सकता। मैं कुछ कहनेकी स्थितिमें नहीं हूँ। अखबारों द्वारा मिलनेवाली खबरोंपर मैं भरोसा नहीं कर सकता। आपको बाहरके कार्यकर्त्ताओंसे सम्पर्क करना चाहिए।

प्र० : अस्पृश्यता-निवारण संघसे दिल्लीके त्यागपत्रोंके बारेमें आपका क्या कहना है?

गां० : इससे मुझे आश्चर्य हुआ है। किन्तु मैं आशा करता हूँ कि उसके पीछे कोई खास बात नहीं होगी। संघकी नींव काफी मजबूत है। उसे आदर्श अध्यक्ष मिले हैं और उनसे भी अधिक आदर्श मंत्री मिले हैं।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-२, पृष्ठ २२५-२७

परिशिष्टांश

भेंट: 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिको

१० नवम्बर, १९३२

विवादास्पद मन्दिरके मुख्य न्यासी कालिकटके जमोरिन द्वारा जारी किये वक्तव्यको गांधीजी 'टाइम्स ऑफ इंडिया' में पढ़ चुके थे। उन्होंने कहा:

जमोरिनने ऐसा स्पष्ट रूपसे नहीं कहा है कि मन्दिरको अछूतोंके लिए खोला नहीं जायेगा, और जिन अड़चनोंको दूर करना है, उनके सम्बन्धमें जहाँतक मैं समझ सकता हूँ, मैं यह नहीं मानता कि उनमें से कोई भी ऐसी है जिसे समयपर दूर नहीं किया जा सकता। यदि वे १ जनवरीतक इन अड़चनोंको दूर करनेमें असफल रहते हैं; तो स्वभावतः श्री केलप्पनको तथा मुझे पुनः अनशन करना पड़ेगा। जो दावे किये गये हैं उनमें अगर मुझे कोई स्पष्ट त्रुटि दिखाई नहीं पड़ी तो अनशन जारी रहेगा।

असली कसौटी तो यही है कि जिन लोगोंको मन्दिरमें जानेका अधिकार है, क्या उन्हें, जिस समय वे स्वयं मन्दिरमें जायें, उस समय अछूतोंको भी वहाँ आने देनेपर कोई आपत्ति है। मुझे तो यही सूचना है कि उन्हें कोई आपत्ति नहीं है; या यों कहिए कि उनमें से अधिकांशको कोई आपत्ति नहीं है। अस्पृश्यता-निवारणके पूरे आन्दोलनका आधार ही यही मान्यता है कि तथाकथित सवर्ण हिन्दुओंका बड़ा बहुमत इस सुधारके लिए तैयार है। बिना इस मान्यताके श्री केलप्पनका और इस-लिए मेरा अनशन एकदम असामयिक हो जायेगा।

२ जनवरीसे प्रारम्भ होनेवाले इस अनशनका उद्देश्य सभी मन्दिरोंके सम्बन्धमें सुधार लागू करवाना नहीं है। इसका सम्बन्ध इस एक खास मन्दिरसे ही है।

इस विषयसे सम्बन्धित एक विशेष प्रश्नका उत्तर देते हुए श्री गांधीने आगे कहा:

ऐसा करनेका कारण यह है कि श्री केलप्पनने उदाहरण और नमूनेके तौरपर इस एक मन्दिरपर ही अपना सारा ध्यान केन्द्रित किया है। वे और उनके बहुसंख्य सहकर्मी निरन्तर अपनी सारी शक्ति इसी मन्दिरको खोलनेमें लगाते आ रहे हैं, और श्री केलप्पनने भी हमारे अनशनके समय ऐसा ही करनेका निश्चय किया। क्योंकि उन्होंने अपने अनशनके इरादेकी सूचना पहलेसे नहीं दी थी, इसलिए मैंने उन्हें यह बताते हुए कि इसमें यह त्रुटि रह गई है, उनसे अनशन स्थगित करनेके लिए कहा, जिसे उन्होंने मान लिया। इसलिए अब तो उनका साथ देना अपने वचनकी रक्षा करनेका एक प्रश्न बन गया है और यही कारण है कि मैंने इस समय अपना ध्यान गुरुवायूर मन्दिरपर ही केन्द्रित कर दिया है।

तब मैंने श्री गांधीका ध्यान बम्बई स्थित शंकेश्वर मठके श्रीमद्जगद्गुरु शंकराचार्यके उस वक्तव्यकी ओर दिलाया जिसमें उन्होंने कहा था कि श्री गांधीके विचारोंका विरोध करनेवाले सैकड़ों और हजारों सनातनी लोग हैं और अपने दृष्टिकोणको प्रतिष्ठित करनेके लिए वे जान की बाजी लगा देनेके लिए भी तैयार हैं। गांधीजी ने कहा :

मेरे विचारसे उनके वक्तव्यका कोई औचित्य नहीं है। लेकिन मुझे इस बातसे कोई घबराहट नहीं होगी कि अपनेको सनातनी कहनेवाले हजार लोग आमरण अनशन शुरू कर दें। सत्य लाखों लोगोंके जीवनसे भी बढ़कर है।

अनशनके सम्बन्धमें मेरी तो यह धारणा है कि यह अन्तःकरणको शुद्ध करने और जगानेवाली एक प्रक्रिया है। इसमें किसीको विवश करनेवाला कोई तत्त्व कभी नहीं होना चाहिए।

मेरे सामने यह डर व्यक्त किया गया था कि श्री गांधीका नया उपवास सवर्ण हिन्दुओं और अछूतोंको संगठित करनेके बजाय सनातनियोंको भड़काकर हिन्दू समुदाय को और भी खंडित कर देगा। गांधीजी ने कहा :

मुझे ऐसा कोई डर नहीं है। यदि मुझे यह स्पष्ट हो जाये कि सनातनियोंके नामपर चलाये जानेवाले इस आन्दोलनको जनताका वास्तविक समर्थन प्राप्त है तो एक उत्साही प्रजातन्त्री होनेके नाते इस आन्दोलनका मैं उस तरह विरोध नहीं करूँगा, जैसा आज कर रहा हूँ। अस्पृश्यता-विरोधी पूरे आन्दोलनका आधार यही मान्यता है कि इस आन्दोलनके विरोधको जनताका समर्थन प्राप्त नहीं है। इसे कोई नैतिक समर्थन नहीं है, यह तो स्वयंसिद्ध ही है।

मैंने श्री गांधीसे कहा कि इस आन्दोलनके समर्थकोंकी यह आम धारणा है कि यदि वे (गांधीजी) जेलमें होनेके बजाय उनके बीच रहें तो इस दिशामें बहुत प्रगति की जा सकती है। इसलिए मैंने उनसे पूछा कि क्या वे सविनय अवज्ञाको अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनसे अधिक महत्त्वपूर्ण समझते हैं। गांधीजी ने उत्तर दिया :

मैं इन दोनोंमें से किसी एकको कम या अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं समझता। मेरे लिए तो ये धर्म-सिद्धान्तके समान हैं, और इसलिए मैं इनमें से किसी एकको दूसरेके समान गौण नहीं समझता।

राजनीतिक मामलोंमें गांधीजी पर जेल-जीवनकी जो मर्यादाएँ लगी हुई हैं उनका अतिक्रमण न करनेके लिए वे सतत सावधान रहते हैं। इसलिए उन्होंने कहा कि वे अभी जो सविनय अवज्ञाकी चर्चा कर रहे हैं वह देशमें इन दिनों जिस योजनाके अनुसार काम चल रहा है उसके सन्दर्भमें नहीं, बल्कि उसकी चर्चा वे जीवनके एक सिद्धान्तके रूपमें कर रहे हैं। उस योजनाके सम्बन्धमें तो वे कोई राय जाहिर करने को तैयार नहीं थे। मैंने कहा कि आन्दोलनकी प्रगतिकी रफ्तार बहुत धीमी है, लेकिन वे यह माननेको तैयार नहीं थे और न वे यही कहनेको तैयार थे कि वह ठीक चल रहा है, क्योंकि अभी उनको पूरी जानकारी नहीं मिली है।

उन्होंने कहा कि दिल्लीके अस्पृश्यता-विरोधी लीगके पदाधिकारियोंके त्यागपत्र देनेसे उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ है। उन्हें उम्मीद है कि अन्तमें यही पता चलेगा कि इसके पीछे कोई बड़ा कारण नहीं है।

अन्तमें उन्होंने कहा, मैं चाहता हूँ कि इस आन्दोलनपर दुनिया अपनी राय जाहिर करे, क्योंकि निश्चय ही इसके परिणाम हिन्दू समाज और भारतकी सीमाओंके बाहर बहुत दूरतक होंगे। विशुद्ध रूपसे अहिंसक साधनोंसे और केवल लोकमतको जाग्रत करके यदि ४ करोड़ लोगोंको उस बोझसे छुटकारा दिलाया जा सका जिसके नीचे वे कुचले जा रहे हैं तो उसका स्वाभाविक परिणाम यही होगा कि शंकालुओं और नास्तिकोंके मनमें भी सर्वत्र ईश्वरकी जीवन्त उपस्थितिके प्रति विश्वास जगेगा और इसलिए मनुष्यकी सहज अच्छाईमें भी उनकी श्रद्धा जाग्रत होगी।

[अंग्रेजीसे]

प्यारेलाल नैयरसे प्राप्त कागजात।

सामग्रीके साधन-सूत्र

गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली: गांधी-साहित्य और सम्बन्धित कागजात का केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय। देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३५९ (प्रथम संस्करण) और पृष्ठ ३५५ (द्वितीय संस्करण)।

नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडिया, नई दिल्ली।

साबरमती संग्रहालय: पुस्तकालय तथा आलेख संग्रहालय, जहाँ गांधीजी से सम्बन्धित कागजात सुरक्षित हैं।

'अमृतबाजार पत्रिका': कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी समाचार-पत्र जिसका प्रथम अंक १८६८ में बंगला साप्ताहिकके रूपमें निकला था; १८९१ से यह दैनिक बन गया।

'एडवांस': कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'टाइम्स ऑफ इंडिया': १८८३ से दिल्ली और बम्बईसे एक साथ प्रकाशित होनेवाला अंग्रेजी दैनिक।

'बॉम्बे क्रॉनिकल': बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'विश्वभारती न्यूज': शान्तिनिकेतनसे प्रकाशित होनेवाली मासिक पत्रिका।

'हिन्दू': मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'एपिक फास्ट' (अंग्रेजी): प्यारेलाल द्वारा सम्पादित; नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद।

गांधी-सप्रू पत्र-व्यवहार: कलकत्ताके राष्ट्रीय पुस्तकालयमें सुरक्षित कागजात।

'ट्राइबल वर्ल्ड ऑफ वेरियर एलविन: एन ऑटोबायोग्राफी' (अंग्रेजी): ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, १९६४।

'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद': काका कालेलकर द्वारा सम्पादित; जमनालाल सेवा ट्रस्ट, वर्धा; १९५३।

'बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, १९३२' (अंग्रेजी): बम्बई सरकारके दफ्तरी प्रलेख।

'बापुना पत्रो-४: मणिबहेन पटेलने' (गुजराती): मणिबहन पटेल द्वारा सम्पादित; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद; १९६०।

'बापुना पत्रो-६ : गं० स्व० गंगाबहेनने' (गुजराती) : काका कालेलकर द्वारा सम्पादित; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद; १९६०।

'बापुना पत्रो-९ : श्री नारणदास गांधीने', भाग १ (गुजराती) : नारणदास गांधी द्वारा सम्पादित; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद; १९६४।

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती) : मथुरादास त्रिकमजी; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद; १९५७।

'महात्मा : लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी', खण्ड २ (अंग्रेजी) : डी० जी० तेन्दुलकर; प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मन्त्रालय, नई दिल्ली।

'महादेवभाईनी डायरी', भाग १-२ (गुजराती) : नरहरि द्वा० परीख द्वारा सम्पादित; नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद।

'माई डियर चाइल्ड' (अंग्रेजी) : एलाइस एम० बार्न्ज़ द्वारा सम्पादित; नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद; १९५६।

'लेटर्स ऑफ राइट ऑनरेबल वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री' (अंग्रेजी) : टी० एन० जगदीशन् द्वारा सम्पादित; एशिया पब्लिशिंग हाउस, १९४४।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१ सितम्बरसे १५ नवम्बर, १९३२ तक)

१ सितम्बर: गांधीजी यरवडा जेलमें।

९ सितम्बर: रैम्जे मैकडॉनाल्डको लिखा कि साम्प्रदायिक निर्णयके विरुद्ध उनके आमरण अनशनके निश्चयमें कोई परिवर्तन नहीं हो सकता।

१३ सितम्बर: उपवासके सम्बन्धमें प्रधान मन्त्री और सर सैम्युअल होरके साथ हुआ गांधीजी का पत्र-व्यवहार प्रकाशित।

१५ सितम्बर: अपने आसन्न उपवासके कारण बताते हुए तैयार किया गया वक्तव्य गांधीजी ने प्रकाशनार्थ बम्बई सरकारको भेजा।

१६ सितम्बर: अपनी सशर्त रिहाईके खिलाफ राय जाहिर करते हुए गांधीजी ने सरकारको तार भेजा।

अपने उपवासके कारण बताते हुए समाचार-पत्रोंके लिए वक्तव्य जारी किया।

१८ सितम्बर: बम्बईके हिन्दुओंका एक शिष्टमण्डल, जिसमें पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास, मथुरादास विसनजी खीमजी, सर चुन्नीलाल मेहता और घनश्यामदास बिड़ला शामिल थे, गांधीजी से मिला।

१९ सितम्बर: हिन्दू नेताओंके एक शिष्टमण्डलने गांधीजी से मिलकर उनसे इस विषयमें चर्चा की कि किन शर्तोंपर वे उपवासका इरादा छोड़ सकते हैं।

२० सितम्बर: दलित वर्गोंके लिए पृथक् निर्वाचक-मण्डलकी व्यवस्था करनेके ब्रिटिश सरकारके निर्णयके विरुद्ध गांधीजी ने दोपहरमें आमरण अनशन आरम्भ किया। समाचार-पत्रोंके प्रतिनिधियोंको आमन्त्रित करके अपने उपवासका मन्तव्य समझाया।

रातमें हिन्दू नेताओं और डॉ० अम्बेडकरने संयुक्त निर्वाचक-मण्डलके सिद्धान्त पर आधारित एक कामचलाऊ योजनापर अपनी सहमति दी।

२१ सितम्बर: एक शिष्टमण्डलने, जिसमें एम० आर० जयकर, सी० राजगोपालाचारी, राजेन्द्रप्रसाद और घनश्यामदास बिड़ला शामिल थे, गांधीजी के साथ संयुक्त निर्वाचक-मण्डलपर आधारित योजनाकी चर्चा की। एस० एम० माटे, पी० एन० राजभोज और लिमये गांधीजी से जेलमें मिले।

गांधीजी ने घोषणा की कि यदि ब्रिटिश सरकार साम्प्रदायिक निर्णयको बदलने पर सहमत हो जायेगी तो वे उपवास तोड़ देंगे।

२३ सितम्बर: समाचार-पत्रोंके रिपोर्टरोंको बताया कि उनका उपवास कोई राजनीतिक कदम नहीं, बल्कि एक आध्यात्मिक प्रयत्न और प्रायश्चित्त था।

२४ सितम्बर: 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के संवाददाताके साथ राजनीतिक नेताओं द्वारा उपवासका सहारा लिये जानेकी सम्भावना और फलितार्थपर बातचीत की। हिन्दू नेताओं और दलित वर्गोंके प्रतिनिधियोंने गांधीजी की उपस्थितिमें समझौतेपर हस्ताक्षर किये और उसपर गांधीजी ने भी अपनी सहमति दी। भारत सरकार और ब्रिटिश प्रधान मन्त्रीको समझौतेकी शर्तें सूचित की गईं और साथ ही साम्प्रदायिक निर्णयको बदलनेमें शीघ्रता करनेका भी अनुरोध किया गया।

२५ सितम्बर: एलन और वी० के० कृष्ण मेननको मुलाकात दी। अपने दूसरे प्रेस सम्मेलनमें घोषित किया कि वे उपवास तभी तोड़ेंगे जब प्रधान मन्त्री समझौतेको सम्पूर्णतः स्वीकार कर लेंगे।

२६ सितम्बर: शामके ५ बजकर १५ मिनटपर उपवास तोड़ा। गांधीजी ने समाचार-पत्रोंमें एक वक्तव्य जारी करके समझौतेको सभी पक्षोंकी उदारताका परिणाम बताया।

२७ सितम्बर: सरकारसे अनुरोध किया कि वह उपवासके दौरान उन्हें दी गई सुविधाएँ बन्द न करे।

२९ सितम्बर: दिनके १२ बजकर ३० मिनटपर गांधीजी को सूचित किया गया कि उपवासके दौरान उन्हें मुलाकातों और पत्र-व्यवहारके सम्बन्धमें जो सुविधाएँ प्राप्त थीं वे बन्द की जा रही हैं। इस परिवर्तनपर नाराजगी जाहिर करते हुए एम० जी० भण्डारीको एक कड़ा पत्र लिखा।

३० सितम्बर: के० केलप्पनको तार भेजकर उन्हें उपवास बन्द करनेकी सलाह दी।

१ अक्तूबर: के० केलप्पनको उपवास तोड़नेकी सलाह देते हुए फिर तार भेजा।

२ अक्तूबर: के० केलप्पनने प्रातःकाल अपना उपवास तोड़ा।

२ अक्तूबर या उसके पश्चात्: मन्दिर-प्रवेशके सम्बन्धमें समाचार-पत्रोंके लिए वक्तव्य जारी किया।

१७ अक्तूबर: डॉ० अम्बेडकर और सरोजिनी नायडू गांधीजी से जेलमें मिले।

१८ अक्तूबर: गांधीजी ने एच० एफ० हडसनको पत्र लिखकर कहा कि अस्पृश्यता विरोधी कार्यके सम्बन्धमें उन्होंने मुलाकातों और पत्र-व्यवहारकी जो सुविधाएं मांगी हैं, उनके बारेमें सरकार निश्चित उत्तर दे।

१९ अक्तूबर: गांधीजी को जेलके उस कमरेमें ले जाया गया जिसमें वे उपवासके पूर्व रहते थे।

२० अक्तूबर: रोटी लेना आरम्भ किया।

२३ अक्तूबर: पुंजाभाई शाहका देहान्त।

२४ अक्तूबर: गांधीजी ने तबतक के लिए अस्पृश्यता-सम्बन्धी कार्यके विषयमें पत्र-व्यवहार बन्द कर दिया जबतक कि सरकार मुलाकातों और पत्र-व्यवहारपर से प्रतिबन्ध न हटा ले।

२६ अक्तूबर: कर्नल डॉयल जेलमें गांधीजी से मिले।

३१ अक्तूबर: गांधीजी ने तय किया कि अस्पृश्यता-सम्बन्धी कार्यके सिलसिलेमें मुलाकातों और पत्र-व्यवहारपर जो प्रतिबन्ध लगे हुए हैं उनके विरोधस्वरूप वे अगले दिनसे विशेष आहार नहीं लेंगे।

१ नवम्बर: विशेष आहार लेना बन्द कर दिया।

२ नवम्बर: सरकारसे प्राप्त सन्देशके उत्तरमें आहारके सम्बन्धमें अपनी ही ओरसे लगाया गया यह प्रतिबन्ध समाप्त कर दिया।

३ नवम्बर: सरकारने अस्पृश्यता-सम्बन्धी कार्यके सिलसिलेमें गांधीजी को मुलाकात, पत्र-व्यवहार और प्रचारकी यथेष्ट सुविधा पुनः प्रदान की।

४ नवम्बर: गांधीजी ने समाचार-पत्रोंके लिए अस्पृश्यतापर अपना पहला वक्तव्य जारी किया।

५ नवम्बर: अस्पृश्यतापर दूसरा वक्तव्य जारी किया।

७ नवम्बर: अस्पृश्यतापर तीसरा वक्तव्य जारी किया।

८ नवम्बर: अस्पृश्यतापर चौथा वक्तव्य जारी किया।

११ नवम्बर: पी० एन० राजभोज और उनके मित्रोंको मन्दिर-प्रवेशके लिए कोई सत्याग्रह या उपवास करनेसे मना किया।

१२ नवम्बर: 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको मुलाकात दी।

१३ नवम्बर: लॉर्ड सैंकीने गांधीजी से जो सार्वजनिक अपील की थी उसका उत्तर दिया।

१४ नवम्बर: अस्पृश्यतापर पाँचवाँ वक्तव्य जारी किया।

१५ नवम्बर: अस्पृश्यतापर छठा वक्तव्य जारी किया।

शीर्षक-सांकेतिका

सांकेतिका

इ

ई

उ

ए

ओ

क

ख

ग

घ

च

छ

ज

झ

ट

ठ

ड

त

थ

द

ध

न

प

फ

ब

भ

य

र

ल

व

श

स

ह